एचडी–02

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

हिन्दी गद्य भाग–1 (कथा साहित्य)

एचडी – 02

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

हिन्दी गद्य भाग–1 (कथा साहित्य)

पाठ्यक्रम अभिकल्प समिति

अध्यक्ष

प्रो. (डॉ.) नरेश दाधीच
कुलपति
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राज.)

संयोजक / समन्वयक

प्रो.(डॉ.) कुमार कृष्ण
विभागाध्यक्ष, हिन्दी विभाग
हिमांचल विश्वविद्यालय
शिमला

डॉ. मीता शर्मा
सहायक आचार्य, हिन्दी विभाग
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय,
कोटा

सदस्य

प्रो.(डॉ.) जबरीमल पारख
अध्यक्ष, मानविकी विद्यापीठ
इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय खुला विश्वविद्यालय,
नई दिल्ली

प्रो.(डॉ.) सुदेश बत्रा
पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
राजस्थान विश्वविद्यालय
जयपुर

प्रो.(डॉ.) नन्दलाल कल्ला
पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय,जोधपुर

डॉ. नवलकिशोर भाभड़ा
प्राचार्य
राज. कन्या महाविद्यालय, अजमेर

डॉ. पुरुषोत्तम आसोपा
पूर्व प्राचार्य,
राजकीय महाविद्यालय,
सरदार शहर(चुरू)

सम्पादन एवं पाठ लेखन

सम्पादक

डॉ. प्रेम प्रकाश भट्ट
से.नि. एसोसिएट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग
राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर

पाठ-लेखक	इकाई सं.	पाठ-लेखक	इकाई सं.
डॉ. मन्जू चतुर्वेदी अध्यक्ष, हिन्दी विभाग मीरा राजकीय महाविद्यालय उदयपुर	1	**डॉ. टी.सी. गुप्ता** पूर्व विभागाध्यक्ष, हिन्दी विभाग राजकीय महाविद्यालय, कोटा	10,11
डॉ.सत्यनारायण शर्मा व्याख्याता, हिन्दी विभाग राजकीय महाविद्यालय, चिमनपुरा	2,3	**प्रो.(डॉ.) सुदेश बत्रा** पूर्व विभागाध्यक्ष, हिन्दी विभाग राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर	12,13,16
डॉ. रेखा मिश्रा व्याख्याता, हिन्दी विभाग खण्डेलवाल महिला महाविद्यालय जयपुर	4	**डॉ. पल्लव** व्याख्याता, हिन्दी विभाग राजकीय महाविद्यालय, उदयपुर	14, 15
डॉ. हेतु भारद्वाज पूर्व प्राचार्य पारीक कॉलेज, जयपुर	5,6	**डॉ. प्रेम प्रकाश भट्ट** रीडर, हिन्दी विभाग राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर	17, 19
प्रो.(डॉ.) लल्लन राय हिन्दी विभाग हिमांचल विश्वविद्यालय शिमला	7,9	**डॉ. दुर्गा प्रसाद अग्रवाल** सेवानिवृत्त संयुक्त निदेशक, आयुक्तलय, उच्च शिक्षा, जयपुर	18
डॉ. मदन केवलिया पूर्व उपाचार्य रा.स्ना. डूंगर महाविद्यालय, बीकानेर	8		

अकादमिक एवं प्रशासनिक व्यवस्था

प्रो.(डॉ.) नरेश दाधीच	**प्रो. (डॉ.) एम.के. घड़ोलिया**	**योगेन्द्र गोयल**
कुलपति	निदेशक	प्रभारी
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय,कोटा	**अकादमिक**	**पाठ्य सामग्री उत्पादन एवं वितरण विभाग**

पाठ्यक्रम उत्पादन

योगेन्द्र गोयल
सहायक उत्पादन अधिकारी,
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

उत्पादन : पुनः मुद्रण : अगस्त 2012 ISBN NO- 13/978-81-8496-085-3

इस सामग्री के किसी भी अंश को व. म. खु. वि., कोटा की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप मे 'मिमियोग्राफी' (चक्रमुद्रण) द्वारा या अन्यत्र पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

व. म. खु. वि., कोटा के लिये कुलसचिव व. म. खु. वि., कोटा (राज.) द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित।

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

खण्ड - 1

कथा साहित्य का विकास

इकाई सं.	इकाई का नाम	पृष्ठ संख्या
इकाई - 1	हिन्दी गद्य का उद्भव व विकास	11–27
इकाई - 2	हिन्दी कहानी का उद्भव व विकास	28–45
इकाई - 3	हिन्दी उपन्यास का उद्भव व विकास	46–64
इकाई - 4	उपन्यास व कहानी में अन्तर	65–82
खण्ड - 2		
कथा साहित्य का तात्विक विवेचन		
इकाई - 5	कहानी का स्वरूप, भेद व तत्व	85–101
इकाई - 6	उपन्यास का स्वरूप, भेद व तत्व	102–119
खण्ड - 3		
हिन्दी कहानी (स्वतंत्रता पूर्व कहानी)		
इकाई - 7	'पूस की रात'– प्रेमचन्द	121–139
इकाई - 8	'उसने कहा था'– चन्द्रधर शर्मा गुलेरी	140–164
इकाई - 9	'पत्नी'– जैनेन्द्र कुमार	165–186
इकाई - 10	'पुरस्कार'– जयशंकर प्रसाद	187–216
खण्ड- 4		
हिन्दी कहानी (स्वतंत्रता पश्चात् कहानी)		
इकाई - 11	'परमात्मा का कुत्ता' - मोहन राकेश	218–243
इकाई - 12	'चीफ की दावत' - भीष्म साहनी	244–260
इकाई - 13	'वापसी' - उषा प्रियम्वदा	261–274
इकाई - 14	'आशा अमरधनं - विजयदान देथा	275–288
इकाई - 15	'नीलकान्त का सफर' - स्वयं प्रकाश	289–301
खण्ड- 5		
हिन्दी उपन्यास		
इकाई - 16	'निर्मला' - प्रेमचन्द (भाग- 1) प्रतिपाद्य	303–319
इकाई - 17	'निर्मला' - प्रेमचन्द (भाग-2) संरचना व शिल्प	320–335

इकाई - 18	'महाभोज' - मन्नू भण्डारी (भाग- 1) प्रतिपाद्य	336–346
इकाई - 19	'महाभोज' - मन्नू भण्डारी (भाग-2) संरचना व शिल्प	347–358

खण्ड- 1 का परिचय

हिन्दी कथा साहित्य के अंतर्गत आप खण्ड एक से लेकर खण्ड पाँच तक कथा साहित्य के विविध पक्षों का अध्ययन करेंगे । कथा साहित्य हिन्दी गद्य साहित्य का एक महत्वपूर्ण पक्ष है । आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' में आधुनिक काल को गद्यकाल की संज्ञा दी है । हिन्दी गद्य साहित्य में प्रमुख गद्य विधाओं का विकास आधुनिक काल के अंतर्गत ही हुआ । भारतेन्दु हरिशचन्द्र हिन्दी साहित्य में आधुनिकता के अग्रदूत कहे जाते हैं । उन्हीं के द्वारा हिन्दी में गद्य की आधुनिक विधाओं का श्रीगणेश माना जाता है । भारतेन्दु बाबा स्वयं निबन्ध, नाटक, आलोचना तथा जीवनी साहित्य के रचनाकार थे । उन्हीं की प्रेरणा से लाला श्रीनिवास द्वारा रचित परीक्षा गुरु सामने आया । आगे चलकर राधाचरण गोस्वामी और किशोरीलाल गोस्वामी का कहानी साहित्य प्रकाशित हुआ। इस प्रकार हिन्दी साहित्य में गद्य विधाओं का क्रमिक विकास और विस्तार गति पकड़ता गया । खण्ड एक के अंतर्गत पहला पाठ हिन्दी गद्य का स्वरूप व विकास है । इस पाठ में खड़ी बोली हिन्दी में गद्य लेखन का आरम्भिक स्रोत्र रामप्रसाद निरंजनी द्वारा रचित हिन्दी योग वाशिष्ठय से माना जाता है । तत्पश्चात् गद्य के विकास में फोर्ट विलियम कॉलेज की भूमिका भी विस्तार से समझायी गयी है । इस प्रकार खण्ड एक का प्रथम पाठ हिन्दी गद्य और उसके क्रमिक विकास पर केन्द्रित है ।

खण्ड एक का दूसरा पाठ हिन्दी कहानी का उद्भव व विकास है । देखा जाये तो हिन्दी कहानी मात्रा व गुणात्मकता की दृष्टि से बहुत तेजी से विकसित होने वाली साहित्य विधा मानी जाती है । अपने लगभग सौ वर्ष के जीवनकाल में हिन्दी कहानी साहित्य के क्षेत्र में हजारों रचनाकारों का योगदान है । शनै: शनै कहानी विधा प्रौढ़ता को प्राप्त होती गयी और विभिन्न कहानी आन्दोलनों से होती हुयी आज वह जिस गंतव्य तक पहुँच गयी है उस पर गर्व किया जा सकता है । इस पाठ में आप प्रमुख कहानीकारों, कहानी साहित्य की विविध धाराओं और कथा आन्दोलनों का भी परिचय प्राप्त करेंगे ।

इस खण्ड के तीसरे पाठ को हिन्दी उपन्यास का उद्भव व विकास शीर्षक दिया गया है । हिन्दी का प्रथम उपन्यास यदि परीक्षा गुरु है तो कहने की आवश्यकता नहीं है कि हिन्दी उपन्यास अपने जीवन के सवा सौ वर्ष पूरे कर चुका है । इस काल खण्ड में उपन्यास विधा ने भी अनेक मंजिलें पार की है । संक्षेप में रहस्य रोमांच की दुनिया से गुजरता हुआ हिन्दी उपन्यास प्रेमचंद की सामाजिक चेतना का स्पर्श पाकर जीवन के यथार्थ से जुड़ा और कालांतर में व्यक्ति मनोविज्ञान, मनोविश्लेषण और आंचलिकता से होता हुआ बीसवीं शती के अंतिम दशक तक आते- आते समकालीन जीवन को गहन विश्लेषण और विवेचन में उतरता चला गया । आज हिन्दी उपन्यास के अंतर्गत पर्याप्त मात्रा में प्रौढ़ और परिपक्व रचनाएँ प्राप्त होती है । हिन्दी उपन्यास के इन विविध पहलुओं का परिचय आपको इस पाठ में देखने को मिलेगा ।

प्रथम खण्ड के अंतर्गत चौथा पाठ इस शीर्षक से है 'उपन्यास व कहानी में अंतर एवं पुरानी कहानी और नयी कहानी में अंतर' । बीए. प्रथम वर्ष के छात्रों को उपन्यास और कहानी के मौलिक अंतर का तो ज्ञान होना ही चाहिए साथ ही पुरानी कहानी और नयी कहानी में आये हुए रचनागत अंतर की भी सही-सही जानकारी होनी चाहिए । इस उद्देश्य को ध्यान में रखकर खण्ड एक के चौथे पाठ को तैयार किया गया है । यह प्रयास किया गया है कि छात्र न केवल उपन्यास और कहानी में अलगाव कर सकें अपितु पुरानी कहानी और नयी कहानी में भी रचनात्मक विशेषताओं के आधार पर अंतर कर सके। कतिपय प्रमुख रचनाकारों का उदाहरण सामने रखते हुए इन अवधारणाओं से आपको अवगत कराया जाएगा । इस प्रकार खण्ड एक के अंतर्गत इन चार पाठों की अध्ययन सामग्री से परिचित होते हुए आप खण्ड दो तक पहुँचेंगे।

इकाई- 1

हिन्दी गद्य का उद्भव और विकास

इकाई की रुपरेखा

1.0 उद्देश्य

1.1 प्रस्तावना

1.2 हिन्दी गद्य की पृष्ठभूमि

1.2.1 ब्रजभाषा का गद्य

1.2.2 राजस्थानी गद्य

1.2.3 प्रारम्भिक गद्य लेखन

1.2.4 अंग्रेजों की भाषा नीति

1.3 भारतेंदु युग

1.4 द्विवेदी युग

1.5 नवीन गद्य (1920 - 1950)

1.6 स्वातंत्रयोत्तर गद्य साहित्य (छठा दशक)

1.7 साठोत्तरी गद्य

1.8 गद्य की वर्तमान दशा : समकालीन गद्य

1.9 सारांश

1.10 संदर्भ ग्रन्थ

1.11 बोध प्रश्न

1.0 उद्देश्य

आधार पाठ्यक्रम के स्नातक प्रथम वर्ष की यह प्रथम इकाई है । इसमें आप ' हिन्दी गद्य का उद्भव और विकास' का अध्ययन करेंगे । इस इकाई को पढ़ने के बाद आप-

- हिन्दी गद्य के उद्भव और विकास की पृष्ठभूमि से परिचित हो सकेंगे ।
- इसी पृष्ठभूमि के अंतर्गत आप ब्रजभाषा के गद्य-साहित्य का परिचय प्राप्त कर सकेंगे।
- इसी पृष्ठभूमि के अंतर्गत आप राजस्थानी गद्य साहित्य से परिचित हो सकेंगे ।
- इसी पृष्ठभूमि के अंतर्गत आप अंग्रेजों की भाषा-नीति से परिचय प्राप्त कर सकेंगे ।
- हिन्दी गद्य के विकास क्रम में भारतेंदु युगीन गद्य-साहित्य एवं प्रवृत्तियों से परिचित हो सकेंगे ।
- हिन्दी गद्य के विकास कम में द्विवेदी युग से परिचय प्राप्त कर सकेंगे ।
- विकास क्रम में नवीन गद्य (छायावादी-युग) के गद्य लेखन से परिचित हो सकेंगे ।
- विकास-क्रम में स्वातंत्रयोत्तर गद्य (छायावादोत्तर युग) की हिन्दी गद्य की स्थिति से परिचित हो सकेंगे
- साठोत्तरी गद्य से परिचय प्राप्त कर सकेंगे ।
- गद्य की वर्तमान दशा से परिचित हो सकेंगे ।

1.1 प्रस्तावना

'रीतिकाल' के अवसान तथा आधुनिक काल के प्रारंभ द्वार पर 'गद्य' की आवश्यकता का अनुभव किया जाना साहित्य में एक बड़े 'परिवर्तन' को दर्शाता है । राजनैतिक दृष्टि से देश के लिये विकट परिस्थितियों का दौर था क्योंकि अंग्रेज अपनी नई जानकारियों का डंका पीट रहे थे और भारतीय अपने को पिछड़ा हुआ, लाचार और सीमित दुनिया का वासी समझ रहे थे । ऐसी विषम परिस्थितियों में केवल 'कविता' से गुजारा कर पाना संभव नहीं था । गद्य साहित्य के ' प्रथम' उत्थान के परिदृश्य का अवलोकन करें तो पता चलता है कि हिन्दी भाषा का रचाव, परिष्कार तथा शोधन, पत्रिकाओं का प्रकाशन और नये लेखकों का आविर्भाव लगभग एक साथ ही हुआ था । आधुनिक काल की सबसे बड़ी विशेषता यह थी कि सम्पादकों, लेखकों और पाठकों में 'नये' के प्रति अद्भुत आकर्षण तो था ही, साथ ही उस अभाव का भी बोध था जो ऐतिहासिक परिस्थितियों की देन रहा था । 'गद्य' लेखन और ' खड़ी बोली हिन्दी' को साहित्य में उसका 'यथोचित' स्थान मिल सके, यह आग्रह और प्रयास ' आधुनिक काल' की देन थी । शुक्ल जी ने इसी 'नवीनता' को केन्द्र में रखकर आलोच्य काल को 'गद्यकाल' की संज्ञा से अभिहित किया था । यह विचारणीय प्रश्न है कि क्यों 'गद्य' के अपने 'प्रतिमान' नही बन सके किंतु यह तथ्य भी आश्चर्यजनक है कि 'द्विवेदी- युग' तक पहुँचने के साथ ही 'गद्य' ने अपनी 'चाल' इतनी तीव्र कर दी कि लगभग एक साथ ही अनेक गद्य की विधाओं का विकास हुआ । इसी क्रम में इन विविध विधाओं का इतना अधिक दबाव रहा है कि वे अपने में स्वतंत्र हो गयी और हर विधा का अपना विकसित इतिहास बनता चला गया । गौर करने योग्य बात है कि एक ओर ' कहानी' में अनेक आन्दोलन हुए जैसे'नयी कहानी', ' अकहानी कहानी', ' आम आदमी की कहानी' आदि ।

किन्तु अन्य गद्य विधाओं के विकास में साहित्यिक आन्दोलनों की परम्परा दिखाई नहीं देती है । अत: हमारे लिये यह अनिवार्य हो जाता है कि ' गद्य' के विकास को उसकी विभिन्न विधाओं के विकास क्रम में समझने का प्रयास करें । इस इकाई के माध्यम से आप गद्य लेखन की आवश्यकता, प्रकृति, प्रवृत्ति, विविध रचनाकार, भाषा के निरन्तर परिवर्तन ओर समकालीन सन्दर्भों के साथ साहित्य के 'संवाद' को समझ सकेंगे ।

गद्य लेखन ने निबंध, आलोचना, उपन्यास, कहानी, नाटक ओर एकांकी, संस्मरण और रेखाचित्र, जीवनी, आत्मकथा जैसी महत्वपूर्ण विधाओं में विस्तार पाया था । इन सभी पर पृथक से सामग्री उपलब्ध होगी किंतु इस इकाई में इन्ही 'प्रकारों' के आंशिक उल्लेख के साथ 'गद्य' की सामान्य प्रवृत्तियों का विवेचन प्राप्त किया जा सकेगा ।

1.2 हिन्दी गद्य की पृष्ठभूमि

आधुनिक काल से पूर्व हिन्दी गद्य साहित्य और स्वरुप में वर्ण्य विषय और शैली की दृष्टि से न तो इतना विस्तृत था और न ही उसमें विधागत वैविध्य था । वह केवल आधुनिक - कालीन गद्य की पूर्व भूमिका थी जिसमें टीकाएं ही अधिक लिखी गयी ।

'हिन्दी परिवार' की भाषाओं में गद्य का उन्मेष कालक्रम से सर्वप्रथम राजस्थानी में प्राप्त होता है ।

राजस्थानी में गद्य-परंपरा निश्चित रुप से ईसा से तेरहवीं शताब्दी से प्राप्त होती है । बनारसी (अवधी) बोली की बारहवीं शती में निर्मित 'उक्ति-व्यक्ति प्रकरण' (दामोदर) कृति उपलब्ध है जिसमें अपभ्रंश प्रभावित अवधी बोली के प्रयोगों को स्पष्ट करने के लिए उनके संस्कृत रुपांतर दिये गये हैं परंतु इसके पश्चात् बनारसी या अवधी को गद्य की दृष्टि से अग्रणी नहीं माना जा सकता । ब्रजभाषा और दक्खिनी में गद्य का प्रारंभ यों तो चौदहवीं सदी से पूर्व माना जा सकता है, परन्तु प्रामाणिक रुप से इन भाषाओं का गद्य सोलहवीं शताब्दी से माना जा सकता है । (प्रेम प्रकाश गौतम, हिन्दी साहित्य का इतिहास)

1.2.1 ब्रजभाषा का गद्य

ब्रजभाषा-गद्य भक्तिकाल से आरम्भ होता है । सोलहवीं शताब्दी में 'चौरासी वैष्णवन की वार्ता, वार्ता साहित्य का अनूठा नमूना है, जिसमें वैष्णवों के पुष्टिमार्ग में दीक्षित होने के प्रसंग हैं । इसी प्रकार' दो सौ वैष्णवन की वार्ता' भी 16 वीं शताब्दी की ही रचना है । इनके अतिरिक्त रीतिकाल से पूर्व गद्य-टीकाएं भी लिखी गयी जिनमें 'भुवनदीपिका टीका', 'भगवत-एकादश-स्कंध-टीका', 'हितूसंवधिनी टीका' प्रसिद्ध हैं ।

ब्रजभाषा गद्य के विकास में सर्वाधिक योगदान पुष्टिमार्गीय संत- भक्त लेखकों का है । पुष्टि संप्रदाय के विभिन्न आचार्यों एवं भक्तों द्वारा जिन गद्य ग्रंथों की रचना की गई उनका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है: -

- गोस्वामी विट्ठलनाथ (1515 - 1585 ई.) द्वारा रचित ग्रंथ- ' श्रृंगार रस मंडल', ' यमुनाष्टक ', ' नवरत्न सटीक ' आदि ।
- चतुर्भुज दास रचित षटऋतु की वार्ता ' ।
- गोकुलनाथ (1551 - 1640ई.) रचित ' चौरासी वैष्णवन की वार्ता ' ' दो सौ बावन वैष्णवन की वार्ता, ' श्री गोसाई जी और दामोदरदास जी का संवाद, ' श्री गुसांई जी की वनयात्रा ', ' नित्यं सेवा प्रकार ', ' चौरासी बैठक चरित्र ', ' अठाईस बैठक चरित्र ', ' घरुँ वार्ता ', ' उत्सव भावना ', ' रहस्य भावना ', ' चरण चिन्ह भावना ', ' भावना ', ' भाव सिन्धु ', ' भावना वचनामृत ' आदि ।
- गोस्वामी हरिराम जी (1590 - 1663 ई.) द्वारा रचित ग्रंथ- हुश्री आचार्य महाप्रभु की द्वादस निज वार्ता ' , श्री आचार्य महाप्रभु जी के सेवक, ' चौरासी वैष्णवन की वार्ता', ' गोसाई जी के स्वरुप के चिंतन का भाव', 'कृष्णावतार स्वरुप', ' सातों स्वरुपों की भावना',

' भाव बरसोत्सव ' , ' द्वादस निकुंज की भावना', ' सात स्वरुप की भावना', ' छप्पनभोग की भावना' आदि ।

- गोविंददास ब्राहमण कृत 'वार्ता ' ।
- ब्रजभूषण (17 वीं शती) कृत ग्रंथ ' नित्य विनोद', ' नीति -विनोद', ' श्री महाप्रभुजी तथा गुसांई जी का चरित्र', श्री द्वारिकानाथधीश जी की प्रकार्य वार्ता आदि ।
- द्वारकेश जी भावना वाले (19 वीं शती) ' श्रीनाथ जी आदि सात स्वरुपन की भावना', ' धनुमणि भावना', ' उत्सुक भावना', ' भाव भावना', ' भाव संग्रह' आदि ।

सत्रहवीं शताब्दी में ' अष्टांग योग' (अक्षर अनन्य), ' कोककथा ' और ' कोकमंजरी', ' मार्कण्डेय पुराण', ' आध्यात्म-रामायण' जैसे ग्रंथ लेखकों द्वारा लिखे गये जिनमें आध्यात्मिक तत्व प्रधान रहा । इस सदी में रचित की यह विशेषता रही कि रीतिकाव्य में जो चमत्कार या काव्य-कौशल कवियों द्वारा दिखाया गया वह गद्य में आकर लुप्त-सा हो गया । ब्रज भाषा में लिखित यह गद्य साहित्य साहित्यिक सौष्ठव से रहित-सा ही है और सहजता इसकी शैलीगत विशेषता रही है । रोचकता अवश्य वार्ता साहित्य में दिखाई देती है ओर धार्मिक ग्रंथों में भी जहाँ-कहीं कथा प्रसंगों का उल्लेख हुआ है निश्चित ही रोचकता का समावेश हुआ है ।

अठारहवीं शताब्दी में जो गद्य रचनाएं हुईउनमें आत्म जीवनी, ललित निबंध, सृष्टि प्रलय विषयक रचनाएं, विभिन्न प्रकार के संस्कृत नाटकों का अनुवाद, भौगोलिक पृष्ठभूमि आधारित विभिन्न लेखन, वैघों के जीवन चरित्र जैसे विषयों पर ब्रजभाषा में गद्य लिखे गये ।

वल्लभ संप्रदाय के श्री हरिराम ने 'चौरासी वैष्णवन की वार्ता', 'दो सौ बावन वैष्णवन की वार्ता', 'सेवा भावना' के अतिरिक्त श्री ब्रजभूषण द्वारा रचित- श्री महाराज जी तथा गुसांई जी का चरित्र, नित्य विनोद, नीति विनोद, अनन्यअली का स्वप्न प्रसंग आदि ग्रंथ भी उपलब्ध हैं । इस अवधि में कुछ ऐसे ग्रंथ भी लिखे गये जिनके लेखकों के नाम इत्यादि अज्ञात हैं । ऐसे ग्रंथों में वेदांत निर्णय, ईश्वर पार्वती संवाद, वैष्णवों के नित्यकर्म, मोहिनी चरित्र आदि उल्लेखनीय है । इनके अतिरिक्त सुरति मिश्र द्वारा रचित वैताल पच्चीसी, देवीचंद रचित हितोपदेश ग्रंथ महाप्रबोधिनी आदि भी तत्कालीन ब्रजभाषा गद्य के उदाहरण हैं ।

वल्लभ संप्रदाय के अतिरिक्त अन्य संप्रदायों के कुछ भक्तों ने भी ब्रजभाषा में गद्य, गद्य-पद्य मिश्रित रचनाएं प्रस्तुत की हैं, जिनमें नाभादास (17 वीं शती) का ' अष्टयाम', ललित किशोरी और ललित मोहिनी की ' भी स्वामी जी महाराज की वचनिका', यशवंत सिंह की 'सिद्धांत-बोध' उल्लेखनीय हैं ।

कतिपय ब्रजभाषा लेखकों ने काव्य- शास्त्र, छंदशास्त्र तथा शास्त्रीय विषयों पर विचारार्थ ब्रजभाषा गद्य ग्रंथों की रचनाएं की हैं, जिनमें से कुछ इस प्रकार हैं- बनारसी दास (17 वीं शती) की 'बनारसी विलास', सुखदेव सिंह मिश्र (18 वीं शती) का 'पिंगल ग्रंथ', देनी कवि (1735 ई.) का ' टिकैतराय प्रकाश', प्रियादास कृत 'सेवक चरित्र' (1779 ई.), ललूलाल कृत 'राजनीति' (1709 ई.) और 'माधो विलास' (1817), बक्शी सुमन सिंह का ' पिंगण काव्य भूषण' (1882 ई.) आदि ।

ब्रजभाषा गद्य के अन्य मौलिक ग्रंथों में व्यास का ' शकुन विचार', वैष्णवदास का ' भक्तमाल प्रसंग, मीनराज प्रधान का 'हरतालिका कथा' आदि उल्लेखनीय हैं ।

'शकुन विचार' की शैली उदाहरणार्थ- 'सुन भी पृच्छक तोहिं शत्रुन को अधीन एक बार होइगो पै जो मन चाहि है सो तेरो कार्ज होइंगो ।'

अनन्य अली द्वारा रचित ' स्वप्न प्रसंग' नामक ग्रंथ का एक उदाहरण दृष्टव्य है- 'तब भाई ने कही तू भीतर क्यों आयो । तब मैंने कही कि श्री लड़ैती जू ने बुलायों तब मैं आयो । तब लड़ैती जू ने कही कि यह हमारे हवै । यूं कहि हंसि कै मेरे कंधा पै बैठि गई । '

इस गद्य के अवलोकन से ज्ञात होता है कि अठारवीं शताब्दी में जिस प्रकार का ब्रजभाषा का गद्य लिखा गया वह प्रौढ़ ब्रजभाषा गद्य नहीं है । ब्रजभाषा का गद्य अपने शैशवास्था में ही था ।

19 वीं शताब्दी में ही पूर्व की परंपरा के अनुसार अनुवाद परंपरा पर आधारित ग्रंथों की भी रचना हुई जिनमें ललूलाल रचित'राजनीति', आलम द्वारा रचित ' ग्रंथ संजीवन', सेवाराम मिश्र कृत ' भागवत' जैसी रचनाएं प्रसिद्ध हैं । इनके अलावा राधावल्लभ संप्रदाय के अन्य अनेक लेखकों ने भी ब्रजभाषा में गद्य लिखे । इस समय- का ब्रजभाषा गद्य प्रौढ़ प्रतीत होता है, वैचारिक और साहित्यिक दृष्टि से संस्कृतनिष्ठ तथा उनका भाषिक स्तर अधिक व्यावहारिक हो गया था । इसी शताब्दी में खड़ी बोली मिश्रित ब्रजभाषा में तुलसी काव्य, बिहारी सतसई पर भी टीकाएं लिखी गयी । महंत रामचरणदास, हरिहर प्रसाद, हरजू कवि, असनीवासी ठाकुर द्वितीय, रणछोड़दास, अमर सिंह आदि लेखकों ने खड़ी बोली मिश्रित ब्रजभाषा में गद्य-ग्रंथों की रचना की।

उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट है रीतिकाल में जितना भी खड़ी बोली गद्य लिखा गया वह मुख्यत: ब्रजभाषा मिश्रित था।

1.2.2 राजस्थानी गद्य

राजस्थानी-गद्य की प्राचीनतम रचनाएं तेरहवीं शताब्दी की हैं, जिनमें ' आराधना' (1273 ई.), ' अतिचार' (1282 ई.), बाल-शिक्षा (लेखक संग्राम सिंह, रचना काल 1279 ई.) प्रमुख हैं । उपरोक्त रचनाएं मुनि जिन विजय द्वारा संपादित 'प्राचीन गुजराती' 'गद्य संदर्भ' में संगृहीत है । उस समय राजस्थानी और गुजराती एक साथ समान रूप से समानान्तर विकसित हुई थी, भाषाविदों ने अपनी- अपनी भाषा में इन्हें समान रूप से स्थान दिया है । डॉ. मोतीलाल मेनारिया, डॉ. हीरालाल माहेश्वरी प्रभृति ने इन्हें राजस्थानी की ही रचनाएं मानी हैं । आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के निर्देशन में हरिमोहन श्रीवास्तव के शोध-प्रबंध में इन्हें हिन्दी गद्य साहित्य में माना है । अत: विद्वानों की राय के अनुसार इन कृतियों को हिन्दी गद्य की प्रारंभिक अवस्था की सूचक कृतियों के रूप में स्वीकार किया जा सकता है।

रीतिकाल में जिन भाषाओं में गद्य-लेखन हुआ उनमें राजस्थानी भाषा का बड़ा महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है । हालांकि इस भाषा का गद्य ब्रजभाषा से पूर्णत: प्रभावित है, लेकिन कुछ ग्रंथ इस काल में ऐसे लिखे गये जो ब्रजभाषा गद्य-ग्रंथों से भी अधिक समृद्ध हैं।

इस समय जो राजस्थानी गद्य रचनाएं हुई, उनमें वचनिका, पत्र, वंशावली, पट्टावली, ख्यात, वात विगत आदि आते हैं । इनके अतिरिक्त टीकाएं भी इस भाषा में पर्याप्त लिखी गयी । इतिहास, धर्म, ज्योतिष, नीति, गणित आदि विषयों पर राजस्थानी भाषा में गद्य लेखन हुआ। चौदहवीं-पंद्रहवीं शताब्दी में रची गई अनेक राजस्थानी गद्य रचनाएं साहित्येतिहासकार अगर चंद नाहटा के पास सुरक्षित हैं, जिनमें से कुछ कृतियों पर यथासमय उन्होंने ' राजस्थान-भारती' (वर्ष 3, अंक 2 - 4) में प्रकाशित लेखों के द्वारा उद्धृत किया है । इनमें से 'तत्व विचार' तथा 'धनपाल कथा' उल्लेखनीय हैं । तत्व विचार जैन धर्म के सिद्धांतों पर आधारित है । इसकी भाषा विकसित स्वरूप में प्रतीत होती है । ' धनपाल कथा' में रचयिता जैन कवि धनपाल के जीवन की एक कथा निरुपित की गयी है । इसकी भाषा- शैली उदाहरणार्थ प्रस्तुत है- ' उज्जयनी नाम नगरी । तहिठे भोजदेव राजा । तीयहि तणइ पंचम सयह पंडितह मांहि मुख्यु धनाल नामि पंडितु।'

पन्द्रहवीं शताब्दी की ही राजस्थानी गद्य की एक अन्य कृति 'पृथ्वी चन्द्र चरित' अपने दूसरे नाम ' वाग्विलास' के नाम से उल्लेखनीय कृति है।

राजस्थानी-गद्य की परंपरा सुदृढ़ रही है, इस भाषा की रचनाओं में ऐतिहासिक और काल्पनिक कथाएँ बहुलता में उपलब्ध होती है । गणपति चंद्र गुप्त ने इन्हें तीन उपबंधों में विभक्त किया है, वचनिका, ख्यात और वात।

वचनिका में प्राय: ऐतिहासिक घटनाएं ली गई हैं, इसकी शैव की अनुपम विशेषता है कि इसमें गद्य का प्रयोग तुकांत रूप में होता है । 'ख्यात' में किसी भी घटना का वर्णन होता है किंतु इसमें तुकांत होना आवश्यक नहीं । 'वात' में प्राय: काल्पनिक रोचक वृतांत प्रस्तुत किये जाते हैं । तीनों तरह की रचनाएँ राजस्थानी गद्य को सुसमृद्ध किये हुए हैं । शिवदास रचित ' अचलदास खीची री वचनिका' (1425 ई.) खिरिया जगा रचित 'वचनिका राठौर रतनसिंह जी री' (1658 ई.), नयनसिंह रचित 'मुहणौत नैण सी री ख्यात' (1665 ई.) आदि विशेष रूप से उल्लेखनीय कृतियाँ हैं । राजस्थान गद्य साहित्य में रचनाकारों ने प्राय: अपने आश्रयदाताओं के पराक्रम कायशोगान आलंकारिक शैली में किया है । इनके अतिरिक्त राजस्थानी में वात साहित्य का विपुल भण्डार है ।

राजस्थानी गद्य की अन्य रचनाओं में 'रतना हमीर री वात', 'राव अमर सिंह री वात', 'राव रिणमल री वात', 'ढोला मारवणी री वात' आदि उल्लेखनीय कृतियाँ हैं । राजस्थानी का वात साहित्य मुख्यत: घटना-प्रधान या चरित्र-प्रधान गद्य-साहित्य है।

राजस्थानी गद्य साहित्य की अधिकाँश रचनाएँ जैन-मंदिरों के आश्रय में लिखी गयी हैं या राजपूत नरेशों के संरक्षण में। यशोगान के अतिरिक्त शिक्षात्मक गद्य रचनाएँ लिखी गयी हैं जो साहित्यिक की दृष्टि से भी समृद्ध है । रचनाकारों ने रचना तैयार करते समय

ऐतिहासिकता का आ निर्वहन किया है । 'बीकानेर री ख्यात', 'सीसोदिया री वंसावली', 'पीढ़ियाँ' जैसी रचनाओं में स्थान विशेष या वंश परम्परा का प्रशस्ति गान किया है।

राजस्थानी भाषा में टीकाएं भी पर्याप्त मात्रा में लिखी गयी जिनमें 'रसिकप्रिया टीका', ' भगवतगीता टीका', जैसी टीकाएं प्रसिद्ध हैं । साथ ही ' भागवत', 'गरूड़ पुराण', 'योग वशिष्ट', 'पंचतंत्र', 'सिंहासन बत्तीसी' आदि रचनाओं के अनुवाद भी राजस्थानी गद्य में हुए हैं ।

1.2.3 प्रारम्भिक गद्य लेखन

हिन्दी साहित्य के इतिहास का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि हिन्दी को पूर्व में खड़ी बोली कहा जाता था या खड़ी बोली ही अपने विकसित स्वरूप में हिन्दी के रूप में हमारे समक्ष उपस्थित हुई अत: इस अध्याय में हिन्दी को खड़ी बोली के रूप में व्याख्यायित किया जा रहा है । इसके साथ एक अन्य संदर्भ में हिन्दी का गद्य साहित्य प्रारम्भिक अवस्था में खड़ी बोलीं के रूप में प्रारम्भ होकर पाठकों के समक्ष समुपस्थित हुआ था । खड़ी बोली के साहित्य का उद्भव और प्रारंभिक विकास दक्षिण भारत के अनेक मुस्लिम राज्यों के आश्रय में हुआ । खड़ी बोली गद्य का प्रारंभिक रूप दक्खिनी-साहित्य में मिलता है । दक्खिन के रचनाकारों ने अपनी भाषा को 'हिन्दी', 'हिन्दवी', 'देहलवी', 'ज़बान हिन्दुस्तान' आदि नामों से अभिहित किया है, किंतु साहित्य-समालोचकों को राय में वह खड़ी बोली का ही प्रारंभिक रूप है।

दक्षिण के गद्य-लेखकों में ख्वाजा बंदे-नवाज़ गेसूदराज (1346-1423 ई.), शाह मीरा जी शम्सुल उश्शाक, शाह बुरहानुद्यीन जानम, अमीनुद्यीन आला, मुल्ला वजही प्रमुख हैं । खाजा बंदे नवाज गेसूदराज ने पन्द्रह ग्रंथ अरबी-फारसी में एवं तीन ग्रंथ दक्खिनी या खड़ी बोली में लिखे । ये तीन ग्रंथ हैं - मीराजुल आशकनि, हिदायतनामा और रिसाला सेहबारा या बारहमासा । उन्नीस पृष्ठों की 'मीराजुल आशकनि' दक्खिनी की प्रथम रचनामानी जाती है जो 14वीं शती की होने से ऐतिहासिक महत्त्व भी रखता है ।

उत्तरी भारत में खड़ी बोली गद्य की परंपरा का प्रारंभ सत्रहवीं- अठारहवीं शताब्दी से माना जाता है । दक्षिण-उत्तर के शासकों के बीच राजनीतिक संबंधों के साथ-साथ साहित्यिक संपर्क भी रहा होगा एतदर्थ इस तरह इनमें साहित्यिक परम्पराओं का भी आदान-प्रदान संभव है । उत्तरी भारत की खड़ी बोलीं की प्राचीनतम उपलब्ध गद्य-रचना कवि गंग की 'चंद छंद बरनन की महिमा' (17वीं शती) का उल्लेख किया जाता है । उदाहरण स्वरूप- 'इतना सुन के पातसाहिजी श्री अकबर साहिजी आद सेर सोना नरहरदास चारन को दिया इनके डेढ़ सेर सोना हो गया । ' कतिपय विद्वानों में इसकी प्रामाणिकता पर संदेह भी किया है । अठारहवीं शताब्दी की दो महत्त्वपूर्ण गद्य- कृतियाँ ' भाषायोगवशिष्ठ' (1741ई.) एवं 'पद्य पुराण' (1761 ई.) है।

उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में खड़ी बोली या हिन्दी गद्य की रचनाएं अपेक्षाकृत सुथरे स्वरूप में आई । मुंशी सदासुखलाल ने 'विष्णु पुराण' पर आधारित 'सुख सागर' की रचा की । ईंशाअल्ला खाँ ने 'उदयभान चरित' या 'रानी केतकी की कहानी' की रचना की । ईशाअल्ला खाँ ने ' उदयभान चरित' या 'रानी केतकी की कहानी' की रचना की । लल्लूलाल ने हिन्दी गद्य की अनेक पुस्तकों

की रचना को यथा - सिंहासन बत्तीसी, बैताल पचीसी, शकुंतला नाटक, माधोनल, राजनीति, प्रेमसागर, लतायफ-इ-हिन्दी, ब्रजभाषा व्याकरण ,सभाविलास, माधवविलास, लाल चंद्रिका आदि । माना जाता है कि इनकी मौल्क रचनामात्र ब्रजभाषा व्याकरण ही है शेष रचनाएं अन्य ग्रंथों पर आधारित हैं । सदल मिश्र ने दो गद्य रचनाएं प्रस्तुत की 'चन्द्रावती' या 'नासिकेतोपाख्यान' एवं 'रामचरित्र' । दोनों कृतियाँ नचिकेता व अधत्म रामायण पर आधारित मानी गयी है । इस प्रकार हम देखते हैं कि हिन्दी गद्य का प्रारम्भिक लेखन दक्षिण भारत और इसी के साथ उत्तर भारत में भी समांतर रूप में हुआ ।

1.2.4 अंग्रेजों की भाषा नीति

आधुनिक काल का साहित्य जिन सामाजिक परिस्थितियों से प्रभावित हुआ, उन सामाजिक परिस्थितियों में तत्कालीन शिक्षा प्रणाली का भी महत्त्व कम नहीं है । यद्यपि भारतीयों के पार । दर्शन, ज्योतिष, गणित, आयुर्वेद, धर्मशास्त्र, काव्य शास्त्र, व्याकरण आदि से संबंधित ज्ञान की अपार संपदा थी, जिसका सानी विश्वभर में नहीं था । किंतु अंग्रेजी शासन ने हमें शिक्षा का जो परिदृश्य दिया उसने इस देश की परम्परागत शिक्षण प्रणाली को पाश्चात्य शिक्षण प्रणाली में पीरवर्तित कर दिया । साहित्य भी इससे अछूता नहीं रहा और हिन्दी गद्य भी प्रभावित हुआ ।

आधुनिक काल के साहित्य पर विचार करने से स्पष्ट होता है कि यह समय अपने पूर्ववर्ती समय से नितांत भिन्न था । शासन की बागडोर नई सत्ता के हाथों में आ जाने से जो राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक पीरवर्तन हुए उसका प्रभाव साहित्य पर भी पड़ा । आधुनिक युग हिन्दी पद्य एवं गद्य दोनों ही के लिए नवीनता का प्रवेश द्वार सिद्ध हुआ ।

हिन्दी के प्रसिद्ध समालोचक गुलाब राय की मान्यता अनुसार- ' अंग्रेजी राज के आने से लोगों का ध्यान जीवन की कठोर वास्तविकताओं की ओर गया । जीवन संग्राम बढ़ा, और साथ ही जातीय जीवन में भी जागृति हुई । लोग अपनी सभ्यता को महत्त्व देने लगे, हिन्दू लोगों ने विदेशी धर्मो का मुकाबला करने के लिए अपने धर्म को बुद्धिवाद के आलोक में परिष्कृत करना प्रारम्भ किया । ऐसे बुद्धिवाद और प्रतिद्वंद्विता के समय में जनता के भावों के प्रकाशन के लिए उपयुक्त माध्यम नहीं हो सकता । अतः अंग्रेजी राज्य के साथ-साथ गद्य आया । पद्य में ब्रजभाषा का साम्राज्य था । किन्तु नवीन युग के आ जाने पर उसकी कोमलकांत पदावली संघर्षमय कठोर भूमि के लिए उपयुक्त न ठहरी ।'

अंग्रेजों का विचार था कि भारतीयों का अंग्रेजी भाषा का ज्ञान उन्हें प्रशासनिक दायित्वों के निर्वहन में मदद करेगा । इस भाषा में पड़े लिखे भारतीय अंधविश्वासों को वैज्ञानिक कसौटी पर कसने के उपरान्त उनसे मुक्ति पाने लगे, यही कार्य भारतीय समाज-सुधारक भी कर रहे थे ।

1813 ई. में अंग्रेजों द्वारा जो अनुज्ञा-पत्र प्रसारित हुआ था वह भारतीय शिक्षा, साहित्य, विज्ञान और भाषा के क्षेत्रों में निर्णायक मोड़ था । भारतीयों की शिक्षा और शिक्षा का माध्यम अंग्रेजों और ईसाई मिशनरी के हाथों में था । इस अनुज्ञा-पत्र ने भाषा के माध्यम पर तीव्र मतभेद खड़े कर दिए थे । कुछ अंग्रेज अधिकारी संस्कृत और अरबी के माध्यम से अध्ययन

पर बल देते थे । दूसरी विचारधारा मुनरो और एलफिंस्टन की थी जो आधुनिक भारतीय भाषाओं से पश्चिमी ज्ञान का प्रसार करना चाहते थे । चार्ल्स ग्रान्ट के अनुयायी पश्चिमी ज्ञान-विज्ञान के लिये अंग्रेजी भाषा को ही सबल माध्यम मानते थे । अन्ततः तीसरी विचारधारा को बल मिला । ' मैकाले ने भारत में आकर भारतीय दर्शन, साहित्य एवं ज्ञान के विरुद्ध तथा पश्चिमी ज्ञान एवं अंग्रेजी भाषा के पक्ष में अनोखे तर्क रखे । साथ ही विज्ञान की शिक्षा देने के लिये अंग्रेजी भाषा का प्रबल समर्थन किया । '(भारत का इतिहास, डॉ. के.एल. शर्मा तथा डॉ. प्रकाश व्यास) मैकाले ने संस्कृत और अरबी भाषाओं का घोर विरोध किया ।

लम्बे समय तक अंग्रेज भारत के शासक रहे थे । इतने अधिक वर्षा तक अंग्रेजी भाषा का प्रभात और ज्ञान का भय भारतीयों पर सवार रहा था कि चाहते हुए भी हम उस मानसिक गुलामी से मुक्त नहीं हो सके। उल्लेखनीय है कि कम्पनी सरकार ने भारत में अनेक स्कूल-कॉलेज खोले, भारतीय'. में शिक्षा के महत्त्व को भी जागृत किया किन्तु भाषा के माध्यम पर जो विवाद था, उसका बहुत हा तक समाधान सन् 1854 ई. में हो सका । 'कम्पनी सरकार की डावाँडोल भाषा-नीति, अन्त 1 सन् 1854 ई. के डिस्पैच में आकर निश्चित हो गयी, जिसे 'वुड का एजुकेशन डिस्पैच कहते है इस डिस्पैच में खुलकर यह ऐलान किया गया कि सरकार का उद्देश्य भारतीय भाषाओं को हटा उनकी जगह पर अग्रेंजी को लाना नहीं है । सरकार ने बराबर यह ध्यान रखा कि काम उन्हीं भाषाओं में किये जाने चाहिए, जिन्हें देश की विशाल जनता जानती और समझती है । '(रामधारीसिंह दिनकर, संस्कृति के चार अध्याय) । अंग्रेजों की भाषा-नीति का दुष्प्रभाव आज भी हमारे सामने हैं । स्वाधीन भारत में आज भी अंग्रेजी भाषा ही गौरव और विकास के निमित्त उपयुक्त भाषा मानी जाती है ।

1.3 भारतेन्दु युग (सन् 1850-1900)

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल इस साहित्य-काल को 'प्रथम उत्थान' के नाम से विवेचित करते हैं । खड़ी-बोली हिन्दी गद्य को परिपुष्ट करने का श्रेय भारतेन्दु हरीश्चन्द्र को है । समालोचकों की राय में भारतेन्दु को ही हिन्दी गद्य का प्रवर्तक माना गया है-जिन्होंने हिन्दी भाषा को सरल सुगम, सुबोध और सौष्ठपूर्वक बनाते हुए संप्रेषणीयता के गुण के साथ भी जोड़ा है । इन्हीं की प्रेरणा से समकालीन अन्य लोग विशेषतः राजा शिव प्रसाद सिंह 'सितारे हिन्द' और राजा लक्ष्मणसिंह ने हिन्दी गद्य को और बढ़ावा दिया ।

भारतेन्दु युग 'पुनर्जागरण काल की क्रान्ति' का वह समय था जब सत्ता की बागडोर विदेशियों के हाथों में थी । राजनैतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक परिवर्तनों का व्यापक प्रभाव दिखाई पड़ रहा था । स्वामी दयानंद और राममोहनराय के धार्मिक पुनरुत्थान तथा पुनः संस्कार के प्रयासों ने जनजीवन को परम्परागत रूढ़ि और मोहनिद्रा से जागृत होने की प्ररेणा दी थी । तत्कालीन समाज अज्ञान, दरिद्रता, दासता के पाश में जकड़ा हुआ है । ऐसी विपरीत परिस्थितियों में राजनैतिक- सामाजिक पराधीनता से मुक्त होने की कामना जग चुकी थी । इसके फलस्वरूप साहित्य में भी नवीन प्रवृत्तियों को लक्षित किया गया । अतः एक ओर कविता ने रीतिकालीन ऐन्द्रियता के घेरे को तोड़ा और दूसरी ओर भारतेन्दु और युगीने साहित्यकारों ने निबंध, नाटक, उपन्यास औरपत्र- पत्रिकाओं में 'नव जागरण' विषयक लेखों द्वारा नवीन

साहित्यिक क्रांति को जन्म दिया । आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के शब्दों में ' भारतेन्दु युग की भाषा बहुत स्वाभाविक और भावप्रकाशन में सक्षम भाषा थी । सन् 1867 में 'कविवचन सुधा और सन् 1873 में हरीश्चन्द्र चन्द्रिका का प्रकाशन करके भारतेन्दु जी ने हिन्दी की नई शैली की नींव डाली।

भारतेन्दु के साहित्य अवदान के विषय में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल का विचार था कि ' उन्होंने साहित्य को नवीन मार्ग दिखाया और वे उसे शिक्षित जनता के साहचर्य में ले आये । ' इसी युग में निबंध, स्वतंत्र लेख, नाटक और उपन्यास जैसी लोकप्रिय विधाओं का वह रूप सामने आया जिसमें विषय वैविध्य और भाषा का नव संस्कार परिलक्षित हुआ । नव जागरण और नव सांस्कृतिक चेतना का उन्मेष लिये हुए जिन नाटकों की रचना हुई उनमें भारतेन्दुजी के वैदिकी हिंसा न भवति, चंद्रावली, विषस्य विषमौषयम् , भारत दुर्दशा, नीलदेवी, अंधेर नगरी आदि मौल्क नाटक प्रसिद्ध हैं । इन नाटकों में ऐतिहासिकता, सामाजिक आदर्श, अंग्रेजी के गुण-दोष, हास्य-व्यंग्य, देशी रजवाड़ों के कुचक्र, धार्मिक पाखंड जैसी प्रवृत्तियाँ निहित है । इन नाटकों की रचना शैली में मध्यम मार्ग का अनुसरण किया गया है जिसमें भारतीय नाट्य शैल, के तत्त्व भी सहज ही मिल जाते हैं । भारतेन्दु युगीन अन्य नाटककारों जैसे शालिग्राम के 'मोर ध्वज' भोजदेव की ' सुलोचना सती' राधाकृष्णदास का महाराणा प्रताप श्रीनिवासदास का 'संयोगिता स्वयंवर' तथा प्रताप नारायण मिश्र का 'हठी हम्मीर' ऐसे पौराणिक और सांस्कृतिक जागरण के नाटक हैं, जिनमें चरित्र सुधार का संदेश मिलता है।

भारतेन्दु काल में उन्हीं के सद्प्रयत्नों से लेखकों का बड़ा वर्ग तैयार हो गया था जो पुरातन और नवीन शैली के सामंजस्य से साहित्य को बहुआयामी स्वरूप देने में संलग्न था । भारतीय जन की भावनाओं को सही दशा प्रदान करने का कार्य अनेक लेखकों, पत्रिकाओं और समाज सुधारकों द्वारा किया जा रहा था । भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, बालकृष्ण भट्ट, प्रतापनारायण मिश्र, बद्रीनारायण चौधरी, बाबू तोताराम, जगमोहन सिंह, अम्बिकादत्त व्यास द्वारा विचारात्मक एवं व्याख्यात्मक निबंध लिखे गये जिनकी भाषा ' हिन्दुस्तानी' थी । न संस्कृत गर्भिन अरबी-फारसी शब्दों से बोझिल । यह भी रेखांकित करने योग्य तथ्य है कि भारतेन्दु जी ने अनेक 'आख्यान' भी लेखे । भारतेन्दु काल में सामाजिक और ऐतिहासिक उपन्यासों के साथ-साथ 'तिलस्म' और ' ऐयारी' प्रधान उपन्यास भी लिखे गये । इनका मुख्य उद्देश्य पाठकों का मनोरंजन और उनके बीच लोकप्रियता प्राप्त करना था । रत्नचन्द्र प्लीडर ने 'नूतन-चरित्र', बालकृष्ण भट्ट ने 'नूतन ब्रह्मचारी', राधाचरण गोस्वामी ने ' विधवा विपत्ति', किशोरीलाल गोस्वामी ने 'लवंगलता' गोपालराम गहमरी ने 'नये बाबू नामक उपन्यासों की रचना की। सामाजिक कुरीतियों पर प्रहार करना, इन उपन्यासकारों का मुख्य ध्येय था । भारतेन्दु युग की एक अन्य प्रवृत्ति अनुवाद-लेखन की थी जिसका प्रयोजन अन्य भाषाओं के साहित्य से हिन्दी-भाषी पाठकों को अवगत कराना था।

1.4 द्विवेदी युग: 1900-1920 तक - द्वितीय उत्थान

हिन्दी गद्य के उन्नयन में नई गति महावीर प्रसाद द्विवेदी के सद्प्रयत्नों से आई । आपने 1900 में 'सरस्वती' पत्रिका के संपादक का दायित्व संभालते हुए इस पत्रिका के माध्यम से तत्कालीन रचनाकारों का नेतृत्व किया । हिन्दी गद्य के क्षेत्र में भाषा की शुद्धता, शब्दों की एकरूपता, व्याकरण के दोष दूर करने पर अपना और अन्य लेखकों का ध्यान केन्द्रित किया । गणपति चन्द्र गुप्त के अनुसार गद्य के संबंध में उनकी भाषा-नीति के चारसूत्र इस प्रकार बताए जा सकते हैं - (1) विषयानुकूल एवं पाठक के अनुकूल सरल, शुद्ध और प्रवाहपूर्ण शैली का प्रयोग करना (2) उर्दू और अंग्रेजी के प्रचलित शब्दों को हिन्दी में स्वीकार करना । (3) शब्द रूपों और प्रयोगों को एक। सुनिश्चित रूप प्रदान करते हुए भाषा में एकरूपता लाना (4) भाषा की अभिव्यंजना- शक्ति को प्रखरता एवं अभिवृद्धि हेतु संस्कृत के सरल, तत्सम शब्दों, लोकोक्तियों एवं मुहावरों का प्रयोग करना एवं अन्य भाषा के शब्दों को स्वीकार करना । वास्तव में हिन्दी गद्य के लिए द्विवेदी युग परिमार्जन काल रहा, खड़ी बोली गद्य में जो प्रौढ़ता और परिष्कृत भाषा का आरम्भ हुआ, वह इसी युग की देन है । निबंध, आलोचना, कहानी, नाटक आदि सभी गद्य-विधाओं में विषयवस्तु की दृष्टि से विकास हुआ जिसमें पुरातत्त्व, इतिहास, विज्ञान, राजनीति आदि विषयों ने पर्याप्त स्थान पाया।

आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के समकालीन अन्यतम गद्य-लेखक इस प्रकार हैं -डॉ. श्याम सुन्दर दास, माधव प्रसाद मिश्र, चन्द्रधर शर्मा गुलेरी, मिश्र बन्धु, बालमुकुंद गुप्त, पद्यसिंह शर्मा, गोविन्द नारायण मिश्र, गोपाल राम गहमरी, अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरऔध', लाला भगवानदीन, सरदार पूर्णसिंह, ब्रजरत्नदास, मन्नन द्विवेदी प्रभूति । इस युग में उच्च कोटि के समीक्षात्मक ग्रन्थों की रचनाएं हुई। 'सरस्वती' और 'इन्दु' जैसी पत्रिकाओं ने हिन्दी गद्य को और अधिक प्रोत्साहित किया । द्वितीय उत्थान की प्रवृत्तियों के विकास को लेकर चलने वाली 'सरस्वती' पत्रिका में छोटी कहानियों का प्रकाशन प्रारम्भ हुआ । किशोरीलाल गोस्वामी की ' इन्दुमति ' और ' गुलबहार' भगवानदास की 'प्लैग की चुड़ैल', शुक्ल जी की 'ग्यारह वर्ष का समय' बंगमहिला की 'ढुलाई वाली' आदि कहानियों ने पाठकों को बहुत आकर्षित किया । भावप्रधान कहानियों के रचनाकार जयशंकर प्रसाद की 'ग्राम' कहानी मासिक पत्र 'इन्दु' में प्रकाशित हुई । शुक्ल जी के अनुसार, 'हिन्दी के अनन्य आराधक श्री चन्द्रधर शर्मा गुलेरी की अद्वितीय कहानी 'उसने कहा था' सन् 1915 की सरस्वती में छपी थी । हिन्दी के सर्वश्रेष्ठ उपन्यासकार प्रेमचंद की छोटी कहानियाँ भी संवत् 1973 से ही निकलने लगी । इस प्रकार द्वितीय उत्थानकाल के अंतिम भाग में ही आधुनिक कहानियों का आरम्भ हम पाते हैं जिसका पूर्ण विकास तृतीय उत्थान में हुआ ।' (आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, हिन्दी साहित्य का इतिहास)

1.5 नवीन गद्य (सन् 1920-1950)

छायावाद और राष्ट्रीय- आन्दोलन के प्रभाव प्रकाश में यह युग अभिनव चेतना और नई क्रांति का युग माना जाता है, जिसमें धर्म, समाज, साहित्य और राजनीति आदि सभी क्षेत्रों में क्रांति की ज्वाला पूरे वेग भड़क रही थी । महात्मा गाँधी राजनीति में छा गये । सभी देशवासियों

ने स्वतंत्र भारत की छवि आँखों में बिठा ली थी । इसी समय रवीन्द्र नाथ ठाकुर की गीतांजलि को नोबेल पुरस्कार मिला तो इस ओर युवकों और साहित्यकारों का ध्यान आकृष्ट हुआ । साहित्य के इस काल खण्ड में काव्य में छायावाद और गद्य में उपन्यास, कहानी, निबंध, नाटक-एकांकी, संस्मरण और रेखाचित्र जैसी सशक्त विधाओं का विस्तार हुआ।

प्रसिद्ध समालोचक डॉ. नगेन्द्र के अनुसार- 'युग की उदुद्धचेतना ने बाह्य अभिव्यक्ति से निराश होकर जो आत्मबद्ध अन्तर्मुखी साधना प्रारम्भ की वह काव्य में छायावाद के रूप में अभिव्यक्त हुई । जिन परिस्थितियों ने हमारी कर्म-वृति को अहिंसा की ओर प्रेरित किया, उन्हीं ने भाव-वृत्ति को छायावाद की ओर इसके मूल में स्थूल से विमुख होकर सूक्ष्म के प्रति आग्रह था।'

छायाबाद के प्रभाव में जिन लेखकों ने गद्य लेखन किया था, उनमें प्रसाद, निराला, पंत और महादेवी वर्मा का नाम उल्लेखनीय है।

जयशंकर 'प्रसाद' सर्वतोमुखी प्रतिभा के धनी लेखक हैं । काव्य के साथ गद्य में भी उन्हें समान सफलता प्राप्त हुई हे । वे नाटककार, कहानीकार, उपन्यासकार तथा निबंधकार के रूप में अपनी रचनाओं की विशेषता के गुणों के लिए अद्वितीय माने जाते हैं । आपके लिखे नाटक करूणालय, राज्यश्री, विशाख, अजातशत्रु, जनमेजय का नागयज्ञ, कामना, स्कंदगुप्त, एक घूंट , चन्द्रगुप्त और ध्रुवस्वामिनी है । 'उर्वशी' चंपू शैली का नाटक है । 'कंकाल' और 'तितली' आपके लिखे दो उपन्यास हैं जबकि कहानी-संग्रह छाया, आकाशदीप, आँधी, इन्द्रजाल हैं । ' काव्य- कला' और अन्य निबंध गद्य साहित्य की अनुपम रचनाएं हैं।

सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' छायावादी कवियों में माने जाते हैं किन्तु आपने भी गद्य रचनाएँ लिखी हैं जिनका विवरण इस प्रकार है - अप्सरा, अलका, लिली, कुल्ली भाट, छल की बीबी, बिल्लेसुर बकरिहा, काले कारनामें, चतुरी चमार, चाबुक, रवींद्र-कविता-कानन, समाज आदि। सुमित्रानंदन पंत ने भी पाँच कहानियाँ लिखी!

'संस्मरण' और ' रेखाचित्र' जैसी चित्रात्मक-विधा का आरम्भ महादेवी वर्मा की रचनाओं से होता है । महादेवी वर्मा की ' अतीत के चलचित्र', 'स्मृति की रेखाएं' और श्रृंखला की कड़ियाँ' संस्मरणात्मक शब्द चित्रों की रचनाएँ हैं । इसी युग के डॉ. रामकुमार वर्मा के एकांकी प्रसिद्ध हैं, जिनमें 'पृथ्वीराज की आँखें' एकांकी संग्रह प्रसिद्ध है । आपेन 'कबीर कारहस्यवाद' अनुसंधानात्मक ग्रंथ के साथ 'हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास' में भक्ति काल तक के हिन्दी साहित्य का व्यापक इतिहास लिखा है । ' हिमहास' कश्मीर की वादियों पर लिखा गद्य-काव्य है।

रामधारी सिंह 'दिनकर' के ' मिट्टी की ओर', ' अर्द्ध-नारीश्वर', और 'संस्कृति के चार अध्याय' प्रसिद्ध गद्य-ग्रंथ हैं । जानकी वल्लभ शास्त्री का आलोचना ग्रंथ 'साहित्य दर्शन' लोकप्रिय गद्य रचना है।

विवेच्य काल-खण्ड में धनपतराय अर्थात् मुंशी प्रेमचंद का साहित्य-जगत में पर्दापण हुआ । द्विवेदीयुग तक हिन्दी गद्य पर्याप्त विकसित हो चुका था, उसे और विकसित, तथा समृद्ध करने में मुंशी प्रेमचंद का अपूर्व योगदान रहा । प्रेमचंद ने हिन्दी-गद्य को अपनी लेखन- शैली

से जन-जन में लोकप्रिय बना दिया । आपकी सरल सरस कहानियाँ और उपन्यास इसके जीवंत प्रमाण हैं । प्रेमचंद की भाषा- शैली राष्ट्रीय एकता और भावात्मक सौहार्द स्थापित करने में कारगर सिद्ध हुई । सेवा सदन उपन्यास से लेकर योगदान तक आपकी भाषा निरन्तर शुद्ध परिष्कृत और प्रौढ़ होती गयी । आपकी रचनाएं संप्रेषणीयता का अनूठा उदाहरण प्रस्तुत करती है । इनकी प्रत्येक-रचना में सामाजिक एवं आर्थिक विषमता के वर्णन मिलते हैं साथ ही वे उनके समाधान भी दर्शाते चलते हैं। आपके उपन्यास सेवा सदन, गबन, कर्मभूमि, निर्मला, गोदान इन सबमें नैतिक व आर्थिक समस्याएं रूपायित हुई है।

प्रेमचंद यथार्थ और आदर्श के समन्वयक रचनाकार रहे हैं । उपन्यास ओर कहानी की विकासशील परम्परा में ऐतिहासिक, मनोविश्लेषणवादी तथा प्रगतिवादी उपन्यास तथा कहानियाँ लिखी गयी । इस समय के साहित्य पर फ्रायड और मार्क्स के विचारों का गहरा प्रभाव था । इस काल के लेखकों के वृन्दालाल वर्मा, प्रेमचंद, जयशंकर प्रसाद, भगवती प्रसाद वाजपेयी, शिवपूजन सहाय, चतुरसेन शास्त्री प्रमुख हैं, मनोविश्लेषणवादी रचनाकारों में, जैनेन्द्र, अज्ञेय, इलाचन्द्र जोशी, प्रगतिवादी लोकों में यशपाल का नाम उल्लेखनीय है।

साहित्य के विषय भारतीय राजनीति से भी गहरे रूप से प्रभावित थे । राष्ट्रीय आन्दोलन और गाँधीजी के अहिंसावादी सिद्धान्तों से साहित्यिक रचनाएं अछूती नहीं थी । जैनेन्द्र और अज्ञेय की रचनाओं में मनोजगत का चित्रण हो रहा था । इस धारा को नयी दिशा मिली यशपाल के साहित्य से जिन्होंने उपन्यास और कहानियों में अपने समय के समाज को अभिव्यक्त किया।

द्विवेदी युग से मुक्त निबंधकारों और आलोचकों में रामचन्द्र शुक्ल तथा श्याम सुन्दर दास का नाम उल्लेखनीय है। शुक्लजी ने 'चिन्तामणि' में मनोवैज्ञानिक और आलोचनात्मक निबंध लिखे । शुक्लजी ने साहित्य में लोकधर्म का समर्थन किया 'जो वस्तु लोकमंगल विधायनी नहीं, वह सुन्दर होने पर भी कुरूप है । ' शुक्लजी 'छायावाद' को 'कल्पना का वैभव' मानते थे। उनकी लिखी साहित्येतिहास की पुस्तक 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' प्रसिद्ध है।

आधुनिकता की प्रक्रिया को आगे बढ़ाने में शुक्लोत्तर युग का विशेष अवदान है । इस समय के लेखकों ने सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, सांस्कृतिक और कला संबंधी निबंध एवं साहित्येतिहास की अनेक पुस्तकें लिखी जिनमें डॉ. हजारीप्रसाद द्विवेदी, डॉ. नगेन्द्र, नंददुलारे वाजपेयी, प्रकाशचन्द्र गुप्त प्रमुख हैं । इनके निबंधों में जीवन और सहित्य की जर्जर रूढ़ियों का विरोध तथा स्वतंत्रता समता, राष्ट्रीयता के पक्ष में विचार व्यक्त हुए हैं।

प्रचलित अर्थ में 'एकांकी' विधा का विकास सन् 1930 के आसपास हुआ । जयशंकर प्रसाद के 'एकघूंट' एकांकी को प्रथम एकांकी माना गया । इसी क्रम में रामकुमार वर्मा कृत 'बादल की मृत्यु' और भुवनेश्वर प्रसाद का 'कारवाँ' नामक एकांकी संग्रह प्रकाशित हुए । इन एकांकियों की यह विशेषता था कि इनमें संघर्ष मय जीवन के कार्य व्यापार, आसपास की जिन्दगी के अनेक चित्र रूपायित हुए । एकांकीकार पूरी समझ के साथ जिन्दगी के प्रश्नों से जूझने लगे । इस विधा में उपेन्द्रनाथ ' अश्क' के पारिवारिक-सामाजिक एकांकी, सेठ गोविन्ददास के राजनैतिक और वैयक्तिक त्याग और संयम पर आधारित एकांकी, विष्णु प्रभाकर के आदर्शवादी

(गाँधीवाद) एकांकी, भुवनेश्वर और लक्ष्मी नारायण मिश्र के स्त्री-पुरुष सम्बन्धों पर आधारित एकांकी अपने रूप और शिल्प के कारण लोकप्रिय हुए।

1.6 स्वातंत्रयोत्तर गद्य लेखन (छठा दशक)

15 अगस्त सन् 1947 को देश स्वतंत्र हुआ । लम्बे और कठिन संघर्ष के बाद यह आजादी प्राप्त हुई थी । शासन तंत्र में नयी संवैधानिक प्रणाली, राजनीति में अवसरवादिता, भाई-भतीजावाद, अर्थतंत्र में उद्योगों का विकास, मशीनीकरण, सामाजिक क्षेत्र में परिवार का बदलता एकाकी स्वरूप, शहरीकरण और स्त्री शिक्षा ने समाज और साहित्य पर गहरे परिवर्तन की छाप छोड़ी थी । सांस्कृतिक जीवन में आस्था और विश्वास का मूल्य टूट चुका था। व्यापक सन्दर्भों में आए बदलाव ने जिन औपन्यासिक प्रवृत्तियों को जन्म दिया, उनमें 'आंचलिकता' की प्रवृत्ति तथा कहानी के क्षेत्र में 'नई कहानी' आन्दोलन प्रमुख था । फणीश्वरनाथ रेणु ने 'मैला आँचल' को आँचलिक उपन्यास कहा था। इस क्रम में शिव पूजन सहाय, नागार्जुन, शिव प्रसाद सिंह, राही मासूम रजा ने स्थानीय रंगत और समग्र मानवीय सरोकारों की रचनाएँ लिखी । उपन्यास, कहानी और नाटक-एकाकी में साहित्यिक- परिवेश की भिन्नता के कारण कथ्य और शिल्प में नवीनता आयी । 'रामराज्य' के स्वप्न भंग ने शरणाथियों, विस्थापितों, भूख-प्यासे, यंत्रणाओं को भोगते समाज को सामने ला खड़ा किया था । इन परिस्थितियों में नयापन, जीवन्तता, मौलिकता और भिन्न तरीके से जीने की ललक के साथ जो व्यक्ति उभर रहा था और जिस बदले हुए सामाजिक तत्र की रचना वह कर रहा था, उसमें बहुत कुछ एक साथ घटित हो रहा था । इसमें टूटन, विघटन, हताशा, निराशा थी तो दूसरी ओर अधिकारों के साथ जीने की चाह भी थी । ये सभी आन्तरिक-बाह्य उद्वेलन कहानी, उपन्यास और नाटकें के विषय बने।

इस धारा में जिन साहित्यकारों का अवदान रहा उनमें राजेन्द्र यादव, मन्नु भण्डारी, निर्मल वर्मा, भीष्म साहनी आदि नाटककारों में धर्मवीर भारती, मोहन राकेश, लक्ष्मी नारायण लाल, लक्ष्मीनारायण मिश्र, सुरेन्द्र वर्मा, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, मणि मधुकर जैसे नाम महत्वपूर्ण हैं । नवीन रंगमंचीय प्रयोगों में भी बाह्य साहित्य को अभिनवता प्रदान की थी।

1.7 साठोत्तरी गद्य

गद्य लेखन में 'आलोचना' के क्षेत्र में वैचारिकता मुख्य हो गयी । एक प्रकार से शास्त्रीय आलोचना के प्रतिमान समाप्त प्राय: हो गए । मुक्त बोध सामाजिक पक्ष के समर्थक आलोचक हुए । अज्ञेय ने अनुभूतिपरक आलोचना लिखी । उन्होंने मार्क्सवादको एकमात्र जीवन दर्शन मानने से इंकार किया । नामवर सिंह ने सृजनशील साहित्य में ' सृजनात्मकता' को मूल्यवान बताया । नामवर सिंह की आलोचना के पहले चरण में प्रगतिवाद की स्थापना का आधार छायावाद का विश्लेषण और प्रयोगवाद का खण्डन है जबकि उनकी आलोचना का दूसरा चरण 'नयी कहानी' और नयी कविता के प्रतिमानों की स्थापना का है।

आलोचना के क्षेत्र में मैनेजर पाण्डेय, भवदत्त पाण्डेय, गोपालदास की उपन्यास और कहानी की आलोचनात्मक पुस्तकें उपलब्ध हैं जिन्होंने गद्य विधाओं के प्रतिमानों को नये तरीके से विश्लेषित किया है।

सन् 1962 यानी गद्य साहित्य के सातवें दशक के चीन के आक्रमण के साथ ही देश की समस्याओं ने दूसरा ही मोड़ ले लिया । सामाजिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक तथा आर्थिक प्रत्येक क्षेत्र में पूँजीवाद की जड़े गहरी होती गयीं । छठे दशक के साहित्य में जो रोमांच और भाववाद के अवशेष थे वे साठोत्तरी-साहित्य में वैयक्तिक अनुभववाद में विलीन हो गए । सचेतन कहानी, सक्रिय अकहानी, समान्तर कहानी, सक्रिय कहानी और समकालीन कहानी आन्दोलन नयी दृष्टि, सक्रियता और मूल्यहीनता के विरुद्ध उठी हुई आवाज का साहित्य था । इस पीढ़ी के रचनाकारों में दूधनाथ सिंह, श्रीकांत वर्मा, कृष्णबलदैव वैद, मृदुला गर्ग, सूर्यबाला के नाम प्रकाश में आए।

1.8 गद्य की वर्तमान दशा : समकालीन गद्य

गद्य साहित्य की विविध विधाओं की परख इस निष्कर्ष पर पहुँचाती है कि समकालीन लेखन के तेवर बदल चुके हैं। अब साहित्यकार व्यक्ति जीवन की चिन्ताओं से जुड़ गया है । लेखन की प्रवृत्ति इतिहासपरक और घटना प्रधान न होकर जीवन की बुनियादी जरूरतों से साक्षात्कार की प्रक्रिया में है ।

साहित्य और आलोचना शास्त्रीय नहीं रही है । उसका सम्बन्ध समाज शास्त्र के विभिन्न आधारों से जुड़ गया है । वर्तमान सन्दर्भों में दलित और स्त्री विमर्श के मुद्दे सबसे अधिक चर्चा में हैं । सामाजिक प्रश्न भी साहित्य के विषय बन गए हैं । दलित लेखन और महिला लेखन में मानवीय संवेदनाओं की सूक्ष्म और गहरी रेखाएं उभर रही हैं । आम आदमी की जिन्दगी के बुनियादी सवाल साहित्य से अंतरंग सम्बन्ध बना रहे हैं । लेखन का विषय पौराणिक हो अथवा आधुनिक उसके सन्दर्भ को नवीन पृष्ठभूमि, नवचिन्तन और समकालीन प्रासंगिकता से जोड़कर परखने की प्रवृत्ति सामने आरही है।

एक बहुत बड़ा सवाल ' भाषा' का है । गद्य साहित्य की भाषा का प्रवाह निरन्तर बदलाव की प्रक्रिया से गुजरा है। वर्तमान साहित्य की भाषा में व्यक्ति की आन्तरिक अनुभूतियाँ व्यक्त हो रही है । भाषा का एक रूप वह भी है जिसमें वह वर्ग, जाति और सामाजिक तौर-तरीकों को व्यक्त करती हुई प्रतीत होती है । उपन्यास, कहानी और सामाजिक प्रश्नों से सम्बद्ध पुस्तकों की "भाषा के तेवर तीखे हैं । उनका प्रयोजन 'कला' की अभिव्यंजना न होकर वर्तमान सामाजिक, राजनैतिक मुद्दों तथा मानवीय सरोकारों को पूरी प्रखरता और बौद्धिकता के साथ व्यक्त करने पर बल देती है।

1.9 सारांश

हिन्दी गद्य में निबंध, उपन्यास , कहानी, नाटक, एकांकी जीवनी-साहित्य, आत्मकथा-साहित्य, रेडियो-रूपक, रेखाचित्र, संस्मरण, यात्रा-वृत्तांत, गद्यकाव्य आदि विधाओं

में साहित्य सृजन की लगभग डेढ़ सौ वर्षों की यात्रा पूरी हुई जो अभी भी अविराम साहित्य यात्रा की तरह गतिमान है।

हिन्दी गद्य के विकास में सबसे उल्लेखनीय बात यह है कि हिन्दी गद्य ने अल्पकाल में ही बड़ी तीव्र गति से मात्रात्मक और गुणात्मक रूप से विभिन्न विधाओं में बहुत अच्छी प्रगति की है । यह इस बात का प्रमाण माना जा सकता है कि हिन्दी सरल, बहुजन प्रिय और जीवित भाषा है जिसके बोलने वाले, जिसमें लिखने वाले, जिसे पढ़ने दलो ओर सुनने वालों में प्रतिभा, कर्मठता और निरंतर काम में लेने वाली अपूर्व क्षमता विद्यमान है। संभवत' इसी कारण हिन्दी गद्य ने इतनी और इस गति से विकास किया है । इस बात को निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि हिन्दी भाषा का भविष्य उज्ज्वल है।

अभिनव लेखन काल के अन्तर्गत हिन्दी गद्य की विविध विधाओं में आधुनिक जीवन-बोध, वर्तमान जीवन की विसंगतियाँ जीवन का अजनबीपन, एकाकीपन, टूटन, बिखराव, टूटते संबंध, नवजीवन का सौंदर्य, नवीन शिल्प, सपाटबयानी आदि प्रवृत्तियाँ बड़ी मुखर रही हैं । कहा जा कसता है कि अभिनव लेखन में एक नई मन' स्थिति का प्रतिबिम्ब झाँक रहा है जो एक नये रागात्मक संबंध का प्रतिफलन प्रतीत हो रहा हे । मानव जाति के संबंधों के व्यापक परिपार्श्व में मानव के संबंधों की नवीन परिकल्पना आधुनिक नवलेखन की विशेषता है । आज का नवसृजित साहित्य में जो जीवन का एक आवश्यक एवं अपेक्षित अंग है, इसके भाव, भाषा ओर शैली पक्ष उज्जवल हैं।

1.10 संदर्भ ग्रन्थ

1. हिन्दी साहित्य का इतिहास - आचार्य रामचन्द्र शुक्ल
2. हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास - डॉहजारीप्रसाद द्विवेदी .
3. हिन्दी साहित्य का इतिहास - डॉ(सम्पादक)नगेन्द्र.
4. हिन्दी साहित्य - डॉधीरेन्द्रवर्मा.
5. हिन्दी साहित्य का इतिहास - डॉशिव कुमार वर्मा.
6. निबन्धालोक - डॉ राजेन्द्र शर्मा
7. नाट्यपरिवेश- - डॉ कन्हैयालाल लाल
8. साहित्यिक निबंध - डॉ गणपति चन्द्र गुप्त
9. अनभै सांचा - डॉ मैनेजर पाण्डेय
10. हिन्दी कहानी का पहला दशक - भावदत्त पाण्डेय
11. उपन्याससंरचना- - गोपाल राय
12. समानांतर कहानियाँ - राजेन्द्र यादव
13. नयी कहानी - हेतु भारद्वाज
14. नयी कहानी के प्रतिमान - नामवर सिंह
15. हिन्दी साहित्य का इतिहास - श्याम चन्द्र कपूर

16. हिन्दी साहित्य का इतिहास - डॉ रामगोपाल शर्मा .'दिनेश'

1.11 बोधप्रश्न

प्र.1 हिन्दी साहित्य एवं भाषा में 'खड़ी बोली हिन्दी' की प्रारम्भिक स्थिति पर प्रकाश डालें।

प्र.2 ब्रजभाषा एवं राजस्थानी भाषा के गद्य-साहित्य पर टिप्पणी लिखें ।

प्र.3 भारतेन्दुयुगीन प्रमुख साहित्यकारों की गद्य-रचनाओं का परिचय दें।

प्र.4 द्विवेदी युगीन निबंध एवं आलोचना साहित्य का विकास बताएँ।

प्र.5 हिन्दी कहानी के तीसरे और चौथे दशक की प्रवृत्तियाँ बताएँ।

प्र.6 स्वातंत्र्योत्तर गद्य साहित्य के परिदृश्य का मूल्यांकन करें।

प्र.7 गद्य की वर्तमान स्थिति पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखें।

प्र.8 गद्य की विविध विधाओं के नाम तथा विकास का क्रम बताएँ।

प्र.9 हिन्दी गद्य लेखन में लघु पत्र-पत्रिकाओं का योगदान सिद्ध करें।

इकाई-2

हिन्दी कहानी का उद्भव व विकास

इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य

2.1 प्रस्तावना

2.2 हिन्दी कहानी का इतिहास

- 2.2.1 हिन्दी कहानी का आविर्भाव
- 2.2.2 हिन्दी की प्रथम कहानी
- 2.2.3 प्रसाद और उनकी कथाधारा
- 2.2.4 प्रेमचन्द और उनकी कथाधारा
- 2.2.5 मनोवैज्ञानिक कहानी
- 2.2.6 स्वातंत्रयोत्तर कहानीकार की कथादृष्टि में परिवर्तन
- 2.2.7 हिन्दी कहानी के विभिन्न आन्दोलन
  - (क) नयी कहानी
  - (ख) सचेतन कहानी
  - (ग) अकहानी
  - (घ) समान्तर कहानी
  - (च) जनवादी कहानी
  - (छ) समकालीन कहानी

2.3 सारांश

2.4 संदर्भ ग्रन्थ

2.5 बोध प्रश्न

2.0 उद्देश्य

आधार पाठ्यक्रम स्नातक प्रथम वर्ष की यह 02 इकाई है । इसमें आप हिन्दी कहानी के उद्भव और विकास का अध्ययन करेंगे । इस इकाई को पढ़ने के बाद आप -

- हिन्दी कहानी के विकास की पृष्ठभूमि से परिचित हो सकेंगे।
- इसी पृष्ठभूमि में आप भारत में कहानी की परम्परा से परिचित हो सकेंगे ।
- इस इकाई में आप हिन्दी कहानी के आरम्भिक चरण का परिचय प्राप्त कर सकेंगे ।
- इस इकाई में आप प्रेमचंद और प्रसाद की कहानी परम्पराओं से परिचित हो सकेंगे तथा दोनों का अन्तर समझ सकेंगे।
- इस इकाई में आप मनोवैज्ञानिक कहानी धारा का परिचय प्राप्त कर सकेंगे ।
- इस इकाई में आप स्वातंत्रयोत्तर युग में उपजे हिन्दी कहानी के विभिन्न आन्दोलनों का परिचय प्राप्त कर सकेंगे ।

2.1 प्रस्तावना

हिन्दी कहानी का उद्भव और विकास भारत की प्राचीन कथाओं - जातक कथा, पंचतंत्र, हितोपदेश आदि से न होकर अंग्रेजी साहित्य की 'शॉर्ट स्टोरी से' माना जाना चाहिए । पश्चिम में कहानी एक लोकप्रिय साहित्य विद्या के रूप में स्थापित हो चुकी थी । हिन्दी और अन्य भारतीय भाषाओं में पश्चिम का कहानी साहित्य धीरे-धीरे लोकप्रिय होने लगा था । उन्नीसवीं सदी के अंतिम दशक और बीसवीं सदी के आरम्भिक वर्षों में बंगला और मराठी में कहानी लेखन का आरम्भ हुआ । हिन्दी साहित्यकारों ने इन्हीं से प्रेरणा ग्रहण कर कहानी लेखन का श्री गणेश किया। देखते ही देखते यह साहित्य विधा अत्यन्त लोकप्रिय हो गई और कहानीकारों का एक विशाल वर्ग सामने आने लगा।

देखा जाये तो हिन्दी के कहानी साहित्य में वास्तविक मोड़ तब आया जब प्रेमचन्द की रचनायें हिन्दी की पत्रिकाओं में प्रकाशित होने लगी । शीघ्र ही कहानी लोकप्रिय और साहित्यिक विधा के रूप में स्थापित हो गई । इस पाठ के अगले पृष्ठों में हिन्दी कहानी के प्रादुर्भाव और विस्तार की रोचक सामग्री आपको देखने को मिलेगी।

2.2 हिन्दी कहानी का इतिहास

2.2.1 हिन्दी कहानी का आविर्भाव

उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में हिन्दी में हम खड़ी बोली के गद्य का उन्मेष देखते हैं और हिन्दी गद्य के विकास के साथ ही हिन्दी कहानी को उत्पत्ति के सूत्रों को खोजा जा सकता है ।सन् 1800 में अपने अफसरों को स्थानीय भाषाएँ सिखाने के लिए अंग्रेजों ने फोर्ट विलियम कॉलेज की स्थापना की और कुछ शिक्षकों को हिन्दी कहानी लिखने का कार्य सौंपा जिनमें प्रमुख हैं - लल्लूलाल कृत्त बैताल पचीसी और प्रेमसागर, सदल मिश्र कृत ''नासिकेतोपाख्यान'' । इसी समय मुंशी ईशा अल्ला खाँ ने रानी केतकी की कहानी' लिखी जिसे डॉ.लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय जैसे विद्वान हिन्दी की पहली कहानी मानते हैं।इसी दौरान सदासुखलाल ने 'सुखसागर' की रचना की । किन्तु इन रचनाओं के कथासूत्र संस्कृत से जुड़े हैं और इन रचनाओं में भाषा और शिल्प का प्रदर्शन मात्र है। इनमें से किसी रचना को मौलिक कहानी नहीं कहा जा सकता। ईशा अल्ला खाँ की रानी केतकी की कहानी' प्रयोगात्मक रूप से लिखी गयी थी किन्तु कलात्मक दृष्टि से इसका रचना विधान आधुनिक कहानी जैसा नहीं था । हिन्दी कहानी का आविर्भाव हम भारतेन्दु युग की पत्रिकाओं में पाते हैं । किन्तु 1867 से 1900ई. तक प्रकाशित रचनाओं में कथा तत्त्व का समावेश तो मिलता है किन्तु स्वतंत्र कथा-रचना नहीं मिलती।

हिन्दी कहानी के विकास में सन् 1900 में सरस्वती का प्रकाशन एक निर्णायक घटना की तरह है । 'सरस्वती' के आरम्भिक अंकों में कहानी को आख्यायिका या गल्प की संज्ञा से सम्बोधित किया गया है । किन्तु यह भी सच है कि हिन्दी कहानी के आरम्भ में जो भी प्रयत्न हुए वे सरस्वती के मंच से ही हुए।

2.2.2 हिन्दी की प्रथम कहानी

हिन्दी की प्रथम कहानी कौन-सी है इस बात को लेकर विद्वानों में मतभेद है । 1900 में प्रकाशित किशोरीलाल गोस्वामी की 'इन्दुमती' कहानी पर 'टैम्पैस्ट' की छाया है अत: वह मौलिक कहानी नहीं है। 1903 में प्रकाशित रामचन्द्र शुक्ल की 'ग्यारह वर्ष का समय' से पूर्व 1901 में छत्तीसगढ़ 'मित्र' में माधवप्रसाद सप्रे की 'एक टोकरी भर मिट्टी' कहानी को श्री देवीप्रसाद शर्मा हिन्दी की प्रथम कहानी मानते हैं। स्वयं आचार्य रामचन्द्र शुक्ल बंगमहिला की दुलाईवाली कहानी, जो 1907 में प्रकाशित हुई थी, हिन्दी की प्रथम मौलिक कहानी मानते हैं। डॉ. बच्चन सिंह के अनुसार हिन्दी की प्रथम कहानी किशोरीलाल गोस्वामी की 'प्रणयिनी परिणय' है जो 1887 में लिखी गयी थी किन्तु स्वयं लेखक ने इस रचना को उपन्यास कहा है । राजेन्द्र यादव हिन्दी की प्रथम कहानी चन्द्रधर शर्मा 'गुलेरी' की 'उसने' कहा था को मानते. हैं क्योंकि 1915 में छपी यह कहानी सजीव स्थानीय विवरण और पूर्वाभास शैली के प्रयोग और उपखण्डों के संघटन के कारण प्रथम मौलिक कहानी है। इस सवाल पर भिन्न मत हैं किन्तु ऐसा लगता है कि माधवप्रसाद सप्रे की 'एक टोकरी भर मिट्टी' हिन्दी की पहली कहानी है किन्तु इस दिशा में होने वाले अनुसंधान इस स्थापना को बदल भी सकते हैं।

यह एक सुखद संयोग है कि हिन्दी कहानी को अपने आरम्भिक काल में ही प्रेमचन्द और जयशंकर प्रसाद जैसे कहानीकार मिले जिनकी साधना ने हिन्दी कहानी के विकास को ऐसी गति प्रदान की कि यह विधा कलात्मक दृष्टि से बहुत शीघ्र अपने शीर्ष पर पहुँच गयी । यहाँ यह तथ्य भी रेखांकित करने योग्य है कि हिन्दी में जिस युग में कहानी लेखन की परम्परा आरम्भ हुई तब तक पश्चिम में कहानी अपने शीर्ष पर पहुँच चुकी थी । पश्चिम में सभी अग्रणी कहानीकार बीसवीं शताब्दी के आरम्भ से पहले ही हो चुके थे।

प्रेमचन्द और प्रसाद हिन्दी कहानी के विकास युग में दो प्रवृत्तियों के प्रतिनिधियों के रूप में प्रतिष्ठित हैं । इन्हीं दोनों प्रवृत्तियों का अनुकरण और प्रभाव पूरे विकास युग पर परिलक्षित होता है । प्रेमचंद मूलत: आदर्शोनमुखी यथार्थवादी परम्परा के प्रतीक हैं तो प्रसाद भावमूलक परम्परा के अधिष्ठाता हैं । तुलनात्मक दृष्टि से प्रसाद की भावमूलक परम्परा का अपेक्षाकृत कम कहानीकारों ने अनुकरण किया जबकि प्रेमचन्द की यथार्थवादी परम्परा को अधिक कहानीकारों ने स्वीकार किया । व्यापक रूप से विकास युग की समूची कहानी यात्रा को प्रेमचन्द और प्रसाद की कहानी कला के माध्यम से समझा जा सकता है । इसलिए इन दोनों कहानीकारों पर विस्तारपूर्वक विचार करना तथा इनकी कहानी कला की विवेचना करना आवश्यक लगता है।

2.2.3 प्रसाद और उनकी कथाधारा

वस्तुत: प्रसाद मानव मन के चितरे हैं इसलिए प्रसाद की कहानियों में प्रेम, करूणा, अहिंसा, त्याग, राष्ट्रप्रेम जैसे मूल्यों की स्थापना के प्रति आग्रह मिलता है । कौतूहल, जिज्ञासा, मनोरंजन, रोमांस, साहसिकता के साथ-साथ कथा की विधा का जो प्रयोग एक विशेष प्रकार की मूल्यवत्ता को स्थापित करने के लिए प्रसाद करते हैं वह उनकी कहानी कला का वैशिष्ट्य है । उनकी कहानियों में छायावादी कलात्मकता, भावुकता, प्रतीकात्मकता और मानवीकरण

मिलता है।'प्रतिमा', 'करूणा की हवज्य', 'प्रलय', 'दुखिया' जैसी कहानियों में ये तत्त्व मिल जाते हैं।

प्रसाद की कहानियाँ शिल्प की दृष्टि से भी बहुत महत्त्वपूर्ण है । प्रसाद अपनी कहानियों को रचाव के स्तर पर अलग तरह की ऊँचाई प्रदान करने का प्रयास करते हैं इसलिए उनकी कहानियाँ कहीं गद्यगीत शैली में लिखी गयी हैं तो कहीं प्रतीकात्मक शैली में । वे कहानी के विकास में घटनाओं का संयोजन बड़ी कुशलता से करते हैं, पात्रों के अन्तर्द्वन्द्व को पूरे तीखेपन से उभारते हैं, कहानी को धीरे-धीरे चरम सीमा की ओर ले जाते हैं, चरम सीमा कभी किसी मनोवैज्ञानिक सत्य की प्रतिष्ठा करते हैं तो कहीं घटना की नाटकीयता से । किन्तु इसका तात्पर्य यह नहीं है कि प्रसाद अपने समय की समस्याओं के प्रति पूरी तरह उदासीन थे तथा उनकी कहानियों में यथार्थ जीवन का चित्रण ही नहीं है । तत्कालीन समाज की गरीबी, निरीहता शोषण और असमानता को प्रसाद ने अपनी कहानियों में पूरा स्थान दिया है । 'चूड़ीवाली' कहानी में एक वैश्या अपनी पवित्रता और संयम के साथ अपनी घृणित दुनिया से निकलकर एक प्रतिष्ठित व्यक्ति विजयकृष्ण की बहू बनकर अपने संकल्प को सफलता में बदल देती है । 'नीरा कहानी में एक धनी और प्रतिष्ठित व्यक्ति अकिंचन और अपाहिज नीरा से विवाह कर समाज की सारी मान्यताओं को ठुकरा देता है।

प्रसाद स्कूल के कहानीकार -

यद्यपि प्रेमचन्द की कहानी कला और प्रसाद की कहानी कला के तत्त्व एक जैसे ही हैं किन्तु अन्तर यही हैं कि प्रेमचन्द जहाँ यथार्थवादी हैं वहीं प्रसाद कल्पनाशील । दोनों की जीवन के प्रति दृष्टियाँ भिन्न हैं तो दोनों में जीवन दर्शन की भिन्नता भी है । प्रेमचन्द जीवन की समस्याओं से रूबरू होते हुए जन जीवन के चित्रकार हैं तो प्रसाद की कला दृष्टि भावनात्मकता, करूणा, प्रेम, आनन्द और सौन्दर्य से बनी हैं । उनके लिए कहानी का लक्ष्य इन्हीं मूल्यों की अभिव्यक्ति है । प्रसाद स्कूल के प्रमुख कहानीकार इस प्रकार हैं - आचार्य चतुरसेन शास्त्री, रामकृष्ण दास, बेचन शर्मा उग्र', वानस्पति पाठक, विनोदशंकर व्यास।

2.2.4 प्रेमचन्द और उनकी कथाधारा

प्रेमचन्द ने ढाई सौ से अधिक कहानियाँ लिखीं तथा अपने पूरे जीवनकाल में वे कहानियाँ लिखते रहे । 'दुनिया का सबसे अनमोल रत्न' से लेकर 'कफन' तक उनकी कहानियाँ पर्याप्त लम्बी तथा महत्त्वपूर्ण हैं और इस यात्रा के विभिन्न पड़ावों पर प्रेमचन्द की रचनात्मक चेतना को विभिन्न स्तरों पर स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है, प्रेमचन्द की कहानियों की दुनिया समान नहीं है, इसलिए डॉ. रामविलास शर्मा ने कहा है कि प्रेमचन्द की 'कहानियाँ कला और विषय वस्तु के लिहाज से काफी ऊँचे-नीचे स्तरों की हैं..... उनके उपन्यासों के बीच उतना बड़ा फासला नहीं है जितना उनकी कहानियों के बीच है' किन्तु प्रेमचन्द हिन्दी के पहले कहानीकार हैं जिन्होंने कहानी विधा की कल्पनाविलास और नीति उपदेश की स्थूलताओं से मुक्त कर सामाजिक यथार्थ की जमीन पर खड़ा किया, उन्होंने कहानी को पाठकों के मनोरंजन तथा मानसिक वृत्ति के साधन के साथ-साथ उसे सामाजिक सरोकारों से जोड़कर पाठकों में कहानी के द्वारा सामाजिक चेतना के प्रकाश पर बल दिया । प्रेमचन्द के लिए कहानी लेखन का

सम्बन्ध बुनियादी तौर पर सामाजिक परिवर्तन से है । उन्होंने स्पष्ट स्वीकार किया है कि, 'मैं और चीजों की तरह कला को भी उपयोगिता की तुला पर तोलता हूँ।' वे कहानी के विषय में जो सोचते थे, इन शब्दों से स्पष्ट हो जाता है' हमने जिस युग को भी पार किया है उसे जीवन से कोई मतलब न था, हमारे साहित्यकार कल्पना की सृष्टि खड़ी कर उसमें मनमाने तिलिस्म बाँधा करते..... साहित्य से जीवन का कोई लगाव है, यह कल्पनाहीन था, कहानी है, जीवन है । दोनों परस्पर विरोधी वस्तुएँ समझी जाती थीं। ' स्पष्ट है कि प्रेमचन्द ने हिन्दी कहानी को जीवन तथा उसके सरोकारों के सामने लाकर खड़ा कर दिया।

'पंच परमेश्वर' कहानी में प्रेमचन्द की यह आस्था पूरी तन्मयता के साथ मुखरित हुई हैं, किन्तु मनुष्य का सद्वृत्तियों की विजय के चक्कर में प्रेमचन्द उन मूल्यों का अनुमोदन कर जाते हैं जो अपनी प्रासंगिकता खो चुके हैं। 'बड़े घर की बेटी' कहानी में प्रेमचन्द को अहसास तो हो गया है कि संयुका परिवार प्रथा अब खण्ड हो चुकी है तथा उसे जिलाए रख सकना अब असम्भव नहीं है, किन्तु कहानी का अन्त जिस काल्पनिक आदर्शवाद की स्थापना के साथ होताहै। वह यथार्थ जीवन के विरूद्ध तो है ही, ऐसा लगता है कि प्रेमचन्द ढहती संयुक्त परिवार व्यवस्था की हिमायत कर रहे हैं।

तीसरे तथा अन्तिम दौर में प्रेमचन्द न केवल जीवन यथार्थ को अपनी रचनात्मक चेतना का अंग बना लेते हैं । प्रत्युत यथार्थ को रूपायित करते समय उनकी आदर्शवादी भंगिमा भी यथार्थवादी हो जाती है, प्रेमचन्द का यह रूप हमें 'शतरंज के खिलाड़ी, 'बड़े भाई साहब', 'बूढ़ी काकी', 'ठाकुर का कुआँ', 'सवा सेर गेहूँ, 'गुल्ली डण्डा, 'नशा', 'पूस की रात' तथा 'कफन' जैसी कहानियों में मिलता है, 'शतरंज का खिलाड़ी के मिर्जा सज्जादअली और मीर रोशन अली राष्ट्र की समस्याओं तथा हलचलों से बेखबर अपनी जायदादों के सहारे ऐय्याशी कर रहे थे तथा अपने शौक शतरंज में डूबे थे।

'पूस की रात तथा 'कफन' उपर्युक्त कहानियों से आगे की कहानियाँ हैं, 'पूस की रात' में खेत के उजड़ने से हलकू प्रसन्न है जैसे उसने खेत के मालिक से बदला ले लिया है, उसकी पत्नी दुःखी है कि अब मजदूरी करके माल गुजारी भरनी पड़ेगी, पर हलकू इस भयानक स्थिति के अहसास के बावजूद प्रसन्न है क्योंकि खेत उजड़ने पर अब ठंड की रात में खेत पर सोना तो नहीं पड़ेगा, 'कफन' के घीसू-माधव में तो सारा पारिवारिक और सामाजिक सद्भाव बुझ चुका है । उन दोनों को उस बुढ़िया के मर जाने की प्रतिष्ठा है जिसने उनके घर को व्यवस्था दी । पर उनके लिए बुढ़िया से ज्यादा कीमत भुने हुए आलुओं की है, गर्म-गर्म आलुओं को जल्दी-जल्दी खाने की घटना उनकी असहाय गरीबी का अहसास देती है, घीसू को बीस साल पहले ठाकुर की बारात में खाये व्यंजनों की याद आती है।

प्रेमचन्द की कहानियों की सबसे बड़ी शक्ति इस तथ्य में हैं कि वे कहानी लिखते नहीं, कहते हैं । डी. रामविलास शर्मा ने सवा सेर गेहूँ के प्रारम्भिक अंश 'किसी गाँव में शंकर नाम का एक कुरमी किसान रहता था । सीधा-सादा, गरीब आदमी था, अपने काम से काम, न किसी के लेने में न किसी के देने में' - उद्धृत करते हुए लिखा है, 'कथा कहने का ढंग हिन्दुस्तान के हर गाँव में कहानी कहने वाला और सुनने वाला जानता है प्रेमचन्द की हर कहानी का लहजा

इतना सहज और सरल है कि पाठक को खींचता है, प्रेमचन्द के दिमाग में शायद यह बात रही हो कि वे केवल बुद्धिजीवी वर्ग के लोगों के लिए कहानी नहीं लिख रहे, वे देश के अर्द्ध-शिक्षित, अनपढ़ तथा गाँवों में बसने वाले साधारण व्यक्ति तक अपनी बात पहुँचाना चाहते थे । इसलिए उन्होंने इस पद्धति को अपनाया जिससे यहाँ का पाठक या श्रोता अच्छी तरह परिचित था।

प्रेमचन्द स्कूल के कहानीकार -

प्रेमचन्द की कहानी कला का फलक बहुत विस्तृत है और प्रेमचन्द ने हिन्दी कहानी को वह ऊँचाई प्रदान की जिसका अनुकरण आज तक की पीढ़ियाँ कर. रही हैं - विश्वम्भरनाथ जिज्जा, जी. पी. श्रीवास्तव, राजा राधिकारमण सिंह, विश्वम्भरनाथ शर्मा 'कौशिक', पंडित ज्वालादत्त शर्मा, गोविन्दवल्लभ पन्त, सुदर्शन, वृंदावनलाल वर्मा, भगवती प्रसाद वाजपेयी ।

चन्द्रधर शर्मा 'गुलेरी' -

विकास युग में ही चन्द्रधर शर्मा 'गुलेरी' ऐसे कहानीकार हैं जिन्हें प्रसाद 'या प्रेमचन्द की परम्परा में नहीं रखा जा सकता किन्तु वे इस युग के बहुत महत्त्वपूर्ण कहानीकार हैं । हो सकता है उन्होंने और भी कहानियाँ लिखी हों किन्तु अभी तक उनकी तीन कहानियाँ ही प्रकाश में आयी हैं - उसने कहा था, सुखमय जीवन, बुद्धू का कांटा । ये तीनों ही सामाजिक कहानियाँ हैं जिनमें बुद्धू का कांटा और सुखमय जीवन तो पठनीय और रोचक कहानियाँ है। उनकी 'उसने कहा था' हिन्दी की एक क्लासिक कहानी है । कहानी के आरम्भिक युग में यह कहानी एक चमत्कार है क्योंकि इस कहानी में शिल्प की नवीनता, वातावरण की सृष्टि, भाषा की प्रौढ़ता, चरित्र-चित्रण की पूर्णता आदि ऐसे गुण हैं जो इस कहानी को विशिष्ट बनाते हैं । इसीलिए राजेन्द्र यादव कहते हैं कि 'उसने कहा था' हिन्दी कहानी की पहली कहानी है । इस कहानी में पूर्वदीप्ति शैली का प्रथम बार उपयोग हुआ है ।

संक्रान्ति काल -

हिन्दी कहानी के विकास युग में प्रसाद और प्रेमचंद दो ऐसे कहानीकार हैं जो समूचे विकास युग की प्रवृत्तियों का प्रतिनिधित्व करते हैं । प्रसाद और प्रेमचंद की कहानियाँ दो प्रवृत्तियों की प्रतीक है ।

प्रसाद और प्रेमचंद के बाद हम पाते हैं कि कहानी ही नहीं जीवन में ही अनेक प्रकार की प्रवृत्तियाँ विकास पर रही हैं, जीवन दर्शन और व्यक्ति विश्लेषण की सर्वथा नयी प्रविधियाँ उदित हो रही है । इन प्रविधियों से कहानी कला का विस्तार हो रहा है और नये-नये प्रयोगों का मार्ग प्रशस्त हो रहा है । इस युग की कहानियों पर विचार करने से पूर्व इस युग की प्रवृत्तियों पर विचार कर आवश्यक है ।

मनोविज्ञान -

प्रेमचंद तो कहानी में किसी मनोवैज्ञानिक सत्य की प्रतिष्ठा आवश्यक मानते थे । संक्रान्ति युग तक आते-आते रचनाकारों के लिए व्यक्तित्व का मनोजगत भी उतना ही प्रमुख हो गया जितना बाहरी संसार । पश्चिम से आये मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त के ज्ञान ने इस युग के कथाकारों को यह समझने पर विवश किया कि मनुष्य का अन्तर्जगत उसके बाहरी जगत से कहीं अधिक प्रभावशाली है और उसके इस जगत की जटिलताएँ उसे हर क्षण प्रभावित करती रहती है ।

मनोविश्लेषण पद्धति से हमें व्यक्ति के अन्तर्जगत की गुत्थियों को समझने की क्षमता भी प्राप्त हुई तथा व्यक्तित्व की जटिलताओं को विश्लेषित करने की समझ भी मिली । मनोविश्लेषण द्वारा व्यक्ति के व्यक्तित्व, चरित्र, आचरण और उसके व्यवहार का आकलन किया जाने लगा । इतना ही नहीं इसी दृष्टिकोण से सामाजिक प्रश्नों को भी समझने का प्रयास किया जाने लगा । अपराध, विद्रोह, पाप, पतन जैसे पत्ययों को नयी तरह से समझने की प्रक्रिया आरम्भ हुई तो पापी, विद्रोही, अपराधी व्यक्तियों का आकलन भी करूणा और दया के साथ करने की परम्परा आरम्भ हुई । स्त्री-पुरूष सम्बन्धों को नये सिरे से व्याख्यायित किया जाने लगा तथा इन सम्बन्धों में भी व्यक्ति के महत्त्व को समझा जाने लगा ।

2.2.5 मनोवैज्ञानिक कहानी

इस युग के जैनेन्द्र कुमार, अज्ञेय आदि कहानीकार बाहरी सामाजिक टकराहटों की अपेक्षा भीतरी तनावों पर अपनी दृष्टि अधिक केन्द्रित करते हैं । इन कहानीकारों की दृष्टि अब मानव व्यक्तित्व की भीतरी पर्तों में झाँकने की ओर उन्मुख है और इनकी कहानियाँ समाजशास्त्र, मनोविज्ञान, राजनैतिक से वैयक्तिक और सार्वजनिक से व्यक्तिगत की ओर बढ़ती है । कहानी की यह यात्रा जैनेन्द्र और अज्ञेय से आरम्भ होती है और नयी कहानी के उन्मेष तक चलती दिखायी देती है ।

जैनेन्द्र कुमार-

जैनेन्द्र हिन्दी के पहले कहानीकार हैं जो पाठकों का ध्यान प्रेमचंद और प्रसाद की कहानियों से हटाकर अपनी और खींचते हैं । प्रेमचंद और प्रसाद के बाद हिन्दी कहानी के क्षेत्र में जैनेन्द्र ही बड़े कहानीकार के रूप में प्रतिष्ठित होते हैं ।

जैनेन्द्र की कहानियों की सबसे बड़ी विशेषता यही है कि वे घटनासूत्र तथा कथानक के विकास की अपेक्षा चरित्र-चित्रण, वातावरण और मन: स्थितियों के अंकन पर अधिक ध्यान देते हैं । मार्कण्डेय का जैनेन्द्र की कहानी कला के बारे में यह वक्तव्य काफी महत्त्वपूर्ण है, पहले जैनेन्द्र ने अपने मूल्यों के स्रोत के रूप में एक काल्पनिक संसार रचकर उसे अशरीरी पात्रों की छाया से आबाद किया और एक झूठी कथावस्तु के सहारे कहानी गढ़नी चाही । राजेन्द्र यादव उनके बारे में नयी बात दूसरी तरह से कहते हैं, जैनेन्द्र काफी हद तक अन्योक्ति, नीतिकथा, फैन्टेसी और बुद्धिगम्य स्थितियों के रूप में रचित कहानी का इस्तेमाल दार्शनिक निष्कर्षों के लिए करते हैं ।

जैनेन्द्र की कहानी कला का मूलाधार जीवन-दर्शन और मनोविज्ञान है । इन्हीं दोनों तत्त्वों से उन्होंने हिन्दी कहानी को समृद्ध किया है क्योंकि उन्होंने संख्या में काफी कहानियाँ लिखी हैं । वे अपनी दार्शनिक दृष्टि के बारे में 'एक रात' की भूमिका में स्पष्ट भी कर देते हैं, 'दार्शनिक तत्त्व के रूप में सत्य अत्यन्त गरिष्ठ है, इस रूप में वह सत्य अपरोक्ष भी है । वह अधिकांश के लिए अग्राह्य है । उसकी दृष्टांतगत चित्रगत और कथागत रूप में परिवर्तित करो, तभी वह रूचिकर और कार्यकारी बनता है ।"

उनकी कहानियों की भाषा जैनेन्द्र की अपनी भाषा है जिसमें कोई जटिलता नहीं, कोई अस्पष्टता नहीं, कोई बोझिलता नहीं । छोटे-छोटे वाक्य और सरल शब्दावली यह जैनेन्द्र की सबसे बड़ी ताकत है जो उन्हें हिन्दी का एक विशिष्ट कहानीकार बनाती है ।

अज्ञेय-

सच्चिदानंद हीरानंद ने अपने ही लेख अज्ञेय के बारे में 'हिन्दी की प्रतिनिधि कहानियाँ' की भूमिका में लिखा है, अज्ञेय प्रथमत: मानव-चरित्र से सम्बद्ध कथाकार हैं । उनकी कहानियों में व्यक्तियों के चरित्र और अभिप्राय: का परिष्कृत विश्लेषण किया गया है और कहानी की रचना में कथाबन्ध की असामान्य दक्षता प्राप्त होती है । उनकी कहानी सामाजिक संघर्ष और भेदभाव की तस्वीर भी खींचती है और कई में अन्याय के विरूद्ध एक सशक्त आवाज भी उठायी गयी है किन्तु अज्ञेय का दृष्टिकोण प्राथमिक तौर से एक कवि का है जो सामाजिक संघर्ष के केवल वैयक्तिक, निजी को अपना विषय बनाता है । इससे उनकी रचना दृष्टि स्पष्ट हो जाती है ।

जैनेन्द्र को दार्शनिक कहानीकार माना गया है जबकि अज्ञेय को मनोवैज्ञानिक ।

अज्ञेय का गद्य अपने आप में अप्रतिम है । शब्द की ताकत को समझते हुए उसका प्रयोग करने की क्षमता जितनी अज्ञेय में है उतनी बहुत कम लोगों में होती है । उन्होंने अपनी कहानियों की कई शैलियों में लिखकर रोचक और पठनीय बनाया है । अज्ञेय की रोज' कहानी एक विशिष्ट कहानी है जो संवेदना के स्तर पर नयी कहानी से भी आगे की कहानी है ।

यशपाल-

यशपाल इस युग के सबसे महत्वपूर्ण कहानीकारों में है । विचारधारा से वामपंथी और जीवन में क्रान्तिकारी रहने के कारण उनकी रचना दृष्टि का निर्माण द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद की चेतना से हुआ है । उनकी कहानियाँ निर्वैयक्तिक सामाजिक समस्याओं के धरातल पर टिकी हैं क्योंकि यशपाल के लिए रचनाकर्म मनुष्य के संघर्ष में शामिल होने का माध्यम है । वे अपनी रचनाओं में सर्वहारा की पक्षधरता करते हैं और पूँजीवादी शोषक व्यवस्था का विरोध करते हैं।

उनकी कहानियों का एक ओर पक्ष स्त्री-पुरूष संबन्धो की नयी व्याख्या है । उनकी कहानियाँ समस्या प्रधान हैं जिनमें समसामयिकता और यथार्थवादिता के साथ मनोविश्लेषण भी मिलता है । यशपाल का अपनी कहानियों में कथा विधान की विविधता और प्रयोग के प्रति उतना आग्रह नहीं है जितना लक्ष्य के प्रति है । 'फूलों का कुर्त्ता'' कहानी में वे सामाजिक मान्यताओं के खोखलेपन पर प्रहार करते हैं । वे सामाजिक, धार्मिक और व्यक्तिगत रूढ़ियों के प्रति बहुत तल्ख हैं । 'परदा' यशपाल की एक श्रेष्ठ कहानी है जिसमें वे मध्यवर्ग के व्यक्ति के झूठे अहं का बड़ी कुशलता से चित्रण करते हैं ।

इलाचन्द्र जोशी-

संक्रान्ति युग में इलाचन्द्र जोशी अकेले ऐसे कथाकार हैं जिन्हें मनोवैज्ञानिक कहानीकार कहा जा सकता है । उनकी अपनी मान्यता है, 'आधुनिक समाज में पुरूष की बौद्धिकता ज्यों- ज्यों बढ़ती जा रही हैं त्यों-त्यों उनका अहंभाव तीव्र से तीव्रतर और व्यापक से व्यापकतर रूप ग्रहण करता चलता है । अपने तृप्त न होने वाले अहं भाव की अस्वाभाविक पूर्ति की चेष्टा में जब

पग-पग पर स्वाभाविक सफलता मिलती है, तो वह बौखला उठता है और उसके बौखलाहट की प्रतिक्रिया के फलस्वरूप वह आत्मविनाश के पहले अपने आस-पास के संसार के विनाश की योजना में जुट जाता है ।"

उपेन्द्र नाथ अश्क-

अश्क जी की कहानियों के पात्र सामान्य जिन्दगी के साधारण पात्र होते हैं । उनकी कहानियों में पति-पत्नी, किसान, मजदूर, कर्मचारी, व्यवसायी आदि सभी तरह के पात्र मिलते हैं । 'डाची' कहानीकार का बाकर, 'काले साहब' का रिक्शावाला, 'उबाल' का चंदन 'तीन सौ चौबीस' का हैदर आम आदमी है जो जीवन-संघर्ष में जूझ रहे हैं । ये पात्र यथार्थवादी पात्र हैं किन्तु अश्क की कहानियों में कुछ पात्र ऐसे भी हैं जिनकी रचना मनोवैज्ञानिक दृष्टि से हुई है और इन्हें 'टाइप' पात्र कहा जा सकता है । 'पिंजरा कहानी की शान्ति हमारे ह्रासोन्मुख समाज का प्रतीक है तो 'पत्नीव्रत' के खन्ना साहब स्वार्थी वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं । किन्तु विशेष बात यह है कि अश्क की कहानियों के पात्र मानवीय धरातल पर टिके है इसलिए वे जीवंत लगते है ।

इनके अतिरिक्त इस युग में अन्य उल्लेखनीय कहानीकार हैं - भगवतीचरण वर्मा, सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला, पहाड़ी आदि । भगवतीशरण वर्मा प्रेमचंद की परम्परा के कहानीकार हैं । उनकी प्रसिद्ध कहानी 'प्रायश्चित' समाज के अन्धविश्वास की झूठी मान्यताओं पर तीखा व्यंग्य करती है तो 'मुगलों ने सल्तनत बख्श दी' कहानी हमारे देश के निवासियों की कहानी का चित्रण बड़े कल्पनात्मक ढंग से करती है । निराला जी वैसे तो छायावादी काव्यधारा के प्रमुख स्तम्भ हैं किन्तु उन्होंने यथार्थवादी कहानियाँ भी लिखी हैं । इसी युग में प्रमुख कहानीकारों में पहाड़ी का नाम भी लिया जाता है । वे मनोवैज्ञानिक धारा के कहानीकार हैं किन्तु उनकी कहानियों को मूल समस्या सैक्स समस्या है ।

चौथे दशक में साहित्य का मंच प्रगतिवादियों के हाथ में है किन्तु पाँचवे दशक में भारत में गहरी उथल-पुथल होती है । दूसरे महायुद्ध की पृष्ठभूमि में स्वतंत्रता का आन्दोलन तीव्र होता है । भारत छोड़ो आन्दोलन का प्रभाव पूरे देश पर पड़ता है । आजादी मिलती है तो देश को विभाजन की त्रासदी झेलनी पड़ती है और मारकाट के दृश्य लोगों को देखने पड़ते हैं । तीव्र राजनैतिक गतिविधियों के चलते 20वीं शताब्दी के पाँचवे दशक में हिन्दी कहानी की गति बहुत तेज नहीं रह पाती । किन्तु 1950 के बाद हिन्दी कहानी का विकास अपनी पूरी गरिमा के साथ होने लगता है और साहित्य के क्षेत्र में हम नयी-नयी प्रवृतियों का उन्मेष देखते हैं । हम छठे दशक में पाते हैं कि प्रगतिवादी हिन्दी कविता की उन प्रवृत्तियों पर प्रहार कर रहे हैं जिनका प्रतिनिधित्व अज्ञेय कर रहे थे तो कथा के क्षेत्र में जैनेन्द्र की व्यक्तिवादी चेतना भी उनकी आलोचना के केन्द्र में आ जाती है । इस तरह बहस के स्तर पर भी नयी पीढ़ी के रचनाकारों में एक नयी चेतना और ऊर्जा का उन्मेष हम स्वातन्त्र्योत्तर काल में पाते हैं और यही वह प्रस्थान बिन्दु हैं जहाँ से हिन्दी कहानी की नयी कहानी का परिदृश्य उभरता है । संक्षेप में स्वातन्त्र्योत्तर युग में भारतीय जीवन में परिवर्तन के विभिन्न रूपों को हम इन घटनाओं में देख सकते हैं -

2.2.6 स्वातन्त्र्योत्तर कहानीकार की कथा-दृष्टि में परिवर्तन

हिन्दी कहानी के प्रारम्भिक काल में कथाकार की दृष्टि घटनाओं तथा पात्रों के माध्यम से किसी नैतिक आदर्श तक पहुँचने की रही । प्रेमचन्द की कहानियों में भी यद्यपि सामाजिक समस्याओं तथा जीवन के यथार्थ के प्रति पूर्ण जागरूकता द्रष्टव्य है तथापि वे किसी सामाजिक आदर्श को सामाजिक या पारिवारिक यथार्थ के बीच स्थापित करते हैं । किन्तु उनकी अन्तिम दौर की कहानियों में - 'कफन', 'पूस की रात आदि में - प्रेमचन्द आदर्शवाद के केंचुल को उतारकर जीवन्त यथार्थ के धरातल पर आ जाते हैं । वस्तुत: प्रेमचन्द की ये यथार्थवादी कहानियाँ ही, जिनमें वे मानव को उसके यथार्थ परिवेश में चित्रित करते हैं, स्वातन्त्र्योत्तर कहानीकार की जीवन-दृष्टि का आधार है ।

परन्तु स्वतन्त्रता के पश्चात् के कथाकार की दुनिया सर्वथा एक नयी दुनिया थी । स्वतंत्रता मिलते हैं 'शताब्दियों दासता ही नहीं टूटी बल्कि नैतिक, आर्थिक मूल्यों के विघटन की, संक्रमण की विडम्बनाओं और मानवीय संकट ने तत्कालीन मध्यवर्गीय जीवन को भी तोड़ दिया ।' उसने व्यक्ति, समाज और राष्ट्रीय स्तर पर बनते-बिगड़ते सम्बन्धों, अवधारणाओं, मान्यताओं, परिस्थितियों, वैचारिक आदर्शों के बीच जूझती मानव प्रतिमा को रचनात्मक आग्रह के साथ स्वीकार किया क्योंकि 'आजादी के कुछ ही दिनों में वे यह महसूस करने लगे कि आजादी के पहले की सरल दुनिया का अंत हो गया । इस परिवेश में जो मानव प्रतिमा अपने अस्तित्व को काम रखने के लिए संघर्षरत थी उसके संघर्ष को कथाकार ने अनुभव किया क्योंकि स्वयं उसे इन सब सन्दर्भो से गुजरने के बाद ऐसा लगता है जैसे आज वह ठहराव आ गया हैं जब हमें खुद अपनी ही शक्लें अजनबी लगने लगी हैं ।लगता है स्वतंत्रता के बाद पूरा युग ही हमने भोगा नहीं है, वह हम पर लाद दिया गया है । '

स्वतन्त्रता के पश्चात् की विभिन्न कहानी धाराओं को मोटे तौर पर इन वर्गों में रखा जा सकता हैं ।

1. **आंचलिक कहानी की धारा -** फणीश्वरनाथ रेणु' इसके अग्रणी कथाकार थे ।
2. **ग्रामीण जीवन से सम्बद्ध कहानी धारा** - मार्कंडेय, काशीनाथ सिंह, शिवप्रसाद सिंह, लक्ष्मीनारायण लाल, भैंरवप्रसाद गुप्त, शैलेश मटियानी, रांगेय राघव, मधुकर गंगाधर, मधुकर सिंह, अवधनारायण सिंह आदि इस धारा के प्रतिनिधि कथाकार हैं ।
3. **अन्तर्राष्ट्रीयता से सम्बद्ध कहानी धारा -** उषा प्रियवंदा, निर्मल वर्मा, विजय चौहान आदि इसके प्रमुख कथाकार हैं ।
4. **महानगरीय जीवन से सम्बद्ध कहानी धारा -** कमलेश्वर, राजेंन्द्र यादव, मोहन राकेश, भीष्म साहनी, अमरकान्त, रमेश बक्षी, ज्ञानरंजन, धर्मवीर भारती, मन्नू भण्डारी, हरिशंकर परसाई, दूधनाथ सिंह आदि इस धारा के प्रमुख कथाकार हैं ।

2.2.7 हिन्दी कहानी के विभिन्न आन्दोलन

<u>(क) नयी कहानी</u>

नामकरण तथा स्वरूप विकास

स्वातन्त्र्योत्तर कहानी को 'नयी कहानी' के नाम से पुकारा गया तो निश्चय ही उसमें कुछ नयापन रहा होगा और यह नयापन ही उसे पूर्ववर्ती कहानी से अलग कर रहा होगा । 'नयी कहानी' शब्द का प्रयोग जैनेन्द्र, अज्ञेय, इलाचन्द्र जोशी, अश्क, यशपाल के बाद आने वाली पीढ़ी की कहानी के लिए किया गया है तथा इस पीढ़ी का लेखन के क्षेत्र में उदय स्वातन्त्र्योत्तर काल में हुआ । 'नयी कहानी' नामकरण के जन्म का इतिहास खोजते हैं तो हम पाते हैं कि दुष्यन्तकुमार ने सबसे पहले 'नयी कहानी: परम्परा और शीर्षक' (कल्पना में प्रकाशित) अपने निबन्ध में नयी पीढ़ी की कहानियों में कुछ नयापन और मौलिकता देखकर उन पर विचार किया था । उन्हें मार्कण्डेय, अमरकान्त, राजेन्द्र यादव, विद्यासागर नौटियाल कमल जोशी, धर्मवीर भारतीय की कहानियों में नयेपन और प्रगति के कुछ चिह्न नजर आये थे । लेकिन दुष्यन्त कुमार अपने लेख में नामकरण की सार्थकता के विषय में किसी प्रकार का तर्कसंगत विवेचन नहीं करते ।

नयी कहानी के नामकरण की आवश्यकता का प्रश्न सर्वप्रथम डॉ. नामवर सिंह ने अपने लेख 'आज की हिन्दी कहानी' में उठाया और पूरे बल के साथ इस नाम का समर्थन किया । इस नाम की कहानी के साथ जोड़ने का श्रेय डॉ. नामवर सिंह को. ही जाता है । उन्होंने नयी कविता के सन्दर्भ में नयी कहानी के नामकरण का प्रश्न उठाते हुए कहा, "मेरे मन में यह सवाल उठता है कि 'नयी कविता' की तरह 'नयी कहानी' नाम की कोई चीज है क्या?" इसके आगे वे कहते हैं कि 'नयी कहानी' नाम से कोई आन्दोलन अभी तक नहीं चला है । इससे क्या समझा जाये? यह कि कहानी में कुछ नयापन आया ही नहीं, कि कहानी में जो नयापन आया है, वह कविता की अपेक्षा बहुत कम है।"

किन्तु 'नयी कहानी' के विषय में नामवर सिंह के विचार समय-समय पर विकसित होते रहे हैं । वे कभी सांकेतिकता को या कभी सूक्ष्म वातावरण को या संगीतात्मकता को या कथा विन्यास को या वास्तव में विविध आयामों को या नवीन दृष्टि को - 'नयी कहानी' का आधार मानकर उसका मूल्यांकन करते रहे हैं । उन्होंने एक विभिन्न बात यह भी कही कि कहानी की चर्चा में "अनायास ही 'नयी कहानी' शब्द चल पड़ा है और सुविधानुसार इसकाप्रयोग कहानीकारों ने भी किया है और आलोचकों ने भी ।" किन्तु उनका अनायास वाला कथन इसलिए सत्य प्रतीत नहीं होता कि नामकरण की आवश्यकता सबसे पहले उन्होंने ही महसूस की और उन्होंने ही यह नाम दिया ।

नयी कहानी की उपलब्धियाँ

नयी कहानी ने हिन्दी साहित्य में एक वातावरण बनाया था, वह बहुत सर्जनात्मक और साहित्यिक वातावरण था । "इस आन्दोलन के प्रारम्भिक दौर की यह बहुत बड़ी उपलब्धि है कि उसने कहानीकारों को एक लम्बी पीढ़ी हिन्दी कहानी को दी । नयी कहानी आन्दोलन के दौरान ऐसा वातावरण बनाया गया था कि नये कहानीकारों में यह होड़ लगी कि कौन किससे बेहतर कहानी लिखता है ।" इतना ही नहीं, इस आन्दोलन के कारण "नये कहानीकारों को खूब लिखने और अच्छा लिखने की प्रेरणा मिलती थी । उस समय जो अच्छी कहानी छपती

थी, बहुत चर्चित होती थी ।" यह नयी कहानी आन्दोलन का ही परिणाम था कि कहानीकारों की पीढ़ी के साथ डी. नामवर सिंह, हृषिकेश, सुरेन्द्र चौधरी, धनंजय शर्मा, देवीशंकर अवस्थी, मधुरेश जैसे कहानी के व्याख्याकार भी तैयार हुए । कहने का तात्पर्य यह है कि नयी कहानी आन्दोलन सर्जन एवं विवेचना, दोनों दृष्टियों में बहुत समृद्ध और गतिशील आन्दोलन था ।

(ख) सचेतन कहानी

उद्भव तथा नामकरण

नयी कहानी आन्दोलन के उत्तरार्द्ध में यह आन्दोलन बहुत थोड़ेसे कथाकारों तक सीमित रह गया तथा वह धीरे-धीरे सामाजिक समस्याओं से कटने लगा । सन् 1960 तक नयी कहानी रूढ़ होने की स्थिति में आ गयी थी और उसमें एक खास किस्म का मैनरिज्म पैदा हो गया था । नयी कहानी की रूढ़ि और उसके मैनरिज़्म को तोड़ने की दृष्टि से हिन्दी कहानी में जो आन्दोलन उभरे उनमें सचेतन कहानी-आन्दोलन एक महत्वपूर्ण आन्दोलन है । इसका प्रारम्भ नवम्बर,1964 में प्रकाशित 'आधार' के 'सचेतन कहानी विशेषांक' के प्रकाशन से माना जाता है जिसका सम्पादन डॉ. महीप सिंह ने किया था । उन्हीं के शब्दों में, सचेतन आन्दोलन साहित्यिक संचेतना की सामूहिक प्रतिक्रिया है । इसके सूत्र बम्बई में 'रचना' द्वारा आयोजित गोष्ठियों में हैं । गत अप्रेल में 'मनीषा' द्वारा दिल्ली में आयोजित गोष्ठी में यह चर्चा और मुखर होकर सामने आयी ।

डॉ. महीप सिंह ने ही 'सचेतन कहानी' आन्दोलन का प्रस्तावना किया था । 'आधार' के इस विशेषांक में महीप सिंह, राजीव सक्सेना, उपेन्द्रनाथ अश्क, श्याम परमार आदि ने सचेतन कहानी सम्बन्धी दृष्टिकोण को स्पष्ट किया तथा इस अंक में आनन्दप्रकाश जैन, कमल जोशी, कुलभूषण, धर्मेन्द्र गुप्ता, मधुकर सिंह, मनहर चौहान, महीप सिंह, योगेश गुप्त, वेदराही, सुखवीर, हिमांशु जोशी आदि 20 कहानीकारों की कहानियाँ छपीं । बाद में महीप सिंह ने 'संचेतना' नाम से एक त्रैमासिक पत्रिका का सम्पादन प्रारम्भ किया, जो सचेतन कहानी-आन्दोलन का प्रमुख मंच बनी और सुदर्शन नारंग के संपादन में 'श्रेष्ठ सचेतन कहानियाँ' शीर्षक से एक संग्रह भी प्रकाशित हुआ ।

(ग) अकहानी

पृष्ठभूमि - 1960 तक आते-आते कुछ ऐसी परिस्थितियाँ बनीं कि स्वतंत्रता का जिस उल्लास और उत्साह के साथ स्वागत किया था, वह ठंडा होने लगा था और हम एक मोह-भंग की स्थिति में आ पहुँचे थे । हमें लगने लगा था कि समाज में सभी जातीय और राष्ट्रीय मूल्य समाप्त हो चुके हैं और हमारे समक्ष एक अंधकार, पूर्णतया निराशापूर्ण भविष्य के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है । हमने स्वतंत्र भारत के विषय में जो स्वप्न संजोए थे, वे सब टूटते हुए दिखायी देने लगे । देश में राजनीतिक उथल-पुथल, बेरोजगारी, भ्रष्टाचार और मूल्यहीनता से स्वतंत्रता के पश्चात् होश सम्हालने वाली पीढ़ी को आहत किया । पतनोन्मुख घटनाओं ने देश की चेतना को धार्मिक, आर्थिक, शैक्षणिक, सांस्कृतिक, सामाजिक सभी स्तरों पर झकझोर दिया । व्यक्ति आशान्वित था किन्तु उसकी तुलना में निराशा अधिक थी, अनपेक्षित स्थितियों के कारण उसमें

अविश्वास और आश्चर्य की स्थिति उत्पन्न हुई, फलस्वरूप व्यक्ति अपनी आन्तरिकता में केवल आहत ही नहीं हुआ, अपितु टूट भी गया ।"

इस निराशा - भरे वातावरण में हिन्दी कहानी को जिस नयी धारा का सूत्रपात हुआ, उसे कहानीकारों तथा समीक्षकों ने अकहानी के नाम से अभिहित किया । साठोत्तरी कहानी को डॉ. गंगाप्रसाद विमल ने पहले तो 'समकालीन कहानी' से पुकारा, किन्तु शीघ्र ही उन्होंने समकालीन, कहानी के स्थान पर 'अकहानी' की व्याख्या प्रारम्भ कर दी और सन् 1960 के बाद हिन्दी कहानी के क्षितिज पर 'अकहानी' की व्याख्या प्रारम्भ कर दी और सन् व 1960 के बाद हिन्दी कहानी के क्षितिज पर 'अकहानी' एक आन्दोलन के रूप में उग आयी, जिसके पक्षधरों में डॉ. गंगाप्रसाद विमल, जगदीश चतुर्वेदी, रवीन्द्र कालिया, दूधनाथ सिंह, प्रयाग शुक्ल, सुधा अरोड़ा, ज्ञानरंजन, रमेश बक्षी, श्रीकांत वर्मा, विजय मोहन सिंह, विश्वेश्वर आदि थे । इसी आन्दोलन की स्थापना के लिए 'अकहानी' शीर्षक से श्याममोहन श्रीवास्तव तथा सुरेन्द्र अरोड़ा के संपादन में एक पुस्तक भी प्रकाशित हुई, जिसकी भूमिका में 'अकहानी' की व्याख्या की गयी तथा जिसमें उक्त कहानीकारों की कहानियाँ भी संकलित की गयीं । अकहानी आन्दोलन एक तत्कालीन जीवन स्थितियों की भयावहता का परिणाम था तो दूसरी ओर नयी कहानी की जड़ता को तोड़ने का प्रयास था जैसा कि विश्वेश्वर ने कहा था, "साठोत्तर या अकहानी की आवाज पुरानी पड़ती जा रही पीढ़ी के 'भोगे हुए यथार्थ, 'अनुभव की प्रामाणिकता', 'प्रतिबद्धता' जैसे खोखले नारों के खिलाफ एक सख्त कार्यवाही थी । इस आवाज ने नयी कहानी के झंडाबरदारों को उनके, पुराने पड़ जाने का अहसास कराया और उन्हें बिलकुल उसी तरह बौखला दिया, जैसे अपने जमाने में उन्होंने जैनेन्द्र, अज्ञेय आदि को बौखलाया था ।"

नामकरण तथा स्वरूप

अकहानी पश्चिम में जन्मी 'एंटी-स्टोरी' का रूपांतरण है किन्तु 'एंटी नॉवेल' पश्चिम का एक स्वीकृत आन्दोलन है । ऐसा प्रतीत होता है कि अकहानी का प्रेरक यही 'एंटी-नॉवेल' आन्दोलन है । 'एंटी-नॉवेल' नामक आन्दोलन से रॉब्ब ग्रिए, मैडम सारा तथा बार्थस के नाम जुड़े हुए हैं जिनके लिए "अकथा सम्बन्धी आन्दोलन केवल फार्म या शिल्प का आन्दोलन नहीं है - वह एक निश्चित दृष्टिकोण और जीवन-दर्शन का आन्दोलन है - रॉब्ब ग्रिए के लिए इंसानी हरकतें किसी दूसरी वस्तुओं से भिन्न नहीं है । वे सिर्फ उतनी ही हैं जितनी नजर आती हैं- दूसरी तमाम वस्तुओं के साथ हरकत करती हुई यांत्रिक और ठोसा"

इसका अर्थ यह हुआ कि अकहानी में असम्बद्धता है तथा वह कहानी की परम्परागत अवधारणाओं को अस्वीकार करती है । वह अमूर्ति कथा-विधा अथवा शिल्पहीन कहानी है, "अकहानी कहानी की धारणागत प्रतीति के सभी वर्गीकरणों, मूल्यांकन आधारों और पूर्व समीक्षाओं को अस्वीकार करती है ।"

संक्षेप में हम कह सकते हैं कि अकहानी पारिवारिक, सामाजिक, नैतिक और साहित्यिक मूल्यों के विघटनात्मक स्वरूप की अभिव्यक्ति है । अकहानी में व्याप्त मूल्यहीनता देश के राजनीतिक-सामाजिक जीवन के अवमूल्यन से सम्बन्ध रखती है । इस अवमूल्यन के सन्दर्भ में हमें 1962 में मिली चीन से पराजय तथा 1965 में रूपये का अवमूल्यन स्मरण हो जाता

है, "यह अवमूल्यन मुद्रागत ही नहीं था, बल्कि इसके साथ गहरे स्तरों पर राष्ट्रीय प्रतिमा की भग्न होती गरिमा और सांस्कृतिक मूल्यों के विघटन भी शामिल थे ।"

उपलब्धियाँ

अकहानी की सबसे बड़ी उपलब्धि यह है कि उसने कहानी में एक आक्रामक मुद्रा को स्वीकार किया और नयी कहानी में उत्पन्न हुई लिजलिजी भावुकता से उसे मुक्त किया । उसने सभी प्रकार के मूल्यों को अस्वीकार किया और शिल्प के स्तर पर नये प्रतीकों, नये बिम्बों तथा नये संकेतों को अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया । अकहानी सूक्ष्म अभिव्यक्ति पर बल देती है, इसलिए उसमें अमूर्तता का आधिक्य है । अकहानी की सबसे बड़ी उपलब्धि तो यही है कि उसने नयी कहानी द्वारा स्थापित आभिजात्य को तोडा तथा हिन्दी कहानी को एक नयी दिशा प्रदान की । शिल्प के बचकाने दुराग्रह से, कविता के आत्मपरक बिम्बों से, क्षण, चित्रों और अनुभूति के मीठे और रोमानी उपकरणों से भी उसने छुटकारा पाया है - कहानी अपने इसी रूप में 'व्यापक' और 'विशेष' दोनों बनी हैं ।

(घ) समान्तर कहानी

इसी कारण कमलेश्वर मशीन और मजदूर का, किसान और खेत का रिश्ता तय करने पर बल देते हैं । उनके लिए तो "संस्कृति और कुछ नहीं, परिवेशगत सच्चाइयों की कोख से जन्मे मूल्य और विचारों का संस्कारित रूप है ।"

समांतर कहानी का संघर्ष नैतिक मूल्यों के संस्थापन के लिए किये जाने वाला संघर्ष है । 'अंधे कुएँ का रास्ता' (अरूण मिश्र), 'चौथा आश्चर्य' (जवाहर सिंह), 'सुरंग में पहली सुबह' (बसंत कुमार) कहानियों के पात्र भ्रष्ट तंत्र से जूझ रहे हैं । ईमानदार रहकर हानि उठाते हैं किन्तु वे अपना रास्ता नहीं छोड़ते और निराश नहीं होते । 'एक चालू आदमी' (दिनेश पालीवाल) का नायक जानता है कि इस दैत्याकार व्यवस्था को बदलने की सामर्थ्य उसमें नहीं है, पर वह बराबर प्रयत्न करता रहता है । 'आंदोलन' (कान्हजी तोमर) कहानी में पिता लड़कों के मौन जुलूस की अग्रिम पंक्ति में शामिल होने का जोखिम उठाते हैं क्योंकि वे जानते हैं कि व्यवस्था को बदलने के लिए यह आवश्यक है । 'आदमी' (आशीष सिन्हा) कहानी का कारिया समझ नहीं पाता कि हाड़तोड़ परिश्रम करने के बाद भी उसका पेट क्यों नहीं भर पाता । मानिया बताता है कि उसकी मेहनत कोई चुरा ले जाता है । श्रमिक का श्रम चुराने वालों के विरूद्ध शोषित जन सतर्क और संगठित हो जाते हैं ।

(च) जनवादी कहानी

जहाँ तक आन्दोलन के रूप में जनवादी कहानी के उदय का प्रश्न है, "जनवादी कहानी का उदय सातवें दशक के अन्तिम वर्षों में माना जाता है । लेकिन उसका वास्तविक उभार आठवें दशक में देखने को मिलता है ।" वस्तुत: जनवादी कहानी - आन्दोलन समूचे जनवादी आन्दोलन से जुड़ा हुआ है । दिल्ली विश्वविद्यालय में 1977 में 'जनवादी विचार मंच' की स्थापना हुई तथा इसी मंच के तत्वावधान में 14- 15 अक्टूबर, 1978 को दिल्ली में हिन्दी के लेखकों का एक शिविर आयोजित किया गया जिसमें दिल्ली, उत्तरप्रदेश, राजस्थान, पंजाब, हरियाणा, बिहार, मध्यप्रदेश, पश्चिमी बंगाल के लगभग 250 लेखकों ने भाग लिया । शिविर का केन्द्रीय

विषय था - '1967 से 1977 तक जनवादी साहित्य के दस वर्ष' । इसी शिविर में जनवादी कहानी पर दो निबन्ध पढ़े गये - 'जनवादी कथा-रचना की समस्याएँ' (असगर वजाहत) तथा 'जनवादी कहानी : स्वरूप और समस्याएँ' (चारू मित्र, प्रदीप मांडव) । इसी शिविर में 'आज का कथा साहित्य : सार्थकता की तलाश शीर्षक से डॉ. कुंवरपाल सिंह ने भी एक निबन्ध पढ़ा जिसमें उन्होंने जनवादी कहानी तथा उपन्यास पर समग्र रूप से विचार किया ।

इस शिविर को हम जनवादी कहानी - आन्दोलन की भूमिका मान सकते हैं किन्तु इस आन्दोलन की तीव्र गति 1982 में 'जनवादी लेखक संघ' की दिल्ली में स्थापना के साथ मिली । 13-14 फरवरी, 1982 को दिल्ली में जनवादी लेखक संघ का प्रथम राष्ट्रीय अधिवेशन हुआ जिसमें इस संघ का संविधान भी स्वीकृत हुआ । इस अधिवेशन के पश्चात् जनवादी कहानी पर 'कलम' (कलकत्ता), 'कथन' (दिल्ली), 'उत्तरगाथा' (मथुरा से प्रकाशित होती थी पर इसे दिल्ली से प्रकाशित किया जाने लगा), उत्तरार्द्ध' (मथुरा), कंक (रतलाम) जैसी पत्रिकाओं में व्यापक रूप से चर्चा प्रारम्भ हो गयी । हम जनवादी आन्दोलन का प्रारम्भ जनवादी लेखक संघ की स्थापना के साथ ही मान सकते हैं ।

(छ) समकालीन कहानी

इसमें दो राय नहीं कि स्वातन्त्र्योत्तर काल में कहानी हिन्दी साहित्य की सर्वाधिक लोकप्रिय विधा रही है । कविता के वर्चस्व के बावजूद कहानी ने केन्द्रीय स्थान ग्रहण किया है । इसमें भी संदेह नहीं कि देश की बदलती परिस्थितियों की जितनी गहराई से कहानी ने आत्मसातयिका है उतना अन्य किसी विधा ने नहीं । छठे, सातवें तथा आठवें दशक में हिन्दी में बड़े घरानों से निकलने वाली पत्रिकाओं तथा लेखकों के अपने प्रयासों से निकलने वाली पत्रिकाओं का हिन्दी साहित्य क्षितिज पर पूर्ण आलोक है । आठवें दशक के अन्तिम वर्षों में कुछ व्यापारिक दबावों के चलते बड़े घराने इन पत्रिकाओं के प्रति उदासीन से होने लगते हैं । पहले 'दिनमान' का प्रकाशन बंद होता है फिर 'सारिका', 'धर्मयुग', 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' आदि का । 'कहानी', 'नई कहानियाँ', 'कल्पना' आदि पत्रिकाएँ भी इनसे पूर्व बंद हो चुकी थीं । इस कारण हम पाते हैं कि आठवें-नवें दशक में एक साहित्यिक शून्य उत्पन्न हो गया है । साहित्यिक चर्चाएँ काफी धीमी पड़ने लगी हैं ।

किन्तु इस शून्य को भरने का कार्य वरिष्ठ कथाकार राजेन्द्र यादव द्वारा सम्पादित प्रकाशित 'हंस' का 1986 में प्रकाशन करता है । एक ओर यह मासिक प्रेमचन्द के 'हंस' की परम्परा को पुनर्जीवित करती हैं दूसरी ओर नयी बहसों को जन्म देती है । 'हंस' यों कहानी प्रधान पत्रिका है पर उसने सामयिक मुद्दों को पूरी शिद्धत से उठाया है और साहित्यिक बहसों -को फिर जीवित किया है । इतना ही नहीं 'हंस' से प्रेरित होकर 'कथादेश' का प्रकाशन आरम्भ होता है और एक बार फिर सम्बोधन', 'वागर्भ', 'तद्भव, 'समय माजरा', 'सोच', 'संधान', 'पल प्रतिपल', 'वर्तमान साहित्य' जैसी अनेक पत्रिकाएँ हिन्दी साहित्य के विकास में अपना योगदान देती है । 'पहल' पत्रिका का उल्लेख करना यहाँ समीचीन रहेगा क्योंकि 'पहल' ने लघु पत्रिका आन्दोलन को सशक्त बनाए रखा है और लघु पत्रिकाओं की परम्परा को अक्षुण्ण रखा है ।

समकालीन कहानी जीवन के यथार्थ को बड़ी गहराई से रूपायित करती हैं इसलिए समकालीन कहानियों में वर्तमान युग की सभी विसंगतियों का बड़ा हृदय विदारक वर्णन हुआ है । ये कहानियाँ न तो स्तब्ध करती हैं न पाठक का मनोरंजन करती हैं बल्कि पाठक को झकझोरती हैं । जीवन का चाहे राजनैतिक पक्ष हो चाहे सामाजिक, आर्थिक पक्ष हो चाहे सांस्कृतिक हिन्दी कहानी हर पक्ष को उसकी समस्त विद्रूपताओं के साथ उभारती हैं ।

'हंस' पत्रिका के मंच से स्त्री विमर्श तथा दलित विमर्श चर्चा के केन्द्र में आए । हिन्दी कहानी में ये दोनों विमर्श समाहित हुए । स्त्री विमर्श को हम दो स्तरों पर कहानियों में देख सकते हैं- स्त्री जीवन की विडम्बनाओं को लेकर लिखी गयी कहानियाँ तथा स्त्री लेखिकाओं द्वारा लिखी गयी कहानियाँ । औरत को भूमण्डलीकरण तथा बाजारीकरण ने, सारे स्त्री-मुक्ति आन्दोलन के बावजूद, बाजार में लाकर खड़ा कर दिया है और उसे एक उपभोग की वस्तु मात्र में तब्दील कर दिया गया है । इस दृष्टि में हम पाते हैं कि शिवमूर्ति की 'तिरिया चरित्तर', 'केशर कस्तुरी', 'कसाईवाड़ा' आदि कहानियों में स्त्री के शोषण की क्रूर व्यथा है । सुवास कुमार की 'मादा', 'स्थानपूर्ति', 'एक डायरी की मौत' आदि कहानियों में वर्तमान जीवन में नारी की स्थिति की पड़ताल करती है । शैवाल की 'दामुल' तथा प्रियंवद की 'एक पवित्र पेड' कहानियाँ भी इसी श्रेणी में आती है ।

समकालीन कहानी के विकास में स्त्री कथाकारों का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है । पुरानी पीढ़ी की लेखिकाओं में मन्नू भण्डारी ने लेखन लगभग छोड़ दिया है । उनकी एकाध कहानी जरूर इस दौरान छपी है । कृष्णासोबती जब लिखती हैं तो कुछ नया देती हैं - 'ए ! लड़की' कहानी इसका प्रमाण है । किन्तु इधर महिला लेखिकाओं की एक लम्बी पीढ़ी ने कहानी लेखन के क्षेत्र में बहुत महत्त्वपूर्ण कहानियाँ दी हैं - मैत्रेयी पुष्पा (चिन्हार, ललमनिया, गोमा बहती है आदि), राजी सेठ (मैं तो जन्मा ही), लवलीन(छिनाल, चक्रवात), मृणाल पाण्डेय (चार दिन की जवानी तेरी), चित्रा मुद्गल (जिनावर जगदम्बा बाबू आ रहे हैं), मृदुला गर्ग (समागम मेरे देश की मिट्टी आहा), चन्द्रकान्ता (काफी बर्फ), सुधा अरोड़ा (काला रजिस्टर), अल्का सरावगी (कहानी की तलाश में), क्षमा शमा (इक्कीसवीं सदी का लड़का), गीतांजलि श्री (वैराग्य), उर्मिला शिरीष, लता शर्मा, दूर्वासहाय, जयाजादवानी आदि अनेक महिला कहानीकार पूरी रचनात्मकता के साथ कहानी लेखन में सक्रिय है ।

समकालीन कहानी में जो सबसे प्रभावशाली लेखक हैं उनमें संजीव, स्वयंप्रकाश, अखिलेश, संजय खाती, उदय प्रकाश, शैलेन्द्र सागर आदि के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं । संजीव के पास अनुभव का व्यापक संसार है इसलिए उनकी कहानियाँ मानव अस्मिता की रक्षा में व्याकुल कहानियाँ हैं - 'सागर सीमांत' से 'आरोहण' तक संजीव की हर कहानी पाठक के अनुभव को समृद्ध करती है, इस दृष्टि से कि उसकी मानवीय संवेदनाओं को स्पर्श करती है । 'संजय' की 'कामरेड का कोट' कहानी की बहुत अधिक चर्चा रही क्योंकि यह कहानी एक वामपंथी विचारधारा वाले व्यक्ति के विचारों को रेखांकित करती है ।

समकालीन कहानीकारों में उदयप्रकाश सर्वाधिक चर्चित और विवादास्पद कहानीकार हैं । इसके दो कारण हैं - वे अपनी हर कहानी किसी प्रसिद्ध परिचित व्यक्ति को आधार बनाकर लिखते

हैं जैसे 'रामसजीवन की प्रेम कथा' में गोरख पाण्डेय है, दूसरे, उनकी कहानियों पर किसी भारतीय या विदेशी लेखक की कहानी के प्रभाव का आरोप लगाता रहा है जैसे 'छप्पन तोले का करधन' कहानी पर आरोप लगा था कि यह बिहार के किसी लेखक की कहानी की नकल है । उदय प्रकाश अपनी कहानियों में शिल्प के प्रति बहुत सजग हैं तथा वे अपनी कहानियों में जादुई यथार्थ का खूब उपयोग करते हैं । 'पालगोमरा का स्कूटर' तथा 'वारेन हेस्टिंग्ज का सांड' कहानियाँ उदाहरणस्वरूप देखी जा सकती है । 'पालगोमरा का स्कूटर' कहानी में वे विज्ञापनों द्वारा अपसंस्कृति का प्रचार, डंकल का आतंक, शहर में बढ़ते अपराध, उत्तराखण्ड की महिलाओं के साथ दुर्व्यवहार आदि घटनाओं के विवरण मिलते हैं । 'वरेन हेस्टिंग्ज का सांड' में भी इसी तरह की घटनाएँ हैं जिसमें उपनिवेशवादी आतंक को प्रस्तुत करते-करते लेखक कथानक को इंग्लैण्ड तक ले जाता है जहाँ गाँवों के महत्त्व को प्रतिपादित करने लगता है।

2.3 सारांश

प्रस्तुत पाठ में हिन्दी कहानी के आविर्भाव विषय एवं हिन्दी कहानी के धरातल पर उपजे हुए विविध कहानी आन्दोलन की विस्तृत चर्चा आ गई है । कहानी की पृष्ठभूमि और समाज के घटित परिवर्तनों का पारस्परिक सम्बन्ध होता है । इसी से कहानी की विषयवस्तु में बदलाव आता है । कहानी की अपनी व्यक्तिगत विशिष्टता भी होती है जिसकी स्पष्ट छाया रचना पर पड़ती है । परिणामस्वरूप कहानी का शिल्प कहानी के व्यक्तित्व की छाप के कारण बदलता रहता है । इस पाठ में हिन्दी कहानी की विकास यात्रा को इन्हीं बिन्दुओं में समझा गया है । यह प्रयास किया गया है कि हिन्दी कहानी के उद्भव और विकास की रूपरेखा अध्येताओं को स्पष्ट हो सके । यथास्थान कहानियों के उदाहरण और कहानीकारों की चर्चा प्रस्तुत पाठ को सुगम बनाने हेतु की गई है ।

2.4 संदर्भ ग्रन्थ

1. आज की हिन्दी कहानी - डॉ. धनंजय वर्मा
2. कहानी और कहानीकार - मोहन लाल जिज्ञासु
3. कहानी - नयी कहानी - नामवर सिंह
4. नई कहानी की भूमिका - कमलेश्वर
5. नयी कहानी: कथ्य और शिल्प - संतबख्श सिंह
6. नयी कहानी: दशा, दिशा और संभावना - डॉ. सुरेन्द्र
7. समकालीन हिन्दी कहानी : डॉ. अमर सिंह बधान
8. सचेतन कहानी : रचना और विचार - डॉ. महीप सिंह
9. स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी कहानी में मानव प्रतिभा - डॉ. हेतु भारद्वाज
10. स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी कहानी में सामाजिक परिवर्तन - भैरू लाल गर्ग
11. हिन्दी कहानी : स्वरूप और संवेदना - राजेन्द्र यादव
12. हिन्दी कहानी : उद्भव और विकास - डॉ. हेतु भारद्वाज
13. हिन्दी कहानियों का विवेचनात्मक अध्ययन - डॉ. ब्रह्मदत्त शर्मा
14. हिन्दी कहानी : उद्भव और विकास - सुरेश सिन्हा

15. हिन्दी कहानी : अंतरंग पहचान - रामदश मिश्र

2.5 बोध प्रश्न

1. हिन्दी कहानी की पृष्ठभूमि पर अपने विचार वक्त कीजिए ।
2. हिन्दी कहानी की परम्परा का आरम्भ कब से हुआ?
3. हिन्दी की प्रथम कहानी आप किसे मानते हैं और क्यों?
4. प्रेमचंद से पहले हिन्दी कहानी की क्या स्थिति थी?
5. प्रेमचंद की कहानी कला की विशेषताएं सोदाहरण स्पष्ट कीजिए ।
6. जैनेन्द्र की कहानी कला की क्या विशेषताएँ हैं?
7. स्वातंत्रयोत्तर हिन्दी कहानी के विकास पर निबन्ध लिखिए ।
8. टिप्पणी लिखिए -
   (क) नयी कहानी
   (ख) अकहानी
   (ग) सचेतन कहानी
9. हिन्दी कहानी की वर्तमान स्थिति पर निबन्ध लिखिए ।

इकाई-3

हिन्दी उपन्यास का उद्भव व विकास

इकाई की रूपरेखा

3.0 उद्देश्य

3.1 प्रस्तावना

3.2 हिन्दी उपन्यास

3.3 प्रेमचन्द पूर्व उपन्यास

3.4 प्रेमचन्द का आविर्भाव और हिन्दी उपन्यास का नया युग

3.5 जयशंकर प्रसाद और यथार्थवादी उपन्यास की परम्परा

3.6 प्रेमचन्दयुगीन उपन्यास

3.7 प्रेमचन्दोत्तर उपन्यास (यथार्थवादी धारा का विकास)

3.8 देश विभाजन और हिन्दी उपन्यास

3.9 स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी उपन्यास

3.10 बीसवीं शताब्दी का अन्तिम दशक (हिन्दी उपन्यास का उत्कर्ष)

3.11 सारांश

3.12 संदर्भ ग्रन्थ

3.13 बोध प्रश्न

3.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई में विद्यार्थी हिन्दी उपन्यास का उद्भव व विकास से सम्बद्ध विविध पहलुओं का अध्ययन करेंगे । इस इकाई को पढ़ने के बाद विद्यार्थी उपन्यास के विकास का परिचय प्राप्त कर सकेंगे ।

- विद्यार्थी उन परिस्थितियों से परिचित हो सकेंगे जिनमें हिन्दी उपन्यास का विकास हुआ।
- विद्यार्थियों को प्रेमचंद के पूर्व हुए हिन्दी उपन्यास के विकास की जानकारी प्राप्त हो सकेगी।
- विद्यार्थी प्रेमचंद के औपन्यासिक योगदान से परिचित हो सकेंगे ।
- विद्यार्थी हिन्दी उपन्यास की विभिन्न धाराओं से परिचित हो सकेंगे जैसे सामाजिक उपन्यास, ऐतिहासिक उपन्यास, सांस्कृतिक उपन्यास, मनोवैज्ञानिक उपन्यास, आंचलिक उपन्यास आदि ।
- विद्यार्थी समकालीन हिन्दी उपन्यास के परिदृश्य को स्पष्ट कर सकेंगे ।

3.1 प्रस्तावना

गद्य की विधाओं में उपन्यास एक लोकप्रिय विधा है । हिन्दी उपन्यास के उद्भव में बंगला, मराठों और अंग्रेजी अनुदित उपन्यासों ने प्रेरक तत्त्व के रूप में कार्य किया । प्रथम हिन्दी उपन्यास के रूप में लाला श्रीनिवास दास का 'परीक्षा गुरू' और श्रद्धाराम फिल्लौरी का 'भाग्यवती'

की चर्चा हिन्दी साहित्य के इतिहास व ग्रन्थों में आई है । इन्हीं दो कृतियों से हिन्दी साहित्य में उपन्यास विधा का उद्भव माना जाता है । आगे चलकर उपन्यास लेखन एक लोकप्रिय साहित्य विधा बन गई । हजारों की संख्या में इस क्षेत्र में लेखक उभरकर आए । उपन्यास के विकास को समझने के लिए प्रेमचन्द को केन्द्र में रखकर प्रेमचन्द पूर्व के उपन्यास, प्रेमचन्द के समय के उपन्यास एवं प्रेमचन्दोत्तर उपन्यासों के रूप में श्रेणीबद्ध किया गया है । संक्षेप में उपन्यासों के विविध रूपों एवं उनकी प्रेरक परिस्थितियों से आप इस पाठ के माध्यम से परिचित होंगे। इस पाठ में हिन्दी भाषा-भाषी, समाज की बदलती हुई परिस्थितियों को भी समझने का अवसर मिलेगा । साथ ही उत्तर भारत के समाज को जिन सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, समस्याओं से जूझना पड़ रहा था - उनसे प्रेरित होकर हिन्दी का उपन्यासकार कैसे अपनी विषय-वस्तु को निर्धारित कर रहा था, इससे भी आप अवगत हो सकेंगे ।

3.2 हिन्दी उपन्यास

हिन्दी उपन्यास का भारतीय नवजागरण से गहरा रिश्ता है । बंगाल और महाराष्ट्र की तुलना में हिन्दी भाषी क्षेत्र में नवजागरण की प्रक्रिया विलम्ब से प्रारंभ हुई । अत: हिन्दी में उपन्यास विधा का आरंभ भी बंगला और मराठी की अपेक्षा विलम्ब से ही हुआ । यद्यपि राजनीतिक दृष्टि से हिन्दी क्षेत्र में पुनर्जागरण का आरंभ 1857 ई. के प्रथम स्वाधीनता संग्राम में माना जाता है, किन्तु सामाजिक क्षेत्र में पुनर्जागरण का आरंभ मुख्यत: 'आर्य समाज' (1875) की स्थापना और उसके आन्दोलन के साथ हुआ । बंगाल से आरंभ हुए पुनर्जागरण की लहर1960 ई. के आस-पास हिन्दी भाषी क्षेत्र को छूने लगी थी । स्त्री-शिक्षा का आन्दोलन, विधवा-विवाह का समर्थन, बाल और वृद्ध विवाह का विरोध आदि इसी के परिचायक थे । हिन्दी भाषा और देवनागरी लिपि का आन्दोलन भी इसी की अभिव्यक्ति था । दुर्भाग्य से वह अंग्रेजी विरोधी आन्दोलन न होकर उर्दू विरोधी आन्दोलन बन गया था, जिसके पीछे अंग्रेजी शासन की साजिश भी थी, पर उसके पीछे अपनी भाषा का प्रेम प्रेरक तत्त्व था, इसमें दो मत नहीं हो सकते । सातवें दशक के लगभग अन्त में आरंभ हुए खड़ी बोली हिन्दी साहित्य के आन्दोलन के मूल में भी पुनर्जागरण की प्रेरणा ही प्रमुख थी ।

उपन्यास आधुनिक युग की देन है । अंग्रेजी शिक्षा और साहित्य से पहले परिचित होने के कारण 'उपन्यास' शब्द का प्रयोग बंगाल में लगभग उन्नीसवीं शताब्दी के छठे दशक में निश्चित हो गया था । तत्पश्चात् बंगभाषा के श्रेष्ठ उपन्यासों के अनुवादों के क्रम में तथा पुनर्जागरण कालीन चेतना से सम्पृक्त होने के कारण, हिन्दी के क्षितिज पर भारतेन्दु के क्रियाशील होने पर हिन्दी में भी इसका प्रचलन हुआ । इस रूप में हिन्दी का 'उपन्यास' शब्द अंग्रेजी के 'नॉवल' के पर्याय के रूप में प्रयुक्त होता है । किन्तु कुछ समालोचक विद्वान इस सत्य को झुठलाकर अपने पुरातनवादी आग्रह के कारण हिन्दी उपन्यास को प्राचीन भारतीय कथा-साहित्य की परम्परा का क्रमिक विकास मानते हैं, जो सर्वथा अनुचित है क्योंकि अधिकांश प्राचीन कथा-साहित्य पद्य बद्ध, कुतूहलदायक, अलौकिक घटनाओं से पूर्ण प्रेममूलक तथा उपदेश वृति की भंगिमा से परिव्याप्त है । जबकि आधुनिक हिन्दी उपन्यास गद्य में लिखित, वैयक्तिक

दृष्टिकोण, विश्वसनीयता, स्वाभाविकता तथा यथार्थपरक स्थितियों पर बल देता है, जो निश्चित रूप से पश्चिमी शिक्षा के सम्पर्क का परिणाम है ।

'परीक्षा गुरू' हिन्दी में वस्तु और शिल्प दोनों दृष्टियों से उपन्यास साहित्य की शुरूआत करता है । जब तक अन्य कोई कृति प्रकाश में नहीं आती, तब तक उसे हिन्दी के प्रथम उपन्यास के गौरव से वंचित नहीं किया जा सकता है ।

3.3 प्रेमचन्द पूर्व उपन्यास

प्रेमचन्द पूर्व युग के उपन्यासों को हम सुविधा की दृष्टि से तीन भागों में विभक्त कर सकते है ।

(1) शुद्ध मनोरंजन प्रधान उपन्यास

(2) उपदेश प्रधान सामाजिक उपन्यास

(3) ऐतिहासिक उपन्यास

शुद्ध मनोरंजन प्रधान उपन्यास में घटनाओं की सृष्टि लेखक इस प्रकार करता है, कि रचना में अनेक अद्भुत करिश्मे दिखाई पड़ते हैं । पाठक विस्मयकारी घटनाओं के मायाजाल में चमत्कृत होता हुआ, दाँतों तले अंगुली दबाये कृति में डूबा रहता है । जासूसी और तिलस्मी उपन्यासों में पाठक की कौतूहल वृत्ति को बनाये रखने की अद्भुत क्षमता होती है, किन्तु इस समानता के बावजूद जासूसी और तिलस्मी उपन्यास के शिल्प में अन्तर है । इन उपन्यासों में कथानक की स्थिति रीड की हड्डी के समान होती है । जासूसी उपन्यास का कथानक सीमित कार्यकारण श्रृखंला से जुड़ा होता है, जबकि तिलस्मी उपन्यास के कथानक में विस्तार और बिखराव अधिक होता है । तिलस्मी उपन्यासों में कथा का क्रम आगे की ओर अग्रसर होता है, जासूसी उपन्यास में पीछे की ओर जाता है । जासूसी उपन्यास की कथा तथ्यपूर्ण, तत्कालीन समाज से संबंधित वास्तविक घटनाओं के आधार पर होती है, जबकि तिलस्मी उपन्यास की कथा चमत्कारपूर्ण सामन्ती वातावरण युक्त तथा कल्पनाजन्य होती है । इसी कारण जासूसी उपन्यास आज भी लोकप्रिय है, जबकि तिलस्मी उपन्यास अदृश्य हो गये हैं ।

प्रेमचन्द पूर्व उपन्यासकारों में सर्वाधिक ख्याति तिलस्मी उपन्यासकार देवकीनन्दन खत्री को प्राप्त हुई । उस युग में जब हिन्दी क्षेत्र में भी उर्दू का बोलबाला था, हिन्दी के पाठक बहुत कम थे, देवकी नन्दन खत्री जी ने हिन्दी को असंख्य पाठक दिये । उनके उपन्यास इतने लोकप्रिय हुए कि उन्हें पढ़ने के लिए लोगों ने हिन्दी सीखी । यह खत्री जी की कलम का कमाल था । उनकी प्रसिद्ध तिलस्मी रचनाएँ हैं - 'चन्द्रकान्ता' (4 भाग), 'चन्द्रकान्ता सन्तति' (24 भाग) और 'भूतनाथ' (21 भाग) भूतनाथ के वे 6 भाग ही लिख पाये कि सन् 1913 में उनका स्वर्गवास हो गया । शेष 15 भाग इनके पुत्र दुर्गाप्रसाद खत्री ने लिखे ।

किशोरीलाल गोस्वामी जी भारतेन्दु और द्विवेदी युग के मध्य की कड़ी है । इन्होंने लगभग 65 उपन्यास लिखे, जिनमें ऐतिहासिक, सामाजिक, धार्मिक, तिलस्मी और जासूसी उपन्यास है । ऐतिहासिक उपन्यासों में ऐतिहासिकता गौण है, लेकिन कल्पना की ऊँची उड़ाने और तिलस्मी करामातें अधिक दृष्टिगत होती है ।

दुर्गाप्रसाद खत्री ने उपन्यास लेखन कला विरासत में ग्रहण की थी । इसी कारण पिता द्वारा छोड़े गये अधूरे उपन्यास "भूतनाथ" को उन्होंने सफलतापूर्वक पूर्ण किया है । दुर्गाप्रसाद जी ने देख लिया है कि तिलस्म और ऐय्यारी को चमत्कृत करने वाला प्रभाव मन्द पड़ता जा रहा है, इसलिए उन्होंने कल्पना की ऊँची उड़ान भरते हुए वैज्ञानिक उपन्यास लिखे । इनके कई उपन्यासों में गोपालशंकर नाम का जासूस है । इसलिए इनके उपन्यासों को जासूसी उपन्यास की संज्ञा दी गई । दुर्गाप्रसाद खत्री जी के उपन्यासों में देश प्रेम की भावना व्यक्त की गई है । इनकी जासूस-अपराध प्रधान प्रमुख रचनाएँ हैं लाल पंजा, रक्तमण्डल, सफेद शैतान प्रतिशोध आदि उपन्यासों में तीन तरह के पात्र हैं- (1) जासूस गोपाल शंकर, (2) शासक अंग्रेज और राजा, महाराजा नवाब आदि, (3) देशभक्त पात्र ।

गोपालराम गहमरी ने हिन्दी में जासूसी उपन्यासों की परम्परा का श्रीगणेश किया । इन्होंने उपन्यासों के अतिरिक्त काव्य और नाट्य रचना भी की और जासूसी ऐतिहासिक, सामाजिक उपन्यास भी लिखे । किन्तु इनको हिन्दी साहित्य में ख्याति जासूसी उपन्यासकार के रूप में ही प्राप्त हुई । जासूसी उपन्यासों की परम्परा अंग्रेजी और बंगाली के माध्यम से हिन्दी में आई । गहमरी जी ने सर्वप्रथम नगेन्द्रनाथ गुप्त के "हीरार मूल्य" उपन्यास का 'हीरा का मोल' नाम से हिन्दी में अनुवाद किया । जिसका पाठकों ने खूब स्वागत किया । बस इसकी लोकप्रियता ने गहमरी को जासूसी उपन्यास लिखने की प्रेरणा दी और छोटे-बड़े, मौलिक, अनूदित कुल मिलाकर उन्होंने लगभग 150 जासूसी उपन्यास लिखे । गहमरी जी के उपन्यासों में अव्यवस्था के प्रति विद्रोह है । लोकहित की भावना निहित होने के कारण इनका साहित्य मनोरंजन मात्र के लिए नहीं था । इनका उद्देश्य कानून व न्याय के प्रति पाठकों की आस्था प्रगट करना था ।

इस युग में लिखे गये अनेक जासूसी उपन्यासों की एक लम्बी सूची उपलव्य होती है । उस युग के हर उपन्यासकार ने इस क्षेत्र में एक दो रचनाओं के द्वारा प्रवेश किया । इस प्रकार हिन्दी उपन्यास साहित्य में प्रेमचन्द पूर्व युग निर्माण कहा जा सकता है । जासूसी और तिलस्मी घटना प्रधान उपन्यासों का इस युग में बोलबाला था । सरल बोलचाल की भाषा का प्रयोग कर इन लेखकों ने उपन्यास विधा को लोकप्रिय बनाया । सुदृढ़ समृद्ध भूमि पर प्रेमचन्द जी ने सुन्दर सुघड़ इमारत खड़ी कर दी ।

प्रेमचन्द पूर्व काल में हिन्दी उपन्यास लगभग 25 वर्ष तक एकरसता की स्थिति में पड़ा रहा । एक ओर सर्वश्री लाला श्री निवास दास (परीक्षागुरू), बालकृष्ण भट्ट (नूतन ब्रह्मचारी),. राधाकृष्ण (निस्सहाय हिन्दू), रतनचन्द प्लीडर (नूतन चरित्र), बालमुकुन्द शर्मा (मालती), श्यामसुन्दर लाल शर्मा (पंजाब पतन), कला प्रसाद (कुल कलंकिनी), गौरी दत्त (गिरिजा), पुतनलाल सारस्वत (स्वतन्त्र बाला) आदि कथाकार अपने-अपने उपन्यासों में कहीं रूढ़िवादिता का प्रचार तो कहीं इसका विरोध कर सामाजिक संक्रांति की ओर पाठकों का ध्यान आकृष्ट कर रहे थे । दूसरी ओर मनोरंजन को ही अपना साध्य मानने वाले कथाकार यथा देवकीनन्दन खत्री, चुन्नीलाल खत्री, (जबर्दस्त की लाठी), विट्ठलदास (किस्मत का खेल), मदनमोहन पाठक (आनन्द सुन्दरी 5 भाग), सत्यदेव (आश्चर्य), रामप्रसाद वर्मा (राजकुमारी चन्द्रमुखी), लक्ष्मी

नारायण शर्मा (समुद्र में गिरीन्द्र), गोपालराम गहमरी (चतुर चंचला) आदि उपन्यास, किशोरी लाल गोस्वामी (तिलस्मी शीशमहल तारा, आदर्श सती आदि 65 उपन्यास), सूरजनाथ वैश्य (कटा हुआ सिर) आदि के अपने-अपने उपन्यासों में अनेक प्रकार से पात्रों को मूर्छित कर पुन: अपनी दवा द्वारा चेतनावस्था में ले आने, सहेलियों के साथ कभी बाग में तो कभी तालाब में रमण करती नायिकाओं, बहुये में छिपे नजमी-रम्मालों, भूल-भुलैयों में खो देने वाले तिलस्मों, मेज पर पड़ी लाशों, बटुए में रखे हत्याओं के भेदों को पढ़कर लाखों करोड़ों पाठक एकदम मनोरंजन वृद्धि ही तो करते हैं ।

3.4 प्रेमचन्द का आविर्भाव और हिन्दी उपन्यास का नया युग

प्रेमचन्द हिन्दी उपन्यास साहित्य के सर्वश्रेष्ठ कलाकार हैं । उपन्यास-साहित्य में प्रेमचन्द का आविर्भाव एक ऐतिहासिक घटना है । उनके उपन्यासों में हमें अपने युग की ध्वनि स्पष्ट रूप से सुनाई देती है । प्रेमचन्द की श्रेष्ठता और महत्ता का सबसे बड़ा कारण यह है कि उन्होंने हिन्दी के प्राचीन उपन्यासकारों द्वारा संस्थापित परंपराओं का ध्वंस कर पुरानी मान्यताओं का परित्याग कर हिन्दी कथा-साहित्य के क्षेत्र में नवीन आदर्शों की स्थापना की और चिर उपेक्षितों को भी पढ़े-लिखे समाज के आकर्षण का केन्द्र बनाया । मानव जीवन के अन्तर्गत प्रेमचन्द की गहरी पैंठ थी । मानव की विचारधारा, उसके सोचने के तौर-तरीके, उसकी दुर्बलताओं और प्रतिक्रिया का अच्छा अध्ययन था । दूसरे शब्दों में, प्रेमचन्द एक सफल मनोवैज्ञानिक और बौद्धिक प्राणी थे । कृषकों के वे बड़े ही संवेदनशील या हिमायती लेखक थे । उनके दुखों, दर्दों और कठिनाइयों का उन्होंने बड़ी सहानुभूति और मनुष्यता के साथ चित्रण किया है । अध्ययन, चिन्तन और अनुभव ने प्रेमचन्द के व्यक्तित्व में अविराम-द्रष्टा की शक्ति उत्पन्न कर दी थी ।

देश और समाज और सामाजिक परिस्थितियों को देखकर प्रेमचन्द ने अनेक भविष्यवाणियाँ की थीं जो अक्षरश: सत्य प्रमाणित हो रही है ।

प्रेमचन्द ने हिन्दी उपन्यासों के कलात्मक विकास का मार्ग भी प्रशस्त किया । चरित्र चित्रण, कथोपकथन और भाषा-शैली की दृष्टि से उन्होंने हिन्दी को नई दिशा प्रदान की । उन्होंने चरित्र-चित्रण की उपन्यास की आधार शक्ति मानते हुए लिखा है -

"मैं उपन्यास को मानव-चरित्र का चित्र मात्र समझता हूँ । मानक्चरित्र पर प्रकाश डालना और उसके रहस्यों को खोलना ही उपन्यास का मूल तत्व है ।..... उपन्यास के चरित्रों का चित्रण जितना ही स्पष्ट, गहन और विकासपूर्ण होगा, उतना ही पढ़ने वालों पर गहरा असर पड़ेगा। अपने उपन्यासों के चरित्रांकन में प्रेमचन्द ने परिस्थितियों का प्रभाव दिखाकर गतिशील पात्रों की सृष्टि की । कुछ आदर्शवादी पात्रों को छोडकर उनके चरित्र मानव-प्रकृति की बहुमुखी अन्त:वृत्तियों का गहरा प्रभाव अंकित कर पाते हैं । उपन्यासों में कथोपकथन के महत्त्व पर भी उनकी दृष्टि थी । उनके कथोपकथन स्वाभाविकता के अपूर्व उदाहरण हैं । उपन्यासों में प्रेमचन्द ने जैसी सरल, सरस, सजीव एवं प्रभावोत्पादक भाषा शैली का प्रयोग किया, वैसी आज तक दूसरा उपन्यासकार नहीं कर पाया है । पूर्ववर्ती उपन्यासों में जिस सहज गतिशील प्रवाह का अभाव दृष्टिगत होता है, वह प्रेमचन्द की कृतियों में नहीं है ।

प्रेमचन्द की कला-

'प्रेमा' से लेकर 'गोदान' तक के उपर्युक्त परिचय से यह स्पष्ट हो जाता है कि प्रेमचन्द ने आधुनिक जीवन की अधिक से अधिक समस्याओं तथा परिस्थितियों के चित्रण की अपनी कला का उपकरण बनाया । परिवार की छोटी से छोटी घटनाओं से लेकर समाज और देश की बड़ी से बड़ी समस्याओं के अंकन का उन्होंने प्रयास किया और उसमें सफल भी रहे । इस सफलता का प्रधान उनकी अलौकिक पर्यवेक्षण शक्ति तथा सांसारिक अनुभव की प्रचुरता थी । उनकी सूक्ष्म दृष्टि ने अपने समाज और देश को अनेक पक्षों से देखा था और विभिन्न स्थितियों में पालित-पोषित मानव स्वभाव को भलीभाँति पहचाना था । अन्य पक्षों की अपेक्षा ग्रामीण वातावरण एवं मनःस्थिति के चित्रण में उनकी प्रतिभा विशेष उद्दीप्त हुई है । ग्रामीण जीवन की जितनी अधिक स्थितियाँ, ग्रामीण समाज के विभिन्न वर्गों की मनोवृत्तियों के जितने अधिक चित्र इनकी रचनाओं में मिलते हैं उतने अन्यत्र दुर्लभ है । नागरिक जीवन के वर्णन में निम्न एवं मध्य वर्ग का अंकन उच्च वर्ग की अपेक्षा अधिक मार्मिक एवं सजीव बन पड़ा है । उनके उपन्यासों की प्रत्येक घटना, प्रत्येक पात्र एवं प्रत्येक परिस्थिति हमारी पहचानी सी लगती है ।

चरित्र-चित्रण की यथार्थवादी कला का विकास एवं पूर्ण उत्कर्ष प्रेमचंद की कृतियों में ही हुआ । प्रेमचंद के उपन्यासों के पात्र हमारे चारों ओर चलने-फिरने, उठने-बैठने वाले प्राणी हैं । इनके रूपरंग, बोलचाल, कार्यप्रणाली, मनोदशा, रहन-सहन सबका इतना जीवनवत् वर्णन किया गया है कि हमें वास्तविकता का भ्रम हो जाता है । परिस्थितियों के घात-प्रतिघात में ढले हुए इनके चरित्र मानव-सौन्दर्य एवं सीमा के प्रतीक हैं ।

भाषा पर असाधारण अधिकार ही प्रेमचन्द की सफलता का रहस्य है । उनकी आरम्भिक कृतियों में अवश्य थोड़ी-बहुत भाषा की शिथिलता मिलती है परन्तु उनमें थोड़े ही दिनों बाद वह तेजस्विता और सरसता, वह भाव-व्यंजकता ओर मधुरता आ गई, जो हिन्दी साहित्य में एक नवीन उपलब्धि है । इस प्रकार हम देखते हैं कि प्रेमचन्द का महत्त्व केवल इसी बात में नहीं है कि उन्होंने तत्कालीन समाज कीं अनेक पक्षीय समस्याओं एवं विकृतियों की ओर संकेत करके उनके सुधार की ओर संकेत किया और अपने युग एवं समाज के साहित्यिक स्वर बने वरन् उनका महत्त्व इस बात में भी हैं कि उन्होंने कथा साहित्य को एक नूतन कलात्मक गरिमा दी ।

3.5 जयशंकर प्रसाद और यथार्थवादी उपन्यास की परम्परा

कविवर प्रसाद जी की प्रतिभा बहुमुखी है । कविता नाटक, कहानी तथा उपन्यास, साहित्य के इन सभी प्रमुख अंगों को उन्होंने नवीन रूप दिया, नूतन चेतना दी । कंकाल उनका प्रथम उपन्यास है । इसमें वर्तमान के एक विशेष पक्ष का विशेष दृष्टि से चित्रण किया गया है । मनुष्य समाज ने सभ्यता के विकास में अनेक धार्मिक तथा नैतिक मान्यताओं एवं संस्थाओं की स्थापना की है । इनके मूल में सामूहिक कल्याण की भावना ही काम करती है किन्तु इन्हीं पर इतना आग्रह हो गया कि व्यक्ति की उपेक्षा की जाने लगी और उसकी सहज प्रवृत्तियों

को कदम--कदम पर कुचलने का प्रयास होने लगा । मानव मंगल की भावना से प्रेरित संस्थायें उत्पीड़न का कारण बन चलीं और इनके चक्र में आक्रान्त व्यक्ति स्वयं में बड़ा दयनीय हो उठा । कंकाल में सामाजिक बन्धनों एवं व्यक्ति की सहज प्रवृत्तियों के संघर्ष से उद्भूत विषमताओं का मार्मिक अंकन किया गया है ।

'तितली' (1934) प्रसाद का दूसरा उपन्यास है । इसमें वर्णित जीवन 'कंकाल' से नितान्त भिन्न है । मानव की यौन दुर्बलताओं पर ही अधिक आग्रह रहने के कारण 'कंकाल' का समाज-दर्शन एकपक्षीय सा लगता है । उसमें चारित्रिक स्थलन एवं पतन के चित्रण की प्रवृति प्रधान है, जिसे निरपवाद सत्य के रूप में स्वीकार किया गया है । इसके विपरीत 'तिलस्मी' में प्रेम आदर्श स्वरूप एवं आत्म संयम के चित्रण का प्रयास है । इस उपन्यास में वर्णित समाज के अनेक स्तर हैं और इनकी शक्ति एवं दुर्बलता दोनों ही की ओर लेखक की दृष्टि है । विषयचयन की दृष्टि से इस उपन्यास में प्रसाद ने प्रेमचन्द मार्ग को अपनाया है और जमींदार के कर्मचारियों की कूटनीति एवं धांधली, ग्रामीण जनता की सरलता एवं चोर स्वार्थ वृत्ति, गाँवों की राजनीति, त्योहार-उत्सव मनाने का ढंग, सम्मिलित कुटुम्ब की दुर्बलता आदि की झलक दिखाने का प्रयास किया है । इसमें ग्राम सुधार तथा ग्राम संगठन की ओर भी संकेत है ।

'कंकाल' यदि यथार्थवाद की ओर उन्मुख है तो 'तितली' पूरी तरह आदर्शवादी उपन्यास है । 'कंकाल' में मानव की यौन दुर्बलता या स्थलन पर अधिक आग्रह है किन्तु इस उपन्यास में चारित्रिक दृढ़ता के साथ-साथ आदर्श प्रेम के चित्रण का प्रयास है ।

3.6 प्रेमचन्द युगीन उपन्यास

प्रेमचन्द युगीन उपन्यासों की प्रधान प्रवृत्ति मध्य-वर्ग का चित्रण है । मध्य-वर्ग समाज का सबसे बड़ा और विविध-आयामी वर्ग है । मध्य-बर्ग दो उप-वर्गों में विभक्त है - उच्च- मध्य-वर्ग और निम्न मध्य-वर्ग । मध्य-वर्ग का एक हिस्सा जो उच्च वर्ग को छूता है, उच्च-मध्य-वर्ग कहलाता है और दूसरा जो निम्न वर्ग को छूता है - निम्न-मध्य वर्ग है । इससे स्पष्ट है कि मध्यवर्ग में स्तरगत वैविध्य है । इस वैविध्य की सही पहचान प्रेमचन्द युगीन उपन्यासकारों को थी । प्रताप नारायण श्रीवास्तव के उपन्यासों में जिसे उच्च-वर्ग कहा गया है, वह वास्तव में उच्च मध्य वर्ग है । उदाहरण के लिए 'विदा' के माधवचन्द्र को लीजिए । वे ज्वाइन्ट मजिस्ट्रेट हैं । बंगले में रहते हैं, अंग्रेजी रहन-सहन के अभ्यस्त हैं । लेकिन वे इतने से ही उच्च वर्ग के सदस्य नहीं हो जाते । मध्य-वर्ग की सीमाएँ और विवशताएँ उनके साथ हैं ।

राजा राधिका रमण प्रसाद सिंह के 'पुरूष और नारी' उपन्यास में भी वर्ग-संक्रमण के भाव हैं । उपन्यास का नायक अजीत है जो एक जमींदार का पुत्र है । उसे उच्च-वर्ग की समस्त सुख-सुविधायें उपलब्ध हैं लेकिन वह प्रोफेसर शिवदयाल के विचारों से प्रभावित होकर पढ़ना छोड़ देता है और भावी सुख-सपनों पर लात मारकर स्वतंत्रता आन्दोलन में कूद पड़ता है । अजीत का यह कर्म कुछ ऐसा ही है जैसा कि कर्मभूमि के अमरकान्त का प्रोफेसर शांति कुमार के प्रभाव में आकर पढ़ाई छोड़ना ।

प्रेमचन्द युगीन उपन्यासों का उद्देश्य दोहरा था - एक ओर तो देश की मुक्ति का सवाल था और दूसरी ओर अनेक सामाजिक जड़ताओं से भी जूझना था । इसके बावजूद भावना प्रधान अथवा कवित्वपूर्ण उपन्यास भी लिखे गये । जयशंकर प्रसाद उपन्यासकार होने के साथ-साथ कवि भी थे । अत: इनके सभी उपन्यास भावना प्रधान और कल्पना प्रधान है ।भाषा और रचना शैली की दृष्टि से उपन्यास-शिल्प का इस युग में उत्तरोत्तर विकास होता गया । राजा राधिका रमण प्रसाद सिंह के उपन्यासों में आलंकारिक चित्रात्मक, व्यंजना प्रधान भाषा, प्रेमचन्द में मुहावरेदार स्वाभाविक भाषा तथा प्रसाद जी के उपन्यासों में भावनात्मक तथा तत्सम शब्दावली मूलक भाषा की प्रधानता है ।

3.7 प्रेमचन्दोत्तर उपन्यास (यथार्थवादी धारा का विकास)

यथार्थवाद का वास्तविक सम्बन्ध फ्रेंच यथार्थवादी स्कूल से है । इसका प्रथम प्रयोग सन् 1935 ई. में आदर्शवादी विचारधारा में विश्वास रखने वालों के विरूद्ध सौन्दर्यवादी विकास के रूप में हुआ था । बाद में 1856 ई में एक पत्रिका 'रियलिज़्म' की स्थापना के पश्चात् इसका प्रयोग साहित्य में होने लगा । दुर्भाग्य से यथार्थवाद का विशेष महत्व फ्लावेयर, जोला उनके सहयोगियों द्वारा साहित्य में अपनाई जाने दाली अनैतिक मान्यताओं एवं 'निम्न कोटि' के विषयों के विरूद्ध उठे कटु विवाद में बहुत कुछ अंशों में न्यून हो गया । इसके परिणामस्वरूप यथार्थवाद का प्रयोग आदर्शवाद के भिन्न रूप के ही अर्थ में ग्रहण किया जाने लगा । यह वास्तव में फ्रेंच यथार्थवादियों के विरोधियों द्वारा ग्रहण किए गए दृष्टिकोण से प्रतिध्वनित रूप था । उसने उपन्यास लेखन शिल्प के ऊपर अपना स्थायी प्रभाव डाला और साहित्य के जितने भी रूप उस समय प्रचलित थे, उनमें उपन्यास-साहित्य ने इस प्रभाव को अधिकाधिक अंशों में ग्रहण किया । यथार्थवाद की आधारशिला पर ही उपन्यासों का ताना-बाना निर्मित होना प्रारम्भ हुआ और तभी वह जनजीवन के अधिक निकट भी आया । यथार्थवाद के स्वरूप के सम्बन्ध में अनेक भ्रान्तियाँ प्रचारित हैं और कुछ तथाकथित अध्यवसायी एवं प्रतिक्रियावादी आलोचकों ने तो यह घोषित भी कर दिया कि यथार्थवाद ने हिन्दी उपन्यास साहित्य को दिग्भ्रान्त कर दिया है और उसमें एक गतिरोध की स्थिति उत्पन्न कर दी है । ऐसी भ्रमपूर्ण धारणा वस्तुत: यथार्थवाद को न समझने के कारण ही उत्पन्न हुई है । यथार्थवाद वास्तव में वस्तुओं के यथातथ्य चित्रण पर नहीं अपितु सत्यानुभूति से प्रेरित चित्रण पर बल देता है । यदि कोई उपन्यास केवल इसलिए यथार्थवादी है कि उसमें जीवन का चित्रण तटस्थ दृष्टि से किया गया है तो वह केवल अन्वेषित रोमांस ही होगा । यथार्थवाद वास्तव में बहुविधीय मानव-अनुभवों के पूर्ण एवं सत्य चित्रण पर बल देता है न कि किसी विशेष साहित्यिक दृष्टिकोण पर । यथार्थवाद उस जीवन प्रकार में ही नहीं अवस्थित रहता, जो उपन्यासों में प्रस्तुत किया गया है, वरन् उस जीवन प्रकार के प्रस्तुतीकरण की शैली में भी और उसी रूप में विकसित भी होता है ।

यशपाल-

समाज के यथार्थवादी चित्रण की दृष्टि से यशपाल के उपन्यास महत्त्वपूर्ण हैं । जीवन के प्रति उनकी एक निश्चित दृष्टि है और सामाजिक अवस्था के चित्रण में उन्होंने अपनी सी दृष्टि को समाज-दर्शन का माध्यम बनाया है । मार्क्सवादी विचारधारा से प्रभावित होने के कारण

उनकी कृतियों में पूँजीवादी अथवा सामंती व्यवस्था के वैषम्य से उद्भूत मानवीय उत्पीड़न की कथा वर्णित है । जीवन के प्रवृत्ति को असंदिग्ध सत्य मानकर उन्होंने अपने उपन्यासों में यौन आकर्षण को मनुष्य की सबसे सहज, स्वाभाविक तथा तीव्र अनुभूति के रूप में चित्रित किया है और उनमें राजनीति तथा रोमांस का अपूर्व सम्मिलित हुआ है । एक प्रकार से प्रेमचन्द के उपरान्त राजनीतिक विषयों पर उपन्यास लिखने वालों में यशपाल अग्रणी है । किन्तु प्रेमचन्द तथा यशपाल की दृष्टि में बड़ा अन्तर है । प्रेमचंद ने युग की उथल-पुथल को कलाकार की सम्पूर्ण सच्चाई के साथ केवल चित्रित करने का प्रयत्न किया है किन्तु यशपाल ने उपन्यास को सिद्धान्त प्रचार का साधन बनाया है । यशपाल में उच्च कोटि की विधायक प्रतिभा है, उनकी कहानियाँ इसकी साक्षी हैं । किन्तु कहानियों में कला के जिस उत्कृष्ट रूप का दर्शन होता है वह उपन्यासों में नहीं मिल पाता । इसका प्रधान कारण यह है कि उपन्यास के माध्यम से वे एक निश्चित ध्येय की सिद्धि चाहते थे । जिन प्रबल भावनाओं ने उन्हें 'गाँधीवाद की शव-परीक्षा' लिखने की प्रेरणा दी थी वे ही भावनायें उनकी कला का भी नियन्त्रण कर रही थी ।

जैनेन्द्र-

जैनेन्द्र के उपन्यासों की संख्या अधिक नहीं है । अब तक के उनके उपन्यास हैं - 'परख' (1929) 'सुनीता' (1935) 'त्याग पत्र' (1937) 'कल्याणी' (1939) 'सुखदा' (1952) 'विवर्त' (1953) 'व्यतीत' (1953) 'जयवर्धन' (1956) 'मुक्तिबोध' (1965) 'अनन्तर' (1968) और 'अनाम स्वामी' (1974) । ये उपन्यास हिन्दी उपन्यास की एक नयी दिशा प्रदान करने वाले उपन्यास हैं । 'परख' के प्रथम संस्करण के समय जैनेन्द्र ने उपन्यास के साथ 'कुछ शब्द' जोड़े थे । इस भूमिका में यह अंश विशेष महत्त्व का है - "मैंने जगह-जगह कहानी के तार की कड़ियाँ तोड़ दी है । वहाँ पाठक को थोड़ा कूदना पड़ता है । और मैं समझता हूँ, पाठक के लिए थोड़ा आयाम वांछनीय होता है, अच्छा हो लगता है । कहीं एक साधारण भाव को वर्णन से फुला दिया है, कहीं लापरवाही से, कहीं हल्की धीमी कलम से काम किया है, कहीं तिक्षण और भागती से । मैं समझता हूँ यह सब कुछ चित्र में खूबी और असलियत लाने के लिए जरूरी ही पड़ता है । यह कम ज्यादा रंग की शोभा रंग-बिरंगेपन में और स्वाद देती है ।..... सभी पात्रों को मैंने अपने हृदय की सहानुभूति दी है ।..... दुनिया में कौन है जो बुरा होना चाहता है । और कौन है जो बुरा नहीं है, अच्छा ही अच्छा है? न कोई देवता है न पशु । सब आदमी ही है देवता से कम ही और पशु से ऊपर हो ।" इस उद्धारण से दो बातें सामने आती हैं - एक जैनेन्द्र की कहानी कहने की पद्धति परम्परागत नहीं है । उनके उपन्यासों की कथा श्रृंखला में बीच-बीच में कड़िया टूटी रहती है । यह इसलिए है कि कहानी कहना उनका उद्देश्य नहीं है । यही कारण है कि उनके उपन्यास आकार में अत्यन्त लघु हैं. । दो, वे आदमी को आदमी के रूप में देखना चाहते हैं - देवता या दानव के रूढ़ रूपों में नहीं । दूसरे शब्दों में, उनके उपन्यासों के पात्र 'टाइप' चरित्र न होकर व्यक्ति चरित्र हैं । व्यक्ति चरित्र होने के कारण उनके पात्र असाधारण आचरण करते हैं । 'परख' की कट्टी, 'सुनीता' की सुनीता, 'त्यागपत्र' की -मृणाल, 'कल्याणी' की कल्याणी, 'सुखदा' की सुखदा, 'विवर्त' की भुवन मोहिनी तथा इसी प्रकार अन्य उपन्यासों

की केन्द्रीय स्त्रियाँ जिस प्रकार का आचरण करती हैं वह सामान्य आचरण कतई नहीं है । जैनेन्द्र के अधिकांश उपन्यासों का कथा-परिरूप एक ही है । यह परिरूप प्रेम का त्रिकोण है । स्त्री जिस पुरूष से प्रेम करती है उसके साथ उसका विवाह नहीं होता, और जिससे विवाह होता है उससे वह प्रेम नहीं करती । प्रेमिका और पत्नी का द्वैत जैनेन्द्र के उपन्यासों की केन्द्रीय समस्या है ।

इलाचन्द्र जोशी-

इलाचन्द्र जोशी हिन्दी के दूसरे महत्त्वपूर्ण मनोवैज्ञानिक उपन्यासकार हैं । उन्होंने जैनेन्द्र के साथ ही उपन्यास लिखना प्रारम्भ किया । उनका पहला उपन्यास 'घृणामयी' 1929 में प्रकाशित हुआ । इसी उपन्यास का 'अल्पसंशोधित' रूप 1947 में 'लज्जा' के नाम से प्रकाशित हुआ । आत्मकथात्मक शैली में लिखा हुआ यह उपन्यास एक ऐसी युवती की कहानी है जो अपने भाई और पिता की इच्छा के प्रतिकूल एक चरित्रहीन युवक से प्रेम करती है । इसके आघात के कारण पिता के दिमाग की नस फट जाने के कारण मृत्यु हो जाती है और भाई आत्महत्या कर लेता है । अन्ततः युवती की दुर्गति भी होती है । उपन्यासकला की दृष्टि से यह कोई परिपक्व रचना नहीं है तथापि इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि जोशी जी साग्रह और सचेत भाव मनोविश्लेषण के सिद्धांतों को अपने उपन्यासों में स्थान दे रहे हैं । मनोविश्लेषण के जिन सिद्धांतों को उन्होंने मृणामयी' में स्थान दिया है, वे आरोपित हैं, वे उपन्यास का स्वाभाविक अंग नहीं बन पाये हैं । उसका कारण यह है कि उन्होंने जीवन को महत्त्व देने के स्थान पर अपने अध्ययन और शास्त्र को महत्त्व दिया है । उनकी यह प्रवृत्ति उनके सभी उपन्यासों - 'सन्यासी' (1940) 'प्रेत और छाया' (1944), 'पर्दे की रानी' (1945), 'निर्वासित' (1946), 'ऋतुचक्र' 'भूत का भविष्य' (1973) में विद्यमान है । मृणामयी के बाद संन्यासी में पात्रों के व्यक्तित्व की जटिलता और उनके आचरण की असाधारणता और बढ़ी है । यह उपन्यास ऐसे दंपत्ति की कहानी है जिसका दाम्पत्य जीवन प्रतिहिंसा की नींव पर खड़ा है । नन्दकिशोर जयन्ती से इसलिए विवाह करता है कि वह उस "तेजस्विनी नारी के स्वभाव के एक शान्त और संयत तथापि दुर्दमनीय गर्व को जो भाव दिखाई दिया था", उसे चूर-चूर कर दे । फलतः इस दम्पत्ति का जीवन अशान्ति और निराशा से परिपूर्ण है । क्या स्त्री-पुरूष के बीच विवाह का कारण प्रतिहिंसा की भावना हो सकती है ?

अज्ञेय-

अज्ञेय ने हिन्दी के मनोवैज्ञानिक उपन्यासों को इस अर्थ में आगे बढ़ाया कि उनके उपन्यासों में मनोविज्ञान और उपन्यासकार का सुखद सामंजस्य है । अब तक उनके तीन उपन्यास प्रकाशित हुए हैं - 'शेखर एक जीवनी' (पहला भाग 1940, दूसरा भाग 1944) 'नदी के द्वीप' (1951) तथा 'अपने-अपने अजनबी' (1961) । 'शेखर : एक जीवनी' रोम्याँ रोला के 'ज्याँ क्रिस्तोफ' से प्रेरित उपन्यास है जिसमें शेखर के बचपन, किशोरावस्था और युवावस्था के विकास का मनोवैज्ञानिक अध्ययन किया गया है । इस संबंध में अज्ञेय ने 'आत्मनेपद' में लिखा है - "ज्याँ क्रिस्तोफ" के अनवरत आत्मशोध और आत्मसाक्षात्कार का जो चित्र रोलाँ ने प्रस्तुत किया है, उससे मुझे अवश्य प्रेरणा मिली: लेकिन न तो 'शेखर' उपन्यास 'ज्याँ

क्रिस्तोफ' जैसा उपन्यास है । उन शेखर पात्र वैसा पात्र है । समानता इतनी ही है कि जैसे क्रिस्तोफ में लेखक एक आत्मान्वेषी के पीछे उसका चित्र खींचता चला है, वैसे ही मैं एक दूसरे आत्मान्वेषी के पीछे चला हूँ ।'क्रिस्तोफ में सर्वत्र उपन्यासकार अन्य पुरूष में लिख रहा है, शेखर का रूप उत्तम पुरूष में लिखी गई आत्मकथा का है । "आत्मनेपद, प्रथम संस्करण, 1960, पृ. 64) 'शेखर' उपन्यास को पढ़ने से लगता है कि शेखर असाधारण बच्चा है । वह अन्तर्मुखी, चिन्तनशील और अत्यधिक जिज्ञासु बच्चा है । वह जिन प्रश्नों को पूछता है वे ऐसे प्रश्न हैं जो सामान्यत: बच्चों के मन उठते हैं । ये प्रश्न जन्म, मृत्यु, ईश्वर, युद्ध इत्यादि के बारे में हैं । इन प्रश्नों के समुचित उत्तर उसे नहीं मिलते । वह क्रमश: अपने निष्कर्षों पर पहुँचता है । जैसे वह इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि ईश्वर नहीं है । बच्चा कहाँ से आता है, इसे वह अपने ढंग से जान लेता है । डॉ. देवराज उपाध्याय ने मेलामिया क्लीन के द्वारा फ्रिट्ज नामक बच्चे के मनोविश्लेषणात्मक अध्ययन के साथ शेखर के बचपन की तुलना करके दिखा दिया है कि दोनों में कितना साम्य है और शेखर के बालमन का चित्रण कितना मनोविज्ञान सम्मत है । (डॉ. देवराज उपाध्याय आधुनिक कथा-साहित्य और मनोविज्ञान: 1963, पृ. 241 -251) बचपन में शेखर को अपनी अनेक जिज्ञासाओं और वृत्तियों को दबाना पड़ता है । जिसके परिणामस्वरूप उसमें अहन्ता, भय और सैक्स पनपते हैं । सैक्स की प्रवृति अप्रत्यक्षत: तो बचपन से ही विद्यमान है - अपनी बहन सरस्वती के प्रति उसका लगाव इसका प्रमाण है, किन्तु किशोरावस्था में उसकी प्रत्यक्ष अभिव्यक्ति होती है । उसके जीवन में अनेक लड़कियाँ आती हैं - फूली शारदा, शान्ति शशि इत्यादि । उसमें समलैंगिकता की प्रवृत्ति भी दिखाई देती है । वह सबसे अधिक राशि के निकट आता है । शशि उसकी दूर की मौसेरी बहन है । बहन के साथ यह सम्बन्ध अज्ञेय के कथा-साहित्य में बार-बार प्रत्यावर्तित होने वाली वस्तु है । शेखर के काम सम्बन्ध सहज और स्वाभाविक नहीं हैं । बचपन के दमन उसे विद्रोह और स्वातन्त्रय की ओर ले जाते हैं । वह इसीलिए क्रान्तिकारी बनता है और फाँसी की सजा पाता है । 'शेखर एक जीवनी' आसन्त मृत्यु की छाया में प्रत्यवलोक के रूप में लिखा गया है । इस उपन्यास में इस प्रकार अनेक स्थल हैं जो अस्वाभाविक लगते हैं । किन्तु इससे इनकार नहीं किया जा सकता कि 'शेखर' हिन्दी का पहला उपन्यास है जिसमें बड़ी गहराई और सूक्ष्मता के साथ एक व्यक्ति के विकास का मनोवैज्ञानिक अध्ययन प्रस्तुत किया जाता है । मनोवैज्ञानिक उपन्यास के अनुकूल 'शेखर में न तो स्थूल घटनाएँ हैं और न पात्रों की संख्या अधिक है ।

भगवती प्रसाद वाजपेयी-

वाजपेयी जी ने लिखना प्रेमचन्द के जीवनकाल में ही शुरू कर दिया था । उनका पहला उपन्यास 'प्रेमपथ' 1926 में प्रकाशित हुआ था । प्रेमचन्द की मृत्यु के वर्ष तक उनके सात उपन्यास प्रकाशित हो चुके थे । उनके कुल उपन्यासों की संख्या 40 से ऊपर है । इन उपन्यासों में वस्तु और शिल्प सम्बन्धी विविधा है । वाजपेयी जी समय-समय पर अनेक विचारों और उपन्यासकारों से प्रभावित हुए हैं । अत कुछ लोग उन्हें सामाजिक उपन्यासकारों की श्रेणी में रखते हैं और कुछ मनोवैज्ञानिक उपन्यासकारों की श्रेणी में । उनके उपन्यासों में

मनोवैज्ञानिक समस्याओं की प्रधानता है । अत: उन्हें मनोवैज्ञानिक उपन्यासकारों की श्रेणी में रखना ही उचित होगा ।

डॉ. देवराज-

डॉ. देवराज साहित्य में 'मानव-जीवन की समग्रता और उसे अभिव्यक्त करने के प्रयत्नों की आपेक्षित पूर्णता को महत्त्व देते हैं । अब तक उनके जो उपन्यास आये हैं उनकी संख्या अधिक नहीं हैं । 'पथ की खोज' (दो भाग) उनका पहला उपन्यास है, जो 1951 में आया था । उसके बाद 'बाहर-भीतर' (भीतर का भात), रोड़े और पत्थर', 'मैं वे और आप अजय की डायरी और 'दूसरा सूत्र (1978) में उपन्यास प्रकाश में आये । इनमें उनके दो उपन्यास विशेष महत्त्वपूर्ण हैं - 'पथ की खोज' तथा अजय की डायरी ।

3.8 देश विभाजन और हिन्दी उपन्यास

यह निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि देश-विभाजन के संदर्भ में साम्प्रदायिक संकीर्णता ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है । साम्प्रदायिकता का सम्बन्ध धर्म से है और भारत में इसकी जड़ें बहुत गहरी रही हैं । अतीत काल से ही हमारे जीवन में धर्म का महत्व सर्वोपरि रहा है । प्राचीनकाल में राजनीति भी धर्म का माध्यम से संचालित होती थी, किन्तु आधुनिक युग में विदेशी शासकों द्वारा उसी धर्म का राजनीति में एक घातक अस्त्र के रूप में प्रयोग किया गया । राजनीतिक स्वार्थों और राजनीतिक महत्त्व के विभिन्न मुद्दों को धर्म के साथ जोड़कर ब्रिटिश शासकों ने एक अन्य साम्प्रदायिक उन्माद को उभरने और विकसित होने का अवसर उत्पन्न कर दिया, जिसके आत्मघाती और देशव्यापी परिणामों के करूण प्रसंगों से हमारा अतीत भरा पड़ा है और आज भी जिसके दुष्प्रभावों से हम मुक्त नहीं हो सकते हैं । भारत-विभिन्न धर्मावलम्बियों का देश रहा है । विदेशी आक्रांता भी इस देश को समय-समय पर रौंदते रहे हैं । भारत विभिन्न धार्मिक संकीर्णताओं तथा ऊँच-नीच के भेदभाव से ग्रस्त रहा है । विभाजन से पूर्व हिन्दू और मुसलमान सदियों तक साथ-साथ रहे । फलत: दोनों के बीच सामाजिक स्तर पर भावात्मक एकता उत्पन्न हो गई थी । उसे ब्रिटिश साम्राज्यवाद ने भिन्न सम्प्रदायवाद एवं भिन्न कौमियत का नारा देकर छिन्न-भिन्न करके कटुता, विद्वेष और घृणा में बदल दिया । यही साम्प्रदायिक विद्वेष आगे चलकर देश-विभाजन का कारण बना । विभाजन से पूर्व के साम्प्रदायिक दंगे और तनाव की स्थितियाँ मुस्लिम लीग द्वारा हिन्दुओं और मुस्लिम समाज की इसी भावनात्मक मानवीय सम्बन्ध सूत्रता को छिन्न-भिन्न करने के लिए किए जाने वाले राजनीतिक प्रयास थे । इसका बीज ब्रिटिश शासकों ने बोया था और लाभ भी वे ही उठा रहे थे । हिन्दी के उपन्यासों में इस साम्प्रदायिक धर्मान्धता के स्वरूप का विवेचन पर्याप्त रूप से हुआ है ।

अखंड भारत की अनिवार्य दुर्भाग्यपूर्ण नियति देश के विभाजन के रूप में 15 अगस्त, 1947 को घोषित हो गई । 'झूठा सच, 'इन्सान', 'देश की हत्या, 'सीधी-सच्ची बातें', 'खून और खून', 'दासता के बन्धन', कालेकोस आदि अनेक उपन्यासों में विभाजन के इस मानवीय दु:स्वप्न और राजनीतिक त्रासदी के अनेक पक्षों का चित्रण लेखकीय संवेदना के साथ हुआ है । 15 अगस्त, 1947 को भारत धर्म के आधार पर ऐसे दो स्वतंत्र राष्ट्रों में विभक्त कर दिया गया

जिनका कोई भौगोलिक आधार नहीं था । देश का यह विभाजन अंग्रेज शासकों की मध्यस्थता के तहत दोनों राष्ट्रों के शीर्षस्थ नेताओं की सहमति से हुआ । किन्तु इस विभाजन से सन्तोष किसी को नहीं था । कांग्रेस दुखी थी, गाँधी जी दुखी थे और जिन्ना जो पाकिस्तान के निर्माता थे, भी दुखी थे । जिन्ना एक महत्वाकांक्षी नेता थे । उन्होंने मुस्लिम जनता को नारा भर दिया था । कदाचित पाकिस्तान की वास्तविकता पर उसे असंभव और अव्यावहारिक समझ कर उन्होंने कभी ध्यान ही नहीं दिया था । किन्तु पाकिस्तान बनने के बाद की विभीषिका देखकर और अनागत भविष्य की कल्पना करके जिला संत्रस्त हो उठे थे ।

विभाजन के राजनीतिक निर्णय का प्रभाव देश की जनता के एक विशाल वर्ग की मानसिकता पर भी पड़ा । हिन्दी उपन्यासों में इस दौर में होने वाली पारिवारिक विघटन, पारस्परिक सम्बन्धों में आयी टूटन और द्वन्द्व की विविध मानसिक स्थितियों का अत्यन्त यथार्थमूलक और आर्थिक अंकन हुआ है । ये ऐसी मानसिक स्थितियाँ हैं, जिनका इतिहास के पृष्ठों पर कोई उल्लेख नहीं मिलता, किन्तु जो कटु वास्तविकताएँ हैं जिन्हें एक संवेदनशील उपन्यासकार की लेखनी ही साकार रूप दे सकती है। विभाजन की घोषणा और सीमा से लगे नगरों में हो रहे रक्तपात को लोमहर्षक खबरों ने भारतीय ग्रामांचलों और नगरांचलों की शांति भंग कर दी थी । मनुष्य-मनुष्य न रहकर कट्टर हिन्दू या कट्टर मुसलमान हो रहा था । टोपी शुक्ला उपन्यास में विभाजन की विभीषिका का मर्मस्पर्शी चित्रण हुआ है जहाँ प्रतिशोध की भावना ने उन्हें मानव-विरोधी बना दिया था । दोनों ही देशों के लाखों आबाल वृद्ध 'जिन्दगी के खलिहानों में लगी आग' को देखकर स्तब्ध हो रहे थे । विभाजन एक ऐसा राजनीतिक निर्णय था जिसने प्रेम, सौहार्द्र और बंधुत्व के स्नेह सूत्र उलझा दिए थे । 'टोपी शुक्ला का इफ्फान और उसका दोस्त शुक्ला दिलों में अनजाने ही जन्म लेती कटुता, सन्देह और नफरत की भावनाओं के अहसास से पीड़ित दिखाई देते हैं । शुक्ला को लगता है कि अब वह सलीमा से प्यार न कर सकेगा या सकीना से राखी न बंधवा सकेगा, क्योंकि वह हिन्दू है । इफ्फान को अपने स्कूल के हिन्दू अध्यापक अजीव से दिखने लगे । 'ओस की बूँद' का वजीर हसन भी ऐसा ही एक प्रतीक पात्र है जो अपने इकलौते बेटे अली बाकर के पाकिस्तान चले जाने पर उसके साथ नहीं जाता, क्योंकि उसे अपना 'घर' देश और धर्म से भी बड़ा लगता है । वजीर हसन जैसे न जाने कितने विघटित परिवार वाले अपनी ही आत्मा के अकेले कमरे में बन्द हो गए । 'आधा-गाँव' में भी ऐसे आधे-अधूरे अनेक परिवारों की व्यथा-कथा चित्रित हुई है । विभाजन की विभीषिका के रूप में खल्लों जैसी अनेक सद्य: विवाहिता स्त्रियाँ अपने शौहर के पाकिस्तान चले जाने से उनके जीते जी बेवा हो गई । 'आधा-गाँव' के परिवारों के विघटन की समस्या को प्रेम और घृणा के दोहरे द्वन्द्व के माध्यम से चित्रित किया गया है । 'आधा गाँव' के ऊँची हैसियत वाले हकीम साहब, फुस्सूमियाँ जवादमियाँ सभी आजादी के कारण मिली आत्मा और परिवेश की तनहाई का दर्द झेलते दिखाई देते हैं ।

3.9 स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यास

स्वातंत्रयोत्तर काल की राजनीतिक घटनाओं और नये सामाजिक संदर्भों ने समूचे हिन्दी साहित्य को बहुत गहरे प्रभावित किया था । विभाजन की विभीषिका-स्वतंत्रता मिलने का उत्साह और

आर्थिक संकट से उत्पन्न परिस्थितियों ने वस्तु और शिल्प के स्तरों पर हिन्दी उपन्यास में एक युगान्तर सा उपस्थित कर दिया । पुरानी पीढ़ी के कुछ इन-गिने उपन्यासकार इस परिवर्तित परिवेश में अपना सामंजस्य नहीं बिठा सके । जीवन के प्रति उनका दृष्टिकोण परम्परागत ही रहा । यशपाल, अमृतलाल नागर और रांगेय राघव जैसे उपन्यासकारों ने बदले हुए जीवन बोध को कलात्मक अभिव्यक्ति प्रदान की । स्वतंत्रता के तुरन्त बाद के उपन्यासों का कथ्य उतना मौलिक और नया नहीं है । किन्तु 1953-54 के आस-पास लिखे उपन्यासों में कथ्यगत रूपांतरण स्पष्ट झलकता है । स्वतंत्रतापूर्व के उपन्यास नागरिक जीवन से विशेष रूप से जुड़े हुए थे, लेकिन स्वतंत्रता के बाद विभिन्न अंचलों की ओर भी कथाकार की दृष्टि गयी । इस तरह से आंचलिक उपन्यासों का प्रादुर्भाव हुआ ।

स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यास ने अन्य साहित्यिक विधाओं को बहुत पीछे छोड दिया है क्योंकि जीवन यथार्थ के विभिन्न स्तरों को जितनी गहराई और संवेदनशील सूक्ष्मता के साथ उपन्यास ने उकेरा है, उतना अन्य किसी विधा ने नहीं । जिस गति से जीवन बलता है, उसमें यथार्थ कोई इकहरा प्रत्यय नहीं रह गया है क्योंकि 'मनुष्य' पर आन्तरिक और बाह्य दबावों का सिलसिला निरंतर जटिल होता गया है । जीवन की यथार्थ जटिलताओं को समझने और उन्हें अभिव्यक्त करने का जितना साहस उपन्यास ने किया है उतना अन्य किसी विधा ने नहीं । स्वातंत्र्योत्तर में उपन्यास का परिदृश्य इतना वैविध्यपूर्ण, कलात्मक और यथार्थपरक है कि इस विधा का क्षेत्र बहुत व्यापक हो गया है - व्यक्ति के आन्तरिक संसार की जटिलताओं (अंधेरबंद कमरे, आपका बंटी), कुंठाओं (मित्रों मरजानी, मछली मरी हुई), ग्रामीण जीवन की विषमताओं (मैला आंचल रागदरबारी), महानगरीय विद्रूपताओं (मुर्दाघर, उखड़े हुए लोग), राजनैतिक क्रूर विसंगतियों (महाभोज, दारूलशफा), ऐतिहासिक और सांस्कृतिक संकटों (पुनर्नवा, मृगनयनी), सामाजिक विषमताओं (बूँद और समुद्र, झूठा सच) आदि अनेक क्षेत्रों का विश्वसनीय विश्लेषण हिन्दी उपन्यास ने किया है । शिल्प और भाषा की दृष्टि से देखें तो एक छोर पर मैला आंचल रागदरबारी, आधा गाँव है तो दूसरे छोर पर चारूचन्द्र - लेख, मानस का हंस, शैलूष हैं, सूरज का सातवां घोड़ा, अजय की डायरी, कलिकथा वाया बाइपास जैसे शिल्पगत प्रयोग हैं तो झूठा सच', 'पहला गिरगिटिया' जैसे महाकाव्यात्मक आख्यान हैं, सूरजमुखी अंन्धेरे में, 'चित कोबरा' जैसे मानसिक कुंठाओं को चित्रित करने वाले उपन्यास हैं तो 'अमृत और विष', 'धरती', 'धन न अपना' जैसे सामाजिक सरोकारों वाले मानवीय संवेदना भरे उपन्यास हैं । इसलिए स्वातंत्र्योत्तर में हिन्दी उपन्यास को हम अनेक धाराओं में रख सकते हैं ।

डॉ. सुरेश सिन्हा के अनुसार स्वतंत्रता परवर्ती हिन्दी उपन्यास की दो प्रमुख धाराएँ हैं । पहली धारा के अन्तर्गत 'अन्धा विद्रोह', नितान्त वैयक्तिकता और घोर अन्तर्मुखता के उपन्यास आते हैं जबकि 'मानव-मूल्य और मर्यादा स्थापित करने वाले उपन्यासों' की गणना दूसरी धारा के अन्तर्गत होती है । डॉ. सिन्हा ने प्रथम वर्ग के उपन्यासों (अपने-अपने अजनबी, वे दिन, नदी के द्वीप) के कथ्य की कटु आलोचना की है । उनकी धारणा है कि इन उपन्यासों में मनुष्य का जीवन जितना अर्थशून्य, सतही और यान्त्रिक चित्रित किया गया है उतना वास्तव में

भारतीय समाज में लक्षित नहीं होता । द्वितीय वर्ग में आने वाले उपन्यास (बूँद और समुद्र, अमृत और विष, सूरज का सातवां घोड़ा, अलग-अलग वैतरणी, यह पथ बन्दु था, मैला आँचल और आपका बंटी) समकालीन मूल प्रश्नों एवं समय-सत्य से साक्षात्कार करने का प्रयत्न करते हैं । "इनमें उपन्यासकारों के अनुभव तथा अन्तर्सम्बन्धो की व्याख्या सामाजिक परिप्रेक्ष्य में हुई है । आज की परिस्थितियों से उत्पन्न वास्तविक संत्रास का चित्रण एवं अस्तित्व की सही चुनौतियों को सार्थक ढंग से स्वीकार करने का प्रयत्न इन उपन्यासों में प्राप्त होता है ।"

हम स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यास को अध्ययन की सुविधा के लिए निम्नलिखित वर्गों में रखेंगे-

1. व्यक्ति के अन्तर्मुखी वैयक्तिक जीवन पर केन्द्रित उपन्यास -
   (क) सैक्स जीवन से सम्बद्ध उपन्यास ।
   (ख) आत्म निर्वसन, अकेलेपन, अजनबीपन, निराशा, अनिश्चय आदि के अनुभवों से सम्बद्ध उपन्यास ।
2. समाज और परिवेश को चित्रित करने वाले उपन्यास -
   (क) ग्रामीण जीवन की पहचान को रेखांकित करने वाले उपन्यास ।
   (ख) नगर बोध और महानगरबोध पर केन्द्रित उपन्यास ।
   (ग) राजनैतिक विसंगतियों और जटिलताओं पर केन्द्रित उपन्यास ।
3. ऐतिहासिक और सांस्कृतिक चेतना सम्बद्ध उपन्यास ।

नगरीय तथा महानगरीय बोध के उपन्यास-

स्वातंत्र्योत्तरकाल में नगरों तथा महानगरों का बड़ी तेजी से विकास हुआ है तथा गाँवों का भी शहरीकरण लगातार हो रहा है । वस्तुतः आज स्थितियाँ ऐसी हैं कि जीवन यथार्थ को गाँव शहर में बाँटकर देखना भी संभव नहीं रहा है । 'मैला आंचल' से जैसे आंचलिक उपन्यास की अवधारणा विकसित हुई वैसी ही आंचलिकता शहरी क्षेत्रों के चित्रण को लेकर हुई । इस दृष्टि से जगदम्बा प्रसाद दीक्षित का 'मुर्दाघर' उपन्यास सर्वाधिक उल्लेखनीय है । इस उपन्यास में ठेठ बंबइया भाषा के जबरदस्त सर्जनात्मक प्रयोग द्वारा समाज के एक निम्नतम वर्ग की हालत का एहसास उपजाया गया है । यहां भाषा के परिचित ढाँचे को तोड़कर, भाषायी बनावट को शुरू से अंत तक, काव्यात्मक आवेग में क्रियमाण रखा गया है । हिन्दी उपन्यास भाषायी काव्यात्मकता का लाभ अक्सर नहीं उठा सका । इस दिशा में जो प्रयत्न हुए भी, उनसे अधिकतर, भावुकता और रोमानियत ही पनपी । इसका कारण यह रहा कि कवित्व उपन्यास में अलग से चमकता रहा । वह भाषायी संरचना और वाक्य-विन्यास का अंग नहीं बना । दीक्षित की औपन्यासिक 'भाषा की विशेषता यह है कि इसकी संरचना और वाक्य विन्यास में कविता की लय का प्रयोग हुआ है, अलग से कवित्व की चमक कहीं नहीं है । भाषा के संरचनात्मक विधान में कविता की शक्मित को गूथ देने के कारण यहाँ भाषा उत्तेजना या आवेग में बंधी हुई है, बिफरी नहीं है । इस भाषा से स्थितियों को सीधे और ठेठ रूप में प्रस्तुत करने और उत्कृष्ट संवेदनात्मक बोध जगाने की क्षमता अर्जित की गई है ।

जब हम स्वातंत्र्योत्तर शहरी उपन्यासों की ओर देखते हैं तो उसी तरह असली और नकली अर्थात् अनुभवों के और आधुनिकता के फार्मूलों के उपन्यास दिखाई पड़ते हैं जैसे आंचलिक क्षेत्र में असली और नकली अर्थात् अंचलों के गहरे अनुभवों के और आंचलिकता के फार्मूलों

के उपन्यास दिखाई पड़ते हैं । नगर-जीवन और उसके माध्यम से देश के सामाजिक जीवन की अनेक समस्याओं और यथार्थ के विविध स्तरों को उद्घाटित करने वाले उपन्यासों में प्रमुख हैं 'झूठा सच' (यशपाल), 'भूले बिसरे चित्र' (भगवतीचरण वर्मा), 'बूंद और समुद्र' (अमृतलाल नागर), 'यह पथ बंधु था' (नरेश मेहता), 'धूपछांही रंग' (गिरीश अस्थाना) ।

इस श्रेणी में आने वाले अनय महत्त्वपूर्ण उपन्यास हैं - कालाजल (शानी) एक सड़क सत्तावन गलियाँ (कमलेश्वर), उखड़े हुए लोग (राजेन्द्र यादव), चाँदनी का खंडहर (गिरधर गोपाल), शहर में घूमता आईना (उपेन्द्रनाथ अश्क), कड़ियाँ (भीष्म साहनी), सीमाएँ (मनहर चौहान), कच्ची पक्की दीवारें (रामकुमार भ्रमर), कुरू स्वाहा (मनोहर श्याम जोशी), कोई तो (विष्णु प्रभाकर), अनित्य (मृदुला गर्ग), उपसंहार (योगेश गुप्त), सावित्तरी (शैलेश मटियानी), सुबह के इन्तजार तक (सूर्यबाला) आदि ।

सांस्कृतिक और ऐतिहासिक उपन्यास-

स्वातंत्र्योत्तरकाल में जो महत्त्व पूर्ण सांस्कृतिक और ऐतिहासिक उपन्यास लिखे गये उनमें प्रमुख हैं- चारूचन्द्र लेख, पुनर्नवा, अनामदास का पोथा (हजारी प्रसाद द्विवेदी), मृगनयनी, भुवन विक्रम (वृंदावन लाल वर्मा) मुर्दों का टीला (रांगेय राघव), शतरंज के मोहरे, एकदा नैमिषारण्ये, मानस का हंस, खंजन. नयन (अमृतलाल नागर), मौत की सराय (मिक्यु), सोमनाथ (आचार्य चतुरसेन), अमिता, दिव्या (यशपाल) तांबे के पैसे (आनंद प्रकाश जैन), बहती गंगा (शिव प्रसाद मिश्र, रूद्र कार्तिकेय) आदि ।

अतीत की घटनाओं और चरित्रों पर आधारित ये उपन्यास आधुनिक जीवन के मूल्य संक्रमण, राजनैतिक उथल-पुथल, सामाजिक यथार्थ और सांस्कृतिक अवमूल्यन से गहरे जुड़े हैं । ये उपन्यास हमारे धार्मिक और लोक विश्वास सम्बन्धी रूढ़ियों को निर्ममता से उधेड़ते हैं । इस दृष्टि से ये उपन्यास प्रासंगिक हैं ।

राजनैतिक चेतना केन्द्रित उपन्यास-

यह आकस्मिक नहीं है कि आधुनिक रचनाकार राजनीतिक प्रश्नों से टकरा रहा है । राजनीतिक ने हमारे पूरे जीवन को इस कदर ग्रस लिया है कि उसकी छाया पारिवारिक जीवन तब पर पड़ रही है । इसलिए हमारे लेखकों ने स्वातंत्र्योत्तर में राजनैतिक व्यक्तियों, घटनाओं, आकस्मिकताओं, साजिशों तथा उठा-पटक को अपने उपन्यासों में विन्यस्त किया है । यों थोड़ी बहुत राजनीति तो हर सामाजिक उपन्यास में मिलेगी किन्तु सबहिं नचावत रामा गुसाई (भगवतीचरण वर्मा), एक और मुख्यमंत्री (यादवेन्द्र शर्मा चन्द्र), हरा समंदर गोपी चंदर (लक्ष्मीनारायण लाल), काली आधी (कमलेश्वर), हीरक जयंती (नागार्जुन), महाभोज (मन्नू भण्डारी), जिन्दाबाद मुर्दाबाद (दयानंद वर्मा), पक्षधर (विश्वम्भरनाथ उपाध्याय) समय साक्षी हैं (हिमांशु जोशी) आदि ।

3.10 बीसवीं शताब्दी का अन्तिम दशक : हिन्दी उपन्यास का उत्कर्ष

श्री गिरिराज किशोर ने अपनी एक टिप्पणी 'उपन्यास और कुछ नोट्स' में लिखा है कि हिन्दी में उपन्यास-विधा हासिए पर है । एक तो अच्छे हिन्दी उपन्यास कम लिखे जा रहे हैं, दूसरे

जो लिखे जा रहे हैं, वे स्पर्धा से बाहर हैं । दसवें दशक के उत्तरार्द्ध की इस टिप्पणी से हिन्दी उपन्यास का निराशाजनक बिम्ब बनना स्वाभाविक है । जब टिप्पणी करने वाले स्वयं एक प्रतिष्ठित उपन्यासकार हों तो उसका महत्त्व और बढ़ जाता है । दूसरी ओर डॉ. विजय मोहन सिंह जैसे आलोचकों का स्पष्ट विचार है - 'इस शताब्दी का आखिरी दशक औपन्यासिक दृष्टि से अधिक समृद्ध माना जायेगा, कविता और कहानी दोनों की अपेक्षा।" इन दो विरोधी मंतव्यों के बीच इसी दशक में उपन्यास को लेकर एक नजरिया यह उभरा है कि बहुत यांत्रिक ढंग से लेखन हो रहा है । ज्योतिष जोशी के अनुसार 'इसी से जुड़ी एक कठिनाई यह भी है कि उपन्यास को अपने समय की घोषणा बनाने पर क्यों जोर दिया जाता है ।' दसवें दशक के तमाम उपन्यासों से गुजरते हुए हिन्दी उपन्यास से सम्बन्धित अनेक आपत्तियाँ और मंतव्य कौंधते हैं और बहस की माँग करते हैं ।

दसवें दशक में कई पीढ़ियों के रचनाकारों को उपन्यास विधा के प्रति गंभीरता से समर्पित देखा जा सकता है । कई दशकों से लिख रहे विष्णु प्रभाकर, निर्मल वर्मा, रामदरश मिश्र, भीष्म साहनी, विवेकीराय, यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र' कृष्णा सोबती, कन्हैया लाल ओझा, अमरकांत, जगदीश चन्द्र, शिव प्रसाद सिंह आदि के उपन्यास इस दशक में प्रकाशित हुए । इनके साथ युवा लेखकों - अशोक लव, शकुन्तला दुबे, प्रियवंद जयप्रकाश कर्दम आदि ने भी अपनी उपस्थिति जतायी है । एक बड़ी संख्या में लेखिकाएँ इस दशक में सक्रिय रहीं । यह आकस्मिक और अस्वाभाविक नहीं हैं कि इस दशक में नारी की नियति और उसकी मुक्ति कामना पर केन्द्रित उपन्यासों की संख्या सर्वाधिक है । सम्भवत: अधिकतर उपन्यासकारों को अपने समय-समाज को नारी की नियति के सन्दर्भ में पारिभाषित विश्लेषित करने की जरूरत महसूस होती जा रही है । नारी केन्द्रित उपन्यासों की सूची इस प्रकार है - 'मुझे चाँद चाहिए' (सुरेन्द्र वर्मा), 'मीनारें (शशि प्रभा शास्त्री), उकाव (क्षितिज शर्मा), 'इच्छा पत्र' (जगन सिंह), 'छिन्नमस्ता', 'पीली आँधी', 'अपने-अपने चेहरे' (प्रभा खेतान), 'अपनी सलीबें (नमिता सिंह), 'परछाई अन्नपूर्णा' (क्षमा शर्मा), 'यामिनी कथा (सूर्य बाला), 'अवान्तर कथा' (अनामिका), सुन्नर पांडे की पतोहू' (अमरकांत), 'मानदंड' (इंदिरा दीवान), 'आवर्तन' (कमल कुमार), 'एक पत्नी के नोट्स' (ममता कालिया), 'बेतवा बहती रही' (इदन्नमम), 'चाक' (मैत्रेयी पुष्पा), 'अपने-अपने कोणार्क', 'वितस्ता बहती है' (चन्द्रकान्ता), वह रास्ता उसी अस्पताल को जाता है (सुधा अरोड़ा), 'सुरंग' (भीमसेन त्यागी), 'औरत' (शिवप्रसाद सिंह), रंगी हुई चिड़िया (धर्मेन्द्र गुप्त), 'कलिकथा वाया बाईपास' (अलका सारावगी), 'कीर्ति कथा' (कश्मीरी लाल), 'निष्कवच' (राजी सेठ), 'शाल्मली' (नासिरा शर्मा), 'अर्द्धनारीश्वर' (विष्णु प्रभाकर), 'यश' (प्रबोध कुमार गोविल), 'शहर की सड़कें' (राजेन्द्र अवस्थी), 'गंजी' (मंजुल भगत), 'कठगुलाव' (मृदुला गर्ग), 'एक नौकरानी की डायरी', 'नर नारी' (कृष्ण बलदेव वैद), 'कुंतो', 'नीलू नीलिमा नीलोफर' (भीष्म साहनी), 'साधना' (शशिभूषण) आदि ।

3.11 सारांश

हिन्दी उपन्यास का उद्भव आज से लगभग 125 वर्ष 'पूर्व हुआ था । उन्नीसवीं सदी के अंतिम दशकों में लाला श्रीनिवास दास का 'परीक्षा गुरू' और श्रद्धाराम फुल्लौरी की 'भाग्यवती' शीर्षक से दो कथाकृतियाँ सामने आई । हिन्दी साहित्य के इतिहासकारों एवं आलोचकों ने इन्हीं दोनों रचनाओं के हिन्दी के प्रथम उपन्यासों की संज्ञा दी । ये दोनों कृतियाँ तत्कालीन सुधारवादी आन्दोलनों से प्रेरित दिखाई पड़ती है । तत्पश्चात् बाबू देवकीनन्दन खत्री, गोपाल राम गहमरी, राधाचरण गोस्वामी और किशोरी लाल गोस्वामी की कथाकृतियाँ हिन्दी के प्रारम्भिक उपन्यासों में स्थान पाती हैं । इन वृतियों का सृजन पाठक के भीतर की मनोरंजन की भूख शांत करने हेतु कहा जा सकता है । कहने की आवश्यकता नहीं कि इन कृतियों से हिन्दी कथा साहित्य का एक विशाल पाठक वर्ग तैयार हुआ ।

प्रेमचन्द के आगमन से हिन्दी उपन्यास को गति और शक्ति प्रात हुई इसीलिए उपन्यास के आलोचकों ने प्रेमचन्द को केन्द्र में रखकर हिन्दी उपन्यास साहित्य, प्रेमचन्द युगीन हिन्दी उपन्यास एवं प्रेमचन्देत्तर हिन्दी उपन्यास के रूप में उपन्यासों का वर्गीकरण किया । प्रस्तुत पाठ में भी इसी वर्गीकरण को आधार बनाकर हिन्दी उपन्यास के उद्भव और विकास की कहानी संक्षेप में वर्णित की गई है ।

3.12 संदर्भ ग्रन्थ

1. आज का हिन्दी साहित्य : संवेदना और दृष्टि - डॉ. रामदरस मित्र
2. आधुनिक हिन्दी उपन्यासों में वस्तु विन्यास - डॉ. सरोजनी त्रिपाठी
3. आधुनिक हिन्दी कथा साहित्य और चरित्र विकास - डॉ. बेचन
4. उपन्यास - स्थिति और गति - चन्द्रकान्त बांदीवेडकर
5. कथा साहित्य के मनोवैज्ञानिक समीक्षा सिद्धान्त - डॉ. देवराज उपाध्याय
6. हिन्दी उपन्यास का विकास और नैतिकता - डॉ. सुखदेव शुक्ल
7. हिन्दी उपन्यास - शिवनारायण श्रीवास्तव
8. हिन्दी उपन्यास : बदलते प्रतिमान - डॉ. लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय
9. हिन्दी उपन्यास पहचान और परख - इन्द्रकान्त मदान
10. हिन्दी के मनोवैज्ञानिक उपन्यास - डॉ. धनराज मानधाने
11. हिन्दी के प्रगतिवादी उपन्यास: एक अध्ययन - डॉ. सुशीलकांत सिन्हा
12. हिन्दी उपन्यास उद्भव और विकास - सुरेश सिन्हा
13. हिन्दी उपन्यास उद्भाव और विकास - डॉ. हेतु भारद्वाज, डी. सुमनलता
14. हिन्दी उपन्यास शिल्प और प्रयोग - डॉ.त्रिभुवन सिंह
15. हिन्दी उपन्यासों का शिल्पगत विकास - उषा सक्सेना

3.13 बोध प्रश्न

1. हिन्दी उपन्यास के विकास की पृष्ठभूमि पर प्रकाश डालिए ।

2. हिन्दी का पहला उपन्यास कौन सा है? उसका परिचय दीजिए ।
3. हिन्दी उपन्यास के विकास में प्रेमचंद के योगदान को रेखांकित कीजिए ।
4. प्रसाद की औपन्यासिक कला पर प्रकाश डालिए ।
5. प्रेमचंदोत्तर हिन्दी उपन्यास की विशेषताओं पर प्रकाश डालिए ।
6. जैनेन्द्र की औपन्यासिक कला पर निबन्ध लिखिए ।
7. यशपाल की उपन्यास कला पर निबन्ध लिखिए ।
8. अमृत लाल नागर के औपन्यासिक योगदान को रेखांकित कीजिए ।
9. इन उपन्यासकारों के हिन्दी उपन्यास के विकास में योगदान को रेखांकित कीजिए -
   (क) भगवतीचरण वर्मा
   (ख) इलाचन्द्र जोशी
   (ग) भगवती प्रसाद वाजपेयी
10. अज्ञेय की उपन्यास कला पर निबन्ध लिखिए ।
11. स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यास की विभिन्न धाराओं पर प्रकाश डालिए ।
12. आंचलिक उपन्यास के विकास पर प्रकाश डालते हुए 'मैला आंचल' उपन्यास की समीक्षा कीजिए ।
13. 'राग दरबारी' उपन्यास के वैशिष्य पर निबंध लिखिए ।
14. आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के उपन्यासों में व्यक्त सांस्कृतिक चेतना की व्याख्या कीजिए ।
15. इन उपन्यास पर टिप्पणियाँ लिखिए - अलग-अलग वैतेरजी, उखड़े हुए लोग, अंधेरे बंद कमरे, आंधी, गली आगे मुड़ती है कलिकथा वाया बाईपास, अखां, पहला गिरमिटिया, अल्या कबूतरी ।

इकाई - 4

उपन्यास एवं कहानी में अन्तर
और पुरानी कहानी एवं नई कहानी में अन्तर

इकाई की रूपरेखा

4.0 उद्देश्य

4.1 प्रस्तावना

4.2 उपन्यास और कहानी में अन्तर

- 4.2.1 आकार का अन्तर
- 4.2.2 कथानक का अन्तर
- 4.2.3 चरित्र चित्रण का अन्तर
- 4.2.4 संवाद योजना का अन्तर
- 4.2.5 परिवेश विधान का अन्तर
- 4.2.6 उद्देश्य का अन्तर
- 4.2.7 प्रभावान्विति का अन्तर
- 4.2.8 शैलीगत अन्तर

4.3 पुरानी कहानी और नई कहानी में अन्तर

- 4.3.1 संवेदना एवं परिवेश चित्रण के आधार पर अन्तर
- 4.3.2 भाषिक संरचना के आधार पर अन्तर
- 4.3.3 भाषा की सांकेतिकता, प्रतीकात्मकता एवं बिम्बात्मकता के आधार पर अन्तर
- 4.3.4 शिल्प विधि के आधार पर अन्तर
- 4.3.5 निष्कर्ष

4.4 सारांश

4.5 संदर्भ ग्रन्थ

4.6 यह बोध प्रश्नों के उत्तर

4.0 उद्देश्य

इस इकाई में आप गद्य साहित्य की प्रमुख विधाओं कहानी और उपन्यास का अध्ययन करेंगे । इस इकाई में आप पुरानी कहानी से विविध चरणों के विकास क्रम का अध्ययन करेंगे । इस इकाई को पढ़ने के बाद आप -

- उपन्यास और कहानी के शिल्पगत अन्तर को जानेंगे ।
- उपन्यास और कहानी के भावगत अन्तर को समझ पायेंगे ।
- उपन्यास और कहानी की प्रभावान्विति को समझेंगे ।
- पुरानी कहानी और नई कहानी की संवेदना में अंतर कर सकेंगे ।

- पुरानी कहानी और नई कहानी में शिल्पगत संरचना के अन्तर को जान पायेंगे ।
- पुरानी कहानी और नई कहानी के भाषिक संरचना के अन्तर को जान पायेंगे ।

4.1 प्रस्तावना :

पूर्व की इकाईयों में आपका परिचय साहित्य की मुख्य दो विधाओं उपन्यास और कहानी के विषय में कराया जा चुका है । आपको बताया गया कि कहानी वास्तविक जीवन की काल्पनिक कथा है, जो छोटी होते हुए भी अपने आप में पूर्ण और सुसंगठित है । कहानी की रचना घटना, वस्तु स्थिति, भाव या विचार को लेकर इस प्रकार की जाती है कि कहानी की मूल संवेदना अभिव्यक्त हो सके । उपन्यास एक दीर्घ कथात्मक गद्य रचना है । वह वृहत आकार का गद्य आख्यान या वृत्तान्त है जिसके अन्तर्गत वास्तविक जीवन के प्रतिनिधित्व करने वाले पात्रों और कार्यो का चित्रण किया जाता है । वस्तुत: उपन्यास मानव जीवन के यथार्थ की प्रतिच्छाया है । कहानी के विपरीत उपन्यासकार के पास मूल कथ्य को विस्तार देने के लिए पर्याप्त अवसर होता है ।

इस इकाई में कहानी और उपन्यास के अन्तर से आपका परिचय करवाया गया है । उपन्यास और कहानी के तत्वों का अध्ययन करने पर आपने पाया कि दोनों एक जैसी ही साहित्यिक विधाएं है, दोनों विधाओं के प्रेरणा स्त्रोत एक समान है । जिस प्रकार उपन्यासकार मानव जीवन से सम्बन्धित बहुआयामी संदर्भों को अपनी रचना का विषय बनाते हैं, उसी प्रकार कहानीकार भी मानव जीवन की अनुभूतियों के मार्मिक क्षणों को अपना वर्ण्य विषय बनाता है । कहानी की भाँति उपन्यास भी आधुनिक गद्य की श्रेष्ठ विधा है । उपन्यास और कहानी दोनों विधाओं में कथा तत्त्व प्रधान होता है किन्तु उपन्यास और कहानी के रचना विधान में पर्याप्त भिन्नता है जो दोनों को परस्पर अलग करती है । वस्तुत: उपन्यास मानव जीवन के यथार्थ की प्रतिच्छाया है । कहानी से भिन्न उपन्यासकार के पास मूल कथ्य को विस्तार देने के लिए पर्याप्त अवसर होता है । कथावस्तु, चरित्र चित्रण, परिवेश और प्रभावान्विति आदि के आधार पर दोनों विधाओं में पर्याप्त अन्तर है । इस इकाई में कहानी और उपन्यास के अन्तर को स्पष्ट किया गया है ।

इसी तरह इस इकाई में पुरानी कहानी और नई कहानी के अन्तर को भी स्पष्ट किया है । कहानी कहने और सुनने की परम्परा प्राचीन काल से ही चली आ रही है । वैदिक संस्कृत, लौकिक संस्कृत, प्राकृत, पालि, अपभ्रंश आदि साहित्य से कहानी संवर्धित होती हुई वर्तमान स्वरूप में पहुँची है । प्राचीन काल से आधुनिक कथा साहित्य के स्वरूप को प्राप्त करने में कहानी के कथ्य और संवेदनाएं परिवर्तित-संवर्धित होते हुए पुरानी कहानी से सर्वथा भिन्न हो गये हैं । कहानी में कथ्य, भाव, विचार, शिल्प और भाषा के स्तर पर परिवर्तन आने लगा । इस इकाई में पुरानी कहानी और नई कहानी में अंतर के विविध संदर्भों पर चर्चा हुई है । पर पहले उपन्यास एवं कहानी के अंतर को समझाया गया है ।

4.2 उपन्यास और कहानी में अन्तर :

कहानी और उपन्यास दोनों का विकास आधुनिक युग में हुआ है । कहानी और उपन्यास दोनों विधाओं के आधारगत विषय एक जैसे ही हैं । जिस प्रकार कहानी मानव जीवन, प्रकृति और

भौतिक संसार रो प्रेरणा लेकर कथावस्तु का निर्माण करती है उसी प्रकार उपन्यासकार भी इन्हीं वर्ण्य विषयों को अपनी अनुभूतियों से अभिव्यक्त करता है । उपन्यास जहां जीवन के व्यापक फलक को चित्रित करता है वहीं कहानी किसी घटना विशेष को चित्रित करती है । यह धारणा भ्रामक है कि किसी कथा को विस्तार रूप में लिख दिया जाए तो वह उपन्यास हो जायेगा और यदि उसी को संक्षिप्त रूप में लिख दिया जाए तो वह कहानी हो जायेगा । यह समानता मोटे तौर पर ही दिखाई देती है वस्तुतः सूक्ष्म रूप से देखने पर कहानी और उपन्यास दोनों के आकार और प्रकार में पर्याप्त अन्तर है । कहानी और उपन्यास के अन्तर को आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने इस प्रकार स्पष्ट किया है - ' 'पुराने ढंग की कथा कहानियों में कथा का प्रभाव अखण्ड गति से एक ओर चला चलता था, जिसमें घटनाएं पूर्वापर क्रम से जुड़ती सीधी चली जाती थीं । पर यूरोप में जो नये ढंग के कथानक नॉवेल के नाम से चले और बंग भाषा में आकर उपन्यास कहलाये, मराठी में वे कादम्बरी कहलाने लगे । वे कथा के भीतर की कोई भी परिस्थिति आरम्भ में रखकर चल सकते हैं और उनमें घटनाओं की श्रृंखला लगातार सीधी न आकर इधर-उधर और श्रृंखलाओं से गुम्फित होती चलती है । घटनाओं के विन्यास की यह वक्रता या वैचित्र्य उपन्यासों और आधुनिक कहानियों की वह प्रत्यक्ष विशेषता है, जो पुराने ढंग की कथा कहानियों से अलग करती है ।"

उपन्यास और कहानी के अन्तर को प्रेमचन्द ने इस प्रकार व्यक्त किया है " (कहानी) ऐसी रचना है जिसमें जीवन के किसी एक अंग या किसी एक मनोभाव को प्रदर्शित करना ही लेखक का उद्देश्य रहता है । उसके चरित्र, उसकी शैली, उसका कथा विन्यास सब उसी एक भाव को पुष्ट करते हैं । उपन्यास की भांति उसमें मानव जीवन का सम्पूर्ण वृहद् रूप दिखाने का प्रयास नहीं किया जाता, न उसमें उपन्यास की भांति सभी रसों का सम्मिश्रण होता है । वह ऐसा रमणीय उद्यान नहीं जिसमें भांति-भांति के फूल, बेल, बूटे सजे हुए हैं, बल्कि एक गमला है जिसमें एक ही पौधे का माधुर्य अपने समुन्नत रूप से दृष्टिगोचर होता है, एकोन्मुखता की यह कसौटी ही कहानी और उपन्यास के भेद की सबसे सही और सच्ची कसौटी है । " इस प्रकार कहानी और उपन्यास का रचना विधान सर्वथा अलग है ।

4.2.1 आकार का अन्तर

सामान्यतः आकार की दृष्टि से कहानी छोटी होती है । हिन्दी कहानी की परिभाषा में कहानी के स्वरूप को छोटा बताते हुए कहा गया है कि कहानी वह है जो कम से कम 15-20 मिनट में अथवा एक बैठक में पढ़ी जा सके । उपन्यास आकार में विस्तार लिए हुए होता है । उपन्यास में जीवन के व्यापक फलक को समेटा जा सकता है । उपन्यास में घटनाओं की बहुलता और वर्णनात्मकता के कारण उपन्यास का आकार विस्तार पा जाता है । किन्तु आकारगत भिन्नता में ध्यान देने योग्य बात यह है कि कोई कहानी बड़ी होकर भी कहानी होती है एवं उपन्यास छोटा होकर भी उपन्यासत्व को नहीं खोता है क्योंकि दोनों की अपनी अपनी निजता व विशिष्टता होती है । 'एक पति के नोट्स' (महेन्द्र भल्ला), 'पिता-दर-पिता' (रमेश बक्षी), 'जो घटित हुआ' (हिमांशु जोशी), 'काफूर' (शशि प्रभा शास्त्री), 'सूरजमुखी अंधेरे में' (कृष्णा सोबती) जैसी लम्बी कहानियां भी हैं जो कहानी की प्रचलित परिभाषा को तोड़ती हैं, वहीं 'त्याग पत्र'

(जैनेन्द्र), सुनीता (जैनेन्द्र), 'सफेद मेमने' (मणि मधुकर), 'आपका बंटी' (मन्नु भण्डारी), 'चेहरे मत उतारो' (यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र') आदि लघु आकार वाले उपन्यास भी हैं । लंबी कहानी में एक ही जीवन स्थिति, एक ही समस्या और परिस्थितियों से उत्पन्न एक ही मनस्थिति का चित्रण होता है जबकि छोटे आकार का होने पर भी उपन्यास जीवन के बहु आयामी संदर्भों को उद्घाटित करता है ।

4.2.2 कथानक का अन्तर

कथानक का तात्पर्य प्रस्तुतीकरण की विशिष्ट योजना और कथा विन्यास से है । कथानक के स्वरूप का निर्माण घटनाओं के सुव्यवस्थित संयोजन से होता है । घटनाओं की सुव्यवस्था के साथ कथा का प्रस्तुतीकरण भी प्रभावोत्पादक होना चाहिए । कथानक की विशेषता प्रारम्भ से अन्त तक पाठकों के मन में उत्सुकता बनाये रखने में होती है । उपन्यास के कथानक में रोचकता, यथार्थता, क्रमबद्धता, सुसंगठितता, सरसता और कौतूहल का होना आवश्यक है । उपन्यास के कथानक की योजना में आधिकारिक कथा, प्रासंगिक कथा एवं अन्य उपकथाओं का संयोजन आवश्यक उपादान के रूप में होता है । उपन्यासों में आधिकारिक कथा केन्द्रीयता प्राप्त करती है एवं इस कथा को उद्देश्य तक पहुँचाने के लिए छोटी-बड़ी घटनाएं, प्रसंग एवं स्थितियाँ सब मिलकर वास्तविकताओं का उद्घाटन करती हैं । प्रारम्भ से लेकर अन्त तक बहु आयामी जीवन को उसकी समग्रता से चित्रित करने के लिए कथा अनेक दिशाओं में बढ़ती है । जीवन की विविधता, उसकी जटिलता तथा समस्याओं के विविध पहलुओं को अनेक कथाओं और उपकथाओं में इस प्रकार समायोजित करना होता है कि ये सब कथानक विन्यास आदि से अन्त तक अनुशासनबद्ध रहें ।

कहानी और उपन्यास में कथानक की दृष्टि से अन्तर है । कहानी में कथानक किसी घटना या वस्तु विशेष पर केन्द्रित होता है । जबकि उपन्यास में जीवन के विविध पक्षों को उद्घाटित किया जाता है । उपन्यासकार कथानक में जीवन के विविध रूपों को चित्रित कर सकने में समर्थ होता है । जबकि कहानी में जीवन की संक्षिप्त झांकी या कोई अंश चित्रित होता है । कहानी में किसी एक विचार को ध्यान में रखा जाता है, जबकि उपन्यास में विविध विचारों को कथ्य बनाया जाता है ।

उपन्यास में कथानक चाहे छोटे हों या बहुत बड़े, उपन्यास के आधार होते हैं । डी. एन. रवीन्द्रनाथ ने उपन्यास एवं कहानी में कथानक के अंतर को इस प्रकार स्पष्ट किया है - किसी उपन्यास का महत्व केवल इस से नहीं आका जा सकता है कि कथावस्तु कितनी विस्तृत है बल्कि कथावस्तु का सशक्त और प्रखर रूप में प्रस्तुतीकरण उसके महत्व के द्योतक हैं। कहानी जीवन के किसी प्रेरक क्षण को उद्घाटित करती है । जीवन के बहु आयामी संदर्भों को एक कहानी में एक साथ व्यक्त करना संभव नहीं होता ।

4.2.3 चरित्र चित्रण का अंतर

कहानी में चरित्रों की संख्या सीमित होती है जबकि उपन्यास में पात्र अधिक संख्या में हो सकते हैं । कहानी में पात्र के किसी पक्ष विशेष का चित्रण होता है, कहानी पात्र के चरित्र का उद्घाटन

करती है जबकि उपन्यास में पात्रों के बहु आयामी व्यक्तित्व को समग्रता से चित्रित करना सम्भव है व उपन्यासकार के पास इतना अवकाश होता है ।के वह पात्रों को विकसित करता है । उपन्यास का कथानक घटनाओं का समायोजन है और घटनाओं के केन्द्र में मनुष्य होते हैं, जिन्हें शास्त्रीय भाषा में पात्र या चरित्र कहते हैं । उपन्यास में दो तरह के पात्र होते हैं - प्रधान पात्र एवं गौण पात्र । प्रधान पात्रों के अन्तर्गत नायक-नायिका तथा उनके निकट जुड़े पात्रों को रखा जा सकता है । गौण पात्र कथानक को लक्ष्य तक पहुँचाने के लिए उद्घाटित होते रहते हैं एवं लुप्त होते रहते हैं । कई पात्र उपन्यास में प्रारम्भ से अन्त तक आवश्यक होते हैं तो कई पात्र कुछ क्षण के लिए ही । समय की अवधि पात्रों को विशिष्ट या सामान्य में नहीं बांटती । विशिष्ट पात्र के व्यक्तित्व को निर्मित करने के लिए छोटे-बड़े पात्रों की सृष्टि होती है । सामान्यत: उपन्यासों में पात्रों की संख्या अधिक होती है । उपन्यास में चरित्रों का विकास वर्णनात्मक, विश्लेषणात्मक और नाटकीय शैलियों में होता है । चरित्रों की बाहरी सज्जा के अतिरिक्त उनकी मानसिक संवेदनाओं की सूक्ष्म अभिव्यक्ति उपन्यासकार करता है । उपन्यास की ही भांति कहानी में भी कहानीकार चरित्रों के चित्रण के लिए परस्पर तुलना, प्रासंगिक घटनाओं के माध्यम से चरित्र व्यंजना, अन्तर्द्वन्द्व की प्रस्तुति आदि माध्यम अपनाता है किन्तु कहानी में चरित्रों के व्यक्तित्व की संक्षिप्त, स्पष्ट और संकेतात्मक अभिव्यक्ति होती है । कहानी में संवेदना की अभिव्यक्ति करने के लिए पात्रों की संख्या इसलिए सीमित रखी जाती है ताकि कहानीकार चरित्रों के माध्यम से कथ्य को स्वाभाविक और सहज बना सके । अधिक चरित्रों से कहानी विवरण मात्र रह जायेगी ।

मानव का अवचेतन मन उसके क्रिया कलापों और व्यवहार को संचालित करने में मुख्य भूमिका निभाता है । उपन्यास में चरित्रों के अवचेतन की ग्रन्थियों और उसके कारणों की पड़ताल करने का पर्याप्त अवकाश होता है । उपन्यास में चरित्रों के दुःख-सुख, कुण्ठाएं, घुटन, पीड़ा, निराशा, क्षोभ, प्रेम आदि मनोभावों को विस्तार से अभिव्यक्त किया जा सकता है । कहानीकार के पास कहानी में चरित्रों के मनोवैज्ञानिक विश्लेषण को विस्तार देने का समय नहीं होता । कहानी छोटी रचना होती है जिससे चरित्रों के अनार्द्वन्दव का विस्तृत वर्णन नहीं होता । पाश्चात्य आचार्य हडसन का कथन है- 'कहानी में चरित्र का उद्घाटन मात्र किया जाता है जबकि उपन्यासों में चरित्र का विकास दिखाया जाता है ।

4.2.4 संवाद योजना

कहानी और उपन्यास दोनों गद्य विधाओं में संवाद चरित्रों के विकास और कथावस्तु की प्रगति में सहायक होते हैं । संवादों में सहज स्वाभाविकता, परिस्थिति अनुकूलता एवं सूक्ष्मता का होना अनिवार्य माना गया है क्योंकि संवाद चरित्रों के भाव, विचार, संवेदना और उनकी क्रिया-प्रतिक्रिया को उद्घाटित करते हैं । उपन्यास में संवाद की संरचना पात्रों की मानसिकता और परिस्थितियों के अनुसार कहीं सरल, कहीं जटिल, कहीं छोटे-बड़े, कहीं स्वगत, सपाट और कहीं वर्णनात्मक एवं विचारात्मक होती है । कहानी में संवाद रोचक एवं संक्षिप्त होते है ताकि कहानी की गति प्रभावी बनी रह सके । कहानी में संवादों की अधिकता से कहानी

एकांकी हो जायेगी एवं संवादहीनता से कहानी के पात्र और परिवेश पूरी तरह अभिव्यक्त नहीं हो पायेंगे जिससे कहानी की संवेदनशीलता नष्ट हो जायेगी ।

4.2.5 परिवेश विधान के आधार पर

उपन्यास की संरचना में परिवेश का विधान अत्यन्त महत्वपूर्ण' ही नहीं अपितु अपरिहार्य तत्त्व है । क्योंकि रचनाकार उपन्यास को अधिक प्रभावपूर्ण तभी बना सकता है जब वह उस वातावरण को, उस स्थान एवं पात्रों के माध्यम से समग्र रूप से चित्रित कर सके । एस.बी. लेपरोथ ने उपन्यास में देशकाल के महत्व के सम्बन्ध में लिखा है ' 'यथार्थ की प्रतीति के लिए उपन्यास में वातावरण एवं देशकाल की सृष्टि आवश्यक होती है । यह वह धरातल है जिसमें पात्र उत्पन्न होते हैं, वह वातावरण है जिसमें वे सांस लेते हैं, वह माध्यम है जो उन्हें जीवित रखता है, उन्हें आच्छादित करता है । उनका लालन-पालन तथा नियन्त्रण करता है तथा उनके रहन-सहन के ढंग का नियोजन करता है । ' देशकाल और वातावरण के निरूपण में काल-क्रम का विशेष ध्यान रखना होता है । कहने का तात्पर्य है कि उपन्यास का कथानक जिस काल से लिया गया है देशकाल और वातावरण भी उसी काल के अनुरूप होना चाहिए । उपन्यास में जीवन के बहु आयामी संदर्भों का चित्रण होता है वहां पर भौगोलिक परिवेश के बाहरी रूप को प्राकृतिक स्थितियों के माध्यम से उभारा जाता है वहीं राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक, नैतिक तथा सांस्कृतिक परिवेश के चित्रण से जीवन के आंतरिक पक्षों को उभारा जाता है । इस प्रकार उपन्यास में परिवेश का चित्रण मानवीय सरोकारों और प्राकृतिक सौंदर्य के बहु आयामी चित्र खींचता है । 'गोदान' (प्रेमचन्द), 'जल टूटता हु आ' (रामदरश मिश्र), राग दरबारी' (श्रीलाल शुक्ल), 'महाभोज' (मनू भण्डारी) आदि उपन्यास परिवेश के बहु आयामी चित्रण के उदाहरण है ।

कहानी में भी परिवेश का चित्रण अवश्य होता है । कहानी जिस स्थान और जिस काल से सम्बन्धित है, उसका यथार्थ चित्रण कहानी की संवेदना को व्यक्त करने के लिए आवश्यक है पर वह सीमित होता है । बहु आयामी परिवेश को चित्रित करना कहानी में सम्भव नहीं होता है । उपन्यास की तुलना में कहानी में देशकाल के लिए अधिक अवकाश नहीं होता, फिर भी ऐतिहासिक, पौराणिक और सांस्कृतिक कहानियों में इसके चित्रण की ओर विशेष ध्यान दिया जाता है । आपके पाठ्यक्रम में संकलित 'पुरस्कार' (जयशंकर प्रसाद) कहानी को आप उदाहरण स्वरूप देख सकते है ।

4.2.6 उद्देश्य की दृष्टि से

कहानी और उपन्यास के उद्देश्यों में भी अंतर है । उपन्यास जीवन के व्यापक एवं बहु आयामी संदर्भों का चित्रण करता है । अत: उपन्यासकार का उद्देश्य भी व्यापक होता है । कहानी और उपन्यास के उद्देश्य में भी अन्तर है । कहानीकार का उद्देश्य पूर्व निश्चित होता है एवं उस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए कहानीकार सीमित घटनाओं का चयन करता है जबकि उपन्यासकार घटनाओं का स्वच्छन्द विकास करने के लिए स्वतंत्र है । उद्देश्य तक पहुँचने के लिए उपन्यास में कई घटनाएं सहायक रूप से आती रहती हैं । 'कहानी के पीछे सृजनात्मक

प्रेरणा क्षणिक होती है, शिखा जाला के समान जो शीघ्र ही बुझ जाए । उपन्यास में सृजक प्रेरणा को समय की लम्बी अवधि तक पोषित करना होता है ।

4.2.7 प्रभावान्विति के आधार पर

कहानी और उपन्यास में प्रभावान्विति के आधार पर भी अन्तर किया जा सकता है । कहानी का उद्देश्य एकान्वित प्रभाव उत्पन्न करना है जबकि उपन्यास का लक्ष्य कोई एक निश्चित प्रभाव उत्पन्न करना नहीं होता । डॉ. जगन्नाथ प्रसाद शर्मा ने कहानी और उपन्यास के प्रभाव को इस प्रकार स्पष्ट किया है - ' कहानी यदि अपने एकोन्मुख समष्टि प्रभाव के माध्यम से हमारे चित्त को पूर्णतया झंकृत और आंदोलित करके हमें अनुमान, कल्पना और जिज्ञासा के उन्मुक्त द्वार पर ला खड़ा करती है तो उपन्यास जीवन के विविध क्षेत्रों की झांकी देकर सारे रहस्यों और वस्तुस्थितियों से परिचित कराकर हमारे भीतर एक पूर्णता विधायक संतुष्टि उत्पन्न करता है । इस प्रकार कहानी का प्रभाव सीमित होता है और उपन्यास विविध पक्षों के उद्घाटन के साथ व्यापक प्रभाव छोड़ता है । कहानी एक विचार, एक प्रेरक क्षण पर आधारित होती है इसलिए कहानी के प्रभाव में एकता भी आवश्यक है । कहानी के प्रभाव में एकता रहेगी तभी कहानी अपने सभी रचना तत्वों को संगठित रख पायेगी । उपन्यास के कथ्य भी विविधता के साथ संगठित होते है । घटनाओं की विविधता से कथा-उपकथा से उत्पन्न प्रभाव भी विविध स्तर पर होता है, फिर भी उपन्यास में इस विविधता में भी एकता निहित होती है ।

4.2.8 शैलीगत अन्तर

कहानी और उपन्यास में रचनागत दृष्टिकोण से भी अन्तर है । एक कहानी की रचना में एक ही शैली का प्रयोग होता है जबकि उपन्यास में कई शैलियों का प्रयोग सम्भव है । कहानी में वर्णन और विस्तार की अपेक्षा सांकेतिकता, व्यंजना और ध्वन्यात्मकता को अपनाया जाता है । कहानी का प्रतिपाद्य कथ्य की संवेदना को विश्लेषित करना होता है जबकि उपन्यास में इतिवृत्तात्मकता होती है ।

बोध प्रश्न- 1

1. उपन्यास और कहानी में आकार की दृष्टि से अंतर बताइए ।
2. उपन्यास और कहानी में कथावस्तु के आधार पर अन्तर बताइये ।
3. कहानी और उपन्यास में प्रभावान्विति किस प्रकार भिन्न है?

4.3 पुरानी कहानी और नई कहानी में अन्तर

स्वाधीनता प्राप्ति के पश्चात देश का परिवेश बदल चुका था एवं इस बदले हुए परिवेश ने साहित्य की सभी विधाओं को प्रभावित किया । कहानी भी अपने परिवेश के परिवर्तन से अछूती नहीं रही । कहानी में युगान्तकारी परिवर्तन देखने में आया । इसके प्रमुख कारणों में बदलते परिवेश की मुख्य भूमिका रही है । बदलते परिवेश में अनेक प्रकार की जटिलताएं और विसंगतियां आई हैं । बेरोजगारी से उत्पन्न हताशा और आत्महीनता, भ्रष्टाचार के प्रति बढ़ती उदासीनता

और स्वीकृति, स्त्री-पुरूष सम्बन्धों की नई परिभाषा, भूमण्डलीकरण एवं बाजारवाद के प्रभाव इन कहानियों के विषय हैं ।

पुरानी कहानी से नई कहानी को अलगाते हुए नई कहानी के व्याख्याकारों का विशेष बल प्रामाणिकता और अनुभव के अपनेपन पर था । इसी को उन्होंने 'भोगा हुआ यथार्थ' कहा और आगे चलकर यह एक तरह से नई कहानी की पारिभाषिक शब्दावली बन गयी । नई कहानी की स्थापना और पहचान की प्रक्रिया में पूर्ववर्ती पीढ़ी-जैनेंद्र, अज्ञेय और यशपाल की पीढी-के लेखकों का विरोध ही इस आधार पर किया गया कि ये लेखक विचारों को आधार बनाकर उनके सहारे कहानियां गढ़ते हैं, जिनमें वास्तविक जीवन नहीं होता । इन लोगों का आग्रह था कि लेखक को अपने अनुभव जगत का ही चित्रण करना चाहिए । क्योंकि वह इसे विश्वसनीय और प्रामाणिक रूप में व्यक्त कर सकता है ।

नई कहानी कथ्य और संवेदना के आधार पर पुरानी कहानी से अलग है । नई कहानी जीवन को देखने, सत्यान्वेशण एवं मूल्यों को खोजने की नई दृष्टि से युक्त है । पुरानी कहानी में कहानीकार किसी विचार या सत्य को पात्रों, स्थितियों और घटनाओं के संयोजन से उद्घाटित करता था, जबकि नई कहानी जीवन को उसकी समग्रता और संश्लिष्टता के साथ अभिव्यक्त करती है । नई कहानी पात्रों को उनके सामाजिक परिवेश, व्यावहारिक जीवन, अन्तर्द्वन्द्वों और उनकी अन्य आवश्यकताओं के साथ अभिव्यक्त करती है ।

ऐसा नहीं है कि स्वाधीनता के बाद एकदम से साहित्य में परिवर्तन होने लग गये थे । बल्कि शुरू-शुरू में तो परिवर्तन बहुत अधिक स्पष्ट नहीं थे । स्वाधीनता प्राप्ति ने भारत के राजनीतिक-आर्थिक परिदृश्य में बदलाव किए जिससे सामाजिक-सांस्कृतिक परिदृश्य अप्रभावित नहीं रह सका । स्वाधीनता प्राप्ति का उल्लास एवं उत्साह धीरे-धीरे तिरोहित होने लगा । नई कहानी को जो परिदृश्य मिला वह हताशा, मोहभंग और देश की राजनीति के प्रति उदासीनता के भाव का था । स्त्री शिक्षा ने महिलाओं को नौकरियों के बेहतर अवसर उपलब्ध करवाये । महिलाओं के आर्थिक रूप से सबल बनने एवं घर से बाहर निकलकर अपनी बौद्धिकता का परिचय देने से महिलाओं की सामाजिक स्थिति में बदलाव आया । प्रेम, विवाह और स्त्री-पुरूष सम्बन्धों को नए सिरे से परिभाषित करने की मांग उठने लगी । एक और हमारा सामाजिक परिवेश जटिल हो रहा था तो दूसरी ओर व्यक्तिगत स्तर पर भी नयी समस्याएँ पुराने सम्बन्धों व रिश्तों के टूटने के कारण उत्पन्न हो रही थी । नई कहानी में स्थितियों के यथार्थ चित्रण पर अधिक बल दिया गया । पुरानी कहानी में जहां कथावस्तु, चरित्र, वातावरण, शैली, उद्देश्य आदि रचनातत्त्वों में कहानी बंटी हुई थी और कहानीकार इन रचनातत्वों के आधार पर कहानी लिखते थे । नई कहानी में इस तरह का कोई शास्त्रीय बंधन नहीं रह गया है । शिल्प संबंधी इस परिवर्तन के कारण नई कहानी पुरानी कहानी से अपने स्वरूप को अलग रूप से स्पष्ट कर सकी । नई कहानी के पूरे ढांचे में परिवर्तन हो गया । नई कहानी में घटनाएं नहीं रह गई बल्कि जीवन के विविध संदर्भ और समस्याएं आने लगी । कथ्य, शिल्प और परिवेश सम्बन्धों पुरानी मान्यता को नकारती हुई कहानी नये रूप में सामने आई । इन कहानियों में यथार्थ को व्यक्त करते हुए कथ्य और संवेदना की नई दृष्टि पुरानी कहानियों से अलग है । अत: पुरानी कहानी के परम्परागत रूढ़ तत्त्व नई कहानी के मूल्यांकन के आधार नहीं

हो सकते हैं । नई कहानी में कथ्य, चरित्र, भाव और प्रवृतियों का चित्रण नये संदर्भों से जुड़ा हुआ है । डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल ने नई कहानी को परम्परा का विकास मानते हुए लिखा है "विकास के नए चरण में गढ़-गढ़ाए अति निर्मित, अति शिल्प प्रधान कृत्रिम कथानकों तथा पात्रों के बांध टूटे और एक नयी वेगवती सहजधारा ऐसी फूटी कि हमारा सारा समाज, सारी प्रकृति, जहां तक कहानीकार की नजर दौड़ सकती है वह सब कुछ नई कहानियों के विषय बने ।"

नई कहानी के कुछ बिन्दु प्रेमचन्द की समाजपरक कहानियों में भी मिल जाते है । प्रेमचन्द की कुछ कहानियों में आदर्शवाद के प्रति उनकी आस्था कमजोर हो गई थी और यथार्थ अपने स्वाभाविक रूप में सामने आ रहा था । इन्हीं कहानियों से कथानक की सूक्ष्मता, स्वाभाविकता आई थी । पात्रों की मनःस्थितियों, उनके अन्तर्द्वन्द्वों एवं भाव दशाओं का भी चित्रण होना प्रारम्भ हो गया । प्रेमचन्द की 'नशा', 'कफन', 'बड़े भाई साहब' और 'पूस की रात' आदि कहानियां ऐसी परम्पराओं का निर्वाह करती हैं जो आज की कहानियों में सहज रूप से आ रही हैं । कथ्य की सूक्ष्मता की प्रवृत्ति, प्रगतिशील तत्वों के प्रति जागरूकता नई कहानी की भी विशेषता रही है । प्रेमचन्द ने कहानी के यथार्थवाद के संदर्भ में अपना मत इस प्रकार प्रकट किया था ' 'यथार्थ जीवन का चित्र मनुष्य स्वयं हो सकता है, परन्तु कहानी के पात्रों के सुख-दुःख से हम जितना प्रभावित होते हैं, उतना यथार्थ जीवन में नहीं होते, जब तक वह निजत्व की परिधि में न आ जाय । अगर हम यथार्थ को हू-ब-हू खींचकर रख दे, तो उसमें कला कहां है । कला केवल यथार्थ की नकल का नाम नहीं है । कला दिखती तो यथार्थ है, पर यथार्थ होती नहीं । उसकी खूबी यही है कि वह यथार्थ न होते हुए भी यथार्थ मालूम हो । प्रेमचन्द की कहानियों में नये स्वर, नये विश्वास का संकेत मिल गया था । यहां कहने का तात्पर्य यह बिल्कुल नहीं है कि नई कहानी प्रेमचन्द के काल से शुरू हो गई थी अपितु नई कहानी ने जिस यथार्थ को अभिव्यक्त करना चाहा है उस प्रवृत्ति का प्रारम्भ प्रेमचन्द की परवर्ती कहानियों में प्राप्त होता है ।

नई कहानी को सामाजिक संघर्ष और प्रतिक्रिया की अभिव्यक्ति का साधन माना गया तथा समाज सम्बन्धों की आधुनिक वास्तविकता को ही मुख्य कारण स्वीकार किया गया । ये कहानियाँ सामाजिक संगठन, राज्य-व्यवस्था, नीति, आचार, पाप और पुण्य, अश्लील और अश्लील, वस्तु और शैली सभी दिशाओं में परिवर्तन की कहानी हैं । निश्चय ही भौतिक जीवन पर मशीनीकरण का और आंतरिक जीवन पर इस तीव्र परिवर्तन का दोहरा दबाव आधुनिक परिस्थितियों में व्यक्ति के मन पर पड़ा है, जो इस युग का केन्द्रीय विषय है । दूसरे शब्दों में, प्रेमचन्द-युग में जहां समष्टि पक्ष का प्रतिपादन लक्ष्य रहा था, वहां इस युग का लक्ष्य व्यष्टि पक्ष का प्रतिपादन बन गया है । प्रेमचन्द युग का कहानीकार जहां जीवन के यथार्थ को समग्रता में चित्रित करने के लिए इसकी चिन्ता करता था कि किन तत्त्वों के उपयोग या सामंजस्य से कोई कृति कितनी श्रेष्ठता प्राप्त कर सकती है, नई कहानी का कहानीकार इसकी परीक्षा करना चाहता है कि मनुष्य मन के अनुभवों से आभ्यंतर सम्बन्धों को अभिव्यक्त करने वाली कहानी किन तत्त्वों को छोड़कर अधिक सार्थक हो सकती है । नई कहानी में कथ्य

स्थूल से सूक्ष्मतर होते चल गये । नई कहानी अपने परिवेश को बहुआयामीसंदर्भों में चित्रित करती है । नई संभावनाएं, नये जीवन संदर्भ, नई संवेदनाएं यहां नयी कलात्मकता के साथ आए है ।

4.3.1 संवेदना एवं परिवेश चित्रण के आधार पर अन्तर

पुरानी कहानी की संवेदना आदर्शों और आस्थाओं पर आधारित थी । समाज द्वारा निर्धारित मूल्यों एवं आदर्शों को प्रतिष्ठा पुरानी कहानी का कहानीकार अपनी कहानी में करता था । संवेदना के आदर्शों पर आधारित होने के कारण कहानी की संवेदना कल्पना का सहारा लेती थी । क्योंकि वास्तविक जीवन में आदर्श एवं उनके परिणामों की भिन्नता भी समाज में दिखाई देती थी उस समय के जीवन मूल्य वर्तमान के जीवन मूल्यों से भिन्न थे । साहित्य में प्राय: जीवन के अनुभवों एवं परिस्थितियों के घात-प्रतिघातों की प्रतिक्रिया अभिव्यक्त होती है । पुरानी कहानी में 'अनुभव की प्रामाणिकता' पर बल नहीं देकर आदर्शों व मूल्यों की स्थापना पर बल दिया गया । नई कहानी के मूल्य परम्परागत मूल्यों से भिन्न थे । नई कहानी पुराने परम्परागत विचार, आस्था के केन्द्र आदर्श और संस्था के प्रति गहरे मोहभंग की संवेदना से युक्त है । नई कहानी में आस्था, विश्वास और मूल्यों के प्रति नवीन स्वर अभिव्यक्त हुआ है और नई कहानी में यथार्थ परक सामाजिक परिवेश को पहचानने की ललक है । इन कहानियों की संवेदना युग के यथार्थ के साथ मनोवैज्ञानिक चेतना से प्रभावित है । नई कहानी जीवन के यथार्थ को चित्रित करने वाली कहानी है । अपने समकालीन संदर्भों का दबाव नई कहानी को अतीत से हटाकर वर्तमान पर केन्द्रित करता है और वर्तमान भी अनेक प्रकार की विसंगतियों, जटिलताओं और विद्रूपताओं से भरा है । शिक्षा और नौकरी के लिए किया जाने वाला संघर्ष, बेरोजगारी से उपजी हताशा और भ्रष्टाचार के प्रति समाज की बढ़ती हुई उदासीनता और स्वीकृति इस दौर की कहानियों का मुख्य कथ्य है । बाहर निकलने पर युवतियों को पुरूषों के संपर्क में आने के अवसर मिलते हैं, परिचय आत्मीय संबंधों में भी बदलता दिखाई देता है लेकिन समाज की वर्जनाओं और निषेधों के कारण प्राय: वे प्रेम-संबंध सफल नहीं होते । प्रेम-संबंधों की असफलता से उपजी यह हताशा कृष्णासोबती की 'बादलों के घेरे और उषा प्रियंवदा की 'पचपन खंभे लाल दीवारें' में पर्याप्त विश्वसनीय रूप में उपस्थित हैं । पत्नी और प्रेमिका के बीच का तनाव राजेन्द्र यादव की 'कमजोर लड़की का मूल कथ्य है । बेरोजगारी की हताशा और मोहभंग निर्मल वर्मा की इस दौर की कितनी ही कहानियों में अंकित है । अमरकांत की 'डिप्टी कलक्टरी' प्रतीक्षा के हताशा में बदलने की प्रक्रिया को बेहद संवेदनशील ढंग से अंकित करती है । कामकाजी महिलाओं की समस्याओं और परिवार में उनकी बढ़ती हुई हैसियत को केंद्र में रखकर इस दौर में अनेक महत्त्वपूर्ण कहानियां लिखी गयीं । देश के बाहर जाने के अवसर अपेक्षाकृत अधिक सुलभ हुए और विदेशी पृष्ठभूमि पर लिखी गयी ! कहानियों ने हिंदी कहानी के कथ्य और संवेदना को अभूतपूर्व विस्तार दिया । यही वह समय था जब एक ओर घर-परिवार में परंपरागत रिश्तों पर पुनर्विचार और उन्हें पुर्नपरिभाषित करने की प्रक्रिया शुरू होती है तो दूसरी ओर अपरंपरागत और नयी संवेदनशीलता के विकसित रिश्तों को महत्व दिया जाने लगा है । शिवप्रसाद सिंह की 'दादी मां, मार्कण्डेय की गुलरा के बाबा

और भीष्म साहनी की चीफ की दावत' आदि कहानियां जैसे बूढ़े पात्रों के माध्यम से अपनी परंपरा से जुडने का ही सकारात्मक परिणाम हैं । राजेंद्र यादव की एक खुली हुई सांझ' और मोहन राकेश की 'अपरिचित' नयी संवेदनशीलता के आधार पर नये रिश्तों के स्वरूप का संकेत देती हैं । 'परिंदे', तीसरी कसम उर्फ मारे गये गुलफाम, कोसी का घटवार और 'नीली झील' आदि कहानियां प्रेम के प्रति अधिक लौकिक और यथार्थ दृष्टिकोण अपनाती हैं और मनोदशाओं को गहरी संवेदना और विश्वसनीयता के साथ अंकित करती है । नई कहानी की संवेदना को प्रभावित करने वाले धरातल बदले हैं । स्वतन्त्रता प्राप्ति और नवोन्मेश, आर्थिक प्रश्नों से जूझती नयी मानसिकता, मूल्यों की टूटन, सम्बन्धगत तनाव, यौन सम्बन्धों की स्थिति और विकृतियां, नारी की स्थिति, व्यवस्था के प्रति आक्रोश, औद्योगिकीकरण, उदारीकरण, बाजारवाद के प्रभावों व पाश्चात्य सभ्यता एवं संस्कृति के प्रभावों से उत्पन्न मानसिकता जैसे विषयों ने कहानी को प्रभावित किया है ।

4.3.2 भाषिक संरचना के आधार पर अन्तर

भाषा और शैली कथ्य के अनुरूप ही अपना रूप ग्रहण करती है । भाषा, शिल्प और कथ्य परस्पर इस तरह गुंथे हुए है कि उनको अलग्अलग विभाजित करने से विश्लेषण पूरी तरह उपयुक्त नहीं होता । वस्तुत: 'शिल्प कथ्य की अन्तःप्रवृत्ति का सहज प्रतिफलन है । ' प्रत्येक समय के साहित्य में उस युग की संवेदना को व्यक्त करने के लिए उस युग के भाषा बोध से अनुप्रमाणित होना होता है । पुरानी कहानियों में भाषा का तत्सम प्रधान संलिष्ट रूप प्रमुख था । इन कहानियों की शब्दावली में अलंकारिकता का प्रभाव भाषा को सहजता से दूर कर देता है । कई बार शब्द का प्रयोग एवं वाक्य विन्यास इस तरह होता था कि भाषा विशिष्ट अभिजात्य रूप धारण कर लेती थी । पुरानी कहानी की भाषा में रोमानियत काल्पनिकता से पैदा कथ्य और उसके अनुरूप अपमान, बिम्ब, प्रतीक विहगन का भावुकतापूर्ण आग्रह था ।

पुरानी कहानी से नई कहानी में भाषा की भिन्नता की प्रक्रिया एकदम से घटित नहीं हुई है अपितु भाषा के भीतर यह परिवर्तन बहुत ही सूक्ष्म रूप से हुआ है । भाषा युग बोध को अभिव्यक्त करने की प्रक्रिया में निरन्तर क्रियाशील रही है । नई कहानी की भाषा अलंकरण के बोझ से मुक्त होकर पाठकों से सहज रूप में सीधे जुड़ गई है । नई कहानी में भाषा का सहज सरल, सजीव और संवेदनशील रूप सामने आया है । भाषा की सरलता, सहजता और अनगढ़ता इन कहानियों में नई अर्थछवियां भर रही है । कहानी में भाषा के इस पार्थक्य की प्रक्रिया के संदर्भ में राजेन्द्र यादव ने लिखा है "इसी प्रयत्न या प्रक्रिया में लेखक, कहानी या उसके रूप के साथ प्रयोग करता जाता है, भाषा, मुहावरा, अर्थ और शब्द शक्तियां बदलता या उन्हें अपने युग के अनुरूप ढालता जाता है । प्रयोग-शीलता ही उसके जीवन्त होने का सबसे बड़ा प्रमाण या परिणाम है । यही तो सिद्ध करता है कि अभी भी उसके पास कुछ कहने के लिए बात है, या उस कही जाने वाली बात के सही कोण की तलाश जारी है । जिसे हम नयी कहानी' कहते हैं वह नये मनुष्य के परिवर्तित परिवेश और अनुभूतियों का परिणाम तो है ही,

इस परिणाम की अभिव्यक्ति ने शिल्प और शास्त्र की दृष्टि से भी उसे पुरानी कहानी से अलग कर दिया है ।

नई कहानी की संवेदना यथार्थ चित्रण की है इसलिए कहानी की भाषा जीवन के निकट की है । इस भाषा ने जीवन की विषमताओं, जटिलताओं, विसंगतियों और आक्रोश को अभिव्यक्त करने की क्षमता प्राप्त की है । इस प्रयास में भाषा ने परम्परागत उपमान, बिम्ब योजना, प्रतीक विधान, शब्द चयन और शब्द प्रयोग की नई राहें बनायी हैं।

4.3.3 भाषा की सांकेतिकता, प्रतीकात्मकता एवं बिम्बात्मकता के आधार पर अन्तर

पुरानी कहानी में कहानीकार कहानी में घटनाओं को उपदेशक की भांति आरोपित करते थे । बहुत बार कहानी में घटनाएं अकस्मात् भी घटित होती थी । नई कहानी में सांकेतिकता का सहज रूप प्रकट हुआ है, सांकेतिकता के प्रयोग प्रेमचन्द की 'पूस की रात और कफन' जैसी कहानियों में भी प्राप्त होता है किन्तु पुरानी कहानी में सांकेतिकता का प्रयोग नई कहानी से भिन्न था । पुरानी कहानी में घटनाएं विस्तृत रूप से वर्णित होती है, जिस कारण वहां सांकेतिकता की संभावना नहीं बची रहती । नई कहानी में सर्वेश्वर दयाल सक्सेना की 'सूटकेस' निर्मल वर्मा की 'लन्दन की एक रात', धर्मवीर भारती की 'बंद गली का आखिरी मकान' भीष्म साहनी की 'चीफ की दावत' आदि कहानियां सांकेतिक शिल्प का उदाहरण प्रस्तुत करती हैं, पाठ्यक्रम में संकलित उषा प्रियंवदा की कहानी वापसी में चारपाई रिटायर्ड पिता की स्थिति को संकेतित करती है । बरामदे से चारपाई को हटाना एक पैसा नहीं कमाने वाले आदमी की व्यर्थता की ओर संकेत करता है । नई कहानी में सांकेतिकता कहानी के रूप गठन और शब्द गठन दोनों में ही उपस्थित है । नई कहानी में सहज सांकेतिकता का, प्रयोग कहानी की स्वाभाविकता को बनाये रखने में सहयोग करते हैं । डॉ. नामवर सिंह ने कहानी में सांकेतिकता के प्रयोग के विषय में लिखा है- पहले की तरह आज की कहानी 'आधार भूत विचार' का केवल अंत में संकेत नहीं करती बल्कि नयी कहानी का समूचा रूप गठन (स्ट्रक्चर) और शब्द गठन (टेक्सचर) ही सांकेतिक है ।

प्रतीक भी एक प्रकार से संकेत ही होते हैं । प्रतीक में जहां निश्चयात्मकता होती है वहीं संकेत में अनिश्चयात्मकता होती है । पुरानी कहानी में वातावरण का प्रतीकात्मक रूप प्रयोग हुआ है । नई कहानी में प्रतीकों के सामान्य प्रयोग से हटकर मानव मन के सूक्ष्मातिसूक्ष्म विवरणों का दर्शन प्रतीकों के माध्यम से करवाया गया है । इसलिए नई कहानी में प्रतीक सामाजिक जीवन संदर्भों से जुड़ गये हैं । नई कहानियों में बहुत सी कहानियों के शीर्षकों में प्रतीकात्मकता है जो प्राय: कहानी के कथ्य से संबंधित हैं जैसे 'परिंदे' (निर्मल वर्मा) 'कितने पाकिस्तान' (कमलेश्वर), 'नये अभिमन्यु (हृदयेश) आदि । प्रतीक कहानी में कोई न कोई विशिष्ट अर्थ व्यंजित करते है किन्तु बहुत बार पाठक का सहज परिचय प्रतीक से उस रूप में नहीं होता जिस रूप में कहानीकार उसे व्यंजित करना चाहता है । ऐसी स्थिति में प्रतीक कहानी के प्रसंग को पूरी तरह सम्प्रेषित नहीं कर पाते । पुरानी कहानी में काव्यात्मक बिम्बों और उपमानों का प्रयोग हुआ है । जबकि नई कहानी में बिम्ब और उपमानों का चयन इस नवीनता और गहराई से तथा गद्यात्मक रूप में हुआ है कि वे विषम स्थितियों को पूरी सजीवता और संवेदन

शीलता के साथ व्यक्त करते हैं । नई कहानी में बिम्ब काल्पनिक न होकर जीवन यथार्थ को व्यक्त करने में सक्षम हैं । " पुरानी कहानी की भाषा भावुकता और रोमानी बोध से युक्त थी । इन कहानियों में सौन्दर्याकन, प्रेम निवेदन और अलंकारों का सहारा लिया गया जिससे भाषा सहज नहीं रह सकी ।

4.3.4 शिल्प विधि के आधार पर अन्तर

शिल्प कहानी का महत्वपूर्ण तत्व है, पुरानी कहानी की कथावस्तु के अनुरूप उन कहानियों में शिल्प रचना थी । नई कहानी में जीवन के नये अनुभव व्यक्त हुए अत: नयी परिस्थितियों और नये संदर्भों को कहानी के शास्त्रीय ढाँचे में सफलता के साथ व्यक्त नहीं किया जा सकता था । क्योंकि नई कहानी के नये स्वर पुराने शिल्पगत ढाँचे में नहीं समा पा रहे थे । पुरानी कहानी का शिल्प शीर्षक, कथानक, पात्र, उद्देश्य आदि तत्वों पर आधारित था । पुरानी कहानी में घटना और चरित्रों की प्रधानता थी । किसी घटना के चयन और पात्रों के माध्यम से कहानी को चरमसीमा तक पहुँचाया जाता था । नई कहानी में घटनाओं एवं पात्रों की प्रधानता के स्थान पर प्रभावान्विति, संवेदना और परिवेश के चित्रण की प्रधानता हो गई । नई स्थिति का दृष्टिबोध ही नई कहानी के शिल्पगत बदलाव के प्रेरणा स्त्रोत हैं । "किसी भी साहित्य रूप की प्रचलित जमीन को नया शिल्प नहीं तोड़ता, तोड़ने की हौंस में वह आरोपित जरूरत होने लगता है, उस जमीन को तोडती है नयी वस्तु' । वस्तु को कहे जाने की विवशता से गुजरना ही रचनाकार का शिल्प दायरे में चले आना है, और वस्तु को जिस कोण से वह उठाता है, वही उसका शिल्प कोण भी होता है । पुरानी कहानी और नई कहानी के अन्तर को शिल्पगत तत्वों के आधार पर विश्लेषित किया जा रहा है ।

पुरानी कहानी के रचनाकार कहानी की कथावस्तु, पाठक और मनोरंजन को ध्यान में रखते हुए उसकी रचना करते थे । प्रेमचन्द एवं उनके बाद रचना करने वाले कहानीकार रहस्य और चमत्कार से दूर थे लेकिन उनकी रचनाओं में कौतूहल की सृष्टि किसी न किसी रूप में अवश्य हो जाती थी । नई कहानी में यथार्थ की अभिव्यक्ति पर अधिक बल देने के कारण कथानक में घटनाओं का महत्व न होकर कथ्य का महत्व स्थापित हुआ है । नई परिस्थितियों व नये संदर्भों का सफल चित्रण करने के लिए कहानीकारों ने कहानी के शास्त्रीय व शिल्पगत ढाँचे में परिवर्तन किया । नई कहानी में कथानक नाम की कोई चीज ही नहीं रह गई । नामवर सिंह ने लिखा है कि "किसी समय मनोरंजन, नाटकीय और कुतूहलपूर्ण घटना संघटन को ही कथानक समझा जाता था और आज घटना संघटन इतना विघटित हो गया है कि लोगों को अधिकांश कहानियों में 'कथानक' नाम की चीज मिलती ही नहीं । इसी को कुछ लोग कथानक का हास कहते हैं । परन्तु वास्तविकता यह है कि हास कथानक का नहीं, बल्कि 'कथा' का हुआ है और जीवन का एक लघु प्रसंग-खण्ड, मूड, विचार अथवा व्यक्ति-चरित्र ही कथानक बन गया है, अथवा उसे कथानक की क्षमता मान लिया गया है । नई कहानी में चरित्रों सम्बन्धी अवधारणा में भी परिवर्तन आ गया । इन कहानियों में चरित्र, परिवेश एवं कथ्य की संवेदना को व्यक्त करते थे या उनमें विशेषता ला देते थे । जबकि नई कहानी में सामान्य जीवन जीते

सामान्य पात्र है जो मान-अपमान, सुख-दुख सहते हुए भी आम व्यक्ति ही हैं । चरित्रों की अन्तर्दशाओं एवं उनकी पीडा को नई कहानी में प्रभावी बनाया गया है । कहानी में परिवेश का चित्रण अलंकृति के लिए होता था, इन कहानियों में परिवेश और परिस्थितियों का चित्रण मात्र निर्मित या निमित्त के लिए आया है । नई कहानी में परिवेश चरित्रों के पारस्परिक सम्बन्धों को उद्घाटित करता है । पुरानी कहानी के परिवेश चित्रण की अपेक्षा नई कहानी का परिवेश स्थितियों की जटिलता एवं विसंगतियों की संवेदना को पूरी तरह चित्रित करता है ।

उदाहरण स्वरूप आप पाठ्यक्रम में संकलित कहानियां देख सकते हैं । चन्द्रधर शर्मा 'गुलेरी की उसने कहा था व प्रसाद की 'पुरस्कार कहानियों में चरित्रों का चित्रण आदर्शवादी शैली में किया गया है । पुरानी कहानियों में घटनाओं को चरित्रों के माध्यम से उद्घाटित किया जाता था अत: वहां चरित्र प्रमुख थे । नई कहानी में चरित्र कथ्य की संवेदना एवं परिवेश को व्यक्त करते हैं । 'नीलकांत का सफर (स्वयं प्रकाश) कहानी में ट्रेन के थर्डक्लास डिब्बे में सफर करने वाले नीलकान्त और मजदूर जैसे सामान्य पात्रों का चित्रण हुआ । 'नीलकान्त का सफर' (स्वयं प्रकाश) कहानी का परिवेश पूरी तरह से कथ्य की संवेदना को व्यक्त कर रहा है।

4.3.5 निष्कर्ष:

सार रूप में पुरानी कहानी और नई कहानी के अन्तर को इस प्रकार स्पष्ट किया गया है-

1. पुरानी कहानियों में कथानक

प्राय: अद्भुत घटना प्रधान, अतिप्राकृतिक और चमत्कारपूर्ण अंशों से युक्त होते थे । नई कहानी के कथानकों में अनुभूति की गहरी मनोवैज्ञानिक प्रेरणा सामाजिक और व्यक्तिगत स्तरों पर प्राप्त होती है । नई कहानियों के कथानक परम्परागत घटनाचक्र से हटकर यथार्थ की किसी संवेदना पर आधारित होते हैं । पुरानी कहानी के कथानक घटनाओं की प्रस्तुतीकरण पर ज्यादा आधारित थे जबकि नई कहानियों में घटनाओं के अन्तराल को इस प्रकार अभिव्यक्त किया जाता है कि वे कथानक को नया अभिप्राय देते हैं । नई कहानी का कथानक कहानीकार की अनुभूति का एक क्षण भी हो सकता है और जीवन की लम्बी प्रक्रिया भी ।

2. पुरानी कहानी में अधिकांश चरित्र उच्च वर्ग के मनुष्य या देवी देवता होते थे । इन कहानियों में चरित्र चित्रण या तो आदर्शवादी शैली में किया जाता था या किसी अतिरंजित रूप में । नई कहानी में चरित्र के रूप में सामान्य मनुष्य को चित्रित किया गया है । नई कहानी में चरित्र चित्रण इस प्रकार किया जाता है कि वे अपने परिवेश को गहरे भाव बोध के साथ उद्घाटित करने में समर्थ होते हैं । इन कहानियों में चरित्रों के मनोवैज्ञानिक चित्रण के कारण कलात्मकता तथा संवेदना का निर्वाह हुआ है ।"नई कहानी में कहानीकार चरित्र को सामाजिक परिवेश, मानसिक अन्तर्द्वन्द्वों और व्यावहारिक जीवन की आवश्यकताओं की संलिष्ट प्रक्रिया के रूप में पाना चाहता है । इसलिए नई कहानी में कोई तत्त्व निर्मित या आलम्बन बनकर नहीं, स्वयं आश्रय या विपर्यय बनकर आता है । "

3. पुरानी कहानी की संवेदना आदर्शों और आस्थाओं पर आधारित थी । नई कहानी पुराने परम्परागत विचार, आस्था के केन्द्र आदर्श और संस्था के प्रति गहरे मोहभंग की संवेदना

से युक्त है । नई कहानी की संवेदना युग के यथार्थ के साथ-साथ मनोवैज्ञानिक चेतना से प्रभावित है । नई कहानी में आस्था, विश्वास और मूल्यों के प्रति नवीन स्वर अभिव्यक्त हुआ है और यथार्थ परक सामाजिक परिवेश को पहचानने की ललक है ।

4. पुरानी कहानियां एक ही शैली में लिखी जाती थीं । अधिकांश पुरानी कहानियाँ प्रथम पुरूष या अन्य पुरुष में लिखी जाती थीं जबकि नई कहानियाँ विविध शैली में लिखी जाती हैं जैसे पत्र शैली, डायरी शैली, मनोवैज्ञानिक शैली, आत्मकथात्मक शैली आदि । पुरानी कहानियों में भाषा तत्सम शब्दावली से युक्त अलंकरण के रूप में प्रयुक्त हुई है जबकि नई कहानियों में भाषा अपने समय की परिस्थितियों से अर्थ छवियां ग्रहण करती है । नई कहानियों में सहज, सरल, सपाट व्यंजक शब्दावली और मनोवैज्ञानिक शिल्प वाली और अपनी अन्तर्वस्तु की आवश्यकताओं को पूरा करने वाली भाषा के प्रति विशेष प्रकार की सजगता दिखाई देती है । पुरानी कहानी में वर्णनात्मकता के प्रति विशेष लगाव था जबकि नई कहानी में वर्णनात्मकता की अपेक्षा सांकेतिकता, ध्वनि, प्रतीक और बिम्बों का अधिक प्रयोग हुआ है जिससे भाषा अधिक प्रभावी और अर्थ गम्भीर हुई है । नई कहानी में भाषा कथ्य का माध्यम मात्र नहीं है अपितु उसकी रचना प्रक्रिया का भाग है यहां पर कथ्य स्वयं भाषा को लेकर उपस्थित हुआ है ।

5. पुरानी कहानी में संवाद विषयक कोई विशेष नियम नहीं होते थे । पुरानी कहानियों में पशु-पक्षी के संवादों का चित्रण हुआ है । नई कहानी में संवाद कला का उत्कृष्ट रूप देखने को मिलता है । नई कहानी में संवाद कथ्य और संवेदना को व्यक्त करने में सहायक होता है ।

6. पुरानी कहानी में परिवेश का चित्रण अलंकृति के लिए होता था जबकि नई कहानी में परिवेश का उद्देश्य चरित्र, चरित्रों के पारस्परिक सम्बन्ध और उनके संवेदनापूर्ण अनुभव को सत्यता के साथ प्रस्तुत करना है । नई कहानी में परिवेश मात्र अलंकृत न होकर सोद्देश्य है।

7. पुरानी कहानी का उद्देश्य मनोरंजन करना या उपदेश देना था । जबकि नई कहानी का उद्देश्य किसी स्थिति, समस्या, प्रश्न अथवा सत्य की व्यंजना हो गया है ।

बोध प्रश्न

1. पुरानी कहानी और नई कहानी में कथ्य की दृष्टि से भिन्नता बताइए ।
2. नई कहानी की संवेदना पुरानी कहानी से किस प्रकार भिन्न है?
3. पुरानी कहानी और नई कहानी के परिवेश चित्रण के अन्तर को स्पष्ट कीजिए ।
4. पुरानी कहानी और नई कहानी की भाषा शैली में अन्तर स्पष्ट कीजिए ।

4.4 सारांश

इस इकाई में उपन्यास और कहानी के अन्तर के विषय में आपने पढ़ा, आपने जाना कि साहित्य की ये दोनों विधाएं मोटे रूप में समान दिखाई देने वाले तत्त्वों के संयोजन से बनी हुई है लेकिन सूक्ष्म रूप से देखने पर उपन्यास और कहानी के आकार और प्रकार दोनों में ही पर्याप्त

अंतर दिखाई देता है । दोनों के कथ्य, चरित्र चित्रण का विकास, परिवेश निर्माण, शैली एवं शिल्प तथा प्रभावान्विति में अन्तर है ।

इसी इकाई में आपने पुरानी कहानी और नई कहानी के अन्तर के सम्बन्ध में भी अध्ययन किया । आपने अध्ययन में पाया कि पुरानी कहानी परम्परागत कथानक, चरमबिन्दु, चरित्र चित्रण, वातावरण निर्माण, भाषा की नाटकीयता-काव्यात्मकता से युक्त थी वही नई कहानी, कहानी के इस परम्परागत स्वरूप को तोड़कर नये रूप से सामने आई हैं । पुरानी कहानी और नई कहानी का अंतर, शिल्प, कथ्य भाव, विचार आदि रूप में यहाँ प्रस्तुत हुआ है ।

4.5 संदर्भ ग्रन्थ

'आधुनिक हिन्दी कथा साहित्य और चरित्र चित्रण	–	डॉबेचन .
'हिन्दी उपन्यास'	–	शिवनारायण श्रीवास्तव
'आधुनिक हिन्दी साहित्य का विकास'	–	डॉ लक्ष्मी .सागर वार्ष्णेय
'हिन्दी साहित्य का इतिहास'	–	डॉनगेन्द्र .
'हिन्दी साहित्य का प्रवृत्तिगत इतिहास'	–	प्रेम नारायण टण्डन
आधुनिक हिन्दी कहानी	–	डॉलक्ष्मीनारायण लाल .
कहानी स्वरूप और संवेदना	–	राजेन्द्र यादव
नई कहानी की भूमिका	–	कमलेश्वर
हिन्दी कहानी उद्भव और विकास	–	डॉसुरेश सिन्हा .
हिन्दी कहानीअंतरंग पहचान .	–	डॉरामदरश मिश्र .
नयी कहानी के विविध प्रयोग	–	डॉशशि भूषण पाण्डेय . शीतांशु
कहानी नयी कहानी :	–	नामवर सिंह
आधुनिक परिवेश और नवलेखन	–	डॉशिव प्रसाद सिंह .
उपन्यास तत्व एवं रूप विधान	–	डॉ श्रीनारायण .अग्निहोत्री

4.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न- 1

1. सामान्यत: आकार की दृष्टि से कहानी छोटी होती है एवं उपन्यास बड़ा होता है । किन्तु आकारगत भिन्नता में ध्यान देने योग्य बात यह है कि कोई कहानी बड़ी होकर भिन्नता कहानी ही होती है एवं उपन्यास छोटा होकर भी उपन्यासत्व को नहीं खोता है क्योंकि दोनों की अपनी-अपनी निजता होती है । फिर भी संक्षिप्तता कहानी का विशिष्ट गुण है एवं उपन्यास में विषय का वर्णन होता है ।
2. कहानी और उपन्यास में कथानक की दृष्टि से अन्तर है । कहार्नो में कथानक किसी. घटना या वस्तु विशेष पर केन्द्रित होता है । जबकि उपन्यास में जीवन के विविध पक्षों को उद्घाटित किया

जाता है । उपन्यासकार कथानक में जीवन के विविध रूपों को चित्रित कर सकने में समर्थ होता है । जबकि कहानी में जीवन की संक्षिप्त झांकी या कोई अंश चित्रित होता है ।

3. कहानी और उपन्यास में प्रभावान्विति के आधार पर भी अन्तर 'किया जा सकता है । कहानी का उद्देश्य एकान्वित प्रभाव उत्पन्न करना है जबकि उपन्यास का लक्ष्य कोई एक निश्चित प्रभाव उत्पन्न करना नहीं होता । डॉ. जगन्नाथ प्रसाद शर्मा ने कहानी और -उपन्यास के प्रभाव को इस प्रकार स्पष्ट किया है - ' 'कहानी यदि अपने एकोन्मुख समष्टि प्रभाव के माध्यम से हमारे चित्त को पूर्णतया झंकृत और आंदोलित कराके हमें अनुमान, कल्पना और जिज्ञासा के उन्मुक्त द्वार पर ला खड़ा करती है तो उपन्यास जीवन के विविध क्षेत्रों की झांकी देकर सारे रहस्यों और वस्तुस्थितियों से परिचित कराकर हमारे भीतर एक पूर्णता विधायक संतुष्टि उत्पन्न करता है । इस प्रकार कहानी का प्रभाव सीमित होता है और उपन्यास विविध पक्षों के उद्घाटन के साथ व्यापक प्रभाव छोड़कर है ।

बोध प्रश्न-2

1. पुरानी कहानियों में कथानक प्राय: अद्भुत घटना प्रधान, अतिप्राकृतिक और चमत्कारपूर्ण अंशों से युक्त होते थे । नई कहानी के कथानकों में अनुभूति की गहरी मनोवैज्ञानिक प्रेरणा सामाजिक और व्यक्तिगत स्तरों पर प्राप्त होती है । नई कहानियों के कथानक परम्परागत घटनाचक्र से हटकर यथार्थ की किसी संवेदना पर आधारित होते हैं । पुरानी कहानी के कथानक घटनाओं की प्रस्तुतीकरण पर ज्यादा आधारित थे जबकि नई कहानियों में घटनाओं के अन्तराल को इस प्रकार अभिव्यक्त किया जाता है कि वे कथानक को नया अभिप्राय देते हैं । नई कहानी का कथानक कहानीकार की अनुभूति का एक क्षण भी हो सकता है और जीवन की लम्बी प्रक्रिया भी ।
2. पुरानी कहानी की संवेदना आदर्शों और आस्थाओं पर आधारित थी । नई कहानी पुराने परम्परागत विचार, आस्था के केन्द्र आदर्श और संस्था के प्रति गहरे मोहभंग की संवेदना से युक्त है । नई कहानी की संवेदना युग के यथार्थ के साथ-साथ मनोवैज्ञानिक चेतना से प्रभावित है । नई कहानी में आस्था, विश्वास और मूल्यों के प्रति नवीन स्वर अभिव्यक्त हुआ है और यथार्थ परक सामाजिक परिवेश को पहचानने की ललक है ।
3. पुरानी कहानी में परिवेश का चित्रण अलंकृत के लिए होता था जबकि नई कहानी में परिवेश का उद्देश्य चरित्र, चरित्रों के पारस्परिक सम्बन्ध और उनके संवेदनापूर्ण अनुभव को सत्यता के साथ प्रस्तुत करना है । नई कहानी में परिवेश मात्र अलंकृत न होकर सोद्देश्य है।
4. पुरानी कहानियां एक ही शैली में लिखी जाती थीं । अधिकांश पुरानी कहानियाँ प्रथम पुरुष या अन्य पुरुष में लिखी जाती थीं जबकि नई कहानियाँ विविध शैली में लिखी जाती हैं जैसे पत्र शैली, डायरी शैली, मनोवैज्ञानिक शैली, आत्मकथात्मक शैली आदि । पुरानी कहानियों में भाषा तत्सम शब्दावली से युक्त अलंकरण के रूप में प्रयुक्त हुई है जबकि नई कहानियों में भाषा अपने समय की परिस्थितियों से अर्थ छवियां ग्रहण करती है । नई कहानियों में सहज, सरल, सपाट व्यंजक शब्दावली और मनोवैज्ञानिक शिल्प वाली और अपनी अन्तर्वस्तु की आवश्यकताओं को पूरा करने वाली भाषा के प्रति विशेष प्रकार की सजगता दिखाई देती है । पुरानी कहानी में वर्णनात्मकता के प्रति विशेष लगाव था जबकि नई कहानी में वर्णनात्मकता की अपेक्षा सांकेतिकता, ध्वनि, प्रतीक

और बिम्बों का अधिक प्रयोग हुआ है जिससे भाषा अधिक प्रभावी और अर्थ गम्भीर हुई है । नई कहानी में भाषा कथ्य का माध्यम मात्र नहीं है अपितु उसकी रचना प्रक्रिया का भाग है यहां पर कथ्य स्वयं भाषा को लेकर उपस्थित हुआ है ।

खण्ड-2 का परिचय

इस खण्ड में आप कथा साहित्य के दो प्रमुख- प्रकारों कहानी और उपन्यास के स्वरूप का तात्विक अध्ययन करेंगे । पहला पाठ (इकाई- 5) कहानी पर केन्द्रित है । कहानी का स्वरूप कुछ तत्वों पर आधारित है । कहानी साहित्य के आलोचकों ने कहानी को समझाते हुए उसके छः तत्वों की चर्चा की है । ये छः तत्व क्रमशः इस प्रकार हैं-कथानक चरित्र, वातावरण कथोपकथन, भाषा- शैली और उद्देश्य । किसी भी कहानी का विवेचन करते हुए इन छः तत्वों को ध्यान में रखा जाता है । यह आवश्यक नहीं कि प्रत्येक कहानी में ये छः तत्व मिल ही जाये । शिल्प के धनी अनेक कहानीकारों ने ऐसी कहानियाँ रची हैं जिनमें केवल चरित्र या वातावरण की ही प्रधानता है । घटनाओं पर आधारित कथानक उनमें देखने को नहीं मिलता । इसी प्रकार कुछ ऐसी भी कहानियाँ है जिनमें घटा बहुलता है (कथानक की प्रधानता) और अन्य तत्वों पर लेखक का ध्यान ही नहीं गया है । कहने का अभिप्राय यह है कि कहानी लेखन में उपर्युक्त छः तत्वों का योगदान होते हुए भी आवश्यक नहीं कि वे प्रत्येक कहानी में उपलब्ध हो ही जाये ।

इस खण्ड का पहला पाठ 'कहानी का स्वरूप, भेद व तत्व' है । इस पाठ के अन्तर्गत कहानी के स्वरूप की विशद चर्चा की गयी है । लेखक ने यह समझाने का प्रयास किया है कि कहानी के स्वरूप को उभारने में उपर्युक्त छः तत्वों की क्या भूमिका है? हिन्दी कहानी के इतिहास में दर्जनों रचनाकार उभर कर सामने आये हैं । उन्होंने अपने-अपने ढंग से कहानी कला को समृद्धि प्रदान की है । उदाहरण के लिये यदि दो प्रसिद्ध कहानीकारों को ध्यान में रखें तो उनके द्वारा रची गयी कहानियों की भिन्नता उभर कर सामने आ जाती है । ये दो कहानीकार हैं-प्रेमचन्द और प्रसाद । प्रेमचन्द की कहानी कला में यदि जीवन की यथार्थ स्थिति अपनी सादगी के साथ उभर कर सामने आती है तो प्रसाद की रचनाओं में कल्पनाशीलता, भावुकता और नाटकीयता के दर्शन होते हैं । ध्यान देने की बात यह है कि प्रेमचन्द और प्रसाद एक ही समय में रचना कर रहे थे किन्तु दोनों का कहानी संसार एक दूसरे से सर्वथा भिन्न है । इन्हीं कतिपय रचनाओं को ध्यान में रख कर इस पाठ के लेखक ने कहानी के स्वरूप, भेद व तत्वों की चर्चा की है । इस प्रकार कहानी विधा के स्वरूप को समझाते हुए उसके भेदों को भी उदाहरण सहित सम्मुख रखा गया है । कुल मिलाकर कहानी विधा का एक समग्र चित्र आपके सम्मुख प्रस्तुत किया गया

खण्ड दो की अगली इकाई (इकाई) 'उपन्यास का स्वरूप भेद व तत्व' है । कहानी की भांति उपन्यास विधा की विशद चर्चा इस पाठ में की गयी है । आप न केवल कहानी और उपन्यास के अंतर को समझ पायेंगे अपितु उपन्यास के विविध प्रकारों, शिल्पगत प्रयोगों और तत्वों की विवेचना भी इस पाठ के अन्तर्गत समझेंगे ।

सरकारी तौर पर कहानी और उपन्यास का अन्तर आकार की दृष्टि से मान लिया जाता है अर्थात् आकार में छोटी रचना कहानी समझी जाती है, जबकि एक लम्बी कहानी को उपन्यास समझने की भूल की जाती है । सच तो यह है कि कहानी और उपन्यास का अन्तर आकार का न होकर प्रकार का है । अर्थात् इन दोनों कथा-रूपों की अलग- अलग पहचान है । यद्यपि

उपन्यास में भी वही छः तत्व है जो कहानी में कथानक, चरित्र, वातावरण, कथोपकथन, भाषा शैली एवं उद्देश्य । इस प्रकार ऊपरी तौर पर समानता और एकरूपता होते हुए भी दोनों साहित्य-विधाओं में अन्तर है, दोनों एक-दूसरे से अलग है।

इस पाठ में उपन्यास विधा के सम्बन्ध में आप कई सूक्ष्म बातें भी समझेंगे कि उपन्यास के एक लोकप्रिय साहित्य रूप का कारण है । संक्षेप में प्रस्तुत पाठ में आपको उपन्यास के सम्बन्ध में तात्विक जानकारी एवं उपन्यासों के विविध स्वरूपों को समझने के आधारों का भी ज्ञान होगा । कुल मिलाकर खण्ड दो के इन दो पृष्ठों में कहानी और उपन्यास की समानता और एक-दूसरे से भिन्नता का विवेचन है ।

इकाई-5

कहानी का स्वरूप, भेद व तत्त्व

इकाई की रूपरेखा

5.0 उद्देश्य

5.1 प्रस्तावना

5.2 कहानी की परिभाषा

5.3 कहानी और उपन्यास में अन्तर

5.4 कहानी के भेद

5.5 कहानी का रचना विधान (कहानी के तत्त्व)

5.1.1 कथा वस्तु

5.5.2 वस्तु चयन

5.5.3 कथानक में संवेदना का महत्व

5.5.4 वस्तु विन्यास क्रम

5.6 कहानी का शीर्षक

5.7 पात्र का चरित्र चित्रण

5.8 संवाद

5.9 स्थिति या वातावरण

5.10 भाषा और शैली

5.11 उद्देश्य

5.12 सारांश

5.13 संदर्भ ग्रन्थ

5.14 बोध प्रश्न

5.0 उद्देश्य

- विद्यार्थियों को कहानी की परिभाषा से परिचित कराना ।
- विद्यार्थियों को कहानी विधा के महत्त्व से परिचित कराना ।
- विद्यार्थियों को कहानी और उपन्यास में अंतर स्पष्ट कराना ।
- विद्यार्थियों को कहानी के रचना विधान की जानकारी देते हुए उसके निम्नलिखित तत्त्वों का विवेचन करने की क्षमता देना-
- कथा वस्तु कहानी का शीर्षक
- पात्र या चरित्र चित्रण
- संवाद
- स्थिति या वातावरण
- भाषा और शैली ।
- विद्यार्थियों को कहानी के विभिन्न भेदों से परिचित कराना ।

5.1 प्रस्तावना

कविता यदि मनुष्य का आदिम राग है तो कहानी उसका आदिम पथ-प्रदर्शक है । कहानी एक ओर मनुष्य के हृदय का रंजन कर उसे उदात्त बनाती है तो दूसरी ओर उसे सही मार्ग दिखाती है । पंचतंत्र, हितोपदेश तथा पौराणिक कथाओं का यही महत्त्व रहा है और इन कथाओं ने जहाँ मनुष्य का मनोरंजन किया है वहीं उसे उपदेश भी कहा गया है । किन्तु आज हम जिसे कहानी विधा के रूप में मान्यता देते हैं वहीं उसे उपदेश भी दिया है । किन्तु आज हम जिसे कहानी विधा के रूप में मान्यता देते हैं वह सर्वथा एक आधुनिक विधा है तथा उसका स्वरूप इन परम्परागत कथारूपों से भिन्न है । संस्कृत में कथा और आख्यायिका दो शब्दों का प्रयोग मिलता है तथा आचार्यों ने दोनों के स्वरूप और रचनाशिल्प की विवेचना की है किन्तु आधुनिक कहानी इन दोनों ही रूपों से भिन्न है जिसका वर्तमान रूप पश्चिमी साहित्य की देन है ।

5.2 कहानी की परिभाषा

आचार्य दण्डी ने अपने काव्यादर्श में कथा और आख्यायिका दोनों को परिभाषित किया है किन्तु जिसे हम आज कहानी कहते हैं उसका वर्णन संस्कृत साहित्य में नहीं मिलता इसलिए कहानी को परिभाषित करने का प्रयास भी पहले पश्चिम में ही हुआ । पाश्चात्य विद्वानों की कुछ परिभाषाएँ नीचे दी जा रही है :-

समीक्षक हडसन ने अपने 'एन इन्ट्रोडक्शन टू द स्टडी ऑफ लिटरेचर' में कहानी के विषय में कहा है कि उसमें एक मूलभाव होता है । उस मूल भाव का विकास तार्किक निष्कर्षो के साथ लक्ष्य की एकनिष्ठता से सरल, स्वाभाविक गति से किया जाना चाहिए । छोटी कहानी आकार में इतनी बड़ी होनी चाहिए कि उसे एक बैठक में पढ़ा जा सके । प्रसिद्ध कहानीकार एलेन पने का कहना है कि 'कहानी वह गद्य कथा है जो आधे घंटे से लेकर दो घंटे तक में समाप्त हो जाती है । ' वे अच्छी कहानी का निकष कहानी के स्थापत्य में खोजते हैं इसलिए घटनाओं के कुशल संयोजन को अच्छी कहानी के लिए जरूरी बताते हैं । विश्व के सबसे बड़ी कथाकारों में एक एंटन चेखव का कथन है कि कहानी में साधारण से साधारण बातों का वर्णन हो सकता है जैसे सैमियोविच ने किस प्रकार मेरिया से विवाह किया - बस इतना हो । जॉन हैडफील्ड ने भी कहानी के छोटे आकार को अधिक महत्वपूर्ण माना है ।

हिन्दी के लेखकों में सबसे पहले प्रेमचन्द ने कहानी को परिभाषित करते हुए कहा कि "सबसे उत्तम कहानी वह होती है जो किसी मनोवैज्ञानिक सत्य पर आधारित हो तथा अनुभूतियाँ ही रचनाशील भावना में अनुरंजित होकर कहानी बन जाती है ।" जयशंकर प्रसाद कहानी के सौन्दर्य का मूल उसका रस' मानते हैं । इलाचन्द्र जोशी मानते हैं कि 'जीवन की परिस्थितियों को स्वाभाविक गति प्रदर्शित करने वाली विधा कहानी होती है ।

निष्कर्षत: हम यह कह सकते हैं कि कहानी आधुनिक साहित्य की वह विधा है जो गद्य में और छोटे आकार में रची जाए और मानव जीवन या जगत की किसी एक घटना, वस्तु व्यक्ति, स्थिति, मनोभाव या विचार को लेकर अपना स्थापत्य इस तरह निर्मित करे कि पाठक उसे पढ़कर अभिभूत और रससिक्त हो जाए । यह अपने आप में कोई मुकम्मल और अन्तिम

परिभाषा नहीं है तथापि सुविधा के लिए हम कह सकते हैं कि कहानी गद्य और लघु आकार में लिखी ऐसी रचना होती है जिसमें एक मूल संवेदना हो और उस संवेदना की अभिव्यक्ति तार्किक, रोचक और आकर्षक ढंग से हो कि पाठक की उसमें रूचि बनी रहे । पाठक कहानी को एक बार पढ़ना आरम्भ करे तो उसे समाप्त करने के बाद ही उसे छोड़े, यह कहानी की मुख्य ताकत होती है । यह तभी हो सकता है जब कहानी मानव-जीवन और उसकी स्थितियों का विश्वसनीय और प्रभावशाली चित्रण करे ।

5.3 कहानी और उपन्यास में अन्तर

यद्यपि कहानी और उपन्यास दोनों विधाओं में कथा तत्त्व प्रधान होता है और कुछ ऐसी लम्बी कहानियाँ भी आई जो बाद में लघु उपन्यास के रूप में प्रकाशित हुई । कृष्णा सोबती की 'मित्रों मरजानी तथा 'ए लड़की', महेन्द्र भल्ला की 'एक पति के नोट्स', दूधनाथ सिंह की 'ऊं नमो अंधकार', उदय प्रकाश की 'पीली छतरी वाली लड़की' आदि कहानियाँ, जो बाद में उपन्यास के रूप में प्रकाशित हुई, इसके उदाहरण हैं । किन्तु कहानी तथा उपन्यास सर्वथा दो: अलग विधाएँ हैं तथा इनका रचना विधान भी सर्वथा अलग-अलग है । तथापि कहानी और उपन्यास के कुछ तत्त्वों को रेखांकित किया जा सकता है ।

(1) कहानी में कथानक हो भी सकता है और नहीं भी जबकि उपन्यास के लिए कथानक का होना अत्यन्त आवश्यक है । कहानी का प्रेरक एक मार्मिक विचार भी हो सकता है जबकि उपन्यास हमें जीवन के विविध पक्षों का चित्रण होता है । कहानीकार को अपनी दृष्टि किसी एक वस्तु पर केन्द्रित करनी होती है जबकि उपन्यासकार जीवन के बड़े फलक को दृष्टि में रखता है ।

(2) कहानी जीवन को आशिक रूप से देखने की विधा है अथवा वह जीवन के किसी एक अंश को ही देखती है जबकि उपन्यास जीवन को पूर्णता और समग्रता में देखता है ।

(3) आकार की दृष्टि से कहानी को एक बैठक में पढ़ा जा सकता है जबकि उपन्यास का आकार बड़ा होता है और उसे पाठक एक बार के साथ कई बार में पढ़ सकता है ।

(4) डॉ जगन्नाथ प्रसाद शर्मा ने प्रभावान्विति को केन्द्र में रखते हुए दोनों का अन्तर स्पष्ट किया है - 'कहानी यदि अपने एकोन्मुख समष्टि प्रभाव के माध्यम से हमारे चित्र को पूर्णतया. झंकृत और आन्दोलित करके हमें अनुमान, कल्पना और जिज्ञासा से उमुक्त द्वार पर ला खड़ा करती है तो उपन्यास जीवन के विभिन्न क्षेत्रों को झांकी देकर सारे रहस्यों और वस्तुस्थितियों से परिचित कराकर हमारे भीतर एक पूर्णता विधायक संतुष्टि उत्पन्न करता है । "

(5) कल्पना के बिना तो साहित्य की कोई भी विधा सम्भव नहीं है पर कहानी में कहानीकार अपनी कल्पना को संयमित रखता है तो उपन्यास को लेखक की कल्पना विस्तार देती है ।

(6) विचारों और भावों की अभिव्यक्ति दोनों विधाओं में होती है पर कहानीकार कुछ चुने हुए मार्मिक क्षेत्रों को ही लेता है जबकि उपन्यासकार के पास लम्बे-लम्बे विवरणों की पूरी गुंजाइश होती है ।

(7) कहानी में पात्रों की संख्या सीमित होती है जबकि उपन्यास में पात्र काफी संख्या में हो सकते हैं । कहानी में किसी पात्र के अन्तर्द्वन्दों को बहुत लम्बा नहीं खींचा जा सकता जबकि उपन्यास पात्र के मन में प्रवेश कर उसके मानसिक संताप को पूरी तरह खोल सकता है ।

(8) इसी प्रकार कहानी में चरित्र चित्रण को बहुत विस्तार देना सम्भव नहीं होता, जबकि उपन्यास में किसी पात्र के चरित्र के हर पहलू को उजागर किया जा सकता है ।

(9) कहानी और उपन्यास की रचना शैलियों में भी बहुत अन्तर होता है । कहानी की रचना में तो किसी एक ही शैली का उपयोग किया जाना संभव है जबकि एक ही उपन्यास में कई शैलियों के प्रयोग समय हैं ।

5.4 कहानी के भेद

डॉ. श्री कृष्णलाल ने कहानी के स्थूल रूप से तीन भेद बताये हैं -

(क) कथा प्रधान कहानी - कहानी में घटना (वस्तु), चरित्र और वातावरण ये तीन उपादान ही प्रमुख होते हैं । जिन कहानियों में लेखक घटना चक्र को केन्द्र में रखकर कथा का विकास करता है, उन्हें कथा प्रधान कहानियों की कोटि में रखते हैं । जासूसी तथा तिलिस्मी कहानियों को इस कोटि में रख सकते हैं ।

(ख) वातावरण प्रधान कहानी - जिन कहानियों में लेखक किसी युग या परिस्थिति के वातावरण को केन्द्र में रखता है, वे वातावरण प्रधान कहानियों की कोटि में आती है । प्रेमचंद की 'शतरंज के खिलाड़ी कहानी को इस वातावरण कहानी की कोटि में रख सकते हैं ।

(ग) प्रभाव प्रधान कहानी - जिस कहानी में लेखक का उद्देश्य पाठक के ऊपर किसी भाव का प्रभाव डालना होता है, उसे प्रभाव प्रधान कहानी कहते हैं । जैनेन्द्र की तत्सत्' कहानी प्रभाव प्रधान कहानी है क्योंकि इस कहानी में जैनेन्द्र एक दार्शनिक विचार को पाठकों तक पहुँचाना चाहते हैं ।

इसके अतिरिक्त कहानी के निम्नलिखित भेद भी किये जाते हैं -

(1) घटना प्रधान कहानी - जिस कहानी में घटनाओं की प्रधानता हो और कहानी पढ़ते समय पाठक का कौतूहल बना रहे । कहानी में अप्रत्याशित घटनाओं की भरमार हो । प्रेमचंद की सोजेवतन विश्वम्भरनाथ शर्मा कौशिक की पतित पावन' कहानियाँ घटना प्रधान कहानियाँ हैं ।

(2) कार्य प्रधान कहानी - इन कहानियों में साहसिक, रहस्यपूर्ण, अद्भुत घटनाओं का चित्रण होता है । घटनाएँ भी काल्पनिक अधिक होती हैं । गोपालराम गहमरी तथा जी. पी. श्रीवास्तव की कहानियाँ इसी श्रेणी में आती है ।

(3) चरित्र प्रधान कहानी - जिस कहानी में लेखक किसी चरित्र को केन्द्र में रखकर कहानी का तानाबाना बुनता है, वह चरित्र प्रधान कहानी होती है । प्रेमचंद की 'आत्माराम', प्रसाद की 'पुरस्कार, जैनेन्द्र की 'पत्नी', अज्ञेय की खितीन बाबू' आदि चरित्र प्रधान कहानियाँ हैं ।

(4) ऐतिहासिक कहानी - जिस कहानी में किसी ऐतिहासिक घटना, सूत्र या चरित्र का अंकन होता है, उसे ऐतिहासिक कहानी कहते हैं । प्रेमचंद की वज्रपात, प्रसाद की 'देवस्थ, सुदर्शन की 'न्याय मंत्री ऐतिहासिक कहानियाँ हैं । वृंदावन लाल वर्मा, चतुरसेन शास्त्री आदि ने श्रेष्ठ ऐतिहासिक कहानियाँ लिखी हैं ।

(5) सामाजिक कहानी - जिन कहानी में किसी सामाजिक समस्या का चित्रण होता है वह सामाजिक कहानी कहलाती है । प्रेमचंद की अधिकांश कहानियॉ सामाजिक है । वर्तमान में दलित विमर्श तथा स्त्री विमर्श के अन्तर्गत आने वाली कहानियाँ भी सामाजिक कहानियाँ हैं । प्रेमचंद की पंच परमेश्वर से लेकर संजीव की 'आरोहण' तक सामाजिक कहानियों की एक पूरी परम्परा है ।

(6) हास्य-व्यंग्यपूर्ण कहानी - जो कहानी पाठकों का मनोरंजन करती है साथ ही किसी विसंगति पर प्रहार करती है, हास्य-व्यंग्य कहानी कहलाती है । जी.पी श्रीवास्तव, अन्नपूर्णानंद, बद्रीनाथ भट्ट आदि ने इस कोटि की कहानियाँ लिखी हैं । भगवती चरण वर्मा की प्रायश्चित तथा 'मुगलों ने सल्लनत बख्श दी कहानियाँ इसी कोटि की है । आधुनिक युग में हरिशंकर परसाई ने इस क्षेत्र में अभूतपूर्व काम किया है । उनकी व्यंग्य कहानियाँ कलात्मक दृष्टि से बहुत उच्च कोटि की है ।

(7) मनोवैज्ञानिक कहानी - यद्यपि शायद ही कोई ऐसी कहानी मिले जिसमें किसी मनोवैज्ञानिक सत्य का उद्घाटन हो तथापि जैनेन्द्र, अज्ञेय. इलाचन्द्र जोशी आदि ने ऐसी कहानियाँ लिखी हैं जिन्हें मनोवैज्ञानिक ही कहा जा सकता है । जैनेन्द्र की 'पाजेब', खेल' ऐसी ही कहानियाँ हैं । मोहन राकेश की मिस पाल राजेन्द्र यादव की 'टूटना भी इसी कोटि में आती है ।

(8) प्रतीकवादी कहानी - यों प्रतीक विधान कहानी के शिल्प का एक महत्वपूर्ण माध्यम है तथापि कुछ ऐसी कहानियाँ भी लिखी गयी हैं जिन्हें प्रतीकवादी कहा जा सकता है । अज्ञेय की रोज', प्रसाद की कला, रामकृष्णदास की कला की कृत्रिमता प्रतीकवादी कहानियाँ हैं।

(9) आंचलिक कहानी - यद्यपि ग्रामीण जीवन पर आधारित कहानी की परम्परा प्रेमचंद से ही आरम्भ हो जाती है तथापि फणीश्वरनाथ रेणु से आंचलिक कहानी की परम्परा का सूत्रपात माना जाता है । आंचलिक कहानी में किसी अंचल विशेष का परिवेश ही कहानी का कथ्य होता है । रेणु की तीसरी कसम, लालमान की बेगम, शिवप्रसाद सिंह की कर्मनाश की हार, मार्कण्डेय की हँसा जाई अकेला आदि हिन्दी की श्रेष्ठ आंचलिक कहानियाँ हैं ।

यों कहानी के और भी भेद किये जा सकते हैं जैसे राजनैतिक कहानी, धार्मिक कहानी, प्रमाणवादी कहानी आदि ।

5.5 कहानी का रचना विधान (कहानी के तत्त्व)

आज हम जिसे कहानी कहते हैं उसका रचना-विधान यद्यपि पश्चिम से ही आया है तथापि हमने अपने तरीके से नये-नये प्रयोग किये हैं । परम्परागत रचना-विधान की दृष्टि से कहानी में उसके निम्नलिखित आधार हैं -

5.5.1 कथावस्तु

कहानी का मूल ढाँचा जिन घटनाओं, भावों, विचारों, स्थितियों पर खड़ा होता है उन्हें हम कथावस्तु के अन्तर्गत रखते हैं । कथावस्तु के अन्तर्गत अग्रलिखित उपादान आते हैं -

5.5.2 वस्तु चयन

लघु कथा सामान्य चित्रणों से लेकर रिपोर्ट तक (जिनमें शैली तथा रूपरंग सम्बन्धी कोई चमत्कार नहीं होता) से सम्बन्धित रहती है । कहानी के अन्तर्गत वह गद्य खण्ड भी आ जाते हैं, जिनमें उन मनोभावों का चित्रण कर दिया जाता है जिनका चित्रण अन्य साहित्यिक रूपों में कठिन होता है । वैधानिक दृष्टि से सफल कहानी की समस्त विचारधाराएँ और क्रिया कलाप आदि नियंत्रित रहते हैं ।

उपर्युक्त कथन से स्पष्ट है कि कहानी की परिधि विस्तृत होती है । इस विस्तार का कारण है उसका मानव-जीवन से सम्बन्धित होना । कहानी का लक्ष्य जीवन के किसी मार्मिक पक्ष या मानव स्वभाव के किसी विलक्षण चरित्र पर प्रकाश डालना होता है । अपने इस लक्ष्य की पूर्ति के लिए उसे जीवन से अधिक-से-अधिक सम्बन्धित रहना पड़ता है । अधिक सही अर्थों में हम कह सकते हैं कि वह जीवन का पूर्ण प्रतिनिधित्व करती है ।

वस्तु प्राप्ति के स्रोत - कहानी के लिए हमें कथावस्तु से स्रोतों से प्राप्त हो सकती है । उनमें से कुछ निम्नलिखित हैं-

(क) इतिहास, पुराण आदि - इतिहास, पुराण आदि सदा से ही भारतीय साहित्य के लिए अमर और चिरन्तन स्रोत रहे हैं । भारत के अधिकांश साहित्य का मूल स्रोत यही है । हिन्दी कहानियों के लिए भी उन्होंने बड़ी प्रेरणा प्रदान की है । प्रसादजी अपनी बहुत्सी कहानियों की सामग्री इतिहास से लेते रहे । उनका तानसेन', 'सिकन्दर की शपथ', 'चित्तौड़-उद्धार', 'अशोक', जहांआरा शीर्षक कहानियाँ ऐतिहासिक आधार लेकर ही खड़ी हैं । पौराणिक कहानियों में हम आधुनिक कहानियों की वस्तु खोज सकते हैं!

(ख) पत्र-पत्रिकाएँ - सैंकड़ों कहानियों की कथावस्तु का आधार पत्र-पत्रिकाओं में वर्णित घटनाएँ ही हुआ करती हैं । कहानी का नवीन रूपान्तर तो अधिकतर पत्रपत्रिकाओं में वर्णित घटनाओं को ही आधार बनाकर चलती हैं । बहुत्सी कल्पित कहानियाँ प्राय: पत्रिकाओं में वर्णित प्रसंगों और घटनाओं का आधार लेकर ही अपना रूप निर्माण करती हैं ।

(ग) दैनिक जीवन की घटनाएँ - हमारा जीवन प्रतिपल अनेक घटनाओं के घात-प्रतिघात में विकसित होता जाता है । इनमें कुछ घटनाएँ इतनी प्रभावपूर्ण और प्रेरक होती है कि भावुक हृदय के लिए वे कहानी लिखने की अच्छी सामग्री प्रदान करती हैं । कल्पना प्रधान कहानियों का मुख्य आधार अधिकतर इसी प्रकार की दिन-प्रतिदिन की घटनाएँ होती हैं।

(घ) साहित्य - बहुत्सी कहानियाँ भिन्न-भिन्न साहित्य की कहानियों का आश्रय लेकर विकसित होती हैं । प्रत्येक साहित्य की सैकड़ों विधाएँ होती हैं और इन विधाओं से संबंधित सहस्त्रों रचनाएँ होती हैं । उन रचनाओं में जीवन की सहस्त्रधारा अभिव्यक्ति रहती है । सफल कहानीकार भी इनसे प्रेरणा पाकर इनका आधार लेकर अपनी कहानी का निर्माण करता है ।

मूल स्रोतों के उपयोग की विधियाँ - कुछ कहानी कला के आचार्यों ने मूल स्रोतों से प्राप्त होने वाली सामग्री के संचय और सुरक्षा एवं स्मरण के लिए नोटबुक रखने का उपदेश दिया है । किन्तु मैं इसकी कोई आवश्यकता नहीं समझता । कहानी जीवन और जगत के किसी मार्मिक पक्ष के प्रति कौतूहलात्मक प्रतिक्रिया का परिणाम है । कहानी को किसी एक घटना. वस्तु विषय या धारणा की रोचक झलक मात्र मानता हूँ । झलक के लिए संश्लिष्ट सजावट की आवश्यकता नहीं होती । अत: नोटबुक में किए हुए सूक्ष्म विवरण कहानी की रचना में बाधा रूप हो सकते हैं । ही, उपन्यास-रचना में इस प्रकार के विवरण महत्त्व रख सकते हैं ।

सामग्री को कहानी के रूप में डालने के प्रकार और भेद - डॉ जगन्नाथ शर्मा ने उपादान संग्रह के प्रकारों का वर्णन करते हुए स्टीवेन्सन के दृष्टिकोण का स्पष्टीकरण किया है । मैं भी यहाँ पर उसका उल्लेख कर देना आवश्यक समझता हूँ - 'जहाँ तक मुझे ज्ञात है कहानी लिखने के तीन प्रकार हैं । आप एक प्लांट लेकर उनमें पात्रों को फिट कर लें, अथवा आप पात्र पहले ले लें फिर उनके चरित्र के अनुरूप घटनाओं और परिस्थितियों का विकास करें, अथवा यह भी हो सकता है कि आप मेरे साथ जो मैं कह रहा हूँ सहमत होकर अनुभव करें । आप किसी वातावरण को लेकर उनके अनुरूप घटनाओं और पात्रों की योजना करें । ' उपर्युक्त तीन प्रकारों के अतिरिक्त मैं कहानी की रूपरेखा निर्माण का एक ढंग और अनुभव करता हूँ । मेरी समझ में प्रत्येक कहानी का निर्माण करने से पहले हमें उस संवेदना, धारणा या विचार को पकड़ना पड़ेगा, जिससे संबंधित प्रभावान्विति का रूप कहानीकार के मन में स्पष्ट हो जाय, तो फिर उसके अनुरूप वातावरण, पात्रों, घटनाओं आदि की कल्पना करें । इस प्रकार जो कहानी लिखी जायेगी, वह निश्चय ही बहुत सफल और प्रभावपूर्ण कहानी होगी । इन विधियों के उपयोग के मूल में कलाकार को अपनी प्रतिभा रहती है ।

प्रेरणा - जीवन में पग-पग पर अनुभूत होने वाली सैकड़ों संवेदनाएँ ही कहानी - लेखन को प्रेरणा प्रदान करती है । इनमें प्रत्येक संवेदना एक कहानी की रचना के लिए पर्याप्त होती है । हडसन ने कहानी लेखन की प्रेरणाओं का अच्छा वर्णन किया है । वह लिखता है -

कोई नाटकीय घटनाएँ या परिस्थितियाँ, कोई प्रभावात्मक दृश्य, कोई चरित्र, कोई मार्मिक पक्ष, कोई महत्त्वपूर्ण अनुभव, खण्ड अथवा जीवन का कोई मार्मिक पक्ष, या कोई नैतिक लक्ष्य, इनमें से कोई एक अथवा सहस्त्रों अन्य प्रेरणाओं में से जिनकी परिगणना की जा सकती है, किसी सफल कहानी का मूल भाव बन सकते हैं । कहना न होगा कि मूल भाव या प्रेरणा ही आधुनिक कहानी का प्राण है । प्रेमचन्दजी ने भी लिखा है - 'आज लेखक केवल कोई रोचक दृश्य देखकर कहानी लिखने नहीं बैठ जाता । उसका उद्देश्य स्थूल सौन्दर्य नहीं है । वह तो कोई ऐसी प्रेरणा चाहता है जिसमें सौन्दर्य की झलक हो और इसके द्वारा वह पाठक की सुन्दर भावनाओं को स्पर्श कर सके ।"

(ड) कल्पना - कहानी साहित्य का एक उदात्त स्वरूप है । कल्पना कहानी की सर्जना में बहुत बड़ी योग देती है । कहानी लेखक जीवन और जगत् से सामग्री एकत्रित करना है । उसे कहानी के रूप में परिणत करने का श्रेय कल्पना को ही है । कल्पना की कवि की प्रतिभा से विनिर्मित कंकाल में रूपरंग का संचार करती है । यदि कहानी में कल्पना का योग

न रहे तो वह कलात्मक कहानी न रहकर कोरा इतिहास या कथा-मात्र रह जायेगी । सच तो यह है कि कहानी को कलात्मक रूप प्रदान करने का श्रेय कहानीकार की कल्पना को है । निबन्ध और कहानी के अन्तर को स्पष्ट करते हुए डॉ. श्री कृष्णलाल ने भी कल्पना को कहानियों का प्राण कहा है । वे लिखते हैं - 'यों तो साहित्य के प्रत्येक क्षेत्र और विभाग में कल्पना का उपयोग आवश्यक और अनिवार्य हुआ करता है, परन्तु कहानी में ही शायद इसका सबसे अधिक उपयोग होता है । कल्पना कहानी का प्राण है । "

कहने का अभिप्राय यह है कि कहानियों के रूप विधान में कल्पना का बहुत बड़ा महत्त्व है।

5.5.3 कथानक में संवेदना का महत्त्व

यहाँ पर एक बार फिर इस बात पर बल देना उचित समझता हूँ कि प्रत्येक कहानी के कथानक में संवेदना का होना नितान्त आवश्यक होता है । संवेदना उस मर्मस्पर्शी अनुभूति को कहते हैं, जो मानव मात्र के हृदय को इस प्रकार प्रभावित न कर पैं कि वह तिलमिला उठे । कहानी का कथानक किसी -न किसी संवेदना पर ही केन्द्रित रहना चाहिए । संवेदना के बिना कहानी का कथानक सफल कहानी का निर्माण नहीं कर सकता । यह संवेदना भी एक ही होनी चाहिए । कहानी में अनेक संवेदनाओं के लिए कोई स्थान नहीं होता है ।

कथानक में संघर्ष का होना - कहानी के कथानक में संघर्ष की प्रतिष्ठा भी की जा सकती है । घटना प्रधान कहानियों का तो यह सर्वथा प्राण ही होता है । किन्तु बहुत्सी ऐसी कहानियाँ भी हो सकती है, जिनमें कोई संघर्ष न भी हो । फिर भी संघर्षप्रधान कहानी संघर्षविहीन कहानी से कहीं अधिक प्रभावपूर्ण होती है ।

कथानक में कौतूहल, औत्सुक्य और करूणा आदि की प्रतिष्ठा - विल्की कालिन्स नामक पाश्चात्य आलोचक ने लिखा है कि, 'कहानीकार वहीं श्रेष्ठ होता है जो अपनी कला से पाठकों में कौतूहल और औत्सुक्य को जाग्रत कर सके और उन्हें पल में हँसा और रूला सके ।" उसके कहने का अभिप्राय यह है कि कहानी के कथानक में कौतूहल, औत्सुक्य, करूणा और हास्य आदि तत्त्वों की पूर्ण प्रतिष्ठा होनी चाहिए । यह सब कहानी में रोचकता उत्पन्न करते हैं।

कथानक का किसी सत्य के उद्घाटन में समर्थ होना - कथानक की कल्पना करते समय कहानीकार को एक बात पर और ध्यान देना चाहिए । डी. जगन्नाथ प्रसाद शर्मा के शब्दों में वह बात इस प्रकार है - "कहानी रचना की प्रेरणा यदि ऐसे अनुभव, विश्वास अथवा चिन्तन पर आश्रित है जिसका मूलाधार जीवन का कोई तथ्य अथवा सत्य है, अथवा तद्-विषयक कोई कल्पना है तो फिर कथानक की गति स्पष्ट एक-रस एक-गति, सर और सीधी होगी । कारण-कार्य और परिणाम की योजना उतनी आवश्यक न होगी जितनी कि उस सत्य अथवा तथ्य को किसी सुनिश्चित आसन अथवा पीठिका पर बैठाना । लेखक का सारा ध्यान केवल इसी बात में लगेगा कि जो तथ्य अथवा सत्य प्रभावोत्पादकता का मुख्य कारण बनाया जा रहा है, उसे ऐसी परिस्थिति के बीच में खड़ा किया जाए जो उसकी प्रकृति के सर्वथा अनुकूल हो । इसलिए ऐसी कहानियों में वह परिस्थिति होगी और प्रभावान्विति का कारण वह जीवन का सत्य होगा ।

कथानक का खण्डों में विभाजन - कहानियाँ प्राय: दो प्रकार की हुआ करती हैं- एक तो वह जिनका कथानक इतना छोटा होता है कि उसमें खण्डों की कोई आवश्यकता ही नहीं पड़ती, और दूसरी वे होती है जिनका कथानक बड़ा होता है । उनमें कई चित्र सन्निहित रहते हैं । ऐसी कहानियों को कई खण्डों में विभाजित करना ही उपयुक्त होता है । डॉ. जगन्नाथ प्रसाद शर्मा ने कथानक को खण्डों में विभाजित करने के चार आधारभूत सिद्धान्त बताए हैं-

(1) कथा के प्रवाह में काल के व्यवधान को सूचित करने के लिए ।

(2) दृश्य और स्थान के परिवर्तन का चित्र उपस्थित करने के लिए ।

(3) चरित्र की मानसिक वृत्तियों के उत्कर्षोपकर्ष को व्यंजित करने के लिए ।

(4) प्रभावान्विति को उत्तरोत्तर चुटीली बनाने के लिए ।

इनके अतिरिक्त कथानक को खण्डों में विभाजित करने के कुछ निम्नलिखित प्रयोजन और भी हो सकते हैं -

(5) कौतूहल और उत्सुकता जाग्रत बनाए रखने के लिए कथानक को परिच्छेदों में विभाजित करना बड़ा आवश्यक हो जाता है ।

(6) अधिक-से-अधिक विस्तृत घटना, चित्र या परिस्थिति को कम-से-कम शब्दों में व्यक्त करने की कामना से भी खण्ड विधान आवश्यक होता है ।

इस प्रकार हम देखते हैं कि कहानी की मार्मिक, संक्षिप्त और कलात्मक अभिव्यक्ति के लिए कथानक को खण्डों में विभाजित करना परमापेक्षित होता है ।

5.5.4 वस्तु विन्यास क्रम

सामान्यत: कथावस्तु का विन्यास आदि, मध्य और अन्त में रहता है । वास्तव में कहानी रचना विधान में यह तीन अंग ही सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण हैं । सफल कहानी में इन तीनों का समुचित सामंजस्य रहता है ।

आरम्भ - कहानी के आरम्भ करने के सैकड़ों प्रकार हो सकते हैं । कुछ प्रसिद्ध प्रकार निम्नलिखित हो सकते हैं -

(1) कुछ कहानियों का प्रारम्भ एक प्रकार की परिचयात्मक भूमिका से किया जाता है । इस परिचयात्मक भूमिका में पात्रों या परिस्थितियों का परिचय कराया जाता है । प्रेमचन्द की 'आत्माराम' कहानी इसका एक उदाहरण है ।

(1) कला के प्रवाह में काल के व्यवधान को सूचित करने के लिए ।

(2) दृश्य और स्थान के परिवर्तन का चित्र उपस्थित करने के लिए ।

(3) चरित्र की मानसिक वृत्तियों के उत्कर्षोपकर्ष को व्यंजित करने के लिए ।

(4) प्रभावान्विति की उत्तरोत्तर चुटीली बनाने के लिए ।

(5) कौतूहल और उत्सुकता जाग्रत बनाए रखने के लिए कथानक को परिच्छेदों में विभाजित करना बड़ा आवश्यक हो जाता है ।

(6) अधिक-से-अधिक विस्तृत घटना, चित्र या परिस्थिति को कम-से-कम शब्दों में व्यक्त करने की कामना में भी खण्ड विधान आवश्यक होता है ।

इस प्रकार हम देखते हैं कि कहानी की धार्मिक, संक्षिप्त और कलात्मक अभिव्यक्ति के लिए कथानक को खण्डों में विभाजित करना परमापेक्षित होता है ।

5.6 कहानी का शीर्षक

सामान्यत: कथावस्तु का विन्यास आदि, मध्य और अन्त में रहता है । वास्तव में कहानी रचना-विधान में यह तीन अंग ही सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण हैं । सफल कहानी में इन तीनों का समुचित सामंजस्य रहता है ।

आरम्भ - कहानी के आरम्भ करने के सैकड़ों प्रकार हो सकते हैं । कुछ प्रसिद्ध प्रकार निम्नलिखित हो सकते हैं -

(1) कुछ कहानियों का प्रारम्भ एक प्रकार की परिचयात्मक भूमिका से किया जाता है । इस परिचयात्मक भूमिका में पात्रों या परिस्थितियों का परिचय कराया जाता है । प्रेमचन्द को 'आत्माराम' कहानी इसका एक उदाहरण है ।

(2) कोरा परिचयात्मक प्रारम्भ - कुछ कहानियों में लम्बी-चौड़ी भूमिका तो नहीं होती किन्तु प्रारम्भ प्राय: पात्रों और परिस्थितियों के संक्षिप्त परिचय से किया जाता है । 'शतरंज के खिलाड़ी नामक कहानी में इसी प्रकार का आरम्भ देखने को मिलता है ।

(3) नवीन ढंग का आकस्मिक प्रारम्भ - इसमें किसी प्रकार का परिचय या भूमिका आदि नहीं होते । कहानी सहसा किसी समस्या को सामने रखकर प्रारम्भ कर दी जाती है । प्रेमचन्दजी की 'वैर का अन्त' शीर्षक कहानी ऐसी ही है ।

(4) कुछ कहानियाँ प्रकृति- चित्रण आदि से भी प्रारम्भ की जाती हैं । प्रसाद की प्रारम्भिक कहानियाँ प्राय: इसी प्रकार की हैं । 'चन्दा', 'ग्राम, रसिया नामक कहानियाँ इसी कोटि के प्रारम्भ से युक्त है ।

(5) दो पात्रों के नाटकीय कथोपकथन के सहारे - इस ढंग की कहानियों के उदाहरण के रूप में 'अघोरी का मोह' विशेष उल्लेखनीय है ।

(6) कुछ कहानियों का प्रारम्भ इतिवृत्तात्मक होता है । प्रेमचन्दजी की 'ईदगाह ऐसी ही कहानी है ।

(7) कौतूहलोत्पादक प्रारम्भ - कभी-कभी कहानी कौतूहलोत्पादक विवरणों के सहारे प्रारम्भ होती है । रामकृष्णदास की रमणी' नामक कहानी ऐसी ही है । आचार्य चतुरसेन की सूची नामक कहानी ऐसी ही है ।

इसी प्रकार कहानी को प्रारम्भ करने के और भी सैकड़ों प्रकार हो सकते हैं । कहानी चाहे किसी ढंग से प्रारम्भ की जाय, किन्तु उसके प्रारम्भ में निम्नलिखित विशेषताएँ होनी चाहिए -

(1) वह कलात्मक होना चाहिए ।

(2) वह नाटकीय होना चाहिए ।

(3) उसे पूर्ण कहानी पढ़ने की कौतूहलता और उत्सुकता जाग्रत करने की क्षमता रखने वाला होना चाहिए ।

(4) उसमें अनिर्वचनीय सौन्दर्य और रसात्मकता होनी चाहिए ।

मध्य या विकास - कहानियों में प्रारम्भ का जितना महत्त्व होता है, उतना ही महत्त्व मध्य का भी होता है । मैं तो मध्य का महत्व प्रारम्भ से भी अधिक मानता हूँ । कुछ कहानियों में मध्य से सम्बन्धित दो बातें होती हैं -

(1) मुख्य घटना या समस्या की उन्मुखता और परिवर्तन-बिन्दु, तथा

(2) संघर्ष का स्पष्ट स्वरूप

कुछ कहानियों में मध्य से सम्बन्धित तीन बातें होती हैं -

(1) समस्या प्रवेश की भूमिका

(2) समस्या का समावेश

(3) संघर्ष का स्पष्ट स्वरूप

कुछ कहानियों में विकास या मध्य के चार भाग होते हैं -

(1) समस्या का समावेश

(2) परिचय

(3) संघर्ष का -जन्म

(4) संघर्ष का 'स्वरूप या घात-प्रतिघात

कहानी के विकास में कहानीकार चाहे कितने भाग स्पष्ट करे किन्तु उसमें निम्नलिखित बातें अवश्य होनी चाहिए-

(1) कहानी के मध्य भाग का सम्बन्ध किसी समस्या या संघर्ष से अवश्य होना चाहिए ।

(2) उस संघर्ष या समस्या का प्रस्तुतीकरण बड़े कलात्मक ढंग से होना चाहिए ।

(3) यह भी ध्यान में रखना चाहिए कि कहानी. में संवेदना धीरे-धीरे स्पष्ट होती चले । कहानी के प्रति पाठक का औत्सुक्य प्रतिफल बढ़ता रहे ।

(4) कहानी की वस्तु का विकास प्रवाहपूर्ण ढंग से हो और उसकी रोचकता कहीं भी जरा सी क्षीण न होने पाये ।

अन्त - कहानी के विकास की यह अन्तिम अवस्था है । डॉ. जगन्नाथप्रसाद शर्मा के शब्दों में, 'जितना भी विवरण कहानी में प्रसारित रहता है, उसका सारा सौन्दर्य पुंजभूत होकर अन्त में आकर एक विशेष प्रकार की संवेदनशीलता को स्फुरित करता है । सिद्धान्त की दृष्टि से इसी को प्रभावान्विति और समष्टि प्रभाव माना जाता है ।

अन्त के भी दो पक्ष होते हैं - (क) चरम सीमा, और (ख) अन्त । कुछ कहानियों में केवल चरम सीमा भर होती है, अन्त अलग से नहीं होता । कुछ कहानियों में चरम सीमा और अन्त दोनों ही होते हैं ।

चरम सीमा - चरम सीमा कहानी का प्राण है । यह वह स्थल है जहाँ आकर प्रतिपाद्य संवेदना पूर्ण पर सम्बेद्य बन जाती है और पाठक मंत्रमुग्ध होकर रह जाता है । इसी स्थल पर पाठक का मन प्रभावान्विति से आप्लावित हो जाता है । कहानी-लेखक की बहुत बड़ी कला चरम सीमा की योजना में रहती है । कहानी का यही वह स्थल होता है जहाँ जाकर पाठक की समस्त जिज्ञासाएँ शान्त हो जाती हैं, किन्तु अच्छी चरम सीमा वह है जिसके बाद पाठक में कोई भावी

अनुभूति की आकांक्षा अवशिष्ट भी रह जाती है । कहानी की चरम सीमा नाटकीय और संक्षिप्त हो तो और भी अच्छा है ।

जिन कहानियों में चरम सीमा के साथ अन्त अलग से जुड़ा रहता है उसमें लेखक को अधिक सजग रहना पड़ता है । चरम सीमा और अन्त दोनों का निर्वाह सफल कलाकार ही कर पाते हैं ।

कहानी में कोई अन्त अवश्य होना चाहिए । यदि अन्त न हो तो उसके न होने का उपयुक्ता कारण भी होना चाहिए । किन्तु उसे चरम सीमा से अधिक आगे नहीं बढ़ना चाहिए और क्रमश: शिथिल पड़ जाना चाहिए ।

कहानी और मनोविज्ञान - कहानी-साहित्य के विकास के आरम्भ काल में कहानी का मनोविज्ञान से कोई घनिष्ठ सम्बन्ध नहीं समझा जाता था, किन्तु अब यह बात नहीं रही है । प्रेमचन्द के शब्दों में 'गल्प का आधार अब घटना नहीं, मनोवैज्ञानिक सत्य होता है । "आज लेखक कोई रोचक दृश्य देखकर कहानी लिखने जिसमें सौन्दर्य की झलक हो और उसके द्वारा वह पाठक की भावनाओं को सार्थक कर सके ।"

5.7 पात्र और चरित्र चित्रण

नाटक के प्रसंग में वर्णित आर्थर जीन्स का यह कथन कि, "किसी" अभिनेय कृति में कथानक, घटनाएँ, वातावरण जब तक कि वे से सम्बन्धित न हो, अपेक्षाकृत अबौद्धिक और लड़कपन लिये रहते हैं । " कहानी के सम्बन्ध में भी सत्य है । प्रत्येक कहानी में, चाहे वह किसी कोटि की क्यों न हो, चरित्र-चित्रण का बड़ा भारी महत्व है ।

दो चार कहानियों को छोड़कर शेष कहानियाँ में मानव-जीवन के ही किसी-न-किसी अंश के मार्मिक पक्ष का उद्घाटन रहता है । मानव-जीवन का कोई भी ऐसा अंश नहीं जिसमें किसी-न-किसी प्रकार का चारित्रिक सौन्दर्य न हो । जो कहानीकार इस चारित्रिक सौन्दर्य का उद्घाटन करने में समर्थ होते हैं, उनकी कहानी का बहुत सा स्वरूप भी शीर्षक से स्पष्ट हो जाता है । उपर्युक्त शीर्षकविहीन कहानी वैधानिक दृष्टि से पूर्ण होने भी उत्तम कहानी नहीं कही जा सकती । प्रेमचन्द जी ने तो घटना-प्रधान कहानियों में भी घटनाओं को पात्रों के चरित्रों के आश्रित ही बताया है । वे लिखते हैं - 'घटनाओं का कोई स्वतंत्र महत्व नहीं होता । उनका महत्व केवल पात्रों के मनोभावों को व्यक्त करने की दृष्टि से ही है । "

जीवन में हमें दो प्रकार के चरित्र दिखाई देते है - (1) वे जिनका चरित्र निर्विवाद रूप से किसी एक दिशा में झुका रहता है । (2) वे जिनके चरित्र के अन्तद्रन्द की प्रधानता रहती है । साहित्य-क्षेत्र में स्थिर चरित्र को विशेष महत्व नहीं दिया जाता है । उसमें तो अन्तर्द्वन्दों प्रधान चरित्रों का महत्त्व रहता है । इसका प्रमुख कारण यह है कि अन्तर्द्वन्दों प्रधान चरित्रों में सभी प्रकार के पाठकों के मनोरंजन की सामग्री रहती है. । अन्तर्द्वन्द्ध प्रधान पात्रों के चरित्र में एक गत्यात्मकता भी होती है । यह गत्यात्मकता ही उसे सौन्दर्य प्रदान करती है और ' पाठक के मन को आकृष्ट करती है । किन्तु व किन्तु के प्रसंग में यह नहीं भूलना चाहिए वह एक छोटी-सी रचना है । उसमें किसी भी पात्र के चरित्र की एक चलती हुई झलक होती है । पाश्चात्य आचार्य हडसन ने इस तथ्य को समर्थित करते हुए लिखा है- 'कहानी में चरित्र का उद्घाटन

मात्र किया जाता है । जबकि उपन्यासों में चरित्र का विकास दिखाया जाता है । " इसी प्रकार प्रेमचन्द ने भी कहा है कि, 'यह अपने चरित्रों के मनोभावों की व्याख्या करने नही बैठता, केवल उसकी तरफ इशारा भर करा देता है । "

इससे स्पष्ट है कि कहानीकार का कार्य उपन्यासकार की अपेक्षा कठिन होता है । कहानीकार को चरित्र-चित्रण में सदैव चरित्र के मूलभाव को पकड़कर विवृत करने का प्रयास करना चाहिए । चरित्र के मूल भाव के विवृत हो जाने पर चरित्र सम्बन्धी सूक्ष्मताओं का संश्लिष्ट चित्रण नहीं करना पड़ता । चरित्र के इस मूलभाव की अभिव्यक्ति भी अधिकतर कलापूर्ण नाटकीय शैली में हो तो और भी अच्छा है । चरित्रांकन की इस' नाटकीय शैली का स्वरूप क्या है, इसका स्पष्टीकरण करते हुए डॉ. जगन्नाथ प्रसाद शर्मा ने लिखा है - 'कहानी की सर्वाधिक प्रभावशाली और व्यवहारोपयोगी चरित्रांकन पद्धति वह होती है जिसमें नाटकीय विधि का उपयोग होता है । इस विधि के अनुसार संवादों के अन्तराल में पात्र स्वयं अपने सुख से अपने चरित्र के प्रकाशक विविध गुण, धर्मों, विचारो, अनुभूतियों, आशाओं, निराशाओं आकांक्षाओं आदर्शों अथवा अपनी रूचि, अरूचि, मंतव्यों और भावनाओं का विवरण उपस्थित करता है अथवा परिचय देता है । यहाँ वह अपने विषय में स्वयं बोलता है और अपने मंतव्यों का इस प्रकार कथन करता है कि उसके अन्तः करण का स्वयमेव और भली-भाँति उद्घाटित हो जाता है।"

यहाँ पर एक प्रश्न उठ सकता है कह यह कि चरित्र-चित्रण का आधार दृश्य जगत् होगा या मनोविज्ञानशास्त्र ? चरित्र-चित्रण का जो स्वर हमें साहित्य में मिलता है, वह यथार्थ होते हुए भी यथार्थ जाय से भिन्न होता है । साहित्य में यथार्थ जगत् की प्रत्येक बात कल्पना या भावना के माध्यम से आती है । कल्पना या भावना के माध्यम से चित्रित होने के कारण वह यथार्थ जगत् की सोते हुए भी यथार्थ जगत् से सर्वथा भिन्न हो जाती है । अत: हमें यथार्थ जगत् के साथ पात्रों के चरित्र-निर्माण में मनोविज्ञान शास्त्र को भी दृष्टि में रखना चाहिए ।

कहानी के चरित्र-चित्रण में एक बात पर ध्यान रखना चाहिए कि वह यह कि पात्रों की संख्या अधिक न हो, क्योंकि अधिक पात्रों को निभाना कठिन हो जाता है । कहानी अधिक विवरणात्मक हो जाती है । साथ ही बाह्य संघर्ष का वह रूप भी नहीं चित्रित करना चाहिए, जिसमें विरोधी प्रकृति के पात्रों का द्वन्द्व चित्रित हो । वास्तव में कहानी में केवल प्रमुख पात्र के चरित्र का चित्रण करते समय यह सदैव ध्यान रखना चाहिए कि उसके चरित्र के सहारे ही अन्य सहायक पात्रों के चरित्र के प्रमुख तत्वों की भी निवृत्ति होती जाय । अत: कहानी में प्रमुख पात्र का चरित्र चित्रण विशेष महत्त्व रखता है । चरित्र को अधिक-से-अधिक यथार्थ रूप देने का प्रयास करना चाहिए । इसके लिए कहानीकार को पात्रों की वेशभूषा, उनके रूपाकार तथा नाम, भाषा आदि का उनके चरित्र के अनुरूप ही विधान करना चाहिए । औचित्य और अनुरूपता न होने पर चरित्र-चित्रण पूर्ण और प्रभावात्मक नहीं हो सकता ।

5.8 संवाद

संवाद कहानी का प्राणदायक तत्त्व है । डॉ. जगन्नाथप्रसाद शर्मा के शब्दों में, 'यों तो जहाँ कहीं भी कहानी में इसका उपयोग किया जायेगा वहाँ अपने-अपने ढंग के परिणाम खिल उठेंगे । पर जहाँ इस तत्त्व का क्षिप्र और द्रूत प्रयोग कथा भाग को उत्कर्षोन्मुख करेगा वहाँ एक

प्रकार का विशेष चमत्कार दिखाई देगा । कहानी में जिस अंश में संवाद-सौन्दर्य निखरा मिलेगा वह अंश अपनी सम्पूर्ण शक्ति के साथ उमड़ पड़ेगा । यदि कहानी का आरम्भ लय और गतिशील, पर स्वाभाविक और औचित्यपूर्ण संवादों में किया गया है तो पाठकों का ध्यान उसी प्रकार केन्द्रित हो उठता है जैसे रंगमंच पर होने वाले किसी अभिनय की ओर ।"

कुछ आलोचक तो संवादों को कहानी का प्राण तक कह डालते हैं । ऐसे ही आलोचकों ने कहानी की परिभाषा देते हुए उसे 'संवादात्मक-चित्र-विधा तक कहा है ।

संवाद कहानी में कई कार्य करते हैं -

(1) पात्रों के चरित्र को उभारते हैं ।

(2) वर्णन में रोचकता और प्रवाह डालते हैं ।

(3) वे कथावस्तु को विकास की ओर ले जाते हैं ।

(4) कहानी को अधिक-से-अधिक परसंवेद्य बनाते हैं ।

(5) वे एक विशेष प्रकार का वातावरण निर्माण करने में समर्थ होते हैं ।

(6) कहानी में स्वाभाविकता लाते हैं ।

इन सब कार्यों का सम्पादन सफल संवादों से होता है । सफल संवादों में निम्नलिखित गुण होते -

(1) संवाद-देश, काल, पात्र, परिस्थिति, घटना, भाव आदि के अनुकूल होने चाहिए ।

(2) संक्षिप्त, ध्वन्यात्मक और अभिनयात्मक होने चाहिए ।

(3) तर्कयुक्त, कौतूहलोद्दीपक वक्रोक्ति-प्रधान, चुटीले और प्रवेगपूर्ण होने चाहिए ।

(4) संवाद पात्रों के चरित्रों को उभारने वाले और कथावस्तु के विकास में योग देने वाले होने चाहिए ।

(5) संवाद के मध्य में आवश्यक विराम, गति, यति आदि का उचित ध्यान रखना चाहिए।

(6) संवादों की प्रकृति ऐसी होनी चाहिए कि वे सक्रियता और सजीवता के साथ-साथ कहानी में एक अनिर्वचनीय सौन्दर्य विधान करने की क्षमता रखने वाले हों ।

(7) कहानी में स्वगतोक्तियों भाषणों और सिद्धान्त विवेचनों के लिए कोई स्थान नहीं होता।

5.9 स्थिति या वातावरण

कहानी में दृश्य जगत् को या जीवन की किसी एक घटना, परिस्थिति आदि का संवेदनात्मक और सजीव वर्णन होता है । कहानी में सजीवता और स्वाभाविकता लाने वाले तत्त्वों में वातावरण का बड़ा महत्त्वपूर्ण स्थान है । वातावरण से विरहित कहानी ठीक उसी तरह प्रभावहीन लगेगी जिस प्रकार दुष्यन्त और शकुन्तला का अभिनय करने वाले पात्रों का नग्न रंगमंच पर आकर अपने दिन-प्रतिदिन के कपड़ों में ही अभिनय करना लेशमात्र भी प्रभावोत्पादक नहीं होगा । अब प्रश्न यह है कि वातावरण से क्या तात्पर्य है? वातावरण वास्तव में दर्शक के मस्तिष्क पर पड़ने वाला वह प्रभाव है जो देश, काल और व्यक्ति की पारस्परिक अनुरूपता से उत्पन्न होता है ।

वातावरण के सामान्यतया तीन पक्ष हो सकते हैं - एक वह जो हमारी इन्द्रिय विशेष को प्रभावित कर उद्दीप्त करता है, दूसरा वह जो हमारी कृत्रिम सौन्दर्यानुभूति की वृत्ति की परितृप्ति करता है और तीसरा वह जो हमारी सच्ची सहानुभूति की वृत्ति को जाग्रत करता है ।

प्रत्येक कहानी में उपर्युक्त तीन प्रकार में से किसी-न-किसी प्रकार के वातावरण का निर्माण अवश्य रहना चाहिए । आजकल प्रथम प्रकार के वातावरण का निर्माण अवश्य रहना चाहिए । रीतिकालीन प्रवृत्तियों प्रभावित कहानियों में द्वितीय प्रकार के वातावरण की झाँकी मिलती है और उच्चकोटि की साहित्यिक और उदात्त भाव-सम्पन्न कहानियों में हमें तृतीय कोटि के वातावरण निर्माण की प्रवृत्ति दिखाई पड़ती है । पाश्चात्य विद्वानों ने केवल प्रथम दो प्रकार के वातावरणों की चर्चा की है । प्रथम को उन्होंने 'लोकल कलर' (Local Colour) और दूसरे को 'एटमासफियर' (Atmosphere) कहा है ।

5.10 भाषा और शैली

छोटी कहानियों की भाषा और शैली पर भी कलाकार को ध्यान रखना चाहिए । उसकी बहुत बड़ी सफलता इन दोनों पर अवलम्बित रहती है । शैली में सजीवता, रोचकता, संकेतात्मकता और प्रभावात्मकता का होना नितान्त आवश्यक होता है । इन विशेषताओं के लाने के लिए कुछ लेखक तो आलंकारिता लाने का प्रयत्न करते हैं और कुछ मुहावरों और लोकोक्तियों का प्रयोग । प्रसाद की शैली अपनी आलंकारिता के कारण सरस और प्रभावपूर्ण मालूम होती है । उनकी 'भिखारिन' कहानी से यह उदाहरण देखा जा सकता है ।

"जाह्नवी अपने बालू के कम्बल में ठिठुरकर सो रही थी । शीत कुहासा बनकर प्रत्यक्ष हो रहा था । दो-चार लाल धाराएँ प्राची के क्षितिज में बहना चाहती थीं ।

प्रेमचन्द की 'नशा' नामक कहानी में मुहावरों और लोकोक्तियों की छटा देखी जा सकती है। शैली की दृष्टि से कहानियाँ पाँच प्रकार की होती है -

(क) ऐतिहासिक- इस शैली में कहानी लिखने वाले अधिकतर अन्य पुरूष के रूप में कहानी लिखते हैं । उसमें इतिवृत्तात्मक घटनाओं को विशेष प्रश्रय दिया जाता है । प्रसाद की 'पुरस्कार' नामक कहानी इस शैली में लिखी गई है । उसके इस वाक्य से यह बात प्रकट होती है - 'मगध का एक राजकुमार अरूण अपने रथ पर बैठा हुआ बड़े कौतूहल से यह दृश्य देख रहा था ।

(ख) आत्मकथन- प्रधान शैली या प्रथम पुरूष-प्रधान शैली - बहुत-सी कहानियाँ स्वयं कहानी नायक के मुख से प्रथम पुरूष में कहलाई जाती है । उनको पढ़ते समय ऐसा प्रतीत होता है जैसे कोई परिचित पुरूष अपनी सच्ची गाथा कर रहा हो । प्रेमचन्द की 'शान्ति' नामक कहानी इसी शैली में लिखी गई है । उसका प्रारम्भ इस प्रकार हुआ है- 'जब मैं ससुराल आई तो बड़ी फूहड़ थी ।

(ग) संवादात्मक या कथोकथन प्रधान शैली - इस शैली में लिखी गई कहानियों में कथोपकथनों की ही प्रधानता होती है । हिन्दी में ऐसी कहानियाँ कम हैं ।

(घ) पत्रात्मक शैली - बहुत सी कहानियाँ पत्रों के उत्तर और प्रत्युत्तर के रूप में लिखी जाती है । बेचन शर्मा 'उग्र' ने इस शैली में 'चन्द हसीनों के खतूत' नामक प्रसिद्ध उपन्यास लिखा है । प्रेमचन्द की 'दो सखियाँ' नामक कहानी इसी शैली में लिखी गई

(ड) डायरी शैली - कुछ कहानी लेखक डायरी के पृष्ठों का ही वर्णन करके कहानी कह डालते हैं । प्रेमचन्द द्वारा लिखित 'मोटेराम शास्त्री' की डायरी के नाम से दो-तीन कहानियाँ लिखी गई हैं । किन्तु हिन्दी में इस ढंग की कहानियाँ कम हैं

5.11 उद्देश्य

कहानी का एक उद्देश्य भी होता है । वह मनोरंजन का एक प्रमुख साधन है सही, किन्तु मनोरंजन को हम उसका प्राण नहीं मान सकते । आजकल की छोटी कहानियों में अधिकतर किसी सत्य की- चाहे वह मनोवैज्ञानिक हो, धार्मिक हो, या और किसी प्रकार की हो - प्रतिष्ठा की जाती है । छोटी कहानी में सम्पूर्ण जीवन की व्याख्या तो नहीं की जा सकती, किन्तु जीवन के किसी पक्ष के प्रति एक विशेष दृष्टिकोण अवश्य प्रस्तुत किया जा सकता है । आजकल कुछ ऐसी कहानियाँ लिखी जाने लगी हैं, जिनका उद्देश्य किसी सत्य की प्रतिष्ठा न होकर पाठकों को केवल चरित्र वैचित्र्य में रमाना होता है । ऐसी कहानियाँ अधिकतर कलावादियों की होती हैं । जो लोग कला को जीवन के लिए मानते हैं, वे छोटी कहानियों में किसी सत्य खण्ड की प्रतिष्ठा अवश्य करते हैं । गुलेरीजी की 'उसने कहा था' कहानी का बहुत बड़ा महत्त्व इस बात पर भी निर्भर है कि उसमें प्रेम के आदर्श की प्रतिष्ठा की गई है । उसका मुख्य प्रतिपाद्य हमारी समझ में प्रेम में त्याग के महत्त्व और स्थान को संकेतित करना है । हमारी समझ में वह अपनी इसी विशेषता के कारण इतनी अधिक लोकप्रिय हो सकी है ।

5.12 साराश

कहानी आकार में छोटी एक गद्य विधा है जिसमें जीवन के किसी एक सत्य का उद्घाटन होता है । यह एक लोकप्रिय विधा है और आज के व्यस्त जीवन में इसकी उपादेयता असंदिग्ध है । कविता की तरह कहानी भी एक मुख्य विधा है । कहानी में जीवन के गहरे सत्य का उद्घाटन होता है । इस पाठ के माध्यम से आप कहानी के स्वरूप, संरचना, प्रकार और परिभाषा से परिचित होंगे । कहानी की तात्विक रचना व शिल्पगत स्वरूप को समझने में भी सहायता मिलेगी ।

5.13 संदर्भ ग्रन्थ

1. आज की हिन्दी कहानी - डी. धनंजय वर्मा
2. कहानी और कहानीकार - मोहन लाल जिज्ञासु
3. कहानी - नयी कहानी - नामवर सिंह
4. नई कहानी की भूमिका - कमलेश्वर
5. नयी कहानी : कथय और शिल्प - संतबख्श सिंह
6. नयी कहानी : दशा, दिशा और संभावना - डॉ. सुरेन्द्र

7. समकालीन हिन्दी कहानी : डॉ. अमर सिंह बधान
8. सचेतन कहानी : रचना और विचार - डॉ. महीप सिंह
9. स्वातंत्रयोत्तर हिन्दी कहानी में मानव प्रतिभा - डॉ. हेतु भारद्वाज
10. स्वातंत्रयोत्तर हिन्दी कहानी में सामाजिक परिवर्तन - भैरू लाल गर्ग
11. हिन्दी कहानी स्वरूप और संवेदना - राजेन्द्र यादव
12. हिन्दी कहानी उद्भव और विकास - डॉ. हेतु भारद्वाज
13. हिन्दी कहानियों का विवेचनात्मक अध्ययन - डॉ. ब्रह्मदत्त शर्मा
14. हिन्दी कहानी : उद्भव और विकास - सुरेश सिन्हा
15. हिन्दी कहानी. अंतरंग पहचान - रामदश मिश्र

5.14 बोध प्रश्न

1. कहानी की परिभाषा दीजिए ।
2. कहानी और उपन्यास में क्या अन्तर है? स्पष्ट कीजिए ।
3. कहानी के रचना विधान में कौन-कौन-से तत्त्व हैं?
4. कहानी के कथानक के विकास के क्या-क्या चरण होते हैं?
5. कहानी में पात्र या चरित्र का क्या महत्त्व है?
6. कहानी की संरचना में संवाद का क्या महत्त्व है?
7. वातावरण का क्या तात्पर्य है? कहानी में लेखक वातावरण का निर्माण किस प्रकार करता?
8. कहानी कितने प्रकार की होती है? उनके विभिन्न भेदों पर प्रकाश डालिए ।

इकाई - 6

उपन्यास का स्वरूप भेद तथा तत्त्व

इकाई की रूपरेखा

6.0 उद्देश्य

6.1 प्रस्तावना

6.2 परिभाषा

6.3 स्वरूप

6.4 उपन्यास के भेद

6.4.1 तिलस्मी, जासूसी अय्यारी प्रधान उपन्यास

6.4.2 ऐतिहासिक उपन्यास

6.4.3 सांस्कृतिक उपन्यास

6.4.4 सामाजिक उपन्यास

6.4.5 आंचलिक उपन्यास

6.4.6 मनोवैज्ञानिक उपन्यास

6.4.7 प्रवाहवादी उपन्यास

6.5 उपन्यास का रचना विधान

(उपन्यास के तत्त्व)

6.5.1 कथावस्तु

6.5.2 चरित्र चित्रण

6.5.5 कथोपकथन

6.5.4 वातावरण

6.5.5 उद्देश्य अथवा जीवन दर्शन

6.6 सारांश

6.7 संदर्भ ग्रन्थ

6.8 बोध प्रश्न

6.0 उद्देश्य

1. विद्यार्थियों को उपन्यास विधा का सामान्य ज्ञान देना ।
2. विद्यार्थियों को उपन्यास के स्वरूप से परिचित करना ।
3. विद्यार्थियों को उपन्यास की परिभाषाओं का ज्ञान देना -
   - (i) पाश्चात्य विद्वानों द्वारा दी गयी
   - (ii) भारतीय विद्वानों द्वारा दी गयी
4. विद्यार्थियों को उपन्यास के भेद स्पष्ट करना ।

5. विद्यार्थियों को उपन्यास के इन प्रकारों से परिचित कराना -
   (i) तिलस्मी, जासूसी, अय्यारी प्रधान उपन्यास
   (ii) ऐतिहासिक उपन्यास
   (iii) सांस्कृतिक उपन्यास
   (iv) सामाजिक उपन्यास
   (v) आंचलिक उपन्यास
   (vi) मनोवैज्ञानिक उपन्यास
   (vii) प्रवाहवादी उपन्यासी
6. विद्यार्थियों को उपन्यास के रचना विधान से परिचित कराना ।
7. विद्यार्थियों को उपन्यास के इन तत्त्वों का परिचय देना -
   (i) कथावस्तु
   (ii) पात्र या चरित्र चित्रण
   (iii) कथोपकथन
   (iv) वातावरण
   (v) उद्देश्य या जीवन दर्शन

6.1 प्रस्तावना

शास्त्रीय दृष्टि से उपन्यास शब्द की व्याख्या करें तो पता चलता है कि उपन्यास शब्द संस्कृत की 'अस्' धातु से उत्पन्न हुआ है जिसका अर्थ है रखना या असुक्षेपण ।'उप और 'नि' पूर्वक 'अस्' धातु में धम् प्रत्यय जोड़ने से ही उपन्यास शब्द बना है । उप का अर्थ है समीप और न्यास का अर्थ है थाती-इसका तात्पर्य हुआ मनुष्य के निकट रखी हुई वस्तु । इस दृष्टि से उपन्यास ऐसी रचना को कहा जा सकता है जिसे पढ़कर पाठक को वास्तविक जीवन की समीपता का बोध हो । इस व्याख्या के आधार पर हम कह सकते हैं कि ऐसी रचना जिसे पढ़कर लगे कि यह तो हमारी ही है, इसमें हमारे जीवन का प्रतिबिम्ब है तथा यह हमारी ही भाषा में की गयी है । आधुनिक युग में उपन्यास शब्द का प्रयोग एक विधा विशेष के लिए होता है ।

यों उपन्यास शब्द का प्रयोग भरत ने 'नाट्यशास्त्र' में किया है - प्रतिमुख संधि के एक उपभेद के रूप में करते हुए इसे उपपत्तिकृतोहयार्थ' तथा 'प्रसाधनम्' कहा है कि अर्थात किसी अर्थ की युक्तिपूर्ण ढंग से उपस्थित करने वाला तथा प्रसन्नता प्रदान करने वाला । अत: यह हमारे लिए नया शब्द नहीं है तथा गुणाढच की वृहत्कथा', 'पंचतंत्र बौद्धजातक कथाएँ जैसी कृतियाँ तक इस सूत्र के अनुसार उपन्यास कही जा सकती है क्योंकि ये पाठक को प्रसन्नता भी प्रदान करती ही है । अंग्रेजी के 'नावेल' के तत्त्व भी हिरोडोटस में पाये जा सकते हैं । किन्तु उपपत्तिकृतित्व और प्रसादनत्व दोनों गुणों की रक्षा करते हुए भी आज उपन्यास शब्द का प्रयोग बहुत व्यापक अर्थ में किया जा सकता है ।

6.2 परिभाषा

उपन्यास आधुनिक युग की उपज है - उस युग की जिसमें व्यक्ति का महत्व समष्टि से कहीं अधिक बढ़ गया है, बाहरी संसार से आन्तरिक संसार को अधिक प्रमुखता दी जाने लगी है । इसलिए उपन्यास का स्वरूप बहुत लचीला हो गया है । जरूरी नहीं कि उसमें कथानक हो । आवश्यक नहीं कि घटनाएँ हों, आवश्यक नहीं कि पात्र वास्तविक जीवन के हों । उसकी कहानी एक दिन की भी हो सकती है, एक वर्ष की भी और एक युग की भी । कथा उत्तम पुरूष में भी कही जा सकती है और अन्य पुरूष में भी । अंग्रेजी में हार्डी कृत 'मेयर ऑफ कैस्टर ब्रिज' तथा जॉन आस्टिन की 'प्राइड एण्ड प्रैज्यूडिस' जैसी सुसंगठित और कसी हुई कृतियाँ उपन्यास भी हैं तो जेम्स ज्वायस कृत यूलीसिस तथा मार्शल पुस्तकें 'एलाचर्च दुताप्येर्दू जैसी स्वच्छंद प्रवाह में लिखी कृतियाँ भी उपन्यास है । हिन्दी में देवकी नंदन खत्री की 'चन्द्रकांता संतति' भी उपन्यास है तो प्रेमचंद की 'सेवासदन' भी उपन्यास है, धर्मवीर भारती का 'सूरज का सातवां घोड़ा' भी उपन्यास है तो हजारों प्रसाद द्विवेदी कृत 'बाणभट्ट की आत्मकथा' भी उपन्यास है ।

वस्तुत: उपन्यास वास्तविक मानव जीवन की काल्पनिक कथा है । इसीलिए प्रेमचंद ने कहा, 'मैं उपन्यास को मानव जीवन का चित्रमात्र समझता हूँ । मानव चरित्र पर प्रकाश डालना और उसके रहस्यों को खोलना ही उपन्यास का मूल तत्त्व है ।' 'न्यू इंगलिश डिक्शनरी' में उपन्यास की परिभाषा देते हुए कहा गया है- 'वृहत् आकार गद्य आख्यान या वृतान्त जिसके अन्तर्गत वास्तविक जीवन के प्रतिनिधित्व का दावा करने वाले पात्रों और कार्यों को कथानक में चित्रित किया जाता है ।'

अंग्रेजी के 'नावेल' को गुजराती में 'नवल कथा' मराठी में 'कादम्बरी' तथा बंगला और हिन्दी में उपन्यास कहते हैं । 'हिन्दी विश्वकोश' में उपन्यास शब्द के इतने अर्थ दिये गये हैं - (1) वाक्य का उपक्रम या बात का आरम्भ होना, (2) वाक्य का प्रयोग, (3) विचार (विश्वजन्ममिमपुण्यमुपन्यासं निबोधत - मनु. 9:31) (4) प्रस्ताव, (5) दान, (6) उपनिधि धरोहर, (7) उपकथा, किस्सा । नाट्यशास्त्र में उल्लिखित प्रतिमुख सन्धि का एक उपभेद भी 'उपन्यास' कहलाता है ।

परन्तु उपन्यास शब्द 'नावेल' के लिए इतना रूढ़ हो गया है कि इसके अन्य शाब्दिक अर्थ तथा नाट्यशास्त्रीय अर्थ लुप्त हो गये हैं ।

उपन्यास शब्द सामान्यत: सम्पूर्ण कथा साहित्य के लिए (फिक्शन) प्रस्तुत होता है । यूरोप में अठारहवीं शताब्दी तक उपन्यास सामान्य कथा साहित्य के लिए प्रयुक्त होकर भी अपनी अर्थव्याप्ति में रोमांस' को भी सम्मिलित कर लेता था । साहित्य और जीवन में चार तरह के सम्बन्धों की कल्पना की जा सकती है - असम्भव, दुर्लभ, सम्भव, सुलभ । रोमांस प्रथम दो तरह के सम्बन्धों पर ही आधारित होता है । जबकि उपन्यास में अंतिम दो तरह के सम्बन्धों पर अधिक बल दिया जाता है । रोमांस काव्य में भी लिखे जाते थे जबकि उपन्यास तो सिर्फ

गद्य में लिखे जाते हैं । क्लारारीव ने उपन्यास तथा रोमांस का अंतर इस प्रकार स्पष्ट किया है -

'उपन्यास अपने युग का चित्रण करता है । रोमांस उदात्त भाषा में उसका वर्णन करता है, जो न घटित है और न घटमान । उपन्यास दैनिक जीवन की घटनाओं का सम्बन्ध बतलाता है जो हमारे मित्रों तथा हमारे जीवन में सम्भव हों । उपन्यास की सफलता इसमें है कि प्रत्येक दृश्य इस सरलता और स्वाभाविकता के साथ प्रस्तुत हो और उसे इतना सामान्य बनाया जाय कि उसकी वास्तविकता में विश्वास हो जाय, कम से कम जब तक हम उसे पढ़ते रहें । यहाँ तक कि पात्रों के सुख-दुःख से हम वैसे ही प्रभावित हों, मानो वे हमारे अपने ही हैं । '

उपन्यास की विद्वानों ने अनेक परिभाषाएँ दी हैं । प्रेमचंद द्वारा दी गई परिभाषा हम ऊपर दे आये हैं । हम कतिपय पाश्चात्य और भारतीय विद्वानों द्वारा प्रदत्त उपन्यास की परिभाषाएँ दे रहे हैं -

एवेल चेवेल - उपन्यास 'निश्चित आकार वाला गद्य रूप आख्यान है । '

अर्नेस्ट ए. बेकर - 'उपन्यास को हम गद्यमय कल्पित आख्यान के माध्यम से की गई जीवन की व्याख्या कह सकते हैं । "

एडिथ हाटन - "उपन्यास एक ऐसा कल्पित आख्यान है जिसमें सुन्दर कथानक और भली प्रकार चित्रित पात्र होते हैं । "

बोल्फर्ट - 'उपन्यास सक्रिय मानव जीवन की भाषा में भावों का गद्यानुवाद है । यह गद्यानुवाद इतना यथार्थ होना चाहिए कि उससे पाठकों का आत्मज्ञान बढ़े । "

बेवस्टर - "उपन्यास एक ऐसा कल्पित विशालकाय तथा गद्यमय आख्यान है, जिसमें एक ही कथानक के अन्तर्गत यथार्थ जीवन का प्रतिनिधित्व करने वाले पात्रों और उनके क्रिया-कलापों का चित्रण रहता है । "

देवकीनंदन खत्री ने उपन्यास की परिभाषा नहीं दी पर उन्होंने यह लिखकर 'चन्द्रकान्ता सत्तति के प्रसंग से स्पष्ट कर दिया कि उपन्यास का कथानक कौतूहलवर्धक और मनोरंजक होता है-

"कुछ दिन की बात है कि मरे मित्रों ने संवाद-पत्रों में इस विषय का आन्दोलन उठाया था कि इसका (संतति का) कथानक सम्भव है या असम्भव । मैं नहीं समझता कि इस बात क्या उठाई और बढ़ाई गई । जिस प्रकार पंचतंत्र और हितोपदेश बालकों की शिक्षा के लिए लिखे गए हैं उसी प्रकार ये लोगों के मनोविनादे के लिए । 'चन्द्रकान्ता' में जो बातें लिखी गई हैं, वे इसलिए नहीं लिखी गई कि लोग उसकी सच्चाई-झुठाई की परीक्षा करें, प्रस्तुत इसलिए कि उसका पाठ कौतूहलवर्द्धक है । "

अज्ञेय का मत है - "उपन्यास व्यक्ति के अपनी परिस्थितियों के साथ सम्बन्ध की अभिव्यक्ति के उत्तरोत्तर विकास का प्रतिनिधित्व करता है ।"

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने उपन्यास की कड़ी विशद परिभाषा दी है - "उपन्यास वस्तुत: ही नवल अर्थात् नया और ताजा साहित्यांग है, परन्तु फिर भी जिस मेधावी ने कथा,

आख्यायिका आदि शब्दों को छोड़कर अंग्रेजी नाविल का प्रतिशब्द उपन्यास माना था, उसको सूझ की प्रशंसा किये बिना नहीं रहा जा सकता । जहाँ उसने इस नये शब्द के प्रयोग से यह सूचित किया है कि साहित्यांश मुरली कथाओं और आख्यायिकाओं से भिन्न जाति का है, वहाँ इसके शब्दार्थ के द्वारा (उप-निकट, समीप; न्यास = रखना) यह भी सूचित किया है कि इस विशेष साहित्यांश द्वारा ग्रन्थकार पाठक के निकट अपने मन की कोई विशेष बात, कोई अभिनव मत रखना चाहता है । इसलिए यद्यपि यह शब्द पुरानी परम्परा के प्रयोग के अनुकूल नहीं पड़ता, तथापि इसका प्रयोग उपन्यास की विशिष्ट प्रकृति के साथ बिल्कुल बेमेल नहीं कहा जा सकता है । "

6.3 स्वरूप

उपन्यास की ऐसी परिभाषा देना तो कठिन है जो उसके व्यापक स्वरूप को समाहित कर सके तथापि व्यापक दृष्टि से कह सकते हैं कि उपन्यास -

1. गद्य-साहित्य का एक अन्यतम रूप है,
2. उसका आधार कोई न कोई कथा होती है, कथा चाहे मनुष्यों की हो या मनुष्येतर प्राणियों की, वास्तविक हो या कल्पित, वर्तमान की हो या भूतकाल की,
3. यथार्थ और कल्पना के योग से रंजित होता है,
4. कथा प्रवाह में कौतूहल तथा पाठक के मनोरंजन अथवा मन के उद्वेलन के तत्त्व विद्यमान रहते हैं,
5. मनुष्य के जीवन की गम्भीर समस्याओं का चित्रण है,
6. कथा परोक्ष रूप से मानव मूल्यों की स्थापना या रक्षा करती है,
7. जीवन का वृहत्तर रूप प्रस्तुत करता है ।

देखा जाए तो उपन्यास यथार्थ जीवन की गद्य में लिखी प्रतिच्छाया है ।

6.4 उपन्यास के प्रकार

मानव जीवन बहुत विशाल और व्यापक है इसलिए उसे प्रतिच्छायित करने वाला उफ्न्यास भी अनेक प्रकार का हो सकता है । उपन्यास के प्रकार कई आधारों पर निर्धारित किये जा सकते है-

कथाकाल के आधार पर : पौराणिक उपन्यास, ऐतिहासिक उपन्यास, सांस्कृतिक उपन्यास, समसामयिक उपन्यास आदि।

मानवीय भावों के आधार पर : साहसिक कथानक वाले उपन्यास, रहस्य प्रधान उपन्यास, जासूसी, तिलस्मी, अय्यारी, भूत-प्रेतों की कथाओं वाले उपन्यास, काल्पनिक कथा वाले उपन्यास आदि ।

उपन्यास के तत्त्वों के आधार पर : घटना प्रधान उपन्यास, चरित्र प्रधान उपन्यास । घटना प्रधान उपन्यास भी अनेक प्रकार के हो सकते हैं जैसे ऐतिहासिक उपन्यास और काल्पनिक उपन्यास ।

चरित्र प्रधान उपन्यास भी मोटे रूप में दो प्रकार के हो सकते हैं - सामाजिक उपन्यास और मनोवैज्ञानिक उपन्यास । सामाजिक उपन्यास भी सामाजिक, धार्मिक, राजनैतिक, वैज्ञानिक, आंचलिक आदि अनेक प्रकार के हो सकते हैं ।

मनोवैज्ञानिक उपन्यासों में मनोविश्लेषणवादी, विकृत मानसिकता वाले पात्रों पर आधारित उपन्यास हो सकते हैं ।

शैली के आधार पर : शैली के आधार वर्णानात्मक, विवरणात्मक, पत्रात्मक, डायरी शैली में लिखित, मुक्त प्रवाह शैली में लिखित, चित्रात्मक, आत्मकथात्मक उपन्यास आदि ।

विभिन्न प्रकारों के उपन्यासों का संक्षिप्त परिचय निम्नलिखित कोटियों में रखकर दिया जा रहा है-

6.4.1 तिलस्मी, जासूसी. अय्यारी प्रधान उपन्यास

सुगठित कथा वाला ऐसा उपन्यास जो पाठक को आद्यंत बाँधे रहे तथा कथा के विकास के साथ पाठक की मनोभावनाओं को उद्दीत करता चले, इस कोटि में रखा जा सकता है । इन उपन्यासों में रहस्य बना रहता है और पाठक रहस्य जानने के लिए उत्सुक बना रहता है । पश्चिम में पो. कानन डायल, एडगर वैलेस आदि के नाम जासूसी उपन्यास क्षेत्र में बहुत प्रसिद्ध रहे हैं । आर्थर कानन डायल का शरलक होम्स पात्र (जासूस) तो स्वयं लेकर से भी अधिक लोकप्रिय हुआ । हिन्दी में गोपालराम गहमरी ने जासूसी उपन्यासों और कहानियों की परम्परा को समृद्ध किया । ठाकुरदत्त मिश्र का 'छिपा महल' तथा राजेश्वर प्रसाद का 'महान अपराधी प्रसिद्ध जासूसी उपन्यास हैं तथा दुर्गाप्रसाद खत्री के रक्त मंडल', सफेद शैतान', 'प्रतिशोध तथा 'लाल पंजा' नामक चार उपन्यास भी बहुत प्रसिद्ध हुए । किन्तु हिन्दी में जासूसी उपन्यासों के लेखन की परम्परा की साहित्यिक दृष्टि से बहुत सम्मानजनक नहीं माना गया, इसलिए इन उपन्यासों को फुटपाथी साहित्य कहकर उपेक्षित किया गया । आधुनिक युग में युगलकिशोर पाण्डे, ओमप्रकाश शर्मा, कर्नल रंजीत आदि के नाम जरूर लिये जाते हैं किन्तु इनके उपन्यासों का साहित्यिक महत्त्व नहीं है ।

यूनानी शब्द 'टेलिस्मान' से तिलस्म शब्द बना है जिसका अर्थ है इन्द्रजाल, जादू अलौकिक कारनामे । जिस उपन्यास में आश्चर्यजनक कारनामों की भरमार हो, पात्रों के लिए कुछ भी करना आवश्यक न हो, जहाँ पात्र अपनी चमत्कारिक शक्तियों के बल पर मौत की घाटी तक को पार कर लें तथा बलशाली क्रूर पात्रों का भी नाश कर दें, सारी विघ्न बाधाओं को पार कर सुरक्षित निकल आएँ, उन्हें तिलस्मी उपन्यास कह सकते हैं । देवकीनन्दन खत्री का 'चन्द्रकान्ता सन्तति तथा किशोरी लाल गोस्वामी का 'लखनऊ की कब्र' उपन्यास श्रेष्ठ तिलस्मी उपन्यास है । 'चन्द्रकान्ता सन्तति की लोकप्रियता तो इसी से प्रमाणित है कि इस उपन्यास को पढ़ने के लिए उस काल में लोगों ने हिन्दी सीखी । उसका वीरेन्द्र सिंह देखने में निरीह, कमर झुकी हुई, बुढ़िया, पर आफत की पुड़िया, लकलका बेहोश कर देने वाली दवा, जरा से संकेत पर बोलने लगने वाली तथा तलवार चलाने लगने वाली पत्थर की मूर्तियाँ, पलक मारते ही पैरों के नीचे खुल पड़ने वाली सुरंग जल्दी भूलने वाली चीजें नहीं हैं । 'लखनऊ की कब्र में ऐसे

पत्र हैं जो दिन में सफेद रहें, रात में पढ़े जा सकें, 'मास्टर की जो सब तालों को खोल सके, सुरंग और जेबी खजानों की भरमार है । मनुष्य की शक्तियाँ सीमित हैं, पर वह अपने को सर्वसमर्थ देखना चाहता है । उपन्यास के पात्रों को इस तरह सर्वशक्ति सम्पन्न, अलौकिक कर्मदक्ष देखकर पाठक अप्रत्यक्ष रूप में ही सही, पर अपनी ही शक्ति के विस्तार का दर्शन करता है और उसके हृदय की किसी माँग की पूर्ति होती है । इधर लोगों की रूचि बदली जरूर है और लोगों में यथार्थवादी दृष्टिकोण का उदय हुआ है, परन्तु इससे तिलस्मी उपन्यासों के प्रचार में कमी नहीं होगी, कारण कि ये किसी गहरी और मौलिक माँग पर आधारित है ।

किशोरीलाल गोस्वामी के गुलबहार 'कुसुम कुमारी जैसे ऐतिहासिक उपन्यासों में भी तिलस्म का खूब रंग है । इन उपन्यासों का ऐतिहासिक महत्त्व है । 'चन्द्रकान्ता संतति' पर तो टी.वी. सीरियल बन चुका है जो बहुत लोकप्रिय भी हुआ । बच्चों के लिए भी बनाये गये'शक्तिमान' जैसे सीरियल इसी कोटि में आते हैं ।

अय्यार वे लोग कहलाते थे जो अपने स्वामी के कहने से असम्भव तथा असाधारण कार्यों को करने के लिए निकलते थे । इनके लिए कोई भी कार्य असम्भव नहीं था । ये भी वैसे तिलस्मी उपन्यास की कोटि में ही आते हैं ।

इस प्रकार के उपन्यासों में चमत्कार प्रदर्शन, कुतुहलवृद्धि, जादू घटना-संयोग का वैचिच्वय, प्रेम-प्रसंग, मिलन की उत्सुकता, विरह की व्याकुलता, कथानक की जटिलता, चरित्र संघटन तथा सुखाना की प्रवृति है । किशोरीलाल गोस्वामी के 'स्वर्गीय कुसुम' में तिलस्मी घर, लवंगलता में गोल तिलस्मी कमरा, प्रणयिनी परिणय', 'कटे मुँह की दो-दो बातें' में तिलस्मी शीशमहल की तिलस्मी कथाएँ प्राप्त है । उनका प्रभाव देवकीनन्दन खत्री के 'चन्द्रकान्ता' और 'चन्द्रकान्ता सन्तति, 'नरेन्द्र मोहिनी', 'कुसुमकुमारी', वीरेन्द्रवीर', देवीप्रसाद शर्मा उपाध्याय के सुन्दर सरोजिर्ना, जगन्नाथ प्रसाद चतुर्वेदी के बसन्तमालती, देवीसहाय शुक्ल के दृष्टान्तप्रदीपनी, 'जादूभरी बातें' तथा 'भयानक भेड़िया', 'प्रवीण पथिक', प्रमीला में स्पष्ट प्रकट है । उपन्यास कला की दृष्टि से चन्द्रकान्ता हिन्दी का प्रथम साहित्यिक उपन्यास है । काशीनाथ शर्मा के चतुर सखी और विजयानन्द त्रिपाठी के सच्चा सपना (अनूदित) में भी तिलस्म का चमत्कार है ।

इन उपन्यासों का महत्त्व मनोरंजन की दृष्टि से बहुत है । राजेन्द्र यादव ने देवकीनन्दन खत्री के 'चन्द्रकान्ता संतति' उपन्यास के सांस्कृतिक महत्त्व को स्वीकार करते हुए लिखा है । 'खत्री जी के ये सारे तिलिस्मी चमत्कार, ये आदर्शवादी, परम-नीतिवान न्याय-प्रिय सत्य-निष्ठावान राजा और राजकुमार, परियों जैसी खूबसूरत और अबला नारियाँ या बिजली की फुर्ती से जमीन आसमान एक कर डालने वाले ऐय्यार सब एक खूबसूरत स्वप्न के ही प्रक्षेपण हैं.... आस-पास फैली ठीक इसकी उलट दुनिया से बच निकलने के चोर दरवाजे.... या पलायन द्वार । मगर हिन्दी के शास्त्रीय समीक्षक जब इसको सही ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में या अन्वेषकीय दृष्टि से न देखकर सिर्फ सपाट ढंग से इसकी रोचकता, या इसमें आई भारतीय. गरिमा की भूरी-भूरि प्रशंसा करते हैं तो तरस ही आता है । शायद ही कोई सोचता हो कि कहीं

कौन सा झूठ भारी पड़ गया है कि सारी स्थितियाँ, सारे चरित्र इतने उथले, इकहरे, निर्जीव और निष्प्राण हो गये हैं । काश, खत्रीजी आसपास से इस तरह ऑखें न फेर, नैतिक और सांस्कृतिक मूल्यों की द्वन्हात्मक कशमकश को सीधे या तिरछे ढंग से ला पाते जो बदलते समाज की सचाई थी । हो सकता है तब इन चरित्रों में कहीं कुछ गहराई आ पाती और वे तिलिस्मी पुतलों की तरह खुद भी पुतले न लगते जिनके बटन या डोरियाँ खत्रीजी के हाथ में हैं..... क्योंकि खत्रीजी सचमुच हिन्दी के वे पहले व्यक्ति हैं जिन्होंने समय की इस अनिवार्यता को गंभीरता से पकड़ा कि उपन्यास औद्योगिक सभ्यता की ही उपज है और पुराने-नये मूल्यों के द्वन्द्व से ही उसका जन्म होता है । ' (अठारह उपन्यास, पृ. 55)

6.4.2 ऐतिहासिक उपन्यास

इतिहास उपन्यास रचना के लिए बहुत महत्वपूर्ण स्रोत है । किन्तु इतिहास को आधार बनाकर उपन्यास की रचना एक चुनौतीपूर्ण कार्य है क्योंकि एक ओर इतिहास की रक्षा जरूरी है तो दूसरी ओर उपन्यास की साहित्यिक कलावस्तु की रक्षा । उपन्यास इतिहास का अन्धानुकरण नहीं हो सकता किन्तु ऐतिहासिक उपन्यास में कल्पना भी अनियंत्रित नहीं हो सकती । वस्तुत: इतिहास और उपन्यास दोनों की प्रकृति ही भिन्न है अत: दोनों को एक साथ साधना एक कठिन कार्य अवश्य है । ऐतिहासिक उपन्यास लिखने के लिए एक सतर्क और जागरूक प्रतिभा की आवश्यकता होती है । पश्चिम में सर वाल्टर स्कॉट तथा अलैक्जेंडर ड्यूमा जैसे लेखकों को ही ऐतिहासिक उपन्यास लिखने में सफलता मिली ।

हिन्दी में ऐतिहासिक उपन्यास लेखन की परम्परा किशोरीलाल गोस्वामी के 'कुसुम कुमारी' से आरम्भ मानी जा सकती है । किन्तु यह शुद्ध ऐतिहासिक उपन्यास नहीं है क्योंकि इसमें एक ऐतिहासिक और सच्ची घटना को आधार बनाकर कथासूत्र विकसित किया गया है । इस दृष्टि से सेठ गोविन्ददास का 'इन्दुमती' ऐतिहासिक उपन्यास है किन्तु यह भी पूरी तरह ऐतिहासिक उपन्यास नहीं है क्योंकि इस कृति में कांग्रेस के आन्दोलन का तिथिवार वर्णन है और व्यक्तित्व महिमा की स्थापना अधिक है । ऐतिहासिक उपन्यास की स्थिति को गरिमामय और गम्भीर बनाने का श्रेय वृंदावन लाल वर्मा को दिया जा सकता है । इसका कारण यह है कि उन्होंने इतिहास का गहन अध्ययन कर अपने उपन्यासों की आधारभूमि तैयार की । उन्होंने अपने उपन्यासों में इतिहास के प्रति वफादारी की रक्षा की है । उनके 'गढ़ कुंडार', 'विराट की पद्मिनी', 'झाँसी की रानी', 'मृगनयनी' आदि उपन्यास इतिहास की रक्षा करते हुए कलात्मक कृतियों के रूप में पाठक को प्रभावित करते हैं । उन्हीं की परम्परा में प्रतापनारायण श्रीवास्तव का बेजारा क । आँसू तथा रांगेय राघव का 'मुर्दों का टीला' उपन्यास आते हैं । ऐतिहासिक उपन्यासकारों में आचार्य चतुरसेन शास्त्री 'वैशाली की नंगरवधू, 'वयं रक्षाम: 'सोमनाथ' जैसे उपन्यासों में इतिहास सत्य के स्थान पर इतिहास रस के साथ साहित्य रस को मिलाकर उपन्यासों की रचना करते हैं । अमृतलाल नागर का 'सुहाग के नूपुर' तथा यशपाल का 'दिव्या' उपन्यास भी इसी कोटि में आते हैं । इधर ऐतिहासिक उपन्यासों की धारा क्षीण हो चली है ।

6.4.3 सांस्कृतिक उपन्यास

जैसे आचार्य चतुरसेन मानते हैं कि साहित्य रस (भाव रस) तथा इतिहास रस को मिलाकर भी उच्च कोटि के ऐतिहासिक उपन्यास की रचना की जा सकती है । ऐतिहासिक उपन्यासकार का काम इतिहास का सूखा वितान खड़ा करना नहीं होता बल्कि उसे उपन्यास में ढालने के लिए प्राण-प्रतिष्ठा भी करनी पड़ती है । इसी बात को आगे बढ़ा दें तो सांस्कृतिक उपन्यास का स्वरूप उभरकर आ जाएगा । हजारीप्रसाद द्विवेदी के बाणभट्ट की आत्मकथा, चारूचन्द्रलेख, 'पुनर्नवा' उपन्यासों की कथाओं के स्रोत इतिहास में मिल जाते हैं पर वे इन कृतियों के माध्यम से इतिहास चक्र को प्रस्तुत करना नहीं चाहते बल्कि इन कृतियों से सम्बद्ध युगों के सांस्कृतिक परिदृश्य को प्रस्तुत करते हैं । यद्यपि अमृतलाल नागर के 'मानस का हँस' तथा 'खंजन नयन' उपन्यास इतिहास के पात्रों को केन्द्र में रखकर लिखे गये हैं पर ये दोनों ही उपन्यास सांस्कृतिक उपन्यास ही है, ऐतिहासिक नहीं । इसी तरह उनका 'एकदा नेमिशरण्ये उपन्यास तो पूरी तरह सांस्कृतिक उपन्यास ही कहा जाएगा ।

6.4.4 सामाजिक उपन्यास

वास्तव में वर्ण्यवस्तु की दृष्टि से उपन्यास के दो ही भेद हो सकते हैं - सामाजिक उपन्यास और ऐतिहासिक उपन्यास । ऐसे उपन्यास 'की कल्पना भी नहीं की जा सकेती जिसमें समाज का चित्रण न हो इसलिए ' सामाजिक उपन्यास ' एक व्यापक ' 'प्रत्यय है क्योंकि इसमें ही वैयक्तिक उपन्यास (जैसे अज्ञेय शेखर : एक जीवनी) पारिवारिक उपन्यास (जैसे प्रेमचंद सेवा सदन और जेनेन्द्र कुमार क परख) पौराणिक उपन्यास (जैसे भगवतिसरण वर्मा का चित्रलेखा तथा नरेंद्र कोहली का महासमर) भावना प्रधान उपन्यास (जैसे प्रसाद का कंकाल प्रेमचंद का रंगभूमि)ग्रामीण जीवन पर आधारित उपन्यास (जैसे रेणु का मैला अचल) शहरी जीवन से संबंधित उपन्यास (जैसे मोहन राकेश का अंधेरे बंद कमरे)

हर युग के समाज मे जीवन को परिचालक करने वाली अनेक समस्याएँ और शक्तियाँ होती हैं जिनसे जुड़ना उपन्यास के लिए बहुत जरूरी है । जैसे जैन आस्टिन का प्रसिद्ध उपन्यास 'प्राइड एण्ड प्रेज्युडिस' एक पारिवारिक उपन्यास कहा जा सकता है क्योंकि उसमें एक सुखी पारिवारिक जीवन की कथा कही गयी है । किन्तु यह उपन्यास केवल एक परिवार की कथा भर नहीं है क्योंकि जब जेन आस्टिन ने अपने इस उपन्यास की रचना की वे बड़ी उथल-पुथल के दिन थे - फ्रांस की राज्यक्रांति के, नेपोलियन के उत्थान और पतन के, साम्राज्यों के उत्कर्ष और अपकर्षों के जिनका आभास हमें इस पारिवारिक उपन्यास में भी हो जाता है भले ही जेन आस्टिन का उद्देश्य एक परिवार की कथा कहना ही रहा हो । प्रेमचंद का सेवा सदन' उपन्यास तो एक पारिवारिक समस्या को लेकर लिखा गया है पर आगे चलकर यह व्यापक सामाजिक जीवन की समस्याओं को समाहित करने लगता है । हर उपन्यासकार को सामाजिक समस्याओं से जूझना पड़ता है । हिन्दी के आरम्भिक उपन्यास सुधारवादी दृष्टि से लिखे गये अत: उनमें वृद्धि विवाह, बाल विवाह, विधवा विवाह, छुआछूत, अंधविश्वास जैसी समस्याओं को उठाया गया । किन्तु समाज भी सेवायें बदलता रहता है और उपन्यासकार का दृष्टिकोण भी । वस्तुत: समाज कोई एक आयामी इकाई नहीं होती और न उपन्यासकार का व्यक्तित्व ही सरल या

एक आयामी । इन दोनों के अन्त: सम्बन्धों से उपन्यास की संरचना भी जटिल हो जाती है । इस सम्बन्ध में डी. देवराज उपाध्याय का यह कथन महत्वपूर्ण है ।

'लेखक समाज की हाँ में ही मिलाने वाला निष्क्रिय पदार्थ नहीं होता, उसका अपना व्यक्तित्व होता है और वह अपने विशिष्ट दृष्टिकोण से सामाजिक समस्याओं का विचार करता है । अत: सब कुछ होते हुए भी समाज का यथातथ्य चित्रण उपन्यास में नहीं आ सकता । सामाजिक व्यक्ति जीवन से अधिक जीत रहते हैं, अत: औपन्यासिक जीवन से कुछ अधिक होगा या कम अधिक इस अर्थ में कि उसमें लेखक के मत में जो समस्याएँ महत्त्वपूर्ण हैं उनके सम्बन्ध में लम्बे-लम्बे वाद-विवाद आ जायेंगे तथा अनेक अवान्तर प्रसंगों का भी समावेश हो सकता है, कम इस अर्थ में कि जिनसे कथा की प्रगति में कुछ भी योग न मिलता हो तथा जिनसे जीवन से भी अधिक जीने वाले पात्रों या घटनाओं का यथातथ्यता नहीं आ सकी हो और जिन बातों से लेखक का तात्कालिक सम्बन्ध न हो उन्हें छोड़ा जा सकता है ।"

इस दृष्टि से प्रेमचन्द का 'गोदान' सामाजिक उपन्यास का श्रेष्ठ उदाहरण है । इस उपन्यास में अनेक तरह की समस्याएँ एक साथ छेड़ी गयी हैं - ग्रामीण जीवन, शहरी जीवन, स्त्रियों के समानाधिकार, स्त्री शिक्षा, मुक्त प्रेम सम्बन्ध, जमींदारी प्रथा, किसानों का शोषण आदि । आज समाज बहुत बदल गया है, उसकी समस्याएँ भी दूसरी तरह की हो गयी हैं तो उपन्यास का ढाँचा भी बदल गया है । मैला आंचल, रागदरबारी, सूरज का सातवाँ घोड़ा, जुगलबंदी, अलग-अलग वैतरणी, बूंद और समुद्र, तमस, झूठा सच, मुरदाघर, आधागाँव सूरजमुखी अंधेरे के, आपका बंटी, पहला गिरमिटिया आदि से लेकर कलिकथा वाया बाईपास, शेष कादम्बरी, समय सरगम, आवा तक लिखे गये उपन्यास जहाँ उपन्यास की विकास यात्रा का चित्रण करते हैं वहीं समाज के बदलते स्वरूप का भी । हम इन उपन्यासों के माध्यम से सामाजिक जीवन के बदलते स्वरूपों का भी परिचय पा सकते हैं ।

6.4.5 आंचलिक उपन्यास

आंचलिक उपन्यास की अवधारणा फणीश्वरनाथ रेणु' के मेला आंचल उपन्यास के प्रकाश के साथ ही हिन्दी में आई । रेणु हिन्दी में विशिष्ट तरह के कथाकार हैं । उनके उपन्यासों की भावना पर छायावादी कवि सुमित्रानंदन पंत की कविताओं की भावना का बहुत प्रभाव है । यह प्रभाव 'मैला आंचल की भाषा पर स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है । शीर्षक 'मैला आंचल ही पन्त की कविता 'भारत माता ग्रामवासिनी' से लिया गया है जिसमे वे भारत माता का 'धुल भरा मैला सा आंचल' कहते है। 'मैला आंचल' एक ओर उपन्यास के परम्परागत ढांचे को तोडता है तो दूसरी ओर उपन्यास को क नया आयाम प्रदान करता है ।

यह उपन्यास इस रूप में विशिष्ट है कि यह एक आंचल विशेष के समग्र जीवन को चित्रित करता है। यहाँ ना कोई पात्र प्रमुख है न कोई सहायक, न कोई घटना केन्द्रीय है न सहायक। यहाँ तो पूरे आंचल के जीवन का स्पंदन ही सब कुछ है। बिहार के पूर्णिया जिले का मेरीगंज गाँव और उसके आस पास का जीवन, प्रकृति, लोक जीवन, पर्व, उत्सव, त्यौहार, गरीबी, उल्लास और सभी कुछ है इस उपन्यास में। इसलिए इसे आंचलिक उपन्यास कहा गया है। इस उपन्यास

के विषय में नेमिचन्द्र जैन का यह कथन इस उपन्यास कि पूरी प्रकृति को स्पष्ट कर देता है ।

"मैरीगंज पुरैनिया अथवा पूर्णिया जिले का एक छोटा सा गाँव है जिसमें तिरहुत के प्राकृतिक सौंदर्य के बीच, धान के लहलहाते खेतों, कमलों से भरे हुए सरोवरों-पोखरों और ताड़ के वनों के साथ कमला नदी के किनारे, उत्तरी भारत के अन्य सहस्त्र गांवों की भांति, जीवन अपनी परिचित गति से चलता रहता है। महायुद्ध और देशव्यापी स्वाधीनता आंदोलन की लहरों ने यहाँ के जीवन में कम्पन पैदा नही किया हो, यह बात नही । पर आधुनिक जीवन से मेरीगंज का पूरा और वास्तविक संपर्क तब होता है, जब वहां मलेरिया संबंधी अनुसंधान के उद्देश्य से डॉक्टर प्रशांत एक अस्पताल खोलने के लिए आता है । अचानक ही मानो उसे गाँव के समाजिक, राजनीतिक, मानसिक, आध्यात्मिक जीवन की अनगिनत तहें खुल पड़ती है । लगता है जैसे बहुत दिनों से रूका हुआ प्रवाह एकाएक मार्ग पाकर हहराता हुआ दोड़ पड़ाहो । देहात की ऊपर से दौड़ने वाली स्थिरता और शांति, बल्कि जड़ता तथा निष्क्रयता, जैसे नष्ट हो जाती है । मैला आंचल के लेखक ने इस विक्षुब्ध जिन्दगी के ही बहुत से स्तर, बहुत, बहुत से पहलू इस उपन्यास में प्रस्तुत किए हैं । और यही नहीं, ये तमाम स्तर और इस प्रकार कितने ही भिन्न-भिन्न दृष्टि बिन्दुओं सें दिखाए गए हैं कि जीवन एक साथ, एक किश्तों में हमारे सामने प्रस्तुत होता है, बहुत कुछ चलचित्र की भाँति, समग्र अलग और अलग-अलग भी, दूर से भी और समीप से भी ।"

किन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि आंचलिक उपन्यास की श्रेणी में केवल वही उपन्यास आते जीवन से सम्बन्ध रखते हों । उदयशंकर भट्ट के 'सागर, लहरें और मनुष्य ' आंचलिक उपन्यास की श्रेणी में रखा गया है जिसमें मछुवारों की जिन्दगी गार्जुन के 'बलचनमा भी आंचलिक उपन्यास माना गया । रागदरबारी' (श्री गाँव (राही मासूम रजा), मुरदाघर (जगदम्बा प्रसाद दीक्षित), कत तक आदि उपन्यासों को भी आंचलिक उपन्यासों की कोटि में ही रखा गया है।जगदम्बा प्रसाद दीक्षित का उपन्यास 'मुरदाघर एक महानगर की किसी गली के जीवन रता है । अजित कुमार की यह टिप्पणी भी यह संकेत करती है कि 'मुरदाघर' एक सफल आंचलिक उपन्यास है ।

'यह उपन्यास एक रोचक' विषय में हमारे कुतूहल को रूग्ण या अस्वस्थ ढंग से नहीं उभारता बल्कि जीवन की जिस कड़वी सच्चाई के प्रति हम अपनी आँखें सुख से मूंदे हुए थे, उसे हमारे लिए ही सही, हमारा वर्ग-चरित्र बदल देता है । पोपट का ओकिन वह मध्यवर्गीय जीवन के सुख सुविधा विलास प्रधान देता है । साथ ही, यह उपन्यास शिक्षित सम्पन्न पाठक वर्ग को जिस शर्म और अपराध की भावना से भर देता है, वह कोई फैशनेबिल चीज नहीं, न आत्म-दया ही है । इसी लिहाज से, उपन्यास में हर जगह मौजूद गलियों को भी मैं ठीक बल्कि जरूरी समझता हूँ । सिर्फ इतना ही नहीं कि जिन पात्रों या जिस स्तर के पात्रों का चित्रण उपन्यास में है, उनकी सहज बोलचाल गालियों से भरी होती है, अगर हम गौर करें कि वह ऐसी क्यों होती है तो यह समझना मुश्किल न होगा कि भुखमरी, बेरोजगारी, गिरफ्तारी पिटाई वगैरह

के खिलाफ उनके पास गाली के सिवाय और कुछ भी तो नहीं होता । गाली देने के अलावा वे और कर भी क्या सकते है । गाली उनके जिस उबलते हुए गुस्से, मजबूरी या निष्फलता का प्रतीक है, उसे हम ध्यान में, रखें, तो, जाहिर हो जाएगा कि पैसे वालों को मन्द-मन्द मुस्कान, नजाकत- नफासत और मीठी मुलायम बातचीत इन्सानियत के लिए कही बडी और अश्लील गोली होती, है । जिन्दगी की असली सड़ाँध और दुर्गन्ध यहाँ है, न कि मैना, वशीरन पोपट, राजू या रोजी के इर्द-गिर्द । बदशक्ल कौन है? जूठन बीनकर खाते बच्चे या ह्रिसकी मुर्गे चखते हुए धनी मानी? मुरदाघर पढने के बाद किसी के भी लिए यह कोरा सैद्धांतिक प्रश्न नहीं बना रह सकता ।

6.4.6 मनोवैज्ञानिक उपन्यास

जीवन, में मनुष्य दो स्तरों पर जीता है- स्थूल और सूक्ष्म यों भी कह सकते है कि मनुष्य के दो रूप होते है क्रियारत मनुष्य तथा विचारगत मनुष्य । क्रियागत मनुष्य का जीवन सामान्यत:, बाहरी होता हैं तथा वह असम्भव कार्यों को भी निष्पक्ष कर सकता है जैसे पौराणिक कथाओं में मनुष्य हिमालय को भी हिला सकता है तो पुराने तिलस्मी उपन्यासों में पात्र हवा में भी तैर सकता है । किन्तु जब मनुष्य, विचारस्त होता है तो उसका आन्तरिक जीवन या मन:लोक सामने आता है। यही मनुष्य का असल रूप होता है । उपन्यास के विकास के साथ-साथ हम देखते हैं कि उपन्यास का क्रियारत मनुष्य धीरे-धीरे विचाररत होता गया है और इस विचाररत मनुष्य का चित्रण भी उपन्यास करता है उसे मनोवैज्ञानिक उपन्यास कह सकते हैं। बाह्य से आंतरिक के इस अभियान में उपन्यास को चार सोपानों को पर करना पडता है-

1. औपाख्यानिक उपन्यास जैसे मुंशी ईशा अल्ला खां की रानी केतकी की कहानी।
2. कथा संघटित जैसे चन्द्रकान्ता संतति, भूतनाथ ।
3. आत्मनिष्ठ उपन्यास जैसे प्रेमचंद का सेवा सदन ।
4. मनोवैज्ञानिक उपन्यास जैसे जैनेन्द्र का त्यागपत्र अज्ञेय का शेखर : एक जीवनी।

मनुष्य के अन्तर्जगत में तरह-तरह के विचारों का उत्कर्ष-अपकर्ष, संघर्ष-विसंघर्ष, कशमकश, रस्साकशी, विचारमंथन चलता रहता है और उसकी बाहरी क्रियाएँ इन्ही संघातों के स्थूल रूप होते हैं अर्थात् वे अन्त: क्रियाएं उसके बाहरी व्यवहार को प्रभावित करती है पहले मनुष्य की बाहरी क्रियाओ को उपन्यासों में महत्त्व दिया जाता था किन्तु वर्तमान युग में मनुष्य के मनोजगत की यात्रा ही उपन्यास का प्रमुख कथ्य बन गयी । अंग्रेजी में मेरिडीथ और हेनरी जेम्स ने मनोवैज्ञानिक

उपन्यासों को लेखन का परम्परा का सूत्रपात किया जबकि हिन्दी में जैनेन्द्र और अज्ञेय थे। पत्रों के चित्रण में जब सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक अध्ययन और विश्लेषण किया जाता है तो इन्ही चरित्र प्रधान उपन्यासों को मनोवैज्ञानिक उपन्यास कहा जाता है । आधुनिक काल में मनोविज्ञान के अनेक नये-नये सिद्धांत प्रतिपादित हुए हैं जिनमें फ्रायड का यौन और स्वप्न सिद्धांत तथा ' और युंग का मनोविश्लेषण सिद्धांत । इस दृष्टि से कुछ मनोवैज्ञानिक उपन्यास ऐसे हैं जिनमें कामवासना को प्रधानता देकर उसी के आधार पर मनुष्य की अन्तश्चेतना के

रहस्य का उद्घाटन किया जाता है । ऐसे उपन्यास का केन्द्रीय भाव तो प्रेम ही होता है किन्तु उसमें शारीरिक यौन क्रियाओं और वासनामूलक भावों का अधिक चित्रण होता है । कई चित्रणों में विकृति या अश्लीलता भी आ जाती है । कुछ उपन्यासों में काम वासना से इतर दमित वासनाओं को उभारकर मानस ग्रंथियों को खोलने का प्रयास किया जाता है इन्हें मनोविश्लेषणवादी उपन्यास भी कहा जा सकता है । मनोविश्लेषणवादी उपन्यास कभी-कभी मनोविज्ञान विशेषज्ञों के अध्ययन जैसे होते हैं जिनमें कथा की रोचकता का अभाव होता है । हिन्दी में इलाचन्द्र जोशी के 'जहाज का पंछी' जैसे उपन्यास इसी कोटि में आते हैं । यशपाल ने भी कुछ उपन्यासों में (दादा कामरेड, बारह घंटे आदि में) यौन सम्बन्धों का खुला चित्रण किया है ।

मनोवैज्ञानिक उपन्यासों में लेखक प्रमुख रूप से तीन पद्धतियों का उपयोग करता है - 1. पूर्व दीपित पात्र पूरी कथा की स्मृति तरंगों से जोड़कर प्रस्तुत करता है जैसे अज्ञेय के 'नदी के द्वीप' नरोत्तमनागर के 'दिन के तारे' आदि में । 2. चेतना प्रवाह पद्धति कथा का अनिश्चित रूप से विकास जैसे अज्ञेय के 'शेखर : रूक जीवनी' प्रभाकर माचवे के 'परन्तु' में, होता है । 3. कथा सूत्रों की अवहेलना उपन्यास में कोई कथा होती ही नहीं जैसे गीतांजलि श्री के 'हमारा शहर उस बरस' उपन्यास में अखबारी खबरों के द्वारा उपन्यास रचा गया है ।

मनोवैज्ञानिक उपन्यासों में घटनाक्रम की संघटना पर लेखक उतना बल नहीं देता जितना पात्रों के मानसिक संघर्ष के चित्रण पर देता है । डॉ. देवराज उपाध्याय के अनुसार मनोवैज्ञानिक उपन्यास में ये बातें प्राय: मिल जाती 'है ।

1. सुसंघटित कथावस्तु का अभाव, 2. लम्बी-चौड़ी, दीर्घकालीन कथा का अभाव । 'नदी के द्वीप' में डेढ़ बरस की कथा है, पहाड़ी के 'सराय' और 'निर्देशक' में क्रमश: एक और तीन महीनों की कथाएँ हैं, 3. पात्रों की संख्या में कमी, 4. वार्तालाप की अधिकता, 5. वर्णनात्मकता से अधिक नाटकीयता की प्रगति और, 6. पाठक की प्रतिक्रिया जो अन्य उपन्यासों के पाठक से भिन्न होती है । साधारण उपन्यासों का पाठक उपन्यासकार के मुख की ओर देखेगा, परन्तु मनोवैज्ञानिक उपन्यास के पाठक की दृष्टि उपन्यास के पात्रों की तरफ होगी ।

6.4.7 प्रवाहवादी उपन्यास

कुछ लोगों का मानना रहा कि जीवन तो आकस्मिक और असम्बद्ध घटनाओं का मेला है । यहा कहीं आदि मध्य और अन्त नहीं है । यहाँ कुछ भी निश्चित नहीं है । सब कुछ प्रवाहमय है और हो रहा है । विधाता ने कहीं भी अपनी सृष्टि को समाप्त स्पर्श नहीं दिया है । यहाँ सब कुछ शतृ-प्रत्ययान्त है निष्ठा प्रत्ययान्त नहीं । उपन्यासकार सामान्यत: अपने पूर्वग्रहों के आलोक में उपन्यास की रचना है इस तरह वह जीवन की सच्ची अभिव्यक्ति नहीं करता । जब सृष्टि में ही कुछ पूर्व निर्धारित नहीं है तो उपन्यास में ही पहले कुछ तय कैसे हो सकता है । व्यावहारिक बाह्य जगत की कार्यकारणता को हटाकर आन्तरिक विचारजगत की अनुक्रमता की प्रतिष्ठा हुई और चेतना प्रवाही उपन्यास का जन्म हुआ जो एक तरह से दिवास्वप्नमग्न मस्तिष्कोत्पन्न साहसिक उपन्यासों का ही रूप है ।

डॉ. देवराज उपाध्याय ने प्रवाहवादी उपन्यासों के विषय में लिखा है - 'चेतना प्रवाह मनोविज्ञान का शब्द है जिसका प्रयोग सर्वप्रथम विलियम जेम्स ने करते हुए कहा था, 'चेतना छोटे-मोटे टुकड़ों में विभक्त होकर उपस्थित नहीं होती, वह प्रवाहमयी होती है । ' मिस सिन्क्लेयर ने मिस डोरोथी रिचार्डसन के उपन्यास की आलोचना करते हुए 1915 में इस शब्द का प्रयोग किया था । तभी से आलोचना के क्षेत्र में भी इसका धड़ल्ले से प्रयोग होने लगा है । इस पद्धति का प्रयोग जेम्स ज्वायस के सुलिसिस नामक उपन्यास तथा वरजिनिया बुल्फ के द्वारा हुआ है ।

हिन्दी में प्रभाकर माचवे का 'परन्तु' इसका उत्कृष्ट उदाहरण है । पर अज्ञेय, जैनेन्द्र तथा भगवतीप्रसाद वाजपेयी के (चलते-चलते) उपन्यासों में भी इस पद्धति का प्रयोग मिलता है । इसमें स्वगतोक्तियों की भरमार रहती है और चेतना के उस स्तर के भावों की अभिव्यक्ति की जाती है जो अभी शाब्दिक रूप धारण नहीं कर पाये हैं । अत: यहाँ की भाषा व्याकरण के नियमों की पाबन्दी से मुआ है । इसका सबसे प्रसिद्ध उदाहरण जेम्स ज्वायस के युलिसिस ' के अन्तिम 50 पृष्ठ हैं जिनमें कहीं कोई विरामचिन्ह नहीं, भाषा की बोधगम्यता की कोइ परवाह नहीं, भाषा तात्कालिक भावोन्मत के दबाव के कारण गढ़ ली गयी है । नाटकों को स्वगतोक्तियाँसविकल्पक एवं शाब्दिक भावों की अभिव्यक्ति करती है और वे श्रोता तरी अवस्थिति मानकर ही अपने स्वरूप का निर्माण करती है । परन्तु प्रवाहवादी साहित्य की स्वगतोक्तियाँ चेतना के उस स्तर के भावों को अभिव्यक्त करती है जहाँ उन्होंने अभी शाब्दिक क रूप धारण नहीं कर पाया है । साथ ही वे किसी श्रोता के सुनने के लिए नहीं लिखी जाती है अत: दोनों दो प्रकार की चीजें हैं । एक की स्वगतोक्ति ही कहकर रूक जाते हैं, पर दूसरे 'को आन्तरिक स्वगतोक्ति कहकर पार्थक्य प्रकट किया जाता है ।

इनके अतिरिक्त उपाख्यानात्मक उपन्यास, धार्मिक उपन्यास, वैज्ञानिक उपन्यास, समसामयिक उपन्यास आदि अनेक प्रकार के उपन्यास हो सकते हैं ।

6.5 उपन्यास का रचना विधान

उपन्यास के तत्त्व

'तत्व शब्द से तात्पर्य है वह उपकरण अथवा घटक जो किसी वस्तु के निर्माण में सहायक हो । उपन्यास के तत्त्व वे घटक हैं जिनके द्वारा उपन्यास का संघटन होता है । उपन्यास निम्नलिखित हैं- कथावस्तु, पात्र और चरित्र चित्रण, कथोपकथन, वातावरण, भाषा-शैली और उद्देश्य ।

6.5.1 कथावस्तु

कथावस्तु उपन्यास का मेरूदण्ड है और कथावस्तु का आधार होती है कथा । कथावस्तु और कथा परस्पर भिन्न होती है । कथा में काल क्रमानुसार घटनाओं का वर्णन होता है । कथावस्तु भी घटनाओं का कथन है, किन्तु इसमें निहित रहस्य पर अधिक बल रहता है । श्रीनारायण अग्निहोत्री के अनुसार राजा मरा और उसके बाद रानी मर गई यह कथा है । राजा मरा और

शोक से रानी मर गई' यह कथावस्तु है । (देखें - उपन्यास तत्त्व एवं रूप विधान, पृ- 12 यह विचार उन्होंने ई.एम. फॉस्टर से ग्रहण किया है ।)

कथा का प्राण है उत्सुकता और कथा वस्तु का जिज्ञासा । कथा में हमारा ध्यान होता है 'आगे क्या हुआ', पर कथावस्तु में हमारा ध्यान होता है - 'ऐसा क्यों हुआ ?' ई.एम. फॉस्टर के मतानुसार संयोगाश्रित घटनावली का श्रृंखलाबद्ध नियोजन कथावस्तु कहलाता है- (ऐस्पेक्ट्स ऑफ दि नॉविल पृ. 116)

कथावस्तु में कथा की घटनाओं को संयोजित किया जाता है । कथावस्तु की घटनाओं में सामंजस्य होता है, उनमें उचित अनुपात होता है । एक घटना दूसरी घटना से निकलती प्रतीत होती है । संघटन के अभाव में घटनाएँ कथा बन सकती हैं, पर- कथा-वस्तु नहीं । अत: कथा-वस्तु से अभिप्राय है घटनाओं का कुशल संघटन ।

कथा-वस्तु के गुण

कथा-वस्तु में संघटन-कौशल के साथ उसमें कुछ और गुण भी अपेक्षित हैं-

(1) **सम्बद्धता :** जिस प्रकार अनियंत्रित भीड़ को गोष्ठी का नाम नहीं दिया जा सकता, इसी प्रकार घटनाओं के जमघट को कथा-वस्तु नहीं कहा जा सकता । चुनाव के उपरान्त घटनाओं को सुसम्बद्ध करने की आवश्यकता पड़ती है । घटनाओं की पारस्परिक सम्बद्धता के अभाव में कथा-वस्तु की श्रृंखला टूट जाती है और कथा की प्रभावात्मकता को ठेस पहुँचती है ।

(2) **मौलिकता :** जिस कथा-वस्तु में जितनी मौलिकता होती है, उस कथा-वस्तु का महत्त्व भी उसी अनुपात में बढ़ जाता है । कथा में विषय की नवीनता का होना अपने आप में आकर्षक होता है, किन्तु वर्णन का ढंग अवश्यमेव नवीन होना चाहिए । मानव सुलभ अनुभूति को अधिक विस्तार और सूक्ष्मता से अभिव्यक्त करने की योग्यता मौलिकता को जन्म देती है ।

(3) **सत्यता :** उपन्यास में सत्यता का गुण अथवा तत्त्व पाठकों में रचना के प्रति विश्वास जायज करता है । साहित्य में सत्य से अभिप्राय है ऐसा चित्रण जो मानव-जीवन के आधार पर किया गया हो । भले ही कथा में वर्णित नाम, दिनांक एवं स्थान आदि वास्तविक न हों, किन्तु उसमें जो कुछ प्रस्तुत किया गया हो, वह मानव जीवन पर आधारित हो । घटनायें मानव स्वभाव अथवा मनुष्य के चरित्र के अनुसार विकसित हों । साहित्य का सत्य मानव जीवन के परम लक्ष्य को समझने और समझाने का प्रयास करता है । उदाहरण के लिए मनुष्य को भलीभाँति जीने -पत्री प्रेरणा देने वाला दृष्टिकोण जीवन का सत्य है । जीवन का सत्य मानव मात्र का एकता, पारस्परिक स्नेह, त्याग, बलिदान आदि का संदेश देता है ।

(4) **रोचकता :** यद्यपि साहित्य के सभी रूपों का उद्देश्य मनोरंजन होता हैं, किन्तु उपन्यास तो विशेष रूप से मनोरंजन प्रधान होता है । अत: उपन्यास की कथावस्तु में रोचकता का गुण होना आवश्यक है । रोचकता के लिए कौतूहल और नवीनता अपेक्षित है । आकस्मिक और अप्रत्याशित को भी उपन्यास में स्थान मिलना चाहिए । अप्रत्याशित

ऐसा जो कार्य कारण श्रृखंला से बाहर न हो, पर पाठक की कल्पना से बाहर हो । रोचकता के लिए न तो ब्यौरे की आवश्यकता है और न उसकी उपेक्षा की ।

6.5.2 चरित्र चित्रण

उपन्यास में चरित्र चित्रण सर्वाधिक महत्वपूर्ण तत्व है, क्योंकि मनुष्य का अस्तित्व और उसकी पहचान उसके चरित्र में ही है । चरित्र द्वारा मनुष्य के व्यक्तित्व को माना जा सकता है । चरित्र में मनुष्य का बाह्य तथा आभ्यन्तर दोनों समाहित होते हैं । बाह्य में मनुष्य का आकार-प्रकार,वेशभूषा, आचार-विचार, रहन-सहन, चाल-ढाल, बातचीत के विशेष ढंग (तकियाकलाम सम्बोधन आदि) और कार्यकलाप भी आ जाते हैं । आभ्यन्तर इन सब बातों द्वारा अनुमेय होता है । पात्र के आभ्यंतर का चित्रण उसके बाह्य के चित्रण की तुलना में अधिक कठिन होता है । उसकी बाहरी परिस्थितियों के प्रति संवेदनशीलता, उसके राग-विराग, उसकी महत्त्वाकाक्षाएँ, उसके अन्धविश्वास, पक्षपात, मानसिक संघर्ष, दया, करूणा, उदारता आदि मानवीय गुण अथवा नृशंसता, क्रूरता, अनुदारता आदि दुर्गुण सभी बातों का चित्रण रहता है । चरित्र-चित्रण - विश्लेषणात्मक और नाटकीय दोनों रीतियों से किया जा सकता है । पात्रों का चरित्र-चित्रण चाहे जिस रीति अथवा शैली से किया जाय, उसमें अनुकूलता, संगति और स्वाभाविकता अवश्य होनी चाहिए । उपन्यासकार को चाहिए कि पात्रों की प्रकृति के अनुकूल उनको चलने दें । उनके चरित्र से जैसा कार्य विकसित हो सके, उनसे वैसा ही काम लेना चाहिए । चरित्र चित्रण में संगति होना भी आवश्यक है । चरित्र को बिना कारण बदलना भी उचित नहीं है । पात्र उपन्यासकार के हाथ की कठपुतली न बन जाय । उनके चरित्र का परिवर्तन परिस्थितियों के अनुसार होना चाहिए । चरित्र-चित्रण के गुणों में स्वाभाविकता भी आवश्यकता है । उपन्यास में पात्रों का आचार व्यवहार वैसा होना चाहिए जैसा कि वास्तविक जीवन में होता है । ऐसा न होने से चरित्र चित्रण में अस्वाभाविकता का दोष आ जाएगा ।

6.5.3 'कथोपकथन

पात्रों के परस्पर वार्तालाप को संवाद अथवा कथोपकथन कहा जाता है । इसका सम्बन्ध कथावस्तु तथा पात्र दोनों से है । पात्रों के व्यक्तित्व के उद्घाटन और कथा क्रम के विकास के लिए इसका उपयोग किया जाता है । कथोपकथन परिस्थिति और पात्र के पात्र के अनुकूल न होने से उसमें अस्वाभाविकता आ जाती है । कथोपकथन में परिस्थिति के अनुकूल गांभीर्य, ओज अथवा माधुर्य आदि गुण होने चाहिए । इसमें सार्थकता एवं संक्षिप्तता के गुण भी अभीष्ट हैं ।

6.5.4 वातावरण

उपन्यास में चित्रित मानव स्वतंत्र इकाई के रूप में नहीं होता । उपन्यास में मानव के चरित्र चित्रण के साथ वातावरण का चित्रण के रूप में आवश्यक है । वास्तव में कथा के सभी तत्त्वों कथा-वस्तु, चरित्र चित्रण, उद्देश्य, भाषा-शैली और देशकाल का मिला-जुला साथ होता है. वातावरण की परिभाषा देते हुए श्री प्रखर लिखते हैं ।

"कथानक की गतिविधि, पात्रों का व्यक्तित्व कहानी का देशकाल (अर्थात् वह जिस स्थान पर और जिस समय घटना होती हुई बताई गई है), कहानी की भाषा और शैली तथा कहानीकार के उद्देश्य को पाठक तात्कालिक रूप में अर्थात् कहानी पढ़ते-पढ़ते जिस प्रक्रिया द्वारा ग्रहण करने की चेष्टा करता है, उस प्रक्रिया का नाम वातावरण है । '

(श्री लालचन्द्र प्रखर, कहानी दर्शन, पृ. 311)

उल्लेखनीय है कि उक्त वक्तव्य उपन्यास के संदर्भ में भी समान रूप से प्रासंगिक है । वातावरण में देशकाल का विशेष महत्त्व है । देशकाल के अन्तर्गत घटनाओं से सम्बन्धित स्थान और समय का वर्णन होता है । प्रकृति वर्णन और स्थानीय रंग देशकाल के अंग हैं । स्थानीय रंग में घटनास्थल के दृश्य चित्रण पर अधिक बल देता है ।

भाषा-शैली : भाषा और शैली दो विभिन्न तत्त्व हैं, किन्तु दोनों के बीच घनिष्ठता के कारण दोनों को एक माना गया है, भाषा से अभिप्राय है कथ्य का शब्द रूपी शरीर और शैली से अभिप्राय है वह ढंग जिसके द्वारा कथाकार अपने विचार और भावनाओं की अभिव्यक्ति करता है । भाषा-शैली भावों तथा विचारों की वाहक हैं । इस तथ्य के बिना कथ्य कथा का रूप धारण नहीं करता । इस तत्त्व के समीप होने पर कथा के दूसरे तत्त्वों की दुर्बलता छिप जाती है।

6.5.5 उद्देश्य अथवा जीवन दर्शन

उपन्यास की आस्वादन प्रक्रिया में मनोरंजन होना स्वाभाविक है जैसा कि ऊपर संकेत किया गया है, किन्तु उसका एकमात्र और ऐकान्तिक उद्देश्य मनोरंजन नहीं होता । मनोरंजन तो मूल उद्देश्य तक पहुँचने का साधन मात्र है जो मार्ग के श्रम को दूर करता है । कथा की घटना, उसके पात्रों के चरित्र तथा वातावरण के उपकरणों का पाठकों के मन पर निश्चित प्रभाव पड़ता है । इसी प्रभाव को कथा का उद्देश्य कहा जाता है । प्रत्येक कथा का अन्तर्निहित उद्देश्य है - 'सत्य का प्रतिपादन' । यहाँ सत्य से अभिप्राय है मानव जीवन का सत्य । प्रत्येक मनुष्य शारीरिक एवं मानसिक दृष्टि से एक-दूसरे से भिन्न होता है । 'मैं और 'तू की भावना के कारण वे एक-दूसरे को भिन्न समझते हैं । किन्तु, भिन्न प्रतीत होने वाले मानव-शरीरों में परस्पर एकता का अदृश्य सूत्र विद्यमान है । विभिन्न शरीरों को धारण करने वाली आत्माएँ उस महान सत्ता, परमात्मा का अंश है, जो तत्व, मानव जीवन की अनेकता में एकता के सूत्र की पुन: स्थापना में सहायक होता है, वही जीवन का सत्य ' है । अहिंसा, दया, प्रेम, एकता आदि भाव जीवन का सत्त है । कथा-साहित्य का साहित्य इसी जीवन सत्य का प्रतिपादन करता है । उपन्यासकार अपनी रच ना और सर्जन के द्वारा दया, सत्य, न्याय, प्रेम, एकता आदि उत्कृष्ट भावों का प्रतिपादन करता है और असत्य, ईर्ष्या, देष घृणा आदि भावों का तिरस्कार करता है ।

6.6 सारांश

उपन्यास कल्पना व यथार्थ के योग से रचित व मानव जीवन का वृहत्तर रूप प्रस्तुत करने वाली विधा है । उपन्यास में जीवन मूल्यों, सत्यों, आदर्शों तथा समसामयिक परिस्थितियों

का व्यापक स्तर पर उद्घाटन होता है । इस पाठ के आधार पर आप उपन्यास के स्वरूप, परिभाषा, भेद तथा उसके तात्विक स्वरूप से भी परिचित होंगे ।

6.7 संदर्भ ग्रन्थ

1. आज का हिन्दी साहित्य : संवेदना और दृष्टि - डॉ. रामदरश मिश्र
2. आधुनिक हिन्दी उपन्यासों में वस्तु विन्यास - डॉ. सरोजनी त्रिपाठी
3. आधुनिक हिन्दी कथा साहित्य और चरित्र विकास - डॉ. बेचन
4. उपन्यास - स्थिति और गति - चन्द्रकान्त बांदीवेडकर
5. कथा साहित्य के मनोवैज्ञानिक समीक्षा सिद्धान्त - डॉ. देवराज उपाध्याय
6. हिन्दी उपन्यास का विकास और नैतिकता - डॉ. सुखदेव शुक्ल
7. हिन्दी उपन्यास : शिवनारायण श्रीवास्तव
8. हिन्दी उपन्यास बदलते प्रतिमान - डॉ.लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय
9. हिन्दी उपन्यास पहचान और परख - इन्द्रकान्त मदान
10. हिन्दी के मनोवैज्ञानिक उपन्यास: डॉ. धनराज मानधाने
11. हिन्दी के प्रगतिवादी उपन्यास: एक अध्ययन - डॉ. सुशीलकांत सिन्हा
12. हिन्दी उपन्यास: उद्भव और विकास - सुरेश सिन्हा
13. हिन्दी उपन्यास: उद्भव और विकास - डॉ. हेतु भारद्वाज, डॉ सुमनलता
14. हिन्दी उपन्यास शिल्प और प्रयोग - डॉ. त्रिभुवन सिंह
15. हिन्दी उपन्यास का शिल्पगत विकास - उषा सक्सेना

6.8 बोध प्रश्न

1. उपन्यास शब्द का अर्थ स्पष्ट कीजिए ।
2. पाश्चात्य विद्वानों द्वारा दी गई उपन्यास की परिभाषाओं का विवेचन कीजिए।
3. भारतीय विचारकों ने उपन्यास को किस प्रकार परिभाषित किया है ।
4. आपकी दृष्टि में उपन्यास का स्वरूप क्या है?
5. उपन्यास कितने प्रकार के होते हैं?
6. उपन्यास के भेद किन-किन आधार पर किये जा सकते हैं?
7. मनोवैज्ञानिक उपन्यास किसे कहेंगे? उदाहरण सहित उत्तर दीजिए ।
8. उपन्यास के रचना विधान में कौन-कौन से तत्त्व होते हैं?
9. प्रवाहवादी उपन्यास का क्या अर्थ है? उदाहरण सहित स्पष्ट कीजिए ।
10. ऐतिहासिक उपन्यास किसे कहेंगे? स्पष्ट कीजिए ।
11. उपन्यास में कथानक का विकास किस प्रकार होता है?

खण्ड - 3 का परिचय

प्रस्तुत खण्ड में स्वतंत्रता से पूर्व की कुछ प्रमुख हिन्दी रचनाओं का पाठ एवं विवेचन किया गया है । ये रचनाएँ हैं-पूस की रात (प्रेमचन्द), उसने कहा था (चन्द्रधर शर्मा गुलेरी), पत्नी (जैनेन्द्र कुमार), पुरस्कार (जैनेन्द्र कुमार) । ये चारों रचनाएं स्वतंत्रता पूर्व की हिन्दी कहानी का प्रतिमान कही जा सकती हैं । इनके अध्ययन और विवेचन से आपके सामने हिन्दी कहानी की विषयवस्तु, शिल्प, संरचना एवं भाषा बोध का परिचय प्राप्त होता है । ये चारों रचनाएँ बहु चर्चित और बहु प्रशंसित कही जा सकती है । चारों रचनाकारों का व्यक्तित्व और उनकी जीवन दृष्टि भी एक दूसरे से भिन्न है । प्रत्येक कहानी को जब आप सावधानीपूर्वक पढ़ेंगे तो कहानी में निहित उद्देश्य की भिन्नता से भी अवगत हो सकेंगे । उदाहरण के लिये 'पूस की रात' कहानी में यदि किसान हल्कू के जीवन का अभाव और गरीबी का प्रभावी चित्रण है तो 'उसने कहा था' में कहानीकार ने कथा नायक लहनासिंह के किशोर प्रेम को त्याग और बलिदान की उच्चता प्रदान की है । इसी प्रकार 'पत्नी' कहानी में जैनेन्द्र जी ने पत्नी सुनन्दा की सेवा परायणता और मूक भाव से किये गये त्याग का सहज चित्रण किया है । ' पुरस्कार' कहानी में प्रसाद जी ने कहानी की नायिका मधुलिका के भीतर कर्त्तव्य और प्रेम के द्वन्द्व को उभारा है । ये चारों कहानियाँ अपने समय की प्रतिनिधि रचनाएँ कही जा सकती हैं ।

प्रत्येक कहानी पर एक स्वतंत्र पाठ की रचना की गयी है । लेखक ने एक ओर कहानी के पाठ से आपको परिचित कराया है । कठिन शब्दों के अर्थ देकर, कहानी पर केन्द्रित कतिपय प्रश्नों को स्थान देकर कहानी के मर्म को उद्घाटित किया है । साथ ही प्रत्येक कहानी की तात्विक विवेचना भी प्रस्तुत की गयी है । इरा प्रकार इन चारों कहानियों पर आधारित पाठ संख्या सात, आठ, नौ और दस में आप प्रत्येक रचना का गहन अध्ययन करेंगे और साथ ही आलोचनात्मक दृष्टि से उसका आकलन भी कर सकेंगे । कुल मिलाकर स्वतंत्रता से पूर्व की हिन्दी कहानी से और तत्कालीन जीवन के यथार्थ में ये रचनाएँ आपका परिचय स्थापित करेंगी ।

इकाई 7

'पूस की रात' (प्रेमचन्द)

इकाई की रूपरेखा

7.0 इकाई का उद्देश्य

7.1 प्रस्तावना

7.2 कहानी का वाचन

7.3 कठिन शब्दों के अर्थ

7.4 संदर्भ सहित व्याख्या

7.5 कथावस्तु और शीर्षक की उपयुक्तता

7.6 चरित्र-चित्रण

7.7 वातावरण और परिवेश

7.8 संरचना-शिल्प

7.9 प्रतिपाद्य : उद्देश्य

7.10 संदर्भ ग्रन्थ

7.11 बोध-प्रश्न

7.12 बोध प्रश्नों तथा अन्य लघुत्तरीय प्रश्नों के सही उत्तर

7.13 अभ्यासार्थ कुछ दीर्घोत्तरी प्रश्न

7.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई में आप 'पूस की रात' के विस्तृत विवेचन-विश्लेषण से सम्बद्ध प्रमुख पहलुओं का अध्ययन करेंगे । इस इकाई को पढ़ने के बाद आप :

- प्रेमचंद के व्यक्तित्व और कृतित्व का संक्षिप्त परिचय प्राप्त कर सकेंगे ।
- मूल कहानी का वाचन करेंगे!
- कहानी में प्रयुक्त कठिन शब्दों का अर्थ जान सकेंगे ।
- कहानी में प्रमुख गद्यांशों की व्याख्या के लिए समुचित दिशा निर्देश प्राप्त कर सकेंगे।
- कथावस्तु के स्वरूप और उसकी विशेषताओं से परिचित हो सकेंगे ।
- कहानी के शीर्षक के औचित्य का निर्धारण कर सकेंगे ।
- कहानी की भाषा एवम् शिल्प संबंधी विशेषताओं से परिचय प्राप्त करेंगे ।
- कहानी के प्रतिपाद्य (उद्देश्य) और कहानीकार की रचना-दृष्टि को समझ सकेंगे ।
- उपर्युक्त तथ्यों के आधार पर कहानी का समुचित मूल्यांकन कर सकेंगे ।

7.1 प्रस्तावना

इससे पूर्व आपने चन्द्रधर शर्मा गुलेरी की 'उसने कहा था' शीर्षक कहानी की विशेषताओं का अध्ययन कर लिया होगा । वह हिन्दी की पहली यथार्थवादी कहानी मानी जाती है । अपनी संरचना-शिल्प में वह 'पूस की रात' से बहुत भिन्न है । उसमें समाविष्ट यथार्थ का फलक

बहुत सीमित है । अतः यथार्थवादी कहानी की एक हल्की सी झलक मात्र दे पाती है । प्रस्तुत इकाई में आप एक ऐसे कहानीकार से साक्षात्कार करने जा रहे हो, जो हिन्दी कथा-साहित्य में यथार्थवाद को एक समाजव्यापी विराट फलक पर प्रतिष्ठित करने वाला रचनाकार है । प्रेमचंद ने अपने लगभग एक दर्जन उपन्यासों में समग्र भारतीय जन-जीवन का विस्तृत और प्रामाणिक दस्तावेज प्रस्तुत किया है । 'गोदान' और रंगभूमि' उनकी महाकाव्यात्मक उपन्यास की कोटि में आने वाली रचनाएँ हो । अपने कालजयी उपन्यासों के साथ ही प्रेमचन्द की लगभग 300 कहानियाँ, जिनमें से अधिकांश 'मानसरोवर' शीर्षक से आठ खण्डों में संगृहीत हो ।

अपनी अधिकांश कहानियों में प्रेमचंद ने भारत के व्यापक सामाजिक जीवन के सभी महत्वपूर्ण पहलुओं, को चित्रित किया हैं । इनके अन्तर्गत ग्रामीण जीवन के सबसे निचले स्तर पर स्थित भूमिहीन ग्रामीण मजदूर, थोड़ी- सी जमीन रखने वाले खेतिहर मजदूर से लेकर उनका निर्मम शोषण करने वाले बड़े भू-स्वामी तथा जमींदार भी हो । इन दोनों समुदायों के बीच सूदखोरी करने वाले साहूकार महाजन, मुंशी पुरोहित आदि भी अपनी शोषणकारी घिनौनी भूमिका में प्रस्तुत हुए हों। इन सबने मिलकर ग्रामीण जीवन को एक घोर नरक में परिवर्तित कर दिया है । ग्रामीण जीवन के इस परिदृश्य में जहाँ एक ओर 'कफन' कहानी के घीसू और माधव जैसे निठल्ले बना दिए गए पत्र दिखाई देते हो, वहीं दूसरी खेतिहर मजदूर से मात्र मजदूर के रूप में बदल रहा 'पूस की रात' का हलकू दिखाई देता है । आपसी द्वेष के चलते खेतिहर से मजदूर बन गये 'मुक्ति मार्ग' के बुद्धू और झींगुर हो, 'दो बैलों की कथा' का मंझोला किसान झूरी की भी यही स्थिति है । 'सद्गति' कहानी के पंडित घासीराम, की सेवा में दम तोड़ देने तथा दु:खी चमार के साथ ही 'सवा सेर गेहूँ' के खेतिहर से मजदूर बने शंकर कुर्मी के माध्यम से प्रेमचन्द्र ने ग्रामीण जीवन की त्रासदी प्रस्तुत की है । इन कहानियों में दम तोड़ते उत्पीड़ित ग्रामीण पात्रों के साथ ही ठाकुर साहब, राय साहब, चौधरी साहब आदि जैसे लोग अपने क्रूर तेवर के साथ मौजूद हो ।

प्रेमचन्द्र ने अपनी कहानियों में समाज के शोषक समुदाय, विशेषत: पंडित-पुरोहित का जिस निर्ममता से पर्दाफाश किया था, उससे काशी का ब्राह्मणवादी समुदाय तिलमिला उठा था । ठाकुर श्रीनाथ सिंह और ज्योतिप्रसाद निर्मल ने उन पर ब्राह्मण- विरोधी होने का आरोप ही नही लगाया वरन् उन्हें जाने से मार देने का घृणित कार्य भी करवाया था । इसे प्रेमचन्द की कहानियों की प्रभाव-क्षमता का वास्तविक प्रमाण माना जा सकता है ।

प्रेमचन्द खाने-कमाने के उद्देश्य से नही, बल्कि एक गहन सामाजिक सरोकार को लेकर साहित्य के क्षेत्र में आए थे । उन्होनें स्कूल मास्टरी और इंस्पेक्टर आफ स्कूल्स की सरकारी नौकरी ही नही, बंबई की फिल्मी दुनिया की एक हजार रुपये मासिक आमदनी का भी परित्याग कर साहित्य के क्षेत्र में पदार्पण किया था । उन्होनें अपने साहित्य के माध्यम से स्वतंत्रता आंदोलन में बढ़-चढ कर हिस्सा लिया । महात्मा गाँधी के स्वदेशी और असहयोग आंदोलन से प्रेरित होकर उन्होंने बहुत सी कहानियाँ लिखी । 'डामुल का कैदी', 'समर यात्रा', 'जलूस', 'सुहाग की साडी' शराब की दुकान', 'कुत्सा', 'होली का उपहार', 'आहुति' आदि दर्जनों कहानियाँ स्वाधीनता और स्वदेश की भावनाओं से ओत-प्रोत हो । लेकिन स्वाधीनता को लेकर प्रेमचन्द की सोच

और उनका आदर्श उच्चवर्गीय कांग्रेसी राजनीतिज्ञों की सोच से हटकर था । अपने अंतिम कहानी संग्रह 'कफन' की 'आहुति' कहानी की नायिका के माध्यम से उन्होंने अपनी सोच को इस प्रकार प्रस्तुत किया है:

"अगर स्वराज्य आने पर भी सम्पत्ति का यही अनुभव रहे और पढ़ा-लिखा समाज यों ही । स्वार्थान्ध बना रहे, तो मो कहूँगी कि ऐसे स्वराज का न आना ही अच्छा । अंग्रेजी महाजनों की धनलोलुपता और शिक्षितों का स्वहित आज हमें पीसे डाल रहा है । जिन बुराइयों को दूर करने के लिए आज हम अपने प्राणों को हथेलियों पर लिए हुए हो, उन्हीं बुराइयों को क्या प्रजा इस लिए सिर चढ़ाएगी कि वे विदेशी नहीं स्वदेशी हो । कम-से-कम मेरे लिए तो स्वराज का यह अर्थ नहीं है कि जान की जगह गोबिन्द बैठ जाऐ । मैं समाज की ऐसी व्यवस्था देखना चाहती हूँ जहाँ कम-से-कम विषमता को आश्रय मिल सके ।

अपने इसी ऊँचे आदर्श के कारण प्रेमचन्द ने साहित्य को सामाजिक परिवर्तन के एक कारगर अस्त्र के रूप में देखा है । अपने निबंध संग्रह 'कुछ विचार' में 'जीवन में साहित्य का स्थान' शीर्षक लेख में साहित्य के महत्व को रेखांकित करते हुए प्रेमचन्द ने लिखा है- ' 'साहित्य का लक्ष्य केवल महफिल सजाना और मनोरंजन का साधन जुटाना नहीं है । इसका दरजा इतना न गिराइए । वह देश-भक्ति और राजनीति के पीछे चलने वाली सच्चाई भी नहीं, बल्कि उसके आगे मशाल दिखाती हुई सच्चाई हो ।" इसी कम में उन्होंने आगे लिखा है कि "हमारे जितने विद्यालय हो, सब गुलामी के कारखाने हो, लड़कों को स्वार्थ का, जरूरतों का, नुमाइश का, अकर्मण्यता का गुलाम बना कर छोड़ देते हो । और लुत्फ यह है कि तालीम भी मोतियों के मोल बिक रही है । हम भेड़ों की तरह उनके पीछे दौड़े चल रहे हो ।" वस्तुत: प्रेमचन्द के साहित्य की यह मशाल आज भी जल रही है, जिसकी रोशनी में हम उनके युग की वास्तविकता ही नहीं, बल्कि आज की शैक्षणिक अवस्था की खामियों को भी आसानी से देख सकते हो । भारत में मेकाले द्वारा चलायी गयी ब्रिटिश शिक्षा-व्यवस्था जिस तरह अपने लिए गुलाम पैदा कर रही थी, आज भी भारतीय शिक्षा-व्यवस्था, विशेष रूप से उच्च शिक्षा संस्थानों द्वारा विदेशी बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ और देशी पूंजीवादी प्रतिष्ठानों के लिए गुलाम पैदा कर रही है । अत आज के संदर्भ में भी प्रेमचंद की प्रासंगिकता बनी हुई है ।

प्रेमचंद के साहित्य, विशेषत: कहानियों की प्रभाव-क्षमता को स्पष्ट करते हुए मुक्तिबोध ने 'माँ के माध्यम से प्रेमचन्द' शीर्षक अपनी टिप्पणी में लिखा है, ' 'प्रेमचन्द की कहानियों को पढ़ते हुए उनके अच्छे पात्रों के सारे गुण हमारे अन्दर प्रवेश करने लगते हो और उन्हे बुरे पात्रों के सारे दुर्गुण हमसे दूर होने लगते हो । इस प्रकार प्रेमचन्द केवल समाज-निर्माता ही नहीं, वरन् वे हमारी आत्मा के शिल्पी भी हो । " यह गुण और इतनी मात्रा में, अन्य साहित्कारों के यहाँ दुर्लभ ही है ।

अपने निधन के कुछ ही महीने पूर्व, 1936 में प्रेमचंद ने 'प्रगतिशील लेखक संघ के अध्यक्ष के रूप में, उसके उद्घाटन समारोह के मंच से अपने युग के साहित्यकारों से सुन्दरता की परंपरागत कसौटी को बदलने का आवाहन किया था । इस में सुख-सुविधा में, महलों में पले गुलाबी चेहरों की जगह खेत की मेड़ पर रोते हुए बच्चे को सुलाकर खेत में श्रमरत महिला

के सौन्दर्य को उजागर करने का अनुरोध किया गया था । उनकी इस बात के मर्म को उनके रचना-संसार के भीतर जा कर ही पा सकते हो, जहाँ भारतीय लोकजीवन के अछूते और ताजे सौन्दर्य का एक भरा-पुरा सागर लहरा रहा है । 'पूस की रात' के साथ ही जूलूस' 'आहुति', 'ईदगाह', 'डामुल का कैदी', 'ठाकुर का कुवाँ', 'प्रायश्चित', 'सज्जनता का दंड', आदि जैसी छोटी-छोटी कहानियों में इस विशाल सागर के टुकड़े हो, जिनके मेल से प्रेमचन्द का कृतित्व उजागर हुआ है । 'पूस की रात' इस विशाल सागर की एक छोटी सी लहर है, जिसे पूरे सागर की समग्रता के संदर्भ में ही देखा-परखा जा सकता है । अत: प्रेमचंद की कहानियों की इस पृष्ठभूमि की समझ 'पूस की रात' कहानी के समुचित महत्व-निर्धारण के लिए आवश्यक है।

7.2 कहानी का वाचन

हल्कू और उसकी पत्नी मुन्नी के बीच विवाद.

हल्कू ने आकर पत्नी से कहा-सहना आया है ।लाओ,जो रूपए रखे हो उसे दे दूँ । किसी तरह गला तो छूटे।

मुन्नी झाड़ू लगा रही थी । पीछे फिरकर बोली-तीन ही तो रूपए है, दे दोगे तो कम्बल कहाँ से आवेगा? माघ-पूस की रात हार में कैसे कटेगी? उससे कह दो, फसल पर देंगे । अभी नहीं। हल्कू एक क्षण अनिश्चित दशा में खड़ा रहा । पूस सिर पर आ गया, कम्बल के बिना इह। किसी तरह सो नहीं सकता । मगर कहना मानेगा नहीं, घुड़कियाँ जमावेगा, गालियाँ देगा । बला से जाड़ों में मरेंगे, बला तो सिर से टल जाएगी । यह सोचता हुआ वह अपना भारी भरकम डील लिए (जो उसके नाम को झूठ सिद्ध करता था) स्त्री के समीप आ गया और खुशामद करके बोला-ला दे दे, गला तो छूटे । कम्बल के लिए कोई दूसरा उपाय सोचूंगा ।

मुन्नी उसके पास से दूर हट गई और आँखें तरेरती हुई बोलीकर चुके दूसरा उपाय । जरा सुनूँ तो कौन उपाय करोगे? कोई खैरात दे देगा कम्बल । न जाने कितनी बाकी है, जो किसी तरह चूकने नहीं आती । मो कहती हूँ तुम क्यों नहीं खेती छोड़ देते? मर-मर कर काम करो उपज हो बाकी दे दो, चलो छुट्टी हुई । बाकी चुकाने के लिए ही हमारा जन्म हुआ है । पेट के लिए मजदूरी करो । ऐसी खेती से बाज आए । मो रूपए न दूँगी ।

हल्कू उदास होकर बोला-तो क्या गाली खाउँ ।

मुन्नी ने तड़प कर कहा-गाली क्यों देगा, क्या उसका राज है? मगर यह कहने के साथ ही उसकी **तनी भोहें** ढीली पड़ गयीं । हल्कू के उस वाक्य में कठोर सत्य था । वह मानो एक भीषण जन्तु की भांति उसे घूर रहा था ।

रूपए मिल जाने के बाद हल्कू की मनोदशा :

उसने (मुन्नी ने) आले पर से रूपए निकाले और लाकर हल्कू के हाथ पर रख दिए, फिर बोली-तुम छोड़ दो अबकी से खेती । मजदूरी में सुख से एक रोटी खाने को तो मिलेगी । किसी की धोंस तो न रहेगी । अच्छी खेती है । मजदूरी करके लाओ, वह भी उसी में झोंक दो, उपर से धोंस। हल्कू ने रूपए लिए और इस तरह बाजार चला, मानो अपना हृदय निकाल कर देने जा रहा हो । उसने मजदूरी से एक-एक पैसा काट-काटकर तीन रूपए कम्बल के लिए जमा किए थे

। वह आज निकले जा रहे हो । एक-एक पग के साथ उसका मस्तक अपनी दीनता के भार से दबा जा रहा था ।

'पूस की रात में खेत की रखवाली करते हुए और जबरा :

पूस की अँधेरी रात । आकाश पर तारे भी ठिठुरते हुए मालूम होते थे । हल्कू अपने खेत के किनारे ऊख के पत्तों की एक छतरी के नीचे बाँस के खटोले पर अपनी पुरानी गाढ़े की चादर ओढ़े पड़े कांप रहा था । खाट के नीचे उसका संगी कुत्ता जबरा पेट में मुँह डाले सर्दी से कूँ-कूँकर रहा था । दोनों में से एक को भी नींद न आती थी ।

ठंड से पीड़ित हल्कू और जबरा के बीच संवाद :

हल्कू ने घुटनियों को गरदन में चिपकाते हुए कहा-क्यों जबरा, जाड़ा लगता है? कहता तो था, घर में पुआल पर लेट रह तो यहाँ क्या लेने आए थे? अब खाओं ठंड, मो क्या करूँ । जानते थे मो वहां हलवा-पूरी खाने आ रहा हूँ । दौड़े-दौड़े आगे-आगे चले आए । अब रोओ नानी के नाम को ।

जबरा ने पड़े-पड़े दुम हिलाई और अपनी कूँ-कूँ को दीर्घ बनाता हुआ एक बार जम्हाई लेकर चुप हो गया । उसकी श्वान-बुद्धि ने शायद ताड़ लिया, स्वामी को कूँ-कूँ से नींद नहीं आ रही। हल्कू के हाथ निकालकर जबरा की ठंडी पीठ सहलाते हुए कहा-कल मत आना मेरे साथ, नहीं तो ठंडे हो जाओगे । यह रीड पछुवा न जाने कहीं रो बरफ लिए आ रही है । उठूँ ! फिर चिलम भरूँ । किसी तरह रात तो कटे । आठ चिलम तो पी चुका । यह खेती का मजा है । एक-एक भगवान ऐसे पड़े हो, जिनके पास जाड़ा जाए तो गरमी से घबड़ाकर भागे । मोटे-मोटे गद्दे, लिहाफ, कम्बल मजाल है, जाड़े का गुजर हो जाए । तकदीर की खूबी है । मजदूरी हम करें, मजा दूसरे लूटे ।

हल्कू उठा, गड्ढे से जरा-सी आग निकाल कर चिलम भरी । जबरा भी उठ बैठा ।

हल्कू ने चिलम पीते हुए कहा-पीएगा चिलम, जाड़ा तो क्या जाता है, हाँ जरा, मन बदल जाता है ।

जबरा ने उसके मुँह की ओर प्रेम से छलकती हुई आँखों से देखा ।

हल्कू-आज और जाड़ा खा ले । कल से मो यहाँ पुआल बिछा दूँगा । उसी में घुस कर बैठना,तब जाड़ा न लगेगा ।

जबरा ने अपने पंजे उसकी घुटनियों पर रख दिए और उसके मुँह के पास अपना मुँह ले गया । हल्कू को उसकी गर्म सांस लगी ।

चिलम पीकर हल्कू फिर लेटा ' और निश्चय करके लेटा कि चाहे कुछ हो अबकी सो जाऊँगा, पर एक ही क्षण में उसके हृदय में कंपन होने लगा । कभी इस करवट लेटता, कभी उस करवट, पर जाड़ा किसी पिशाच की भाँति उसकी छाती को दबाए हुए था ।

जब किसी तरह न रहा गया, उसने जबरा को धीरे से उठाया और उसके सिर को थपथापकर उसे गोद मे सुला लिया ।

कुत्ते को गोद मे लेकर सोए हुए हल्कू की मनोदशा :

कुत्ते की देह से जाने कैसी दुर्गन्ध आ रही थी,पर उसे अपनी गोद मे चिपटाए हुए ऐसे सुख का अनुभव हो रहा था, जो इधर महीनों उसे न मिला था । जबरा समझ रहा था कि स्वर्ग यहीं है, और हल्कू की पवित्र आत्मा में तो उस कुत्ते के प्रति घृणा कीं गंध तक न थी । अपने किसी अभिन्न मित्र या भाई को भी वह इतनी ही तत्परता से गले लगाता । वह अपनी दीनता से आहत न था, जिसने आज इस दशा को पहुँचा दिया । नही, इस अनोखी मैत्री ने जैसे उसकी आत्मा के सब द्वार खोल दिए और उसका एक-एक अणु प्रकाश से चमक रहा था ।

सहसा जबरा ने किसी जानवर की आहट पाई । इस विशेष आत्मीयता ने उसमें एक नयी स्फूर्ति पैदा कर दी थी, जो हवा के झोंकों को तुच्छ समझती थी । वह झपट कर उठा और छपरी के बाहर आकर भूँकने लगा । हल्कू ने उसे कई बार पुचकार कर बुलाया, पर वह उसके पास न आया । हार के चारों तरफ दौड़-दौड़ कर भूँकता रहा । एक क्षण के लिए आ भी जाता, तो तुरंत ही फिर दौड़ता । कर्त्तव्य उसके हृदय में अरमान की भांति उछल रहा था ।

असह्य ठंड से विवश हल्कू द्वारा अलाव जलाने की तैयारी :

एक घण्टा और गुजर गया । रात ने शीत को हवा से धधकना शुरु किया । हल्कू उठ बैठा और दोनों घुटनों को छाती से मिला कर सिर को उसमें छिपा लिया, फिर भी ठंड कम न हुई । ऐसा जान पड़ता था, सारा रक्त जम गया है, धमनियों में रक्त की जगह हिम बह रही है । उसने झुक कर आकाश की ओर देखा, अभी कितनी रात बाकी है । सप्तर्षि अभी आकाश में आधे भी नहीं चढ़े । ऊपर आ जाएँगे तब कहीं सबेरा होगा । अभी पहर से ऊपर रात है। हल्कू के खेत से कोई एक **गोली के टप्पे** पर आमों का एक बाग था । पतझड़ शुरु हो गयी थी । बाग में पत्तियों का ढेर लगा हुआ था । हल्कू ने सोचा, चुनकर पत्तियाँ बटोरूँ और उन्हें जलाकर खूब तापूँ । रात को कोई मुझे पत्तियाँ बटोरते देखे तो समझे, कोई भूत है । कौन जाने, कोई जानवर ही छिपा बैठा हो, मगर अब तो बैठे नहीं रहा जाता ।

उसने पास के अरहर के खेत में जाकर कई पौधे उखाड़ लिए और उनका झाड़ू बनाकर हाथ में सुलगता हुआ उपला लिए बगीचे की तरफ चला । जबरा ने उसे आते देखा, पास आया और दुम हिलाने लगा ।

हल्कू ने कहा-अब तो नहीं रहा जाता **जबरू** । चलो बगीचे में पत्तियाँ बटोर कर लायें । टाँटे हो जाएँगे, तो फिर आकर सोएँगे । अभी तो बहुत रात है ।

जबरा ने कूँ-कूँ करके अपनी सहमति प्रकट की और आगे बगीचे की ओर चला ।

बगीचे में खूब अंधेरा छाया हुआ था और अंधकार में निर्दय पवन पत्तियों को कुचलता हुआ चला जाता था । वृक्षों से ओस की बूँदें टपटप नीचे टपक रहीं थीं ।

एकाएक एक झोंका मेंहदी के फूलों की खुशबू लिए आया, हल्कू ने कहा-कैसी अच्छी महक आयी जबरू । तुम्हारी नाक में भी कुछ सुगन्ध आ रही है?

जबरा को जमीन पर एक हड्डी पड़ी मिल गयी । उसे चिचोड़ रहा था ।

हल्कू ने आग जमीन पर रख दी और पत्तियाँ बटोरने लगा । जरा देर में पत्तियों का ढेर लग गया । हाथ ठिठुरे जाते थे । नंगे पाँव गले जाते थे । और वह पत्तियों का पहाड़ खड़ा कर रहा था । इसी अलाव में वह ठंड को जलाकर भस्म कर देगा ।

अलाव जलने के बाद हल्कू के मन का उत्साह

थोड़ी देर में अलाव जल उठा । उसकी लौ ऊपर वाले वृक्ष की पत्तियों को छू-छूकर भागने लगी । उस प्रकाश में बगीचे के विशाल वृक्ष ऐसे मालूम होते थे, मानो उस अथाह अंधकार को अपने सिरों पर संभाले हुए हो । अंधकार के उस आनन्द-सागर से यह प्रकाश एक नौका के समान हिलता, मचलता हुआ जान पड़ता था ।

हल्कू अलाव के सामने बैठा आग ताप रहा था । एक क्षण में उसने **दोहर** उतारकर बगल में दबा ली, दोनों पाँव फैला लिए, मानो ठंड को ललकार रहा हो, 'तेरे जी में आए सो कर । ' ठंड की असीम शक्ति पर विजय पाकर वह विजय-गर्व को हृदय में छिपा न सकता था । उसने जबरा से कहा-क्यों जब्बर, अब ठंड नहीं लग रही है?

जब्बर ने कूँ - कूँ करके मानो कहा-अब क्या ठंड लगती ही रहेगी?

'पहले यह उपाय न सूझा, नहीं इतनी ठंड क्यों खाते ।

जब्बर ने पूँछ हिलाई ।

'अच्छा, आओ इस अलाव को कूदकर पार करें । देखें, कौन निकल जाता है । अगर जल गए बचा, तो मो दवा नहीं करूँगा ।'

जब्बर ने उस अग्नि-राशि की ओर कातर नेत्रों से देखा ।

मुन्नी से कल न कह देना, नहीं लड़ाई करेगी ।'

यह कहता हुआ वह उछला और उस अलाव के ऊपर से साफ निकल गया । पैर में जरा लपट लगी, पर वह कोई बात न थी । जबरा आग के गिर्द घूम कर उसके पास आ खड़ा हुआ । हल्कू ने कहा-चलो-चलो इसकी सही नहीं । ऊपर से कूद 'कर आओ । वह फिर कूदा और अलाव के इस पार आ गया ।

अलाव बुझने के बाद जबरा की 'मुस्तैदी के बावजूद' खेत का चरा जाना :

पत्तियाँ बुझ चुकी थीं । बगीचे में फिर अँधेरा छाया था । राख के नीचे कुछ-कुछ आग बाकी थी, जो हवा का झोंका आ जाने पर जरा जाग उठती थी, पर एक क्षण में फिर आँखे बन्द कर लेती थी ।

हल्कू ने फिर चादर ओढ़ ली और गर्म राख के पास बैठा हुआ गीत गुनगुनाने लगा । उसके बदन में गर्मी आ गई थी, पर ज्यों-ज्यों शीत बढ़ती जाती थी, उसे आलस्य दबाए लेता था। जबरा जोर से भूककर खेत की तरफ भागा । हल्कू को ऐसा मालूम हुआ कि जानवरों का एक झुंड खेत में आया है । शायद नील गायों का झुंड था । उनके कूदने-दौड़ने की आवाजें साफ कान में आ रही थीं । फिर ऐसा मालूम हुआ कि खेत में चर रही हो । उनके चबाने की आवाज चर-चर सुनाई देने लगी । उसने दिल में कहा-नहीं, जबरा के होते हुए कोई जानवर खेत में नहीं आ सकता । नोच ही डाले । मुझे भ्रम हो रहा है । कहीं, अब तो कुछ नहीं सुनाई देता । मुझे भी कैसा धोखा हुआ ।

उसने जोर से आवाज लगायी-जबरा, जबरा । जबरा अता रहा । उसके पास न आया ।

हल्कू के आलस्य और उपेक्षा से खेत का सत्यानाश

फिर खेत के चरे जाने की आहट मिली । अब वह अपने को धोखा न दे सका । उसे अपनी जगह से हिलना जहर लग रहा था । कैसा दंदाया हुआ बैठा था । इस जाड़ेपाले में खेत में जाना, जानवरों के पीछे दौड़ना असद्य जान पड़ा । वह अपनी जगह से न हिला ।

उसने जोर से आवाज लगाई-हिलो ! हिलो !! हिलो !! जबरा फिर भूँक उठा । जानवर खेत चर रहे थे । फसल तैयार है । कैसी अच्छी खेती थी । पर ये दुष्ट जानवर उसका सर्वनाश किए डालते हो ।

हल्कू पक्का इरादा कर के उठा और दो-तीन कदम चला, पर एकाएक हवा का ऐसा ठंडा, चुभने वाला, बिच्छू के डंक का-सा झोंका लगा कि वह फिर बुझते हुए अलाव के पास आ बैठा और राख को कुरेद कर अपनी ठंडी देह को गर्माने लगा ।

जबरा अपना गला फाड़े डालता था, नील गाएँ खेत का सफाया किए डालती थीं और हल्कू गर्म राख के पास शांत बैठा हुआ था । अकर्मण्यता ने रस्सियों की भाँति उसे चारों तरफ से जकड़ रखा था ।

उसी राख के पास गर्म जमीन पर वह चादर तान कर 'सो गया ।

प्रात: नींद खुलने पर मुन्नी द्वारा खेत के सत्यानाश की सूचना :

सबेरे जब उसकी नींद खुली, तब चारों तरफ़ धूप फैल गयी थी और मुन्नी कह रही थी-क्या आज सोते ही रहोगे? तुम यहाँ आकर रम गए और उधर सारा. खेत चौपट हो गया ।

हल्कू उठ कर कहा-क्या तू खेत से होकर आ रही है? मुन्नी बोली-हाँ' सारे खेत का सत्यानाश हो गया । भला, ऐसा भी कोई सोता है । तुम्हारे यहाँ मड़ैया डालने से क्या हुआ? हल्कू ने बहाना किया-मो मरते-मरते बचा, तुझे अपने खेत की पड़ी है । पेट में ऐसा दर्द हुआ कि मो ही जानता है । दोनों फिर खेत के डाँड़ पर आए । देखा सारा खेत रोंदा पड़ा हुआ है और जबरा मड़ैया के नीचे चित लेटा है, मानों प्राण ही न हो । दोनों खेत की दशा देख रहे थे । मुन्नी के मुर्ख पर उदासी छायी थी, पर हल्कू प्रसन्न था ।

मुन्नी ने चिंतित हो कर कहा-अब मजदूरी करके मालगुजारी भरनी पड़ेगी ।

हल्कू ने प्रसन्न मुख से कहा-सत को ठंड में यहाँ सोना तो नहीं पड़ेगा ।

7.3 कठिन शब्दों के अर्थ

सहना-जमींदार का कारिन्दा; हार-खेत की रक्षा के लिए डाली गयी छपरी, मंडई; बला-विपत्ति, बाधा; बाकी-बकाया, शेष; तनी भौंहें-गुस्से भरी भौंहें; धोस-धमकी; अकड़बाजी डांट-फटकार; दीनता-असहायता; ठिठुरते हुएठंड से सिकुड़ते हुए खटोले-छोटी खाट; गाढेकी-करघे पर बुनी सूती चादर; घुटनियों-घुटनों, श्वान-बुद्धि-कुत्ते की समझ; ताड़ लिया-समझ लिया; रांड-एक गाली, विधवा; लिहाफ-रजाई; पिशाच-प्रेत; आहत-दुखी; चोट खाया हुआ; आत्मीयता-अपनापन; छपरी-मंडई, अरमान-ख्वाहिश लालसा; हिम-बरफ; सप्तर्षि-सात तारों का मंडल, एक गोली के टप्पे पर-एक जगह से फेंकी गई गोली जितनी दूर गिरती है, थोड़ी दूरी पर; जबरू-प्यार में जबरा कुत्ता को किया गया संबोधन; टॉटे-टनटना, गरम; लौ-लपट, दोहर- चद्दर कातर-भयभीत; असहाय; गिर्द-चारों तरफ; बदन-मुँह; डॉड-किनारा धमनियों-नसों, नाड़ियों ।

7.4 संदर्भ सहित व्याख्या

1. "यह खेती का मजा है । और एक-एक भगवान ऐसे पड़े हो, जिन के पास जाड़ा जाए तो गरमी से घबड़ा कर भागे । मोटे-मोटे गद्दे, लिहाफ, कम्मल, मजाल है, जाड़े का गुजर हो जाए । तकदीर की खूबी है। मजदूरी हम करें, मजा दूसरे लूटे ।"

संदर्भ : प्रस्तुत गद्यांश मुंशी प्रेमचंद द्वारा लिखित पूस की रात' कहानी से लिया गया है । ठंड से बेहाल हल्कू अपने कुत्ते को संबोधित करते हुए अपने और उसके हाल पर तरस खा रहा है । छोटे-मोटे किसानों की बदहाली का कारण उनके श्रम का शोषण करने वाले सम्पन्न लोगों के प्रति कटाक्ष करते हुए वह सोचता है ।

व्याख्या : यह खेती का मंजा अर्थात् अभिशाप है, जो हम झेल रहे हो । हमारे कठोर श्रम का सारा लाभ उठाने वाले तथाकथित महान लोग इस तरह का जीवन बिता रहे हो कि दुःख उनके पास तक नहीं फटक सकता । उनकी गरमी से ठंड भी भयभीत होकर भाग जाती है । वे कम्बल, रजाई और मोटे गद्दों में सुरक्षित रहते हो । उनके यहाँ जाड़े की एक क्षण के लिए भी गुजर नहीं हो पाती । हल्कू इसे भाग्य की खूबी समझ रहा है, जिसके कारण मजदूरी दूसरे करते हो और आराम दूसरे भोगते हो ।

विशेष : 1. इस गद्यांश की भाषा अत्यंत सधी हुई, चुस्त-दुरुस्त और सांकेतिक है । 2. जाड़े का घबरा कर भागना, जाड़े का गुजर न होना जैसे वाक्यांशों में अमूर्त जाड़े को मूर्त रूप दिया गया है । 3. हल्कू का तकदीर की सूबी में विश्वास उसे भाग्यवादी सिद्ध करता है, जिसे प्रेमचन्द ने गरीब मजदूरों का सबसे बड़ा अभिशाप सिद्ध किया था ।

2. "जब किसी तरह रहा न गया, उसने जबरा को धीरे से उठाया और उसके सिर को थपथपा कर उसे अपनी गोद में सुला लिया । कुत्ते की देह से जाने कैसे दुर्गन्ध आ रही थी, पर वह उसे अपनी गोद में चिपटाए हुए ऐसे सुख का अनुभव कर रहा था, जो इधर महीनों से उसे न मिला था । जबरा शायद समझ रहा था कि स्वर्ग यहीं हो, और हल्कू की पवित्र आत्मा में तो उस कुत्ते के प्रति घृणा की गंध तक न थी । अपने किसी अभिन्न मित्र या भाई को भी वह इतनी ही तत्परता से गले लगाता । वह अपनी दीनता से आहत न था, जिसने आज उसे इस दशा को पहुँचा दिया । नहीं, इस अनोखी मैत्री ने जैसे उसकी आत्मा के सब द्वार खोल दिए थे और उसका एक-एक अणु प्रकाश से चमक रहा था ।

संदर्भ : प्रस्तुत गद्यांश कथा-सम्राट प्रेमचन्द की कहानी 'पूस की रात' से लिया गया है । इस कहानी में जो भूमिका हल्कू और उसकी पत्नी मुन्नी निभाते हो, लगभग वही भूमिका उनके कुत्ते जबरा की भी है । चिलम पर चिलम पी जाने और अनेक उपायों के बावजूद हल्कू जाड़े से अपनी रक्षा करने में असमर्थ हो गया । ऐसी स्थिति में उसे जबरा ही अंतिम सहारा दिखायी दिया । प्रेमचंद न ठंड से विवश हल्कू की मनोदशा और उसके किया-कलाप को अत्यंत भावपूर्ण तथा यथार्थवादी ढंग से इस गद्यांश में प्रस्तुत किया है । हल्कू द्वारा जबरा को अपनी गोद में लेने से -दोनों के भाव-विभोर होने का यही सुन्दर दृश्य उपस्थित हुआ है ।

व्याख्या : जब ठंड असहम हो गयी और किसी तरह से उससे छुटकारा नहीं मिल सका, तो हल्कू ने स्नेहपूर्वक जबरा को अपनी गोद में सुला लिया । कुत्ते की देह से आने वाली दुर्गन्ध

के बावजूद वह अपनी गोद में चिपकाए हुए ऐसे सुख का अनुभव करने लगा, जो इधर बहुत दिनों से उसे नहीं मिला था । उसकी गोद जबरा के लिए एक नये स्वर्ग का विधान कर रही थी । उसने इस स्वर्गीय आनन्द का अनुभव पहली बार किया था । हल्कू की शुद्ध और पवित्र आत्मा में कुत्ते के लिए घृणा का कोई अंश नहीं था । वह कुत्ते को इस तरह आलिंगन में लिए था, जिस तरह अपने किसी आत्मीय मित्र या भाई को गले लगाता । आज वह अपने असहायपन और अभाव से दुखी नहीं था, जिसने उसे इस हालत में पहुँचाया । कुत्ते की इस अनोखी मित्रता ने उसकी आत्मा के सारे दरवाजे खोल दिये थे । इस खुलेपन में उसके अस्तित्व का एक-एक कण नये प्रकाश से जगमगा रहा था । कहने का तात्पर्य यह कि इस समय हल्कू अपने सभी दुःखों और अभावों से मुक्त होकर पूर्ण संतोष का अनुभव कर रहा था ।

विशेष : 1. इस गद्यांश को पढ़कर प्रेमचंद की एक कुत्ते की कहानी और 'दो बैलों की कथा के हीरा-मोती की याद ताजा हो जाती है । 2. प्रेमचन्द की सौन्दर्य पारखी दृष्टि ने हल्कू और जबरा के बीच के सम्बन्ध से एक नये सौन्दर्य का उद्घाटन किया है, जिस में पाठक को अभिभूत करने की पूरी क्षमता है । 3. इस गद्यांश से मानव और पशु की रागात्मकता का एक नया आदर्श प्रस्तुत हुआ है । 4. इस गद्यांश की भाषा संस्कृतनिष्ठ और शैली प्रवाहयुक्त तथा भावात्मक है ।

नोट: व्याख्या करते समय विद्यार्थियों को ध्यान रखना चाहिए कि जो महत्वपूर्ण तथ्य संदर्भ और व्याख्या में नहीं आ सकें उन्हें 'विशेष' शीर्षक देकर अलग से लिखें । व्याख्या से पहले कठिन शब्दों के अर्थ दे सकें तो अधिक अच्छा होगा । विशेष के अन्तर्गत भाषा, शैली के साथ ही लेखक की कुछ अन्य विशेषताओं का उल्लेख जरूरी है ।

7.5 कथावस्तु

'पूस की रात' कहानी का कथानक बहुत ही संक्षिप्त है, जो एक रात में समाप्त हो जाता है । लगान या मालगुजारी की समस्या से शुरु हो कर कहानी का अंत भी मालगुजारी से ही होता है । अतः एक सुगठित कथावस्तु की अवधारणा का यहाँ कोई विशेष महत्व नहीं है । कहानी का आरम्भ हल्कू और उसकी पत्नी मुन्नी के वाद-विवाद और संवाद से होता है । विवाद का विषय है, वे तीन रूपए, जो मजदूरी के एक-एक पैसे को कठिनाई से बचा कर कंबल के लिए रखे गए हो । हल्कू उसे सहना को देकर मालगुजारी के बकाए को चुकता करना चाहता है । मुन्नी इसका विरोध करती है, क्योंकि कंबल के बिना पूस की ठंड में खेत की रखवाली संभव नहीं है । अपने विरोध के बावजूद हल्कू की विवशता और इज्जत का ख्याल कर अंततः रूपए उसे दे देती है । रूपए देने से पहले और देने के बाद भी वह बराबर हल्कू से आग्रह करती है कि वह खेती करना छोड़ दे । क्योंकि खेती में लगान की अधिकांश अदायगी मजदूरी के पैसों से ही करनी पड़ती है । खेती छोड़कर मजदूरी करने में बिना दबाव-धोस के एक रोटी खाने का सुख तो है । लेकिन यही मुन्नी कहानी के अंत में खेत की पूरी फसल जानवरों द्वारा नष्ट कर दिए जाने के बाद चिन्तित होकर कहती है कि 'अब मजदूरी करके माल गुजारी भरनी पड़ेगी । 'इससे पता चलता है कि जमीन के प्रति उसका गहरा लगाव भी है । अन्यथा उसे बेच कर भी लगान की अदायगी हो सकती थी ।

कहानी का दूसरा भाग पूस की अँधेरी रात में जानवरों से खेत की रक्षा के प्रयास से सम्बद्ध है । इसका अधिकांश भाग हल्कू और जबरा जैसे मूक पशु के संवाद से सम्बद्ध है । लेकिन इस दूसरे भाग में प्रेमचन्द ने शीत के प्रकोप से पीड़ित एक गरीब किसान की कठोर यातना का जो दयनीय चित्र अंकित किया है, वह पाठक को दहला देने वाला है । इसी कम में कहानीकार ने हल्कू और जबरा के बीच विकसित आत्मीयता और अंतरंगता के माध्यम से जबरा को एक जीवंत चरित्र के रूप में अंकित किया है । यहाँ प्रेमचंद ने अपनी कल्पनाशील सहानुभूति और सहानुभूतिशील तथा प्रसरणशील कल्पना का अत्यन्त हार्दिक परिचय दिया है ।

कहानी का तीसरा भाग शीत के प्रकोप से बचने के अंतिम और कारगर प्रयास से सम्बद्ध है । इसमें भी हल्कू के साथ ही जबरा की सक्रियता बराबर दिखाई देती है । शीत के प्रकोप से पीड़ित हल्कू कहानी के इस भाग में खेत की रक्षा के प्रति उदासीन हो छपरी से निकल कर एक नजदीकी आम के बाग में गिरी सूखी पत्तियों को बटोर कर अलाव जलाता हो । अलाव के प्रकाश और उसकी गर्मी से जैसे उसे एक नयी जिन्दगी प्राप्त होती है । अपनी उछल-कूद और उत्साह के द्वारा लगता है कि उसने शीत के साथ ही अपने सभी विरोधियों को भी पराजित कर दिया है । उसके उत्साह का चित्रण करते हुए प्रेमचन्द ने लिखा है, "ठंड की असीम शक्ति पर विजय प्राप्त कर वह विजय-गर्व को हृदय में छिपा न सकता था । अपना उत्साह व्यक्त करते हुए वह जबरा से कहता है, "अच्छा आओ, इस अलाव को कूद कर पार करें । देखें कौन निकल जाता है । वह उछला, उस अलाव के ऊपर से साफ निकल गया । किसान जीवन के दुःख के भार से कराहती जिन्दगी की छोटी-छोटी खुशियाँ किस तरह उसे जीने का सहारा देती हो इसके यथार्थ पारखी प्रेमचंद ही हो ।

कहानी का चौथा और समापन भाग अलाव के बुझने और नील गायों द्वारा खेत के सत्यानाश से सम्बद्ध है । जबरा द्वारा जी-जान से चीख-पुकार के बावजूद हल्कू खेत की रक्षा के लिए वहाँ तक पहुँच नहीं पाता । राख के पास की गर्म जमीन पर चादर ओढ़कर वह सो गया । "सबेरे जब उसकी नींद खुली तब चारों ओर धूप फैल गयी थी और मुन्नी कह रही थी-क्या आज सोते ही रहोगे ।" मुन्नी खेत को देखकर गई थी । दोनों जब पुन: खेत के पास पहुँचे तो दोनों की प्रतिक्रियाएँ भिन्न रूप में प्रकट हुईं । इसका चित्रण करते हुए प्रेमचन्द ने लिखा है, "मुन्नी के मुख पर उदासी छायी थी, पर हल्कू प्रसन्न था । मुन्नी ने चिन्तित होकर कहा- 'अब मजदूरी करके मालगुजारी भरनी पड़ेगी । हल्कू ने प्रसन्न मुख से कहा-रात को ठंड में यहाँ सोना तो नहीं पड़ेगा ।

इस प्रकार हम देखते हो कि 'पूस की रात' कहानी की कथावस्तु मालगुजारी की समस्या से शुरू होकर मालगुजारी की समस्या पर ही खत्म होती है । यह समस्या आज हमें महत्वपूर्ण नहीं दिखाई देती । लेकिन जब 1930 के आस-पास यह कहानी लिखी गयी थी, तब गरीब किसानों के लिए मालगुजारी की समस्या भीषण रूप धारण कर चुकी थी । इसका चित्रण इस कहानी में नहीं है । 1929-33 की विश्वव्यापी आर्थिक मंदी का भारतीय किसानों पर क्या असर पड़ा, इसका चित्रण प्रेमचंद ने 'कर्मभूमि' में किंचित विस्तार के साथ किया है । उसका एक छोटा सा टुकड़ा यहाँ दर्शनीय है- "चार सेर का गुड़ को दस सेर में भी नहीं पूछता । आठ सेर का गेहूँ डेढ़ रूपए मन में भी मंहगा है । 30 रूपये मन का कपास दस रूपए में जाता है, 16

रूपए मन का सन चार रूपए में । किसानों ने एक-एक दाना बेच डाला, भूसे का तिनका भी नहीं रखा, लेकिन यह सब कुछ करने पर भी चौथाई लगान से ज्यादा अदा न कर सके । "पृ०-287, वस्तुत: उस समय लगान की यह स्थिति थी । इस पर कहानी के प्रतिपाद्य पर विचार करते समय अपेक्षित विस्तार दिया जाएगा । कहने का मतलब यह है कि 'पूस की रात' कहानी के महत्व की समुचित जानकारी के लिए उस समय के सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक परिवेश पर ध्यान रखना जरूरी है । 'पूस की रात की कथावस्तु इसी तथ्य की ओर संकेत करती है ।

शीर्षक की उपयुक्तता :

किसी रचना के कथानक या उसकी कथावस्तु की समुचित विशेषताओं के अध्ययन के लिए उसके शीर्षक का औचित्य भी आवश्यक होता है । वैसे किसी रचना का शीर्षक उसके प्रमुख पात्र, उसकी प्रमुख घटना या सीन के आधार पर प्राय: रखा जाता है । इसके साथ ही उसका संक्षिप्त और आकर्षक होना भी जरूरी माना जाता है । इन विशेषताओं में अधिकांश 'पूस की रात' शीर्षक में नहीं दिखाई देती । बावजूद इसके समूची कहानी में शुरु से अंत तक पूस महीने की रात के कठोर ठंड का आतंक इसमें दिखाई देता है । इसका समूचा घटना कम और दृश्यपटल पूस महीने की एक ठंडी, अँधेरी रात में घटित होता है । इसे इस कहानी का केन्द्र बिन्दु माना जा सकता है । कहानी की समूची आंतरिक और बाह्म संवेदना पूस की रात से जुड़ी हुई है । अत: इस कहानी का शीर्षक सर्वथा उचित और सार्थक माना जा सकता है ।

7.6 चरित्र-चित्रण

'पूस की रात' कहानी में हल्कू उसकी पत्नी मुन्नी के साथ ही प्रेमचन्द ने उनके कुत्ते जबरा को भी एक पात्र के रूप में प्रस्तुत किया है । 'बड़े भाई साहब', 'गुल्ली-डण्डा', 'पंच परमेश्वर, 'बड़े घर की बेटी' आदि कहानियों की भांति इसमें प्रेमचंद ने पात्रों के चरित्र की बारीकियों को रेखांकित नहीं किया है और न ही अपनी ओर से इन पर विशेष कोई टिप्पणी की है । इस कहानी के सभी पात्र अपनी कथनी-करनी के द्वारा पारस्परिक संबंधों के माध्यम से अपने चरित्र को उजागर करते हो । इन पात्रों के माध्यम से कहानीकार ने कोई निश्चित या उँचा आदर्श भी उपस्थित करने का प्रयास नहीं किया है । ये सभी पात्र अत्यंत सहज रूप से प्रेमचन्द की यथार्थवादी दृष्टि को प्रस्तुत करते हो ।

मुन्नी : कहानी के आरम्भ में मुन्नी जबान की कुछ तेज अवश्य दिखाई देती है । लेकिन अपने समूचे तीखेपन के बावजूद वह पति की व्यावहारिक और कुशल सहधर्मिणी के रूप में सामने आती है । उसे पूरा विश्वास है कि कंबल के लिए रखे गए तीन रूपए बकाया की अदायगी में खर्च हो जाने के बाद फिर एकत्र नहीं हो सकते । कंबल के लिए हल्कू द्वारा 'कोई दूसरा उपाय' करने के झूठ से भी वह परिचित है । फिर भी हल्कू की विवशता और उसकी बेइज्जती के कठोर सत्य के सामने वह अपने हथियार डाल देती है । रूपए देने से पहले और देने के बाद भी वह हल्कू से खेती छोड़ कर मजदूरी करने की बात करती है । लेकिन कहानी के अन्त में खेत के नष्ट हो जाने के बाद वह कहती है कि 'अब मजदूरी करके मालगुजारी भरनी पड़ेगी ।' इन दोनों बातों में अन्तर्विरोध देखा जा सकता है, लेकिन यही उसके जीवन का यथार्थ है

। जमीन के प्रति मोह को वह त्याग नहीं पाती । हल्कू की लापरवाही से खेत की फसल के नष्ट हो जाने के सत्य से परिचित होकर भी वह उसे भला-बुरा नहीं कहती । पति से विरोध होने के बावजूद वह उस पर किसी तरह का दबाव नहीं डालती और जो होता है, उसे सहज रूप से स्वीकार कर लेती है ।

हल्कू : हल्कू के माध्यम से हम एक गरीब किसान की नियति का साक्षात्कार करते हो । लगान की अदायगी के लिए इतनी नोक-झोंक के बाद पैसे लेकर जब वह देने चला तो उसकी मनोदशा का चित्रण करते हुए प्रेमचंद ने लिखा है, " हल्कू ने रूपए लिए और इस तरह बाजार चला, मानो अपना हृदय निकालकर देने जा रहा हो। एक-एक पग के साथ उसका मस्तक दीनता के भार से दबा जा रहा था ।" खेत की रखवाली के लिए अपनी छपरी में जाड़े की असीम शक्ति से लड़ते हुए उसका एक मात्र सहायक और साथी जबरा ही है । उसे उलाहना देने, उसके प्रति सहानुभूति प्रकट करने, उसे आत्मीय की तरह गोद में लेकर सोने के माध्यम से कहानीकार ने हल्कू के चरित्र का एक मानवीय रूप प्रस्तुत किया है । अलाव जलाने की व्यवस्था करने के बाद जाड़े पर अपनी विजय से प्रफुल्लित हल्कू का एक नया रूप हमारे सामने आता है । बुझे अलाव की गर्म राख के निकट सुख की नींद सोने वाले हल्कू का आलस्य और अकर्मण्यता उसके चरित्र की निजी विशेषता न होकर व्यवस्था द्वारा थोपी गयी है । इसके माध्यम से वह अपना परोक्ष प्रतिरोध प्रदर्शित करता है । 'मजदूरी हम करें और मजा दूसरे लूटे-इस भावना के उदय होने के साथ उसके सामने यह निहित तथ्य भी आ जाता है कि वह किसके लिए फसल बचाए? जमींदार, महाजन और बनियों की झोली भरने के लिए । स्पष्ट है कि उसके आलस्य और अकर्मण्यता का कारण उसका अनुभव प्रसूत निजी बोध है, जिसकी चरम सीमा 'कफन' कहानी के घीसू और माधव में मिलती है । घीसू और माधव ने हाड़ तोड़ मेहनत करने वालों को भूखे रहते देखकर काम करना छोड़ दिया था । कहीं से गन्ने या आलू चुरा कर अपना पेट भर लेना उनका आदर्श बन गया था ।

जबरा : इसे कहानी में जबरा भी एक जीवन्त पात्र के रूप में हमारे सामने आता है । कहानी के दूसरे भाग से शुरु होकर अंतिम चौथे भाग तक उसकी उपस्थिति उसके महत्व को रेखांकित करती है । हल्कू से जबरा का सीधा संवाद होता है । जबरा हल्कू की उच्चरित भाषा भले न जानता हो, लेकिन उसकी हंसी-ठिठोली, क्रोध और प्रेम अच्छी तरह महसूस करता है । वह सिर हिलाकर, पंजे उठाकर, कूँ-कूँ कर पूंछ हिलाकर उसका उत्तर देता है । उसकी गोद में सोकर वह स्वर्गीय सुख का अनुभव ही नहीं करता, वरन् उसकी हित-रक्षा में एक कर्तव्यनिष्ठ साथी का परिचय देता है । हल्कू के आलस्य और अकर्मण्यता के विपरीत खेत की फसल के बचाव में वह अपनी कर्त्तव्यनिष्ठता का पूरा परिचय देता है । वस्तुत: 'पूस की रात' का जबरा प्रेमचन्द की एक विशिष्ट निर्मित है, जिसके अभाव में कहानी संभव ही नहीं थी ।

7.7 वातावरण-परिवेश

'पूस की रात' कहानी में 'आकाशदीप' की तरह का काव्यात्मक प्राकृतिक वातावरण और परिवेश नहीं है । इसमें ग्रामीण वातावरण की एक गद्यात्मक हल्की झलक अवश्य मिलती है । लेकिन इसका वास्तविक परिवेश परोक्ष रूप से प्रेमचन्द के सम्पूर्ण कथा-साहित्य का अभिन्न हिस्सा

है । इनकी विभिन्न रचनाओं के माध्यम से इस तथ्य को प्रस्तावना में विस्तार से स्पष्ट किया जा चुका है । वस्तुतः व्यापक सामाजिक जीवन के पटल पर अंकित 'पूस की रात' एक छोटा सा सजीव चित्र है, जिसे समझने के लिए हमें युगीन परिवेश की कल्पना करनी पड़ेगी । प्रस्तावना के साथ ही आगे आने वाले प्रतिपाद्य के संदर्भ में भी इस पर विचार किया गया है ।

जहाँ तक वातावरण का प्रश्न है, उसे प्रेमचंद ने अत्यंत व्यंजक, किन्तु बारीक रेखाओं के माध्यम से उसे उकेरा है । जमींदार का कारिन्दा (सहना), बकाया मालगुजारी का तकादा, मुन्नी-हल्कू की नोक-झोंक, कंबल के अभाव में खेत की रखवाली में पूस की कठोर ठंड में हल्कू का ठिठुरते रहना छोटे किसान की दुर्दशा का एक जीवन्त वातावरण उपस्थित करता है । घर से दूर खेत की रखवाली के लिए बनी मँडई, पास में आम का बगीचा, अपने काम के लिए अकेले मजदूर का एक मात्र साथी कुत्ता आदि सभी मिल कर ग्रामीण परिदृश्य का एक सघन रेखाचित्र प्रस्तुत करते हो । माघ-पूस की रात में अलाव की व्यवस्था ग्रामीण जीवन का एक अभिन्न हिस्सा है, जिसकी योजना प्रेमचंद ने गांव में नहीं, वरन् खेत के निकट के बगीचे में की है । अभावग्रस्त ग्रामीण जीवन के ये तमाम सारे उपकरण 'पूस की रात' कहानी के जीवन्त वातावरण को उपस्थित करते हो ।

7.8 संरचना-शिल्प

प्रेमचंद ग्रामीण जीवन के यथार्थवादी रचनाकार हो । इसका असर उनकी कहानियों के संरचना-शिल्प में भी देखा जा सकता है । यद्यपि प्रेमचन्द भारतीय कथा-कोविदों की परम्परा में अपनी किस्सागोई के लिए विशेष रूप से जाने जाते हो । लेकिन 1930 के बाद अपने अंतिम दौर की कहानियों में अपनी पूर्व-निर्धारित परम्परा से थोड़ा अलग होते हुए दिखाई देते हो । फिर भी कहानी की संरचना के आरम्भ, मध्य और अंत की परंपरा को उन्होंने कायम रखा है । 'पूस की रात' में भी इस तथ्य को देखा जा सकता है ।

यह पूरी कहानी प्राय: बातचीत के माध्यम से संवादों में प्रस्तुत हुई है । इसे प्रेमचन्द की किस्सागोई का एक नया संस्कार कहा जा सकता है । कहानी का आरंभ इस प्रकार होता है- हल्कू ने आकर स्त्री से कहा-सहना आया है । लाओ, जो रूपए रखे हो, उसे दे दूँ , किसी तरह गला तो छूटे । मुन्नी झाड़ू लगा रही थी । पीछे फिर कर बोली-तीन ही तो रूपए हो, दे दोगे तो कम्बल कहीं से आवेगा? माघ-पूस की रात हार में कैसे कटेगी? उससे कह दो, फसल पर देंगे । अभी नहीं ।" इसमें

ग्रामीण बातचीत के शब्द-विन्यास, लहजे, वाक्य-गठन के रूप पात्रों की बोल-चाल की भाषा से अविकल रूप से उठा लिए गए हो, जिसमें ताजगी के साथ ग्रामीण जीवन की सहज गंध भी है ।

जबरा को सम्बोधित हल्कू के संवाद में भी इस विशेषता को देखा जा सकता है, "हल्कू ने घुटनियों को गरदन में चिपकाते हुए कहा-क्यों जबरा, जाड़ा लगता है? कहता तो था कि घर में पुआल पर लेट रह, तो यहाँ क्या लेने आए थे । अब खाओ ठंड । मो क्या करूँ । जानते

थे, मो वहाँ पर हलवा-पूरी खाने आ रहा हूँ दौड़ेदौड़े आगे-आगे चले आए । अब रोओ नानी के नाम ।" पूरी कहानी इसी संवाद-शैली में लिखी गयी है । भाषा के ग्रामीण-सामाजिक रूप को प्रेमचन्द ने सुरक्षित रखने का प्रयास किया है । बहुत से लाक्षणिक प्रयोगों को भी उन्होंने बेहद सहज रूप दिया है । मुहावरों और लोकोक्तियों के सहज प्रयोग प्रेमचन्द की अपनी निजी विशेषता है । गला तो छूटे, बला टले, खेती से बाज आए, आंखें तरेरती हुई उसी में झोंक दो, रोओ नानी के नाम को, रीड पछुआ, रात को शीत ने हवा से धधकाना शुरु किया, दोनों घुटनों को छाती से मिलाकर सिर को उसमें छिपा लिया, हल्कू द्वारा जबरा को जबरू, जब्बर नाम से सम्बोधित करना, नानी के नाम रोओ आदि ऐसे प्रयोग हो, जो भाषा की ताज़गी और उसकी जीवन्तता को बनाए रखते हो । इसे एकदम सपाट भाषा भी नहीं कहा जा सकता । लाक्षणिकता और संकेतात्मकता से यह अभी व्यक्ति को अत्यंत तीक्ष्ण बनाती है ।

7.9 प्रतिपाद्य : उद्देश्य

प्रेमचन्द ने साहित्य को बौद्धिक-सामाजिक गंभीर कर्म मानने के कारण उसकी सोद्देश्यता को हमेशा केन्द्र में रखा है । 'पूस की रात' में इस अवधारणा को देखा जा सकता है । इसके उद्देश्य को ठीक से समझने के लिए हमें रचना के प्रतिपाद्य या मूल कथ्य पर भी विचार करना होगा । प्रतिपाद्य के लिए हमें रचना में उठाई गयी मूल समस्या का निर्धारण करना पड़ेगा । इस दृष्टि से देखें तो लगान या मालगुजारी इसकी मूल समस्या माननी पड़ेगी ।

इस कहानी का आरम्भ माल गुजारी की बकाया राशि के भुगतान की समस्या से शुरु होकर 'मजदूरी कर के मालगुजारी भरने की समस्या पर खत्म होती । आज मालगुजारी की स्थिति को देखते हुए कोई भी पाठक आसानी से इस समस्या की गंभीरता को नहीं समझ सकता । वस्तुत: इसके लिए हमें प्रेमचन्द के युग में जाना पड़ेगा, जब पूरे उत्तर प्रदेश में विशेषत: अवध के इलाके में लगान की समस्या एक भीषण रूप ले चुकी थी, जिसके विरोध में लगानबंदी का एक जोरदार आन्दोलन भी चला था । इस कहानी में इस तथ्य का संकेत संभव नहीं था । लेकिन अपने 1933 में प्रकाशित उपन्यास कर्मभूमि में इस समस्या की भीषणता को किंचित विस्तार से प्रेमचंद ने चित्रित किया है ।

इस उपन्यास में 1929-33 की विश्वव्यापी आर्थिक मंदी और भारतीय किसानों पर उसके प्रभाव को रेखांकित करते हुए प्रेमचंद ने लिखा है, ' सारे प्रांत, सारे देश यहाँ तक कि सारे संसार में यही मंदी थी । रूपए का चार सेर के गुड़ को 10 सेर में भी कोई नहीं पूछता । आठ सेर का गेहूँ डेढ़ रूपए मन में भी महँगा है । 30 रूपए मन का कपास 10 रूपए में जाता है । 16 रूपए मन का सन चार रूपए में । किसानों ने एक-एक दाना बेच डाला, भूसे का तिनका भी न रखा, लेकिन सब-कुछ करने पर भी चौथाई लगान से ज्यादा न अदा कर सके (कर्मभूमि-पॉ0-287) हल्कू के लगान की गंभीरता की वास्तविक समस्या यहाँ देखी जा सकती है । लेकिन यहाँ भी इस समस्या के मूल कारण का स्पष्टीकरण नहीं हो पाता । इसकी गहरी बुनियाद ब्रिटिश शासन की परिवर्तित आर्थिक नीतियों में है ।

मध्यकाल में भूमि पर राजा का अधिकार होता था, जो जागीरों में बँटी होती थी । उस पर किसान पुस्त-दरपुस्त खेती करता था और उपज का एक निश्चित भाग भू-कर के रूप में देता

था । उपज कम होने पर किसान और राजा-दोनों को नुकसान उठाना पड़ता था । भीषण अकाल के समय केवल लगान माफी ही नहीं, कभी-कभी उदार मालिकों द्वारा किसानों की आर्थिक सहायता भी की जाती थी । ब्रिटिश शासन काल में इस व्यवस्था को बदल कर स्थाई जमींदारी की व्यवस्था कायम हुई । इस व्यवस्था में लगान को उपज से न जोड़ कर भूमि के रकबे (क्षेत्र) से जोड़ दिया गया । लगान निश्चित कर दी गयी । चाहे उपज हो या न हो मालगुजारी की निश्चित रकम देनी ही पड़ती थी । सरकारी खजाने में अधिक-से-अधिक राशि जमा हो, इसके लिए मालगुजारी की राशि में अभूतपूर्व वृद्धि कर दी गयी थी । कृषि-व्यवस्था में शोषण की इस प्रवृत्ति का जन्म हुआ, जिससे 'पूस की रात' जैसी स्थिति पैदा हुई ।

अपने इस रूप में 'पूस की रात' कहानी उपनिवेशवादी, साम्राज्यवादी, पूँजीवादी शोषण के विरूद्ध एक गरीब और दलित किसान द्वारा दर्ज किया गया विरोध है । इस सम्बन्ध में डा0 सत्यकाम ने अपनी पुस्तक 'प्रेमचंद की कहानियाँ: पुनर्रावलोकन' में लिखा है कि "यह एक रात की कहानी न होकर एक युग की कहानी है, जिसमें चारों ओर अँधेरा-पूस की रात का है- मेहनतकशों के लिए फाका है, सुविधा भोगी वर्ग के मजे-ही-मजे हो । यह कहानी मात्र हल्कू नाम के एक किसान की कहानी नहीं है, जो अपना हाड़-मांस गला कर तैयार फसल को केवल इस लिए जानवरों द्वारा चर जाने देता है ताकि उसे पूस की कड़कती ठंड की रात खेत में न बिगनी पड़े । यह शोषण पर आधारित समाज के भीतर सुलगने वाला एक भभका है । (पृ0- 123) इस भभके का उपयोग कर सहजानन्द सरस्वती और बाबा रामचन्द्र ने किसान-विद्रोह खड़ा कर ब्रिटिश आर्थिक नीतियों का विरोध किया था । इस व्यापक परिप्रेक्ष्य से जोड़ कर ही हम 'पूस की रात' कहानी के प्रतिपाद्य और उद्देश्य की सही ढंग से जाँच-परख कर सकते हो । लगान की गंभीर समस्या को तो इस जानकारी के बिना समझा ही नहीं जा सकता ।

7.10 संदर्भ ग्रन्थ

1. प्रेमचन्द की कहानियों का पुनरावलोकन : डॉ0 सत्यकाम, अनुपम प्रकाशन, पटना कालेज के सामने, पटना-इसमें केवल 'पूस की रात' वाला आलेख पढ़ें ।
2. प्रेमचन्द: विरासत का सवाल: डॉ0 शिवकुमार मिश्र, पीपुल्स लिट्रेसी, 217 मटिया महल दिल्ली- 110006
3. हिन्दी कहानी-विविध संदर्भ: डॉ0 वेद प्रकाश जुनेजा, प्र0 ज्योति बुक डिपो, करनाल, हरियाणा ।
4. प्रेमचंद : प्रकाशचन्द्र गुप्त, साहित्य अकादमी, नई दिल्ली
5. हिन्दी कहानी-बदलते प्रतिमान रघुवरदयाल वार्ष्णेय, पाण्डुलिपि प्रकाशन, ई- 11/5, कृष्णनगर, दिल्ली- 110051
6. प्रेमचंद एक विवेचन: डॉ0 इन्द्रनाथ मदान, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली ।

7.11 बोध-प्रश्न

इन प्रश्नों में कुछ ऐसे प्रश्न भी हो, जिनका सही उत्तर मात्र कहानी के आधार पर नहीं दिया जा सकता । अत: उनके लिए पूरी इकाई को पढ़ना आवश्यक है । कुछ प्रश्नों के उत्तर केवल

कहानी के आधार पर भी दिए जा सकते हो । नीचे दिए गए प्रश्नों के उत्तर दें और अपने उत्तरों को इकाई में आगे दिए गए सही उत्तरों (5.11) से मिलाकर जांचें-

1. 'पूस की रात' कहानी का नायक कौन है? ( )
2. 'पूस की रात' कहानी की नायिका कौन है? ( )
3. हल्कू ने मुन्नी से रूपए किस प्रकार प्राप्त किए?
   क. दबाव डालकर
   ख. खुशामद कर
   ग. अपनी बेइज्जती की बात कर
   घ. अपने सही होने का विश्वास दिलाकर ( )
4. हल्कू द्वारा खेत की रखवाली की उपेक्षा क्यों हुई?
   क. आलसी स्वभाव. के कारण
   ख. अकर्मण्यता के कारण
   ग. 'मजदूरी हम करें और मजा दूसरे लूटे' की भावना के कारण
   घ. जाड़े के भय के कारण()
5. प्रेमचंद ने हल्कू के चरित्र को किस रूप में प्रस्तुत किया है?
   क. एक व्यक्ति के रूप में
   ख. देश के गरीब किसानों के प्रतिनिधि के रूप में
   ग. एक आलसी किसान के रूप में
   घ. भाग्यवाद में विश्वास करने वाले के रूप में ( )
6. प्रेमचन्द ने जबरा को किस प्रकार कहानी के एक पात्र का रूप दिया है? मात्र चार पंक्तियों में उत्तर दें-

.....
.....
.....
.....

7. मुन्नी के चरित्र की किन्हीं तीन विशेषताओं का उल्लेख करें? उत्तर मात्र दो पंक्तियों में दे-

.....
.....

8. किसकी आत्मीयता के भाव से प्रेरित होकर जबरा का 'कर्त्तव्य उसके हृदय में अरमान की भाँति उछल रहा था ।' कहानी के मूल पाठ के आधार पर इसका उत्तर चार पंक्तियों में दे ।

.....
.....
.....
.....

9. प्रश्न संख्या 9 और उसके बाद के प्रश्नों के उत्तर अलग कागज पर लिखें ।
10. प्रेमचन्द के साहित्यिक महत्व पर संक्षेप में प्रकाश डालें ।
11. प्रेमचंद युगीन सामाजिक-आर्थिक परिवेश के किस पहलू को 'पूस की रात' का प्रमुख मुद्दा बनाया गया है? संक्षेप में स्पष्ट करें ।
12. 'पूस की रात' कहानी के शीर्षक के औचित्य पर प्रकाश डालें ।
13. 'पूस की रात' कहानी के निम्नलिखित दो अंशों की व्याख्या करें-

क. 'रात ने शीत को हवा से धधकाना शुरु किया । हल्कू उठ बैठा और दोनों घुटनों को छाती से मिलाकर सिर को उसमें छिपा लिया, फिर भी ठंड कम न हुई । ऐसा जान पड़ता था सारा रक्त जग गया है । धमनियों में रक्त हिम बन कर बह रही है । उसने झुक कर आकाश की ओर देखा, अभी कितनी रात बाकी है । सप्तर्षि अभी आकाश में आधे भी नहीं चढ़े । ऊपर आ जाएँगे तब कहीं सबेरा होगा । अभी पहर के ऊपर रात है ।"

ख. "थोड़ी देर में अलाव जल उठा । उसकी लौ ऊपर वाले वृक्ष की पत्तियों को छू-छूकर भागने लगी । इस अस्थिर प्रकाश में बगीचे के विशाल वृक्ष ऐसे मालूम होते थे, मानो उस अथाह अंधकार को अपने सिरों पर संभाले हुए हों । अंधकार के उस आनंद-सागर से यह प्रकाश एक नौका के समान हिलता, मचलता हुआ जान पड़ता था ।"

7.12 बोध प्रश्नों तथा अन्य लघुत्तरी प्रश्नों के सही उत्तर :

1. हल्कू
2. मुन्नी,
3. ग,
4. ग,
5. ख,
6. जबरा हल्कू की सहानुभूति, चेतावनी, उसके उलाहनों आदि का पूँछ हिलाकर, पंजे उठाकर, कूँ-कूँकर, भावभरी आँखों से देखकर उत्तर देने के साथ ही उसके हित की जी-जान से रक्षा करता है । जबरा के अभाव में कहानी ही अधूरी नहीं रहती । हल्कू का चरित्र भी अधूरा ही रह जाता ।
7. मुन्नी एक कुशल व्यवहारिक नारी थी, वह एक सफल सहधर्मिणी थी, सत्यवादिता से उसने कभी मुँह नही मोड़ा ।
8. हल्कू की गोद में प्यार भरी आत्मीयता से प्रेरित होकर जबरा खेत में जानवरों की आहट पाते ही हार के चारों तरफ दौड़-दौड़ कर भूँकने लगा । इस तथ्य को व्यंजित करने के लिए प्रेमचन्द ने जबरा के हद्य में कर्त्तव्य भाव को अरमान लालसा की भाँति उछलना कहा है ।
9. इस प्रश्न के उत्तर के लिए इकाई में दी गयी प्रस्तावना के अंतिम दो पृष्ठों से सामग्री लें ।

10. इस प्रश्न के उत्तर के लिए इकाई में दिए गए 'प्रतिपाद्य और उद्देश्य' (5.9) के दूसरे, तीसरे और चौथे पैरे से सामग्री लें ।
11. इस प्रश्न के उत्तर के लिए इकाई के 'कथावस्तु और शीर्षक की उपयुक्तता के अंतिम दो पैरों से सामग्री लें ।
12. इकाई में दी गई संदर्भ सहित व्याख्याए 5.4 के दोनों नमूनों के आधार पर दोनों गद्यांशों की व्याख्या स्वयं करें ।

7.13 अभ्यासार्थ कुछ दीर्घोत्तरी प्रश्न

1. 'पूस की रात' केवल हल्कू की कहानी न होकर सम्पूर्ण भारत के दलित और गरीब किसानों के उत्पीड़न और शोषण की कहानी है ।' तर्कसंगत ढंग से इस कथन की पुष्टि करें । (इसके उत्तर के लिए 'प्रतिपाद्य: उद्देश्य' 5.9 के अंतिम तीन पैरों से सामग्री लें ।)
2. 'प्रेमचन्द ने अपने सम्पूर्ण लेखन में गरीब किसान-मजदूरों के प्रति अपनी सहानुभूति और पक्षधरता का परिचय दिया है ।' इस कथन के संदर्भ में अपना मत प्रकट करें । (इसके लिए इकाई की 'प्रस्तावना' 5.1 को उत्तर का आधार बनाए ।)
3. निम्नलिखित विषयों पर टिप्पणियाँ लिखें- भाव पल्लवन के रूप में-
   क. मजदूरी हम करें, मजा दूसरे लुटें ।
   ख. अच्छी खेती है । मजदूरी करके लाओ और वह भी उसी में झोंक दो ।
   ग. 'अब मजदूरी करके मालगुजारी भरनी पड़ेगी ।रात को ठंड में यहाँ सोना तो नहीं पड़ेगा ।

इकाई - 8

'उसने कहा था' (चंद्रधर शर्मा 'गुलेरी')

इकाई की रूपरेखा

8.0 उद्देश्य

8.1 प्रस्तावना

8.2 कहानी का वाचन

8.3 कठिन शब्दों के अर्थ

8.4 संदर्भ सहित व्याख्या

8.5 कथावस्तु

8.6 चरित्र चित्रण

8.7 वातावरण (परिवेश)

8.8 संरचना शिल्प (भाषा शैली)

8.9 उदेश्य (प्रतिपाद्य)

8.10 सारांश

8.11 संदर्भ ग्रन्थ

8.12 बोधप्रश्न/अभ्यास

8.0 उद्देश्य

यहाँ पहली इकाई में हम चंद्रधर शर्मा 'गुलेरी' की प्रख्यात कहानी 'उसने कहा था' दे रहे हैं । इस कहानी के वाचन के साथ आप इसके महत्वपूर्ण अंशों की व्याख्या भी पढ़ेंगे तथा कहानी के विभिन्न पक्षों की विशेषताओं से भी परिचित होंगे । इस इकाई को पढ़ने के बाद आप -

- कहानी में आये कठिन शब्दों और मुहावरों के अर्थ कर सकेंगे ।
- कहानी का सार बता सकेंगे और कहानी के महत्वपूर्ण अंशों की व्याख्या कर सकेंगे ।
- कहानी की कथावस्तु (कथानक) का विश्लेषण कर सकेंगे ।
- कहानी के प्रमुख पात्रों का चरित्र चित्रण कर सकेंगे ।
- कहानी के वातावरण की विशेषताएँ बता सकेंगे ।
- कहानी की भाषा, शैली और संवाद की विशेषताएँ बता सकेंगे ।
- उपर्युक्त विश्लेषण के माध्यम से कहानी का महत्व स्पष्ट कर सकेंगे ।

8.1 प्रस्तावना

इस इकाई में चंद्रधर शर्मा 'गुलेरी' की कहानी 'उसने कहा था' दी जा रही है । गुलेरी जी ने केवल तीन कहानियाँ लिखीं - (1) सुखमय जीवन (1911 ई.) (2) बुद्ध का काँटा (1913 ई.)

और (3) उसने कहा था (1915 ई.) । उनकी 'उसने कहा था' कहानी कथा जगत् की विशिष्ट उपलब्धि है।

'उसने कहा था' कहानी में प्रेम, त्याग और बलिदान के अनुपम भावों का चित्रण हुआ है । कहानी प्रथम विश्वयुद्ध की पृष्ठभूमि पर लिखी गई है । बचपन में बालक-बालिका का मिलन हुआ, फिर दोनों का बिछुड़ना हुआ । तब दृश्य बदल कर फ्रांस के रणक्षेत्र में पहुंचता है और मार्मिक ढंग से कथा का अंत होता है । इस कथ्य का विश्लेषण इस इकाई में विस्तारपूर्वक किया गया है । बोध प्रश्न तथा अभ्यास के माध्यम से आपके ज्ञान की भी परीक्षा होगी ।

8.2 कहानी : 'उसने कहा था' का वाचन

(1)

बड़े-बड़े शहरों के इक्के-गाड़ी वालों की जबान के कोड़ों से जिनकी पीठ छिल गई है और कान पक गए हैं, उनसे हमारी प्रार्थना है कि अमृतसर के बंबूकार्ट वालों की बोली का मरहम लगावें । जब बड़े-बड़े शहरों की चौड़ी सड़कों पर घोड़े की पीठ पर चाबुक से धुनते हुए इक्के वाले कभी घोड़े की नानी से अपना-निकट सम्बन्ध स्थिर करते हैं, कभी राह-चलते पैदलों की आँखों के न होने पर तरस खाते हैं, कभी उनके पैरों की अँगुलियों के पोरों को चींथकर अपने ही को समाया हुआ बताते हैं और संसार की ग्लानि, निराशा और क्षोभ के अवतार बने, नाक की सीध चले जाते है, तब अमृतसर में उनकी विरादरी वाले, तंग चक्करदार गलियों में एक लढ्डी वाले के लिए ठहरकर, सब्र का समुद्र उमड़ा कर, 'बचो खालसाजी! ' 'हटो भाईजी!', 'छहरना माई!' ' आने दो लालाजी!', 'हटो बादश्या ! ' कहते हुए सफेद फेंटों, खच्चरों और बत्तकों, गन्ने और खोमचे और भारे वाले के जंगल में से राह लेते हैं । क्या मजाल है कि 'जी' और 'साहब' बिना सुने किसी को हटना पड़े । यह बात नहीं कि उनकी जीभ चलती ही नहीं, चलती है, पर मीठी छुरी की तरह महीन मार करती हुई । यदि कोई बुढ़िया बार-बार चेतावनी देने पर भी लीक से नहीं हटती तो उनकी वचनावली के ये नमूने हैं - हट जा, जीणेजोगिए, हट जा, करमाँवालिए, हट जा, पुत्ताँ-प्यारिए, बच जा, लम्बी उमराँ वालिए । समष्टि में इसका अर्थ है कि तू जीने योग्य है, तू भाग्यशाली है, पुत्रों को प्यारी है, लम्बी उमर तेरे सामने है, तू क्यों मेरे पहियों के नीचे आना चाहती है? बच जा।

ऐसे बंबूकार्ट वालों के बीच में होकर एक लड़का और एक लड़की चौक की एक दूकान पर आ मिले । उसके बालों और उसके ढीने सुथने से जान पड़ता था कि दोनों सिख हैं । वह अपने मामा के केश धोने के लिए दही लेने आया था और यह रसोई के लिए बड़ियाँ । दूकानदार एक परदेशी से गुंथ रहा था, जो सेर भर गीले पापड़ों की गड्डी को गिने बिना हटता न था। 'तेरे घर कहाँ हैं?'

'मगरे में - और तरे? '
'माँझे में, यहाँ कहाँ रहती है? '
'अतरसिंह की बैठक में, वह मेरे मामा हाते हैं । '
'मैं भी मामा की यहाँ आया हूँ उनका घर गुरु, बाजार में है । '
इतने में दूकानदार निबटा और इनका सौदा देने लगा । सौदा लेकर दोनों साथ-साथ चले । कुछ दूर जाकर लड़के ने मुस्कराकर पूछा - "तेरी कुड़माई हो गई?" इस पर लड़की कुछ आँख चढ़ाकर ' धत्' कहकर दौड़ गई और लड़का मुँह देखता रह गया।

दूसरे-तीसरे दिन सब्जी वाले के यहाँ, या दूध वाले के यहाँ, अकस्मात् दोनों मिल जाते । महीना भर यही हाल रहा । दो तीन बार लड़के ने फिर पूछा - 'तेरी कुड़माई हो गई? ' और उत्तर में वही ' धत्' मिला ।

एक दिन जब फिर लड़के ने वैसे ही हँसी में चिढ़ाने के लिए पूछा तो लड़की, लड़के की सम्भावना के विरुद्ध बोली- 'हाँ, हो गई ।
'कब?'

'कल, देखते नहीं यह रेशम से कढ़ा हुआ यह सालू। ' लड़की भाग गई, लड़के ने घर की राह ली । रास्ते में एक लड़के को मोरी में धकेल दिया, एक छाबडी वाले की दिन भर की कमाई खोई, एक कुत्ते के पत्थर मारा और एक गोभी वाले के ठेले में दूध उड़ेल दिया । सामने नहाकर आती हुई किसी वैष्णवी से टकराकर अन्धे की उपाधि पाई । तब क्हीं घर पहुँचा ।

(2)

'राम-राम यह भी कोई लड़ाई है । दिन-रात खंदको में बैठे हड्डियाँ अकड़ गई । लुधयाने से दस गुना जाड़ा और मेंह और बरफ ऊपर से । पिंडलियों तक कीचड़ में घँसे हुए हैं । गनीमत कहीं दीखता नहीं-घण्टे दो घण्टे में कान के पर्दे फाड़ने वाले धमाके के साथ सारी खंदक हिल जाती है और सौ-सौ गज धरती उछल पड़ती है । इस गैबी गोले से बचे तो कोई लड़े । नगरकोट का जलजला सुना था, यहाँ दिन में पच्चीस जलजले होते हैं । जो कहीं खंदक के बाहर साफा या कुहनी निकल गई तो चटाक से गोली लगती है । न मालूम बेईमान मिट्टी में लेटे हुए हैं या घास की पत्तियों में छिपे रहते हैं।'

'लहनासिंह, और तीन दिन हैं । चार तो खंदक में बिना ही दिये । परसो 'रिलीफ' आ जायेगी और सात दिन की छुट्टी। अपने हाथों 'झटका' करेंगे और पेट भर खाकर सो रहेंगे । उसी फिरंगी

मेम के बाग में-मखमल का-सा हरा घास है । फल और दूध की वर्षा कर देती है । लाख कहते हैं, दाम नहीं लेती । कहती है, तुम राजा हो, मेरे मुल्क को बचाने आये हो।'

'चार दिन तक पलक नहीं झाँपी । बिना फेरे घोड़ा बिगड़ता है और बिना लड़े सिपाही । मुझे तो संगीन चढ़ाकर मार्च का हुक्म मिल जाय । फिर सात जर्मनों को अकेला मारकर न लौटूँ तो मुझे दरबार साहब की देहली पर मत्था टेकना नसीब न हो । पाजी कहीं के, कलों के घोड़े-संगीन देखते ही मुँह फाड़ देते हैं और पैर पकड़ने लगते हैं । यों अंधेरे में तीस-तीस मन का एक गोला फेंकते हैं । उस दिन धावा किया था चार मील तक एक जर्मन नहीं छोड़ा था । पीछे जनरल साहब ने हट जाने का फरमान दिया, नहीं तो.....'

'नहीं तो सीधे बर्लिन पहुँच जाते । क्यों? सूबेदार हजारासिंह ने मुस्कराकर कहा, 'लड़ाई के मामले जमादार या नायक के चलाये नहीं चलते । बड़े अफसर दूर की सोचते हैं । तीन सौ मील का सामना है । एक तरफ बढ़ गए तो क्या होगा?'

'सूबेदारजी, सच है', लहनासिंह बोला, 'पर करें क्या? ' हड्डियों में तो जड़ा धँस गया । सूर्य निकलता नहीं और खाई में दोनों तरफ से चंबे की बावलियों के से सोते झर रहे हैं । एक धावा हो जाय तो गर्मी आ जाय ।

'उद्दमी, उठ, सिगड़ी में कोयले डाल । बजीरा, तुम चार जने बाल्टियाँ लेकर खाई का पानी बाहर फेंको । महासिंह शाम हो गई, खाई के दरवाजे का पहरा बदल दें । ' यह कहते हुए सूबेदार सारी खंदक में चक्कर लगाने लगे ।

वजीरसिंह पलटन का विदूषक था । बाल्टी में गँदला पानी भर कर खाई के बाहर फेंकता हुए बोला- 'मैं पाधा बन गया हूँ । करो जर्मनी के बादशाह का तर्पण । ' इस पर सब खिलखिला पड़े और उदासी के बादल फट गये ।

लहनसिंह ने दूसरी बाल्टी भरकर उसके हाथ में देकर कहा-' अपनी बाड़ी के खरबूजों में पानी दो । ऐसा खाद का पानी पंजाब भर में नहीं मिलेगा । '

'हाँ, देश क्या है, स्वर्ग । मैं तो लड़ाई के बाद सरकार से दस घुमा जमीन यहाँ माँग लूँगा और फलों के बूटे लगाऊँगा।'

'लाड़ी होराँ को भी यहाँ बुला लोगे । या वहीं दूध पिलाने वाली फिरंगी मेम-'

'चुप कर! यहाँ वालों को शरम नहीं । '

'देस-देस की चाल है । आज तक मैं उसे समझा न सका कि सिख तम्बाकू नहीं पीते । वह सिगरेट देने में हट करती है, ओठों में लगाना चाहती है, और मैं पीछे हटता हूँ तो समझती है कि राजा बुरा मान गया । अब मेरे मुल्क के लिए लड़ेगा नहीं।'

'अच्छा, अब बोधासिंह कैसा है?'

'अच्छा है।'

'जैसे मैं जानता ही न होऊँ । रात भर तुम अपने दोनों कम्बल उसे उढाते हो और आप सिगड़ी के सहारे गुजर करते हो। उसके पहरे पर आप पहरा दे आते हो । अपने सुखे लकड़ी के तख्तों पर उसे सुलाते हो, आप कीचड़ में पड़े रहते हो। कहीं तुसी न मांदे पड़ जाना । जाड़ा क्या है मौत है और 'निमोनिया' से मरने वालों को मुरब्बे[1] नहीं मिला करते।'

'मेरा डर मत करो । मैं तो बुलेल की खड्डे के किनारे मरूँगा । भाई कीरतसिंह की गोदी पर मेरा सिर होगा और मेरे हाथ के लगाये हुए आँगन के आम के पेड की छाया होगी ।'

वजीरसिंह ने त्यौरी चढ़ा कर कहा-'क्या करने-मारने की बात लगाई हैं?' 'मरें, जर्मनी और तुरक। हाँ, भाइयों, कैसे-'

दिल्ली शहर ते पिशौर न जाँदिए,
कर लेणा लोंगा दा वपार मडिए,
कर लेणा नाड़ेदा सौदा अडिए,
(ओय) लाणा चटाका कटुए नू
कहू बणाया वे मजेदार गोरिए
हुण लाणा चटाका कटुए नू।।[2]

---

1. नई नहरों के पास वर्ग भूमि

2. अरी दिल्ली शहर से पेशावर को जाने वाली लोगों का व्यापार कर ले और इजारबन्द का सौदा कर ले । जीभ चटचटाकर कद्दू खाना है। गोरी कद्दू मजेदार बना है। अब चटचटाकर उसे खाना है।

कौन जानता था कि दाढ़ियो वाले, घरबारी, सिख, ऐसा लुच्चों का गीत गायेंगे, पर खंदक इस गीत से गूँज उठी और सिपाही फिर ताजे हो गये, मानो चार दिन से सोते और मौज करते रहे हों।

(3)

दोपहर रात गई है। अंधेरा है। सन्नाटा छाया हुआ है। बोधासिंह खाली बिस्कुटों के तीन टिनों पर अपने दोनों कम्बल बिछाकर और लहनसिंह के दो कम्बल और एक बरकोट[1] ओढ़कर सो रहा है। लहनासिंह पहरे पर खड़ा हुआ है। एक आँख खाई के मुँह पर है और एक बोधासिंह के दुबले शरीर पर। बोधासिंह कराहा।

'क्यों बोधा भाई, क्या है?'

'पानी पिला दो।'

लहनासिंह ने कटोरा उसके मुँह से लगाकर पूछा - 'कहो कैसे हो?' पानी पीकर बोधा बोला- ' कँपनी (कँपकपी) छूट रही है। रोम-रोम में तार दौड़ रहे हैं। दाँत बज रहे है।'

'अच्छा, मेरी जरसी पहन लो'

'और तुम?'

'मेरे पास सिगड़ी है और मुणे गरमी लगती है, पसीना आ रहा है।'

'ना, मैं नहीं पहनता, चार दीन से तुम, मेरे लिए

'हाँ, यदि आई। मेरे पास दूसरी गरम जरसी है। आज सवेरे ही आई है। विलायती से मेम बुन-बुनकर भेज रही है। गुरू उनका भला करें।' या कहकर लहना अपना कोट उतारकर जरसी उतारने लगा।

'सच कहते हो?'

'और नहीं झूठ?' यों कहकर नहीं करते बोधा को उसने जबरदस्ती जरसी पहना दी और आप खाकी कोट और जीन का कुरता भर पहनकर पहरे पर आ खड़ा हुआ। मेम की जरसी की कथा केवल कथा थी।

आधा घण्टा बीता। इतने में खाई के मुँह से आवाज आई, ' सूबेदार हजारासिंह!'

'कौन, लपटन साहब? हुकुम हुजूर' कहकर सूबेदार तनकर फौजी सलाम करके सामने हुआ।

'देखो इसी समय धावा करना होगा। मील भर की दूरी पर पूरब के कोन में एक जर्मन खाई है। उसमें पचास से ज्यादा जर्मन नहीं है। इन पेड़ों के नीचे-नीचे दो खेत काटकर रास्ता है। तीन- चार घुमाव हैं। जहाँ मोड़ है वहाँ पन्द्रह जवान खड़े कर आया हूँ। तुम यहाँ दस आदमी छोडकर सबको साथ ले उनसे जा मिलो । खंदक छीनकर वहीं, जब तक दूसरा हुक्म न मिले डटे रहो। हम यहाँ रहेगा।'

'जो हुकुमा'

चुपचाप सब तैयार हो गये। बोधा भी कम्बल उतारकर चलने लगा। तब लहनासिंह ने उसे रोका। लहनासिंह आगे हुआ तो बोधा के बाप सूबेदार ने उँगली से बोधा की ओर इशारा किया । लहनासिंह समझकर चुप हो गया । पीछे दस आदमी कौन रहे, पर इस पर बड़ी हुज्जत हुई । कोई रहना नहीं चाहता था । समझा-बुझाकर सूबेदार ने मार्च किया । लपटन साहब लहना की सिगड़ी के पास मुँह फेरकर खड़े हो गये और जेब से सिगरेट निकालकर सुलगाने लगे । दस मिनट बाद उन्होंने लहना की ओर साथ बढ़ाकर कहा-

'लो तुम भी पियो ।'

आँख मारते-मारते लहनासिंह सब समझ गया । मुँह का भाव छिपाकर बोला- ' लाओ, साहब ।' हाथ आगे करते ही उसने सिगड़ी के उजाले में साहब का मुँह देखा, बाल देखे । तब उसका माथा ठनका । लपटन साहब के पट्टियों वाले बाल एक दिन में कहाँ उड़ गये और उनकी जगह कैदियों के से कटे हुए बाल कहाँ से आ गये?

शायद साहब शराब पिये हुए हैं और उन्हें बाल कटवाने का मौका मिला गया है? लहनासिंह ने जाँचना चाहा-लपटन साहब पाँच वर्ष से उसकी रेजीमेण्ट में थे ।

'क्यों साहब, हम लोग हिन्दुस्तान कब जायेंगे?'

'लड़ाई खत्म होने पर । क्यों, क्या यह देश पसन्द नहीं ।'

'नहीं साहब, शिकार के वे मजे यहाँ कहाँ? याद है, पारसाल नकली लड़ाई के पीछे हम आप जगाधरी के जिले में शिकार करने गये थे' -

'हाँ ही'

वहीं जब आप खोते पर सवार थे और आपका खानसामा अब्दुला रास्तें में एक मन्दिर में जल चढ़ाने को रह गया था?

'बेशक, पाजी कहीं का ।'

---

1. ओवरकोट

'सामने से यह नीलगाय निकली कि ऐसी बड़ी मैंने कभी न देखी थी और आपकी एक गोली कंधे में लगी और पुट्ठे में निकली । ऐसे अफसर के साथ शिकार खेलने में मजा है । क्यों साहब, शिमले से तैयार होकर उस नीलगाय का सिर आ गया था न! आपने कहा था कि रजमेण्ट की मेस में लगायेंगे । '

'हाँ, पर मैंने वह विलायत भेज दिया ।'
'ऐसे बड़े-बड़े सींग । दो-दो फुट के तो होंगे ।'

'हाँ, लहनासिंह, दो फुट चार इंच के थे । तुमने सिगरेट नहीं पिया?'

'पीता हूँ साहब, ' दियासलाई ले आता हूँ - कहकर लहनासिंह खंदक में घुसा । अब उसे सन्देह नहीं रहा था । उसने झटपट निश्चय कर लिया था कि क्या करना चाहिए ।

अंधेरे में किसी सोने वाले से वह टकराया ।
'कौन? वजीरासिंह?'

'हाँ, क्यों लहाना, क्या कयामत आ गई । जरा तो आँख लगने दी होती । ' -

बोध प्रश्न :

आपने कहानी का उपर्युक्त अंश ध्यान से पड़ा होगा । अब आप निम्नलिखित प्रश्नों का उत्तर दीजिए और अपने उत्तरों को इकाई के अंत में दिये गये उत्तरों से मिलाइए -

1. 'क्या मजाल है कि 'जी' और 'साहब' बिना सुने किसी को हटना पड़े', यह बात किसकी बोली के लिए कही गई?
   (क) खोमचे वालों की बोली के लिए
   (ख) बड़े-बड़े शहरों के इक्के-गाड़ी वालों की बोली के लिए
   (न) अमृतसर के बंबूकार्ट वालों की बोली के लिए
   (घ) पैदल चलने वालों की बोली के लिए
2. 'नहीं तो सीधे बर्लिन पहुँच जाते । क्यों? 'ये शब्द किसने कहे?
   (क) लहना सिंह ने (ख) वजीरा सिंह ने
   (न) बोधा सिंह ने (घ) हजारा सिंह ने
3. 'क्यों साहब, हम लोग हिन्दुस्तान कब जायेंगे?' यह वाक्य किसने किससे कहा?
   (क) सूबेदार हजारा सिंह ने लपटन साहब से
   (ख) लहना सिंह ने वजीरा सिंह से
   (ग) लहना सिंह ने लपटन साहब से

(घ) लहना सिंह ने लपटन साहब से

(4)

'होश में आओ । कयामत आई है और लपटन साहब की वर्दी पहन कर आई है ।'
'क्या?'

'लपटन साहब या तो मारे गये है या कैद हो गये हैं । उनकी वर्दी पहन कर यह कोई जर्मन आया है । सूबेदार ने इसका मुँह नहीं देखा । मैंने देखा है और बातें की है । सौहारा[1] साफ उर्दू बोलता है, पर किताबी उर्दू और मुझे पीने को सिगरेट दिया है ।'
'तो अब?'

'अब मारे गये । धोखा है । सूबेदार होरां कीचड़ में चक्कर काटते फिरेंगे और यहाँ खाई पर धावा होगा । उधर उन पर खुले में धावा होगा । उठो, एक काम करो । पलटन के पैरों के निशान देखते- देखते दौड़ जाओ । अभी बहुत दूर न गये होंगे । सूबेदार से कहो कि एकदम लौट आवें । खंदक की बात झूठ है । चले जाओ, खंदक के पीछे से निकल जाओ । पत्ता तक न खड़के । देर मत करो ।'
'हुकुम तो यह है कि यहीं-'
'ऐसी-तैसी हुकुम की । मेरा हुकुम-जमादार लहनासिंह, जो इस वक्त यहाँ सबसे बड़ा अफसर है उसका क्रम है । मैं लपटन साहब की खबर लेता हूँ ।
'पर यहाँ तो तुम आठ ही हो ।'
'आठ नहीं, दस लाख । एक-एक अकालिया सिख सवा लाख के बराबर होता है । चले जाओ।'
लौटकराई के मुहाने पर लहनासिंह दीवार से चिपक गया । उसने देखा कि लपटन साहब ने जेब से बेल के बराबर के तीन गोले निकाले । तीनों को जगह-जंगल खंदक की दीवारों में घुसेड़ दिया और तीनों में एक तार-सा बाँध दिया । तार के आगे सूत की एक गुत्थी थी, जिसे सिगड़ी के पास रखा । बाहर की तरफ जाकर एक दियासलाई जलाकर गुत्थी पर रखने-
बिजली की तरह दोनों हाथों से उल्टी बन्दूक को उठा कर लहनसिंह ने साहब की कुहनी पर तान कर दे मारा । धमाके के साथ साहब के हाथ से दियासलाई गिर पड़ी । लहनसिंह ने कुंदा सालब की गरदन पर मारा और साहब ' आँख मीच गौट्ट' कहते हुए चित्त हो गये । लहनसिंह ने तीनों गोले बीनकर खंदक के बाहर फेंके और साहब को घसीट कर सिगड़ी के पास लिटाया । जेबों की तलाशी ली । तीन-चार लिफाफे और एक डायरी निकाल कर उन्हें अपनी जेब के हवाले किया।

---

1. सरसरा (गाली) ।

साहब की मूर्छा हटी । लहनसिंह हँसकर बोला- 'क्यों लपटन साहब? मिजाज कैसा है? आज मैंने बहुत बातें सीखीं । यह सीखा कि सिख सिगरेट पीते हैं । यह सीखा कि जगाधरी के जिले में नील गायें होती है और उनके दो फुट चार इंच के सींग होते हैं । यह सीखा कि मुसलमान खानसामा मूर्तियों पर जल चढ़ाते हैं और लपटन साहब खोते पर चढ़ते हैं । पर यह तो कहो, ऐसी साफ उर्दू कहाँ से सीख गये । हमारे लपटन साहब बिना 'डेम' के पाँच लफ्ज भी नहीं बोला करते थे।'

लहना ने पतलून की जेबों की तलाशी नहीं ली थी । साहब ने मानो जाड़े से बचने के लिए दोनों हाथ जेबों में डालें ।

लहना सिंह कहता चला गया, 'चालाक तो बड़े हो पर माँझे का लहना इतने बरस लपटन साहब के साथ रहा है । उसे चकमा देने के लिए चार आँखें चाहिए । तीन महीने हुए, एक तुरकी मौलवी मेरे गाँव में आया था । औरतों को बच्चे होने के ताबीज बाँटता था और बच्चों को दवाई देता था । चौधरी के बड़ के नीचे मंजा[1]' बिछा कर हुक्का पीता रहता था और कहता था कि जर्मन वाले बड़े पण्डित हैं । वेद पढ़ कर उनमें से विमान चलाने की विद्या जान गये हैं, गौ को नहीं मारते । हिन्दुस्तान में आ जायेंगे तो गौहत्या बन्द कर देंगे । मण्डी के बनियों को बहकाता था कि डाकखाने से रुपये निकाल लो, सरकार का राज जाने वाला है । डाक-बाबू पोल्हूराम भी डर गया था । मुल्लाजी की दाढ़ी मूँड दी थी और गाँव से बाहर निकाल कर कहा था कि अब मेरे गाँव में पैर रखा तो-

साहब की जेब में से पिस्तौल चला और लहना की जाँघ में गोली लगी । इधर लहना की 'हैनरी मार्टिनी' के दो फायरों ने साहब की कपाल क्रिया कर दी । धमाका सुनकर सब दौड़ आये । बोधा चिल्लाया- ' क्या है?'

लहनासिंह ने उसे तो यह कहकर सुला दिया कि 'एक हड़का हुआ कुत्ता आया था, मार दिया' औरों से सब हाल कह दिया। बन्दूकें लेकर सब तैयार हो गये । लहना ने साफ फाड़कर घाव के दोनों तरफ पट्टियाँ कसकर बाँधी । घाव माँस में ही था । पट्टियों के कसने से लहू निकलना बन्द हो गया ।

इतने में सत्तर जर्मन चिल्लाकर खाई में घुस पड़े । सिखों की बन्दूकों की बाढ़ ने पहले धावे को रोका । दूसरे को रोका। पर यहाँ थे आठ (लहनासिंह तक मार रहा था-वह खड़ा था, और लेटे हुए थे) और वे सत्तर । अपने मुर्दा भाइयों के शरीर पर चढ़कर जर्मन घुस आते थे । थोड़े मिनटों में वे-

अचानक आवाज आई, 'वाह गुरुजी दी फतह । वाह गुरुजी दा खालसा ।।' और धड़ाधड़ बंदूकों के फायर जर्मनों की पीठ पर पड़ने लगे । ऐन मौके पर जर्मन दो चक्की के पाटों के बीच में आ गये । पीछे से सूबेदार हजारासिंह के जवान आग बरसाते थे और सामने लहनासिंह के साथियों के संगीन चल रहे थे । पास आने पर पीछे वालों ने भी संगीन पिरोना शुरू कर दिया।

---

1. खटिया ।

एक किलकारी और- 'अकाल सिक्खां दी फौज आई?' वाह गुरुजी दी फतह ! वाह गुरुजी दा खालसा !! सतश्री अकाल पुरूष !!! और लड़ाई खत्म हो गई । तिरेसठ जर्मन या तो खेत रहे थे या कराह थे । सिक्खों में पन्द्रह के प्राण गये । सूबेदार के दाहिने कंधे में से गोली आर-पार निकल गई । लहनासिंह की पसली में गोली लगी । उसने घाव को खंदक की गीली मिट्टी से पूर लिया और बाकी का साफा कसकर कमरबन्द की तरह लपेट लिया । किसी को खबर न हुई कि लहना को दूसरा घाक्भारी घाव लगा है ।

लड़ाई के समय चाँद निकल आया था । ऐसा चाँद, जिसके प्रकाश से संस्कृत-कवियों का दिया हुआ 'क्षयी' नाम सार्थक होता है और हवा ऐसी चह रही थी जैसी कि बाणभट्ट की भाषा में 'दन्तवीणोपदेशाचार्य' कहलाती है । वजीरासिंह कह रहा था कि कैसे मन-मन भर फ्रांस की भूमि मेरे बूटों से चिपक रही थी, जब मैं दौड़ा-दौड़ा सूबेदार के पीछे गया था । सूबेदार लहनासिंह से सारा हाल सुन और कागजात पाकर उसकी तुरन्त बुद्धि को सराह रहे थे और कह रहे थे कि तू न होता तो आज सब मर जाते ।

इस लड़ाई की आवाज तीन मील दाहिनी ओर की खाई वालों ने सुन ली थी । उन्होंने पीछे टेलीफोन कर दिया था । वहाँ से झटपट दो डॉक्टर और बीमार ढोने की गाड़ियाँ चली, जो कोई एक डेढ़ घण्टे के अन्दर- अन्दर आ पहुँची । एक फील्ड अस्पताल नजदीक था । सुबह होते-होते वहाँ पहुँच जायेंगे, इसलिए मामूली पट्टी बाँधकर एक गाड़ी में घायल लिटाये गये और दूसरी में लाशें रखी गयी । सूबेदार ने लहनासिंह की जाँघ में पट्टी बंधवानी चाही पर उसने यह कहकर टाल दिया कि थोड़ा घाव है, सवेरे देखा जायेगा । बोधासिंह ज्वर में बर्रा रहा था । वह गाड़ी में लिटाया गया । लहना को छोड़ कर सूबेदार जाते ही नहीं थे । यह देख लहना ने कहा- 'तुम्हें बोधा की कसम है और सूबेदारनी जी की सौगंध है, जो इस गाड़ी में न चले जाओ ।'

'और तुम?'

'मेरे लिए वहाँ पहुँच कर गाड़ी भेज देना । और जर्मन मुर्दों के लिए भी तो गाड़ियाँ आती होंगी । मेरा हाल बुरा नहीं है देखते नहीं, मैं खड़ा हूँ?' वजीर सिंह मेरे पास तो है ही ।
'अच्छा पर-'

'बोधा गाड़ी पर लेट गया? भला । आप भी चढ़ जाओ । सुनिए तो, सूबेदारनी होराँ को चिट्ठी लिखो तो मेरा मत्था-टेकना लिख देना और जब घर जाओ तो यह कह देना कि मुझसे जो उसने कहा था, वह कर दिया ।

'गाड़ियाँ चल पड़ी थीं । सूबेदार ने चढ़ते-चढ़ते लहना का हाथ पकड़ कर कहा, 'तैने मेरे और बोधा के प्राण बचाये हैं । लिखना कैसा? साथ ही घर चलेंगे । अपनी सूबेदारनी को तू ही कह देना । उसने क्या कहा था?'

'अब आप गाड़ी पर चढ़ जाओं । मैंने जो कहा, वह लिख देना और कह भी देना ।'
गाड़ी जाते ही लहना लेट गया । 'वजीरा पानी पिला दे और मेरा कमरबन्द खोल दें । तर हो रहा है ।'

(5)

मृत्यु के कुछ समय पहले स्मृति बहुत साफ हो जाती है । जन्म भर की घटनाएँ एक-एक करके सामने आती हैं । सारे दृश्यों के रंग साफ होते हैं । समय की धुन्ध बिल्कुल उन पर से हट जाती है...
लहनासिंह बारह वर्ष का है । अमृतसर में मामा के यहाँ आया हुआ है । दही वाले के यहाँ, सब्जी वाले के यहाँ, हर कहीं, उसे एक आठ वर्ष की लड़की मिल जाती है । जब वह पूछता है कि 'तेरी कुड़माई हो गई?' तक 'धत्' कहकर वह भाग जाती है । एक दिन उसने वैसे ही पूछा तो उसने कहा-हाँ कल, हो गयी, देखते नहीं यह रेशम के फूलों वाला सालू? सुनते ही लहनासिंह को दुःख हुआ । क्रोध हुआ । क्यों हुआ?
'वजीरासिंह पानी पिला दे ।'
पच्चीस वर्ष बीत गये । अब लहनासिंह नं. 77 राइफल्स में जमादार हो गया है । उस आठ वर्ष की कन्या का ध्यान भी न रहा । न मालूम वह कभी मिली थी, या नहीं । सात दिन की छुट्टी लेकर जमीन के मुकदमें की पैरवी करने वह अपने घर गया । वहाँ रेजीमेंट के अफसर की चिट्ठी मिली कि फौज लाम पर जाती है । फौरन चलए आओ । साथ ही सूबेदार हजारासिंह की चिट्ठी मिली कि मैं और बोधासिंह का गाँव रास्ते में पड़ता था और सूबेदार उसे बहुत चाहता था। लहनासिंह सूबेदार के यहाँ पहुँचा ।
जब चलने लगे, तब सूबेदार बेड़े में से निकल कर आया, बोला-
'लहना, सूबेदारनी तुमको जानती है । बुलाती है । जा मिल आ ।' लहनासिंह भीतर पहुँचा । सूबेदारनी मुझे जानती हैं? कब से? रेजीमेंट के क्वार्टरों में कभी सूबेदार के घर के लोग रहे नहीं । दरवाजे पर जाकर ' मत्था टेकना' कहा । असीस सुनी । लहनासिंह चुप ।
'मुझे पहचाना?'
'नहीं ।'
'तेरी कुड़माई हो गई?' -धत् कल हो गयी, देखते नहीं रेशमी बूटों वाला साल-अमृतसर में...
भावों की टकराहट से मूर्छा खुली । करवट बदली । पसली का घाव बह निकला ।
'वजीरा, पानी पिला'
-उसने कहा था ।

1. स्वप्न चल रहा है । सूबेदारनी कह रही है-' मैंने तेरे को आते ही पहचान लिया । एक काम कहता हूँ । मेरे तो भाग फूट गये । सरकार ने बहादुरी का खिताब दिया है लायलपुर में जमीन दो है, आज नमक हलाली का मौका आया है, पर सरकार ने हम स्त्रियों[1] की एक 'घघीरयाँ पलटन क्यों न बना दी जो मैं सूबेदारजी के साथ चली जाती? एक बेटा है । फौज में भरती हुए उसे एक ही बरस हुआ । उसके पीछे चार और हुए पर एक भी नहीं जिया ।' सूबेदारजी रोने लगी, 'अब दोनों जाते है । मेरे भाग । तुम्हें याद है, एक दिन ताँगे वाले का घोड़ा दही की दुकान के आगे बिगड़ गया था । तुमने उस दिन मेरे प्राण बचाये थे । आप घोड़े की लातों में चले गये थे और मुझे उठा कर दुकान के तख्ते पर खड़ा कर दिया था । ऐसे ही इन दोनों को बचाना । यह मेरी भिक्षा है । तुम्हारे आगे मैं आंचल पसारती हूँ ।

रोती-रोती सूबेदारनी ओबरी[2] में चली गयी । लहना भी आँसू पोंछता हुआ बाहर आया ।

'वजीरसिंह, पानी पिला-उसने कहा था ।'

लहना का सिर अपनी गोदी में रखे वजीरासिंह बैठा है । जब माँगता है, तब पानी पिला देता है । आध घण्टे तक लहना चुप रहा, फिर बोला- 'कौन? कीरतसिंह?'

वजीरा ने कुछ समझा कर कहा-हाँ ।

'भइया, मुझे और ऊँचा कर ले । अपने पट्ट[3]' पर मेरा सिर रख ले ।'

वजीरा ने वैसा ही किया ।

'हाँ अब ठीक है । पानी पिला दे । अब के हाड़[4] में आम खूब फलेगा । चाचा भतीजा दोनों यहीं बैठ कर आम खाना । जितना बड़ा तेरा भतीजा है, उतना ही यह आम है । जिस महीने उसका जन्म हुआ था उसी महीने में उसे मैंने लगाया था ।

वजीरासिंह के आँसू टप-टप टपक रहे थे ।

कुछ दिन पीछे लोगों ने अखबारों में पढ़ा-

फ्रांस और बेल्जियम- 68वीं सूची- मैदान में घावों से मरा न. 77 सिख राइफल्स जमादार लहनासिंह ।

बोध प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए और अपने उत्तर इकाई के अंत में दिये गये उत्तरों से मिलाइये ।

4. 'एक-एक अकालिया सिख सवा लाख के बराबर होता है । ' यह वाक्य किसने कहा?

(क) लपटन साहब ने (ख) लखा सिंह ने

(ग) वजीरा सिंह ने (द) सूबेदारनी ने

---

1. स्त्रियों
2. अन्दर का घर
3. जाँघ
4. आषाढ़

5. लहना सिंह ने लपटन साहब की कपालक्रिया कैसे की?

(क) बम फेंक कर (ख) संगीन मार कर

(न) फायर करके (घ) लातों-घूंसों से

6. 'उसने कहा था', यह बात किसके संदर्भ में है?

(क) सूबेदार हजारा सिंह के (ज) सूबेदारनी के

(न) लपटन साहब के (घ) बोधा सिंह के

8.3 कठिन शब्दों के अर्थ

लड्ढी : गाड़ी, बाछा : बादशाह का पंजाबी रूप, कुड़माई : सगाई, सालू : ओढ़नी, छबडी वाले : खोमचे वाला, गनीम : दुश्मन, जलजला : भूकंप, झटका : बकरा मारना, फिरंगी : फ्रेंच, उदमी : उद्यमी, पाघा : पुरोहित, लाड़ी होराँ : स्त्री के लिए आदरवाचक शब्द, सिगड़ी : अंगीठी, मुरब्बे : नई नहरों के पास वर्ग भूमि, खोता : गघा, आख ! मीन गोट्ट : हाय! मेरे ईश्वर, मजा : खटिया, सत्त सिरी : सत्यश्री, बेड़े : जनाना, तीमियों : स्त्रियों, ओबरी : घर के अंदर की कोठरी, पट्ट : जांघ हाड़ : आषाढ ।

8.4 संदर्भ सहित व्याख्या

यहाँ हम कहानी के कुछ महत्वपूर्ण अंशों की संदर्भ सहित व्याख्या प्रस्तुत कर रहे हैं । इससे आपको कहानी समझने में और सहायता मिलेगी ।

उद्धरण. 1

"राम-राम यह भी कोई लड़ाई है ।.... छिपे रहते हैं ।"

संदर्भ :

प्रस्तुत गद्यांश चंद्रधर शर्मा 'गुलेरी' की अमर कहानी 'उसने कहा था' से लिया गया है । यह अवतरण कहानी के द्वितीय भाग से सम्बन्धित है । इसमें युद्ध क्षेत्र में तैनात, कर्तव्यनिष्ठ सैनिकों के कष्ट आदि का चित्रण किया गया है । सैनिकों की मनोदशा यह है कि खंदकों में बैठे-बैठे न तो ढंग से लड़ पाते हैं और न ही स्वयं को सुरक्षित रख पाते हैं । शीत, वर्षा और बर्फ के कारण परेशानी बहुत बढ़ गई है । कहानीकार ने इस स्थिति का चित्रण इन पंक्तियों में किया है ।

व्याख्या

कहानीकार ने लहना सिंह के माध्यम से सैनिकों की मुसीबतों का चित्रण किया है । सैनिक पिण्डलियों तक कीचड़ में धंसे रहते हैं और ठंड की अधिकता के कारण सूर्य का प्रकाश भी लुप्त हो गया है । लुधियाना से दस गुना अधिक जाड़ा पड़ता है, साथ ही वर्षा और बर्फ की

मार भी सहनी पड़ती है । हर घण्टे दो घण्टे बाद भयानक धमाके होते रहते हैं, जिनसे सारी खन्दक हिल जाती है । कई बार तो धरती सौ-सौ गज ऊँची उछल कर इधर-उधर फैल जाती है । शत्रु कहीं नजर नहीं आता । इन भीषण गोलों से इतना भय लगता है कि लड़ने की हिम्मत ही जवाब दे जाती है । शत्रु कहीं नजर नहीं आता । इन भीषण गोलों से इतना भय लगता है कि लड़ने की हिम्मत ही जवाब दे जाती है । नगरकोट के भूकंप के बारे में सुना ही था कि वह बहुत भयानक था, पर यहाँ तो ऐसे जलजले दिन में पच्चीस बार होते रहते हैं । कहीं भूल से खंदक के बाहर साफा या कुहनी निकली रह जाती है तो तुरन्त उस भाग को गोली का प्रहार सहना पड़ता है । पता नहीं ये शत्रु कितने बेईमान है कि हर समय मिट्टी में लेटे हुए या घास की पत्तियों के छिपे हुए इस अवसर की तलाश में रहते हैं कि कब किसी सैनिक का कोई भाग बाहर नजर आये और वे गोली चला दें ।

विशेष :

1. इस अवतरण में युद्ध क्षेत्र की विषम स्थिति, वहाँ की कठिनाईयों से परिपूर्ण परिस्थितियों तथा सैनिकों की मनोस्थिति का चित्रण यथार्थ शैली में किया गया है ।
2. कहानीकार ने सजीव भाषा का प्रयोग किया है । चित्र उपस्थित करने वाले शब्द है-कान के पर्दे फाड़ने वाला धमाका, सौ-सौ गज धरती का उछलना, चटाक से गोली लगना इत्यादि।
3. भाषा सरल और सुबोध है । बोलचाल के शब्दों का प्रयोग हुआ है । वाक्य भी छोटे-छोटे और प्रभावशाली है । भाषा में प्रवाह है ।

उद्धरण : 2

"जाड़ा क्या है, मौत है और निमोनिया से मरने वालों को मुरब्बा नहीं मिला करते ।"

ये पंक्तियाँ श्री चन्द्रधर शर्मा गुलेरी की 'उसने कहा था' कहानी से अवतिरत है । इससे पहले बोध सिंह और लहना सिंह की बातचीत हो चुकी है । लहना सिंह बोधा की देखभाल में व्यस्त रहता है पर वजीरासिंह को चिंता है कि कहीं वह बीमार न पड़ जाये । वह लहना सिंह से कहता भी है-

यहाँ भयंकर सर्दी पड़ रही है । इस शीत को सहना ऐसा ही है, जैसे मौत के कष्ट को सहना । साथ ही वह कहता है कि निमोनिया से मरने वालों को सरकार मुरब्बे (नहरों के पास वर्ग भूमि) नहीं देती । स्पष्ट है कि शीत के भयंकर प्रकोप को सहने वाले व्यक्तियों की मृत्यु अत्यन्त कष्टकर होती है, उन्हें किसी का पुरस्कार नहीं मिलता ।

टिप्पणी :

इस अवतरण की भाषा सहज और सरल है । इसमें लहना सिंह के परोपकारी रूप का चित्रण हुआ है । उसके प्रति उसके साथियों में चिंता भी है ।

अभ्यास :

1. नीचे दिये उद्धरण की संदर्भ सहित व्याख्या कीजिए-

   "लड़ाई के समय चाँद निकल आया था । ऐसा चाँद, जिसके प्रकाश से संस्कृत कवियों का दिया हुआ 'क्षयी' नाम सार्थक होता है और हवा ऐसी चल रही थी, जैसा कि बाणभट्ट की भाषा में 'दंतवीणोपदेशाचार्य' कहलाती है । "

   संदर्भ-

.....

.....

विशेष-

.....

.....

8.5 कथा वस्तु

किसी भी कहानी का कथ्य, कथावस्तु के स्वरूप की रचना करता है । इस कारण कभी तो घटनाओं का घटाटोप मिलता है, तो कभी वे अत्यन्त क्षीण हो जाती है और पात्र प्रमुख हो जाते हैं । कभी घटना तथा पात्र प्रमुख हो जाते हैं । कभी घटना तथा पात्र दोनों की गौणता, वातावरण को प्रमुख बना देती है । इस प्रकार कथावस्तु में घटना, पात्र व वातावरण तीनों का प्रमुख स्थान रहता

कहानी का आरम्भ :

'उसने कहा था' कहानी का आरम्भ अत्यन्त आकर्षक है । लेखक ने अमृतसर के भीड़भाड़ वाली सडकों पर चलते इक्के-तांगों वालों की बोली का परिचय दिया है । फिर संयोगवश एक बालक एक बालिका को तांगे के नीचे आ जाने से बचा लेता है । यहीं से दोनों का परिचय आरम्भ होता है । लड़का जब रोज ही 'तेरी कुड़माई हो गई' कहकर लड़की को तंग करता है तो एक दिन उसे' ही, हो गई' उत्तर मिलता है । लड़का बैचेन हो उठता है । इसके तुरन्त बाद हम फ्रांस-बेल्जियम के मैदान में, खंदक के भीतर सिख रेजीमेंट की गतिविधियों से परिचित होते हैं । प्रथम भाग से दूसरा भाग एकदम अलग है और पाठक उसको एकदम समझ नहीं पाता, किन्तु बाद में सब कुछ स्पष्ट होने लगता है ।

कहानी का मध्य भाग :

आरम्भ के संयोग के बाद पच्चीस वर्ष बाद कथा का विकास होता है । लड़का (लहना सिंह) नं. 77 राइफल्स जमादार होकर अंग्रेजी शासन की ओर से फ्रांस के युद्ध स्थल पर डटा हुआ है । पिछली बार वह अपनी फौज के सूबेदार के यहाँ जाता है तो वहाँ सूबेदारनी से भेंट होती है, जो कभी उसे अमृतसर के बाजार में मिली थी । वह कहती है- 'तुम्हें याद है, एक दिन ताँगे वाले का घोड़ा दहीवाले की दुकान के पास बिगड़ गया था, तुमने उस समय मेरे प्राण बचाये थे, आप घोड़े की लातों में चले गये थे और मुझे उठा कर दुकान के तख्ते पर खड़ा कर दिया था । ऐसे ही इन दोनों को बचाना, यही मेरी भिक्षा है ।' यहाँ प्रेम, कर्त्तव्य में बदल जाता है ।

वस्तुतः यह दृश्य चरम विकास में स्मृति-दृश्यों के माध्यम से अंत में वर्णित किया गया है । मध्य भाग में बोधा का घायल होना, लहना का उसके प्रति विशेष प्यार और सारा, लपटन साहब की मृत्यु तथा उसके स्थान पर दुश्मन का लपटन बन कर आना, लहना सिंह द्वारा उसको मारना और स्वयं घायल होने पर भी मोर्चे से न जाना इत्यादि बातें उस अंश में पढ़ने को मिलती है ।

अंतिम अंश :

यह स्मृति दृश्यों के साथ प्रस्तुत किया गया है । कथावस्तु का अंत भी लहनासिंह की मृत्यु के साथ हो जाता है । गुलेरी जी के कथनाक रचना में संयोग, प्रेम, कर्त्तव्य और बलिदान को व्यापक रूप में प्रस्तुत किया है । पाठकों की जिज्ञासा अंत तक बनी रहती है ।

बोध प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए-

7. लड़की की कुड़माई की बात सुन कर लड़के पर क्या प्रतिक्रिया हुई?
   (क) वह चुपचाप घर चला
   (ख) उसने लड़की को चिढ़ाया
   (ग) सामने नहाकर आती हुई किसी वैष्णवी से अन्धे की उपाधि पाई
   (घ) वह दुकान पर बैठ गया
8. लहना सिंह को लपटन साहब पर सबसे पहले शक कब हुआ?
   (क) जब लपटन ने जगाधरी में शिकार की बात की
   (ख) जब लपटन ने लहना सिंह को सिगरेट पीने को कहा
   (न) जब लपटन ने उर्दू में बात की
   (घ) जब लपटन ने ' आख ! मीन गौर' कहा ।
9. 'कयामत आई है और लपटन साहब की वर्दी पहन कर आई है' इस बारे में लहना सिंह ने वजीरा सिंह से क्या कहा?

   .....

   .....
10. 'मृत्यु के कुछ समय पहले स्मृति बहुत साफ हो जाती है', लहना सिंह की मृत्यु से पूर्व की दो घटनाएँ लिखिए ।

   .....

   .....

8.6 चरित्र चित्रण

इस कहानी में प्रमुख पात्र लहना सिंह और सूबेदारनी है । इनके अतिरिक्त सूबेदार वजीरा सिंह, पुत्र बोधा सिंह, वजीरा सिंह, लपटन साहब का भी परिचय मिलता है ।

लहना सिंह :

लहना सिंह 'उसने कहा था' कहानी का प्रमुख पात्र है । इस कहानी में उसके चरित्र की अनेक विशेषताएँ उजागर हुई है-

1. **सच्चा वीर :** सच्ची वीरता के सभी गुण लहना सिंह में मिलते हैं । पूरी कहानी में वह आदर्श, वीर सैनिक के रूप में छाया हुआ है । लहना सिंह नं. 77 सिख राइफल में जमादार है । वह फ़्रांस की जमीन पर जर्मनों से लड़ने जाता है । वह बचपन से ही साहसी है, उस समय उसने एक घोड़े की टाँगों के नीचे प्रवेश करके एक बालिका के प्राण बचाये थे ।

युद्ध क्षेत्र में भी वह लड़ने के लिए हर समय तैयार रहता है । वह कहता भी है- 'एक धावा हो जाए तो गर्मी आ जाए, क्योंकि बिना फिरे घोड़ा बिगड़ता है और बिना लड़े सिपाही । ' जब वजीरा सिंह उसे कहता है कि यहाँ मत रहो, तुम्हारे पास केवल दस सैनिक हैं तो लहना सिंह उत्तर देता है-'दर। नहीं, दस लाख । ' एक-एक अकालिया सिक्स सवा लाख के बराबर होता है । लहना सिंह का शरीर घावों से भर जाता है, किन्तु वह घावों की चिंता न करते हुए अपने कर्त्तव्यों को पूरा करता है ।

2. **निर्भीक :** लहना सिंह निडर और साहसी है । बड़ी से बड़ी मुसीबतों से भी वह टक्कर लेता रहता है । जर्मन सेना के 70 सैनिक जब लहना सिंह की टुकड़ी पर हमला करते हैं, तब उसके पास मात्र दस सैनिक थे, किन्तु वह घबराता नहीं । निडरतापूर्वक शत्रु का सामना करता है और विजयश्री प्राप्त करता है । उसका साहस कभी उसे धोखा नहीं देता और वह सभी परिस्थितियों से जूझता रहता है । जाँघ पर गोली लगने के बाद भी वह लपटन साहब को अपने ऊपर हावी नहीं होने देता । उसकी 'हैनरी मार्टिनी' के दो फायर ही साहब की कपाल क्रिया कर देते हैं ।
3. **बुद्धि कौशल :** लहना सिंह के चरित्र में चातुर्य और बुद्धि कौशल कूट-कूट कर भरा हुआ है । वह अपनी बुद्धिमत्ता के बल पर नकली लपटन को तुरन्त पहचान लेता है और संदेह की पुष्टि जिस चतुराई से करता है, उससे युद्ध का नक्शा ही बदल जाता है । यदि उसमें बुद्धि कौशल न होता तो खंदक के सारे सिख सैनिक मारे जाते । वह बड़ी चालाकी से नकली लपटन (लेफ्टिनेंट)एसे सारा रहस्य उगलवा लेता है, साथ ही कहता भी है- 'चालाक तो बड़े हो, पर माँझे का लहना सिंह इतने वर्ष अपने लपटन साहब के साथ रहा है कि उसे चकमा देने के लिए चार आँखें चाहिए । ' लहना सिंह में निर्णय लेने की अद्भुत क्षमता है । कहानीकार ने भी लिखा है-' अब उसे संदेह नहीं रहा था । उसने झटपट निश्चय कर लिया था कि क्या करना चाहिए ।'
4. **आदर्श प्रेमी :** लहना सिंह का बचपन प्रेम के ताने-बाने से बुना हुआ है । वह प्रेम, सहज और निश्छल है, उसमें कामुकता नहीं है । बचपन में जिस लड़की से मिलता है, उसे छेड़े बिना नहीं रहता- 'तेरे कुड़माई हो गई? ' उसे उत्तर में ' धत्' सुनने को मिलता पर एक दिन उसकी संभावना के विरुद्ध लड़की कहती है- 'हो गई' और वह उखड़ा-उखड़ा सा घर पहुँचता है । बचपन के इस प्रेम में आगे चलकर कर्त्तव्य की धारा भी मिल जाती है । प्रेम और कर्त्तव्य का यह संगम लहना सिंह के चरित्र को उज्ज्वल रूप प्रदान करता है । वह समुद्र जैसी गंभीरता से उसे कर्त्तव्य का निर्वाह करता है ।
5. **वचनबद्धता :** लहना सिंह अपनी वचनबद्धता के कारण पाठकों को सर्वाधिक प्रभावित करता है । उसने सूबेदारिनी को वचन दिया था कि वह युद्ध क्षेत्र में उसके पति और पुत्र की रक्षा करेगा । वह अपने वचन का पालन करता है । वह युद्ध क्षेत्र से न जाते हुए सूबेदार को जाने की कसम दिलाता है- 'तुम्हें बोधा की कसम है और सूबेदारिनी जी की सौगंध है जो इस गाड़ी में न चले जाओ । ' फिर कहता है-'जब घर जाओ तो यह कह देना कि मुझे जो उसने कहा था, वह कर दिया । '

इस प्रकार लहना सिंह एक साहसी, कर्मठ और निर्भय सैनिक, वचन का पालनकर्ता प्रेमी के रूप में हमारे सामने आता है ।

सूबेदारनी :

इस कहानी में सूबेदारनी का एक विशिष्ट व्यक्तित्व है । वह इस कहानी की आत्मा है-प्राण शक्ति है । कहानी का उद्भव और विकास इस जीवंत पात्र के साथ जुड़ा हुआ है । वह इस कहानी में कई रूपों में आई है, चुलबुली बालिका गंभीर व पतिपरायणा पत्नी ममतामयी माता के रूप में वह पाठकों को प्रभावित करती है ।

1. **अल्हड़ बालिका :** शुरू में एक सरल किन्तु चपल आठवर्षीय बालिका के रूप में वह उपस्थित होती है, जिसे बारह वर्षीय लहना तांगे के नीचे आने से बचा लेता है । इस कारण लहना के व्यक्तित्व की छाप उसके हृदय पर जम जाती है । यह एक उज्जवल और पवित्र आकर्षण है । दोनों के बीच की नोंक-झोंक 'तेरी कुडमाइ हो गई ' और ' धत्' तक सीमित रहती है पर बाद में लहना की संभावना के विरुद्ध 'हाँ, हो गई' बात से सारा विनोद समाप्त हो जाता है और लहना की इन्द्रधनुषी दुनिया पल भर में नष्ट हो जाती है ।
2. **हजारा सिंह की पत्नी :** कहानी के प्रारम्भिक अंश के बाद लम्बे अंतराल के बाद लहना सिंह की उपस्थिति युद्ध क्षेत्र में डटे सैनिक के रूप में होती है, पर सूबेदारनी की जानकारी अंतिम भाग में हो पाती है, जब मृत्यु से कुछ पहले लहना सिंह विगत घटनाओं को याद करता है तब सूबेदारनी एक आदर्श पत्नी के रूप में हमारे सामने आती है । वह लहना सिंह को पहचान जाती है और कहती है- 'अब दोनों (पति व पुत्र) जाते हैं । मेरे भाग । तुम्हें याद है, एक दिन तांगे वाले का घोड़ा दही वाले की दुकान के पास बिगड़ गया था । तुमने उस दिन मेरे प्राण बचाये थे । ऐसे ही इन दोनों को बचाना, यह मेरी भिक्षा है । यहाँ मर्यादा का अतिक्रमण नहीं हुआ है । यह सूबेदारनी के अटूट विश्वास और शालीनता का प्रमाण है ।'
3. **उदात्त चरित्र :** सूबेदारनी का उदात्त एवं उज्ज्वल चरित्र पाठकों के मन में सदा के लिए अंकित हो जाता है । एक आदर्श पत्नी तथा आदर्श माँ के रूप में उसका चित्रण भारतीय संस्कृति के अनुरूप हुआ है । उसका निश्चल प्रेम लहना सिंह के जीवन की धारा ही बदल कर रख देता है । सूबेदारनी का पुनीत चरित्र इस कहानी का प्राण तत्व है । उसके कारण ही लहना सिंह की बलिदान गाथा, गौरव गाथा बन जाती है और वह हिन्दी कहानी के अमर पात्र के रूप में आज भी जिंदा है । इन दोनों के अतिरिक्त सूबेदार, बोधा, लपटन, वजीरा सिंह आदि पात्रों का भी उल्लेख हुआ है, किन्तु वे विस्तार नहीं पा सके । सूबेदार एक कर्तव्यनिष्ठ तथा निपुण सैनिक है । उसका पुत्र बोधा घायल है, जिसकी सेवा का भाग लहना सिंह के कंधे पर है, लपटन नकली लपटन है, जो अपनी बातों से लहना सिंह के चक्कर में चढ़ जाता है, पर उसकी गोली से ही लहना का प्राणांत होता है । वजीर सिंह पलटन का विदूषक था, वह हंसी-विनोद से सैनिकों का मनोरंजन करता रहता है ।

अभ्यास

2. नीचे दिये गये उद्धारणों के आधार पर लहना सिंह के चरित्र की विशेषताएँ बताइये ।

   क. लड़के ने घर की राह ली । रास्ते में एक लड़के को मोरी में धकेल दिया । एक छाबडी वाले की दिनभर की कमाई खाई, एक कुत्ते के पत्थर मारा और एक गोभी वाले के ठेले में दूध उड़ेल दिया । सामने नहाकर आती हुई किसी वैष्णवी से टकरा कर अन्धे की उपाधि पाई । तब कहीं घर पहुँचा ।

   .....

   .....

   ख. चार दिन तक पलक नहीं झंपी । बिना फेरे घोड़ा बिगड़ता है और बिना लड़े सिपाही. मुझे तो संगीन चढ़ा कर मार्च का हुक्म मिल जाये ।

   .....

   .....

   ग. आज मैंने बहुत बातें सीखीं । यह सीखा कि सिख सिगरेट पीते हैं

   .....

   .....

   घ. सूबेदारनी होराँ को चिट्ठी लिखो तो मेरा मत्था-टेकना लिख देना और जब घर जाओ तो यह कह देना कि मुझसे जो उसने कहा था, वह कर दिया ।

   .....

   .....

8.7 वातावरण (परिवेश)

कहानी के तत्वों में देशकाल या वातावरण का बहुत महत्व होता है । पूरे परिवेश को देखने से कथ्य भी स्पष्ट हो जाता है और कहानी के युग के विशेषताओं की भी पहचान हो जाती है ।

'उसने कहा था' में कई प्रकार के वातावरण मिलते हैं । सर्वप्रथम अमृतसर के बाजारों का सजीव चित्रण हुआ है । कहानी का प्रारम्भ इसी परिवेश में हुआ है 'बड़े-बड़े शहरों के इक्के-गाड़ी वालों की जबान के कोड़ों से जिनकी पीठ हिल गई है और कान एक गए हैं । उनसे हमारी प्रार्थना है कि अमृतसर के बंबूकार्ट वालों की बोली का मरहम लगावें ।'

कहानीकार ने अमृतसर के भीड़भाड़ वाले बाजारों का सजीव चित्र प्रस्तुत किया है । इस माहौल के तुरन्त बाद 'राम-राम यह भी कोई लड़ाई है' कहकर युद्धभूमि का परिवेश प्रस्तुत कर दिया गया है । इस माहौल का चित्र देखिए- 'घंटे दो घंटे में कान के पर्दे फाड़ने वाले धमाके के साथ खंद हिल जाती है और सौ-सौ गज धरती उछल पड़ती है ।'

युद्ध का यह वातावरण कहानी में पूरी तरह से छाया रहता है । प्रारंभिक भाग और अंतिम भाग के कुछ अंशों को छोड़ कर यह परिवेश (प्रथम महायुद्ध, 1914 -18 का) पूरा कहानी में व्याप्त है ।

युद्ध के वातावरण के बीच लेखक ने प्रकृति चित्रण का भी अवकाश निकाल लिया है । देखिए-'लड़ाई के समय चाँद निकल आया था और हवा ऐसी चल रही थी जैसा कि बाणभट्ट की भाषा 'दन्तवीणोपदेशाचार्य' कहलाती है ।'

शीत का वातावरण भी अत्यन्त सजीव है-'लुधियाने से दस गुना जाड़ा और मेह और बरफ ऊपर ।' पाठक भी सर्दी के प्रकोप को महसूस करने लगता है । उस समय हडियाँ अकड़ जाती है। लेखक ने पूरे परिवेश को इतनी सजीवता से व्यक्त किया है कि हम स्वय को रणभूमि के आस- पास पाते हैं ।

पंजाब का वातावरण भी सिख पात्रों के कारण उभर पाया है । पंजाबी शब्द, पंजाबी गीत, पंजाब के नगर सभी इसी माहौल में रचे बसे हैं । देखिए-

1. वाह गुरुजी दा खालसा । सत श्री अकाल पुरूष ।
2. दिल्ली शहर ते पिशौर नूं जांदिए ।

कहने का अर्थ यह है कि 'उसने कहा था' कहानी में प्रथम महायुद्ध के समय का वातावरण सजीव हो उठा है ।

8.8 संरचना शिल्प (भाषा शैली)

कहानी का महत्व उसके कथ्य और शिल्प-दोनों से स्पष्ट होता है । भाषा और शैली कहानी के कला पक्ष को पुष्ट बनाते हैं ।

गुलेरी जी अनेक भाषाओं के जानकर थे । खड़ी बोली के साथ-साथ पंजाबी, उर्दू, लोक प्रचलित शब्द, जर्मन आदि भाषाओं के शब्दों ने कहानी को सजीव बना दिया है ।

पंजाबी :

'हटो बाछा, जीणे जोगिए, करमा वालिए, पुततां-घारिष्टा, कुड़माई (सगाई), मंजा (खटिया), तीमियों (स्त्रियों), पट्ट (जांघ), हाड़ (आषाढ़) इत्यादि ।'

संस्कृत :

विदूषक, क्षयी, दंतवीणोपदेशाचार्य, निराशा, ग्लानि, क्षोभ आदि । वचनावेली बुद्धि ।

तदभव शब्द :

पीठ, हड्डी, ओंठ, मौत, मुँह, दिन

अरबी फारसी :

कागजात, मुराने निशान, जबान, मजाल, गैली, गनीम, जलजला, बेईमान, नसीब, जबरदस्ती, सलाम, मिजाज, मुर्दा, मुकदमा, दरवाजा, नजदीक, लाम, नमकहलाली,खिताब, अखबार आदि।

जर्मन :

आख, मीन गौट्ट (हाय, मेरे ईश्वर)

मुहावरों और लोकोक्तियों का सुन्दर प्रयोग मिलता है । रोम-रोम में तार दौड़ना, दूर की सोचना, पत्ता तक न खड़कना, आंचल पसारना, भाग्य फूट जाना ।

चित्रात्मक भाषा इस कहानी के शिल्प की निराली विशेषता है । अमृतसर के बाजारों के सजीव चित्रण की बात ऊपर कही जा चुकी है । प्रकृति वर्णन, विशेषकर चांद का बिम्ब भी आकर्षक है ।

संवाद :

भाषा के अनुरूप यहाँ संवादों का भी सफल प्रयोग हुआ है । भाषा की सहजता तथा परिस्थिति के अनुरूप इसका प्रयोग-दोनों ही विशेषताएँ संवादों में देखी जा सकती है । देखिए-

1. हाँ, देश क्या है, स्वर्ग है । मैं तो लड़ाई के बाद सरकार से दस गुना जमीन यहीं मांग लूंगा और फूलों के बूटे लगाऊँगा।
2. देस-देस की चाल है । आज तक मैं उसे समझा न सका कि सिख तंबाकू नहीं पीते ।

इन संवादों में संक्षिप्तता और प्रवाह है-

'तेरे घर कहाँ है?'

'मगरे में और तेरे?'

'अंतरसिंह की बैठक में, वह मेरे मामा होते हैं ।'

संवादों में सभी शैलियों को देखा जा सकता है । गुलेरी जी की शैली सरल और व्यावहारिक है । इनकी शैली को 'चटपटी' कहा गया है। अपनी बात को स्पष्ट करने का उनका अंदाज निराला था ।

इस प्रकार भाषा, शैली और संवाद, तीनों दृष्टियों से गुलेरी जी कहानी उत्कृष्ट कोटि की है।

बोध प्रश्न

11. 'उसने कहा था' कहानी में से ऐसे छः शब्द चुनिये, जिनसे पंजाबी वातावरण बनाने में मदद मिली हो-

    (क) ..... ख) .....

    (ग) ..... (घ) .....

    (ङ:) ..... (च) .....

12. कहानी में से वजीरा सिंह का हास्य विनोद भरा वाक्य लिखिए । इसके लिए कहानी पढ़ सकते हैं ।
13. कहानी में आये तीन तत्सम शब्द और तीन तदभव शब्द चुन कर लिखिए ।

    तत्सम शब्द- (क) ..... (ख) .....

    (ग) .....

    तदभव शब्द- (क) ..... (ख) .....

    (ग) .....

अभ्यास

3. नीचे दिए गए उद्धारण की तीन भाषागत विशेषताएँ बताइये-

मैंने तेरे को आते ही पहचान लिया था । एक काम कहती हूँ । मेरे तो भाग फूट गये । सरकार ने बहादुरी का खिताब दिया है । लायलपुर में जमीन दी है, आज नमकहलाली का मौका आया है पर सरकार ने हम तीलियों की एक घघरिया पलटन क्यों न बना दी।

(क).....

(ख).....

(ग).....

4. 'उसने कहा था' कहानी के संवादों की तीन विशेषताएं बताइये-

(क).....

(ख).....

(ग).....

8.9 उद्देश्य (प्रतिपाद्य)

प्रत्येक रचना किसी उद्देश्य (लक्ष्य) को सामने रखकर लिखी जाती है-यही उसका प्रतिपाद्य कहलाता है । उसने कहा था-कहानी का विश्लेषण ऊपर किया गया है, जिससे स्पष्ट होता है कि कहानीकार का उद्देश्य क्या है? यह कहानी प्रथम महायुद्ध की घटनाओं को लेकर लिखी गई है । भारतीय सैनिक ब्रिटिश सरकार की ओर से विदेश में लड़ने जाता है ।

गुलेरी जी की यह कहानी आदर्श प्रधान है । इसमें अनुभूति का जो पुट है, वह साधन के रूप में आया है, प्रतिपाद्य के रूप में नहीं । जीवन के प्रति गुलेरी जी स्वस्थ दृष्टिकोण रखते थे, इसलिए इस कहानी में कहीं भी नीति और सदाचार का हनन नहीं मिलता । निश्चल प्रेम की ऐसी मनभावनी अभिव्यक्ति बहुत कम कहानियों में देखने को मिलती है ।

शीर्षक का महत्व :

'उसने कहा था' शीर्षक अत्यन्त आकर्षक है । 'उस' सर्वनाम का प्रयोग पुरूष और स्त्री दोनों के लिए किया जाता है, अत: पाठक के मन में यह जिज्ञासा बनी रहती है कि किसने क्या कहा था? पूरा कहानी की संवेदना उस शीर्षक के साथ जुड़ी हुई है ।

इस शीर्षक में कौतूहल और जिज्ञासा के ऐसे तत्व मिलते हैं, जो पाठक को अंत तक बाँधे रहते हैं । कहानी के अंत में लहना सिंह का सपना कहानी के शीर्षक के मर्म को पूरी तरह स्पष्ट कर देता है । इसमें कलात्मक सौन्दर्य भी है, अदभूत चमत्कार भी ।

कहानी की मूल संवेदना-प्रेम और कर्त्तव्य ने कहानी के प्रतिपाद्य को अत्यन्त मार्मिक बना दिया है ।

बोध प्रश्न

14. 'उसने कहा था' कहानी की मुख्य समस्या है-

(क) नकली लपटन को पहचाने की समस्या

(ख) प्रेम के एक स्वर्गीय स्वरूप को व्यक्त करने की समस्या

(ग) बम्बू कार्ट वालों की समस्या

(घ) अमृतसर की यातायात समस्या

15. नीचे कुछ वाक्य दिये गये हैं, इनमें से कुछ में कही बातें सही हैं, कुछ गलत । बताइये-

(क) यह द्वितीय महायुद्ध के समय की कहानी है । (सही / गलत)

(ख) लहना सिंह को सूबेदारनी पहचानती थी । (सही / गलत)

(ग) नकली लपटन अंग्रेज था । (सही / गलत)

(घ) युद्ध भूमि में लुधियाना से अधिक ठंड पड़ती थी । (सही / गलत)

8.10 सारांश

आपने 'उसने कहा था' कहानी को ध्यान से पढ़ा होगा और उसके विश्लेषण का भी गंभीरतापूर्वक अध्ययन किया होगा।

- 'उसने कहा था' कहानी भारतीय सैनिक लहना सिंह के निश्छल प्रेम, त्याग और बलिदान पर आधारित है ।
- आप कहानी की कथावस्तु का विश्लेषण कर सकते हैं ।
- आप सभी पात्रों के बारे में अपना मत प्रकट कर सकते हैं ।
- आप इस कहानी के परिवेश समझ गये होंगे ।
- आप कठिन शब्दों का अर्थ बता सकते हैं ।
- आप संवाद, देशकाल तथा भाषा शैली पर अपने विचार व्यक्त कर सकते हैं ।
- आप कहानी विद्या की विशेषताएँ बता सकते हैं ।
- 'उसने कहा था' एक आदर्शवादी कहानी है । इसके प्रतिपाद्य का इस दृष्टि से विश्लेषण कर सकते हैं ।

8.11 संदर्भ ग्रन्थ

- लाल, लक्ष्मीनारायण : हिन्दी कहानियों की शिल्पविधि का विकास
- शुक्ल, रामचंद्र : हिन्दी साहित्य का इतिहास
- शर्मा, जगन्नाथ प्रसाद : हिन्दी की गद्य शैली का विकास, इंडिया प्रेस, इलाहाबाद, संवत् 1992

8.12 बोध प्रश्नों / अभ्यासों के उत्तर

बोध प्रश्न

1. ग
2. घ
3. घ
4. ख
5. ग
6. ख
7. ग
8. ख

9. लहना सिंह ने वजीरासिंह को बताया कि लपटन साहब या तो मारे गये है या कैद हो गये है । उनकी वर्दी पहन कर यह कोई जीवन जर्मन आया है । सूबेदार ने इसका मुँह नहीं देखा। यह किताबी उर्दू बोलता है और मुझे (हना सिंह को) पीने को सिगरेट दिया है।

10.(क) लहनासिंह का अमृतसर में लड़की (सूबेदारनी) से मिलना।

(ख) सूबेदारनी का लहनासिंह से अपने पति और पुत्र की रक्षा करने की भिक्षा माँगना

11.(क) मंजा

(ख) तीमियां

(ग) हाड़

(घ) पट्ट

(ड़) कुड़माई

(च) जीणे जोगिए

12. 'मैं पाधा (पुरोहित) बन गया हूँ । करो जर्मनी के बादशाह का तर्पण ।' इस पर सब खिलखिला पड़े ।

13. तत्सम-प्रार्थना, ग्लानि, पूर्व

तद्भव-भाग, गरमी, पूरब

अभ्यास

3. (क) भाषा सरल और सहज है।

(ख) तद्भव व पंजाबी शब्दों का प्रयोग हुआ है ।

(ग) भाषा भावों के अनुकूल है ।

4. (क) संवाद छोटे तथा गतिशील है।

(ख) संवाद पात्र व परिस्थिति के अनुकूल है ।

(ग) संवादों में नाटकीयता है ।

इकाई - 9

'पत्नी (जैनेन्द्र)

इकाई की रूप-रेखा

9.0 इकाई का उद्देश्य

9.1 प्रस्तावना

9.2 कहानी का वाचन

9.3 कठिन शब्दों के अर्थ

9.4 संदर्भ सहित व्याख्या

9.5 कथावस्तु एवं शीर्षक की उपयुक्तता

9.6 चरित्र-चित्रण

9.7 वातावरण एवं परिवेश

9.8 संरचना-शिल्प

9.9 प्रतिपाद्य एवं उद्देश्य

9.10 संदर्भ ग्रन्थ

9.11 बोध-प्रश्न

9.12 बोध प्रश्नों के सही उत्तर

9.13 अभ्यासार्थ कुछ दीर्घोत्तरी प्रश्न एवं टिप्पणियाँ

9.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई में आप जैनेन्द्र जी की 'पत्नी' कहानी का विस्तृत विवेचन-विश्लेषण पढ़ेंगे । इसे पढ़ने के बाद आप :

- जैनेन्द्र जी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व का संक्षिप्त परिचय प्राप्त कर सकेंगे ।
- मूल कहानी के पाठ का वाचन करेंगे ।
- कठिन शब्दों का अर्थ जान सकेंगे ।
- महत्वपूर्ण गद्यांशों की व्याख्या की समुचित विधि से परिचित होंगे ।
- कथा-वस्तु के स्वरूप और उसकी विशेषताओं से परिचित हो सकेंगे ।
- कहानी के शीर्षक की उपयुक्तता का निर्णय कर सकेंगे ।
- कहानी के संरचना-शिल्प की विशेषताओं को समझ सकेंगे ।
- उपर्युक्त तथ्यों के आधार पर कहानी का समुचित मूल्यांकन कर सकेंगे ।

9.1 प्रस्तावना

पिछली इकाई-5 में आपने प्रेमचंद की 'पूस की रात' जैसी यथार्थवादी कहानी का अध्ययन कर लिया है । इस इकाई में आप जैनेन्द्र की 'पत्नी' का अध्ययन करने जा रहे हो । जैनेन्द्र जी यर्थाथवादी से भिन्न एक भाववादी-आदर्शवादी परंपरा के कहानीकार माने गए हो । इस

दृष्टि से प्रसाद जी से कुछ मिलते-जुलते हो । लेकिन उनका वास्तविक मेल अज्ञेय और इलाचंद जोशी से अधिक है । सामाजिक महत्व और सार्थकता की दृष्टि से जैनेन्द्र प्रेमचंद से चाहे जितने पीछे हों लेकिन एक भिन्न भाव दिशा में प्रवाहित होने वाली उनकी रचनाएं मात्रा में प्रेमचंद से कम नहीं है ।

उपन्यासकार के रूप में जैनेन्द्र की 'परख', 'सुनीता', 'त्याग-पत्र, 'कल्याणी', 'जयवर्धन' आदि रचनाएं पाठकों के हृदय का कंठहार बनी हो । उनके साथ ही उनकी लगभग 300 कहानियाँ 'जैनेन्द्र की कहानियाँ' शीर्षक से 10 भागों में संग्रहीत हो । उन्होंने 1928 से ही कथालेखन के क्षेत्र में प्रवेश कर लिया था । प्रेमचंद के जीवन काल (1936) तक उनके कुछ उपन्यास और बहुत सी कहानियाँ प्रकाशित हो चुकी थीं । प्रेमचंद ने कथा के क्षेत्र में उनकी महत्वपूर्ण स्थिति को स्वीकार करते हुए अपनी 'हंस नामक पत्रिका (वर्ष 3, अंक चार) में उन पर मर्मभरी टिप्पणी करते हुए लिखा था, 'उनमें (जैनेन्द्र में) अन्त: प्रेरणा और दर्शानिक संकोच का संघर्ष है, -इतना हृदय को मसोसने वाला, इतना स्वच्छंद और निष्कपट, जैसे बंधनों में जकड़ी हुई आत्मा की पुकार हो । उनमें साधारण सी बात को भी कुछ इस ढंग से कहने की शक्ति है, जो तुरंत आकर्षित करती है । उनकी भाषा में एक खास लोच, एक खास अंदाज है ।"[1] यहाँ प्रेमचंद ने जैनेन्द्र की वैचारिक-दर्शनिकता और भाषिक-शिल्प की विशेषताओं को अत्यन्त पैनी दृष्टि से उद्घाटित किया है । उनकी 'वातायन', 'स्पर्धा', 'पजेब', 'फाँसी, 'एक रात', 'जाह्नवी' आदि के साथ ही 'पत्नी' जैसी कहानियाँ इस दृष्टि से काफी चर्चित रही हो । लेकिन उन्होनें इन कहानियों के साथ ही देवी-देवताओं से संबंधित पौराणिक और भूत-प्रेत तथा दैवी करतब से जुड़े पात्रों पर रोमांचक कहानियाँ भी लिखी हो, जिनमें मनोरंजन का उद्देश्य ही प्रमुख रूप से दिखाई देता है ।

जहाँ तक सामाजिक भावना, विशेष रूप से नारी भावना का संबंध है, जैनेन्द्र और प्रेमचंद में जमीन-आसमान का फर्क मिलेगा । 'पत्नी' कहानी की नारी तनाव और घुटन के बावजूद अपने को संयमित रखते हुए सामाजिक मर्यादाओं की सीमा में रहकर पति के साथ निष्ठापूर्वक जीवन व्यतीत करती है । लेकिन 'एक रात' की सुदर्शना गृह-त्यागकर जयराज के साथ रात बिताती है । 'ग्रामोफोन रिकार्ड' की विजया भावावेश में मनमोहन के सम्मुख आत्म-समर्पण कर देती है । 'मास्टर जी कहानी की पत्नी पति के अतिशय प्यार से ऊबकर, राह-त्याग कर नौकर के साथ भाग जाती है । इस स्थिति को सामाजिक दृष्टि से अपवाद ही माना जा सकता है । लेकिन इस तरह की अनेक नारियाँ जैनेन्द्र की कहानियों और उपन्यासों में भी मिलेंगी जो पति के साथ प्रेमी को लेकर एक त्रिकोण बनाती दिखती हो । जैनेन्द्र के प्रेमादर्श के अनुसार 'नारी का शरीर मंदिर के समान है, जो कभी कलुषित नहीं होता । हर स्थिति में वह प्रतिष्ठा की अधिकारिणी है । इस तथ्य को जहाँ आदर्शीकरण के द्वारा 'मास्टर जी' कहानी में अमली जामा पहनाया गया है, वहीं अपने उपन्यास 'त्याग-पत्र' में तो जैनेन्द्र ने इसे एक महाकाव्यामक गरिमा प्रदान की है । लेकिन उनकी नारियों में कहीं भी 'जुलूस', 'आहुति, ठाकुर का कुवाँ, 'मंदिर', 'घास वाली' जैसी प्रेमचंद की नारियों के दर्शन नहीं होते । इस भिन्नता के लिए दोनों

के भिन्न सरोकार ही नहीं, वर= जैनेन्द्र की मध्यवर्गीय मनोवृत्ति में पलने वाली नारी-दृष्टि ही उत्तरदायी है ।

वस्तुत: जब हम एक विशेष सामाजिक परिवेश में किसी साहित्यकार के व्यक्तित्व का निर्धारण करते हो, तो हमें उसके सम-सामयिक वातावरण में उत्पन्न सांस्कृतिक संघर्ष, जो कि सामाजिक संघर्ष का ही एक हिस्सा होते है, में रचनाकार की भूमिका को भी ध्यान में रखना चाहिए । इसे यथार्थ दृष्टि से समझने के लिए हम 'प्रगतिशील लेखक संघ' की स्थापना के बाद उठे प्रमुख साहित्यिक विवाद में लेखकों की भागीदारी को केन्द्र में रख सकते हो । वह विवाद था, 'कस्मै देवाय हविषं विधेम अर्थात् हमें साहित्य को किस देवता के प्रति समर्पित करना चाहिए । यह विवाद 'विशाल भारत' नामक पत्रिका में आरम्भ हुआ था । इसमें साहित्यकारों के एक समुदाय ने 'जनता जनार्दनाय का नारा दिया, जिसका मतलब था गरीब, किसान-मजदूर और दलित को साहित्य में केन्द्रीयता प्रदान की जानी चाहिए । इसमें 'अज्ञेय' ने बिना किसी लाग-लपेट के अपनी भूमिका का स्पष्ट परिचय दिया । उनकी मान्यता थी कि जिस तरह गरीब को दुःख होता है, उसी तरह अमीर को भी । अत: हम साहित्यकार अमीरों के दुःख को उपेक्षित क्यों करें? उन्होंने यह नही देखा और शायद देख भी नहीं सकते थे कि गरीब का दुःख सूखी रोटी के साथ थोड़े से नमक के अभाव का दुःख है और अमीर का दुःख कार के लिए पेट्रोल के अभाव का दुःख । अपनी वर्गीय मनोवृत्ति पर आधारित तर्क के आधार पर उन्होंने प्रगतिशील लेखक संघ' से कुट्टी कर ली । प्रेमचंद की अध्यक्षता में सम्पन्न 'प्रगतिशील लेखक संघ के उद्घाटन सत्र में जैनेन्द्र संभवत अकेले हिन्दी साहित्यकार के रूप में सम्मिलित हुए । शेष मुल्कराज आनन्द सज्जाद जहीर आदि के साथ सभी उर्दू के साहित्यकार थे । प्रेमचंद यह विवाद उठाने से पूर्व ही अपना जीवन और सम्पूर्ण साहित्य 'जनता जनार्दनाय समर्पित कर स्वयं काल-कवलित हो चुके थे । लेकिन जैनेन्द्र ने अपने लम्बे-चौड़े वैचारिक प्रपंच के माध्यम से अपना विरोध प्रकट किया । उन्होंनें बहुसंख्यक जनता के लिए साहित्य की बात तो मानी लेकिन, इसमें पशु-पक्षी और पूरे प्राकृतिक जगत का अभाव बताया । उनके पूरे विरोध का साक्षी है वह आलेख जो प्रभाकर माचवे द्वारा संपादित ग्रंथ 'जैनेन्द्र के विचार' में संग्रहीत है । 'किसके लिए लिखे' शीर्षक अपने लेख में जैनेन्द्र ने अपना अंतिम निष्कर्ष इस प्रकार दिया है, "किसी के प्रति तिरस्कार या बहिष्कार का भाव रखने के भाव को साहित्य में मजबूत नहीं होने देना होगा । और न किसी को सीधे दबाने का लोभ होना चाहिए ।" इस प्रकार का निर्णय जैनेन्द्र ने मनुष्यता और मानव सत्य की रक्षा के नाम पर लिया । वस्तुत: यह मान्यता भी एक तरह से ठाकुर श्रीनाथ सिंह और ज्योति प्रसाद निर्मल से ही मिलती है, जिसमें प्रेमचंद को ब्राह्मण विरोधी बताकर जान से मार डालने का प्रयास किया गया था । बावजूद अपनी इन सीमाओं के जैनेन्द्र आज के गणमान्य लेखकों के साथ ही एक अच्छे-खासे पाठक समुदाय के बीच भी प्रतिष्ठित हो । इस तथ्य को हम उनकी 'पत्नी' शीर्षक कहानी के विवेचन-विश्लेषण में आसानी से देख सकेंगे ।

जैनेन्द्र जी के व्यक्तित्व और कृतित्व को सम्यक रूप से समझने के लिए समसामयिक परिवेश में उनके विचार और साहित्य को लेकर उठे विवाद पर भी समुचित ध्यान देना होगा । इस

समय के कुछ प्रगतिशील आलोचकों ने जैनेन्द्र पर अश्लीलता और विकारग्रस्ता से (पर्वरेडनेस) युक्त मनोभावों को बढ़ावा देने का आरोप लगाया था । प्रभाकर माचवे द्वारा संपादित पुस्तक "जैनेन्द्र के विचार' पर प्रतिक्रिया का उल्लेख करते हुए माचवे जी ने स्वयं लिखा है, "जैनेन्द्र के विचार 1937 में छपी, और चारों तरफ से मुझ पर प्रखर आलोचना और प्रहारों की वर्षा हुई । उग्र (बेचन शर्मा उग्र) ने 'विचार को 'विकार कहा, नरोत्तम नागर ने उच्छष्ंखल', 'पहाड़ी (राम प्रसाद घिल्डियाल) ने अत्यत्र और किन-किन लोगों ने क्या-क्या नहीं कहा ।" माचवे जी ने तो यहाँ जैनेन्द्र जी का समर्थन ही किया है । लेकिन उनके साहित्य और उनकी वैचारिकता को लेकर उठने वाला विवाद काफी लंबा और गंभीर था । यहाँ प्रेमचंद के सम्बन्ध में उठे विवाद से इस विवाद की तुलना अपेक्षित है । प्रेमचंद पर ब्राह्मण-विरोधी होने का आरोप लगा था, जिसका उत्तर देते हुए प्रेमचंद ने लिखा था कि 'यदि मुझमें इतनी शक्ति होती तो पंडे-पुरोहितों का स्वांग रचने वाले समाज के इस कलंक को मो जड़मूल से उखाड़ कर फेंक देता ।' वस्तुत: इस विरोध में प्रेमचंद के साहित्य की प्रभाव-क्षमता ही नहीं, देश की बहुसंख्यक जनता के साथ उनकी प्रगतिशीत पक्षधरता भी उद्घाटित हुई है ।

लेकिन जैनेन्द्र के विरोध के पीछे उनकी विकृत यौन-चेतना और पत्नी, पति और एक प्रेमी के त्रिकोण पर आधारित असामाजिक प्रेमादर्श था । उनके उपन्यास 'सुनीता' तथा बहुत सी कहानियों को लेकर इस प्रकार का विवाद उठा था, जो आज इतिहास की वस्तु बन गया है । जैनेन्द्र जी अपने मत पर अधिकांश अडिग रहे, लेकिन मानना पड़ेगा कि इस दृष्टि से वे थोड़े संयमित भी हुए । 'त्याग-पत्र उपन्यास और 'पत्नी' जैसी बहुत सारी कहानियों में इस तथ्य को देखा जा सकता है ।

यहां प्रश्न किसी साहित्यकार के व्यक्तित्व और कृतित्व के निर्धारण का है । इसका अंतिम मानक या कसौटी उसकी रचना के प्रभाव-विश्लेषण द्वारा ही प्रत्यक्ष हो सकती है । यहां हम आसानी से समझ सकते हो कि जैनेन्द्र की रचनाएँ अपने सामान्य पाठकों की चेतना को कितनी कुठित या अग्रगामी बनाती हो और प्रेमचंद की रचनाएँ उसके किन मानसिक तत्वों को अन्मूलित या जाग्रत करती हो । अपने इस रूप में प्रेमचंद हमारे सामने समाज-निर्माता के रूप में ही नहीं, वर= हमारी आत्मा के शिल्पी के रूप में आते हो, जिसपर पिछली इकाई में किंचित विस्तार से प्रकाश डाला गया है । यह सम्मान जैनेन्द्र को किसी भी रूप में नहीं दिया जा सकता ।

9.2 कहानी का वाचन

पति कालिंदी चरण की प्रतीक्षा में अंगीठी के पास उदास बैठी सुनन्दा :

शहर के एक ओर तिरस्कृत मकान । दूसरा तल्ला । वहाँ चौके में एक स्त्री अंगीठी सामने लिए बैठी है । अंगीठी की आग राख हुई जा रही है । वह जाने क्या सोच रही है । उसकी अवस्था बीस-बाईस के लगभग होगी । देह से कुछ दुबली है और सम्भ्रान्त-कुल की मालूम होती है ।

एकाएक अंगीठी में राख होती हुई आग की ओर स्त्री का ध्यान गया । घुटनों पर हाथ देकर वह उठी । उठकर वह कुछ कोयले लायी । कोयले अंगीठी में डालकर फिर किनारे ऐसे बैठ

गयी, मानो याद करना चाहती है कि 'अब क्या करूं ?' घर में और कोई नहीं है और समय बारह के ऊपर हो गया है ।

दो प्राणी इस घर में रहते हो । पति और पत्नी । पति सवेरे से गए लौटे नहीं और पत्नी चौके में बैठी है ।

सुनन्दा सोचती है - नहीं सोचती कहाँ, अलस भाव से वह तो वहाँ बैठी ही है । सोचने को है तो यही कि कोयले न बुझ जाए । वह जाने कब आएंगे । एक बज गया है । कुछ हो, आदमी को अपनी देह की फिक्र तो करनी चाहिए । और सुनन्दा बैठी है । वह कुछ कर नहीं रही है । जब वह आएंगे, तब रोटी बना देगी । वह जाने कहाँ-कहाँ देर लगा देते हो । और कब तक बैठूँ । मुझसे नहीं बैठा जाता । कोयले भी लहक आए हो । और उसने झल्लाकर तवा अंगीठी पर रख दिया । नहीं, अब वह रोटी बना ही लेगी । उसने जोर से खीझकर आटे की थाली सामने खींच ली और रोटी बेलने लगी ।

थोड़ी देर बाद उसने जीने पर पैरों की आहट सुनी । उसके मुख पर कुछ तल्लीनता आई । क्षणभर वह आभा उसके चेहरे पर रह कर चली गयी । फिर उसी भांति काम में लग गयी।

कालिंदीचरण का दोस्तों के साथ आना और बहस करना :

कालिंदीचरण (पति) आए । उनके पीछे-पीछे तीन और उनके मित्र आए । ये आपस में बातें करते चले आ रहे थे । उनमें बहस छिड़ी थी । कमरे में पहुँच कर रुकी हुई बहस फिर छिड़ गयी । ये चारों व्यक्ति देशोद्धार के संबंध में बहुत कटिबद्ध हो । चर्चा उसी सिलसिले में चल रही है । भारतमाता को स्वतंत्र कराना होगा । -और नीति-अनीति, हिंसा-अहिंसा को देखने का यह समय नहीं है । मीठी बातों का परिणाम बहुत देखा । मीठी बातों से बाघ के मुँह से अपना सिर नहीं निकाला जा सकता । उस वक्त बाघ को मारना ही एक इलाज है । हाँ, आतंक! हमें क्या आतंकवाद से डरना होगा? लोग हो, जो कहते हो, आतंकवादी मूर्ख: हो, वे बच्चे हो । हाँ वे बच्चे और मूर्ख । उन्हें बुजुर्गो और बुद्धिमानी नहीं चाहिए । हमें नहीं अभिलाषा अपने जीने की । हमें नहीं मोह बाल-बच्चों का । हमें नहीं गर्ज धन-दौलत की । तब हम मरने के लिए आजाद क्यों नहीं? जुल्म होगा ही । उससे वे डरें जो डरते हो । डर हम जवानों के लिए नहीं है ।

इतने में कालिंदीचरण को ध्यान आया कि न उसने खाया है, न मित्रों से खाने के लिए पूछा है । उसने अपने मित्रों से माफी मांग कर छुट्टी ली और सुनन्दा की ओर चला ।

सुनन्दा का उस बहस के बारे में सोचना :

सुनन्दा जहाँ थी वहाँ है । वह रोटी बना चुकी है । अंगीठी के कोयले उल्टे तवे से दबे हो । माथे को उंगलियों पर टिकाकर बैठी है । बैठी-बैठी सूनी सी देख रही है । सुन रही है कि उसके पति कालिंदीचरण अपने मित्रों के साथ क्यों और क्या बातें कर रहे हो । उसे जोश का कारण समझ में नहीं आता । उत्साह उसके लिए अपरिचित है । वह उसके लिए कुछ दूर की वस्तु है, स्पष्हणीय और मनोरम और हरियाली । वह भारतमाता की स्वतंत्रता को समझना चाहती है; पर उसको न भारतमाता समझ में आती है, न स्वतंत्रता समझ में आती है । उसे इन लोगों की इस जोरों की बातचीत का मतलब भी समझ में नहीं आता । फिर भी, उत्साह की उसमें बड़ी भूख है । जीवन की होस उसमें बुझती-सी जा रही है; पर वह जीना चाहती है । उसने

बहुत चाहा है कि पति उससे भी कुछ देश की बात करें । इसमें बुद्धि तो जरा कम है, पर धीरे-धीरे क्या वह भी समझने नहीं लगेगी? सोचती है, कम पढ़ी हूँ तो इसमें मेरा ऐसा कसूर क्या है? अब तो पढ़ने को मो तैयार हूँ लेकिन पत्नी के साथ पति का धीरज खो जाता है । खैर, उसने सोचा है, उसका काम तो सेवा है । बस, यही मान कर जैसे कुछ समझने की चाह ही छोड़ दी है । वह अनायास भाव से पति के साथ रहती है और कभी उसकी राह के बीच में आने को नहीं सोचती । वह एक बात जान चुकी है कि वह उसके पति ने अगर आराम छोड़ दिया है, घर का काम छोड़ दिया है, जान-बूझकर उखड़े-उखड़े और मारे-मारे जो फिरते हो, इसमें वे कुछ भला ही सोचते होंगे । इसी बात को पकड़कर आपत्ति-शून्य भाव से पति के साथ विपदा-पर-विपदा उठाती रहती है । पति ने कहा भी है कि तुम मेरे साथ क्यों दुःख उठाती हो; पर सुनकर वह चुप रह जाती है, सोचती रह गई है कि जिसे 'सरकार' कहते हो, वह सरकार उनके इस तरह के कामों से बहुत नाराज है । सरकार है । उसके मन में कोई स्पष्ट भावना नहीं है कि 'सरकार' क्या होती है; पर यह जितने हाकिम लोग हो, वे बड़े जबरदस्त होते हो और उनके पास बड़ी-बड़ी ताकतें हो । इतनी फौज, पुलिस के सिपाही और मजिस्ट्रेट और मुंशी और चपरासी और थानेदार और वायराय ये सरकार के ही हो । इन सबसे कैसे लड़ा जा सकता है? हाकिम से लड़ना ठीक बात नहीं; पर यह उसी से लड़ने में तन-मन बिसार बैठे हो । खैर, लेकिन वे सब-के-सब इतने जोर से क्यों बोलते हो? उसको यही बहुत बुरा लगता है । सीधे-सादे कपड़ों में एक खुफिया पुलिस का आदमी हरदम उनके घर के बाहर रहता है । ये लोग इस बात को क्यों भूल जाते हो? इतने जोरे से क्यों बोलते हो?

पति की राजनीतिक गतिविधियों पर सोचते-सोचते सुनन्दा का ध्यान अपने मृत पुत्र की चिन्ता पर आ जाता है :

बैठे-बैठे वह इसी तरह की बातें सोचती रही है । देखो, अब दो बजेंगे । उन्हें न खाने की फिक्र न मेरी फिक्र । मेरी तो खैर कुछ नहीं; पर अपने तन का ध्यान तो रखना चाहिए । ऐसी बेपरवाही से तो वह बच्चा चला गया । उसका मन कितना भी इधर-उधर डोले; पर अकेली जब होती है, तब भटक-भटक कर वह मन अंत में बच्चे के अभाव पर आ पहुँचता है । तब उसे बच्चे की वही-वही बाते याद आती हो वे बड़ी प्यारी आँखे, अंगुलियाँ और नन्हें-नन्हें ओंठ याद आते हो अठखेलियाँ याद आती हो । सबसे ज्यादा उसका मरना याद आता है । ओह! यह मरना क्या है । इस मरने की तरफ उससे देखा नहीं जाता । यद्यपि वह जानती है कि मरना सबको है उसको मरना है, उसके पति को मरना है, पर उस तरह भूल से छानकर देखती है, तो भय से भर जाती है । यह उससे सहा नहीं जाता । बच्चे की याद उसे मथ उठती है । वह विह्वल होकर आखें पोंछती है और हठात इधर-उधर किसी काम की बात में अपने को उलझा लेना चाहती है; पर अकेले में वह कुछ करे, रह-रहकर वही वह याद वही मरने की बात उसके सामने रहती है और उसका चित्त बेबस हो जाता है ।

वह उठी । अब उठ कर बर्तनों को माँज डालेगी, चौका भी साफ करना है । आह! खाली बैठी में क्या सोचती रहा करती हूँ।

कालिंदीचरण का चौके में प्रवेश ओर चिड़चिड़ेपन से सुनन्दा से बात करना :

इतने में कालिंदीचरण चौके में घुसे ।

सुनन्दा कठोरतापूर्वक शून्य को ही देखती रही, उसने पति की ओर नहीं देखा ।

कालिंदीचरण ने कहा, 'सुनन्दा खाने वाले हम चार हो । खाना हो गया?"

सुनन्दा चून की थाली और चकला-बेलन और बटलोई वगैरह खाली बर्तन उठाकर चल दी । कुछ भी बोली नहीं ।

कालिंदी ने कहा, "सुनती हो, तीन आदमी मेरे साथ और हो । खाना बन सके तो कहो; नहीं तो इतने में ही काम चला लेंगे । '

सुनन्दा कुछ भी नहीं बोली । उसके मन में बेहद गुस्सा उठने लगा । वे उससे क्षमा प्रार्थी-से क्यों बात कर रहे हो, हँस कर क्यों नहीं कह देते कि कुछ और खाना बना दो । जैसे मो गैर हूँ । अच्छी बात है, तो मो भी गुलाम नहीं हूँ कि इनके ही काम में लगी रहूँ । मो कुछ नहीं जानती खाना वाना । और वह चुप रही ।

कालिंदीचरण ने जरा जोर से कहा, "सुनन्दा । "

सुनन्दा के जी में ऐसा हुआ कि हाथ की बटलोई को खूब जोर से फेंक दे । किसी का गुस्सा सहने के लिए वह नहीं है । उसे तनिक भी सुध नहीं रही कि अभी बैठे-बैठे इन्हीं अपने पति के बारे में कैसी प्रीति की और भलाई की बातें सोच रही थी । इस वक्त भीतर ही भीतर गुस्से से घुटकर रह गयी ।

"क्यों! बोल भी नहीं सकती?"

सुनन्दा नहीं ही बोली ।

"तो अच्छी बात है खाना कोई नहीं खाएगा ।"

यह कह कर कालिंदी तैश में पैर पटकते हुए चले गए ।

कालिंदीचरण का वास्तविक चरित्र :

कालिंदीचरण अपने दल में उग्र नहीं समझे जाते, किसी कदर उदार समझे जाते हो । सदस्य अधिकतर अविवाहित हो, कालिंदीचरण विवाहित ही नहीं है, वह एक बच्चा खो चुके हो । उनकी बात का दल में आदर है । कुछ लोग उनके धीमेपन पर रुष्ट भी हो । वह दल के विवेक के प्रतिनिधि हो और उत्ताप पर अंकुश का काम करते हो ।

बहस इतनी बात पर थी कि कालिंदी का मत था कि हमें आतंक को छोड़ने की ओर बढ़ना चाहिए । आतंक से विवेक कुंठित होता है और या तो मनुष्य उससे उत्तेजित ही रहता है या उसके भय से दबा रहता है । दोनों की स्थितियां श्रेष्ठ नहीं है । हमारा लक्ष्य बुद्धि को चारों ओर से जगाना है, उसे आतंकित करना नहीं । सरकार व्यक्ति के और राष्ट्र के ऊपर बैठकर उसे दबाना चाहती हो । हम किसी विकास के अवरोध को हटाना चाहते हो इसी को मुक्त करना चाहते हो । आतंक से वह काम नहीं होगा । जो शक्ति के मद में उन्मत्त हो, असली काम तो उसका मद उतारने और उसमें कर्त्तव्य-भावना का प्रकाश जगाने का है । हम स्वीकार करें कि मद उसकी टक्कर खाकर, चोट पाकर ही उतरेगा । यह चोट देने के लिए हमें अवश्य तैयार रहना चाहिए; पर यह नोचा-नोची उपयुक्त नहीं । इससे सत्ता का कुछ बिगड़ता तो नहीं, उल्टे उसे अपने औचित्य पर संतोष हो आता है ।

पर जब (सुनन्दा के पास से) लौट कर आया, तब देखा गया कि कालिंदी अपने पक्ष पर दृढ़ नहीं है । वह सहमत हो सकता है कि ही, आतंक जरूरी भी है । 'हाँ', उसने कहा, 'यह ठीक है कि हम लोग कुछ काम शुरू कर दें ।' इसके साथ ही कहा, 'आप लोगों को भूख नहीं लगी है क्या? उनकी तबीयत खराब है, इससे यहाँ तो खाना बना नहीं । बताओ क्या किया जाए? कहीं होटल चलें?'

एक ने कहा कि कुछ बाजार से यहीं मंगा लेना चाहिए । दूसरे की राय हुई कि होटल ही चलना चाहिए । इसी तरह की बातों में लगे थे कि सुनन्दा ने एक बड़ी थाली में खाना परोसा कर उनके बीच ला रखा । रखकर वह चुप-चाप चली गयी । फिर आकर पास ही चार गिलास पानी के रख दिए और फिर उसी भाँति चुप-चाप चली गयी ।

कालिंदी को जैसे किसी ने काट लिया ।

तीनों मित्र चुप हो रहे । उन्हें अनुभव हो रहा था कि पति-पत्नी के बीच स्थिति में कहीं कुछ तनाव पड़ा हुआ है । अंत में एक ने कहा, कालिंदी तुम तो कह रहे थे, खाना नहीं है ।

'कालिंदी ने झेंप कर कहा, ''मेरा मतलब था, काफी नहीं है ।'' ''देखूँ कुछ और हो तो'', कहकर कालिंदी उठ गया ।

कालिंदी द्वारा पुन: सुनन्दा को झिड़कना :

आकर सुनन्दा से बोला, ''यह तुमसे किसने कहा था कि खाना वहाँ ले आओ? मोने क्या कहा था?''

सुनन्दा कुछ न बोली ।

''चलो उठाकर लाओ थाली । हममें से किसी को यहाँ नहीं खाना है । हम होटल जाएँगे ।

सुनन्दा नहीं बोली । कालिंदी भी कुछ देर गुम खड़ा रहा । तरह-तरह की बातें उसके मन में आती थीं । उसे अपमान मालूम हो रहा था, और अपमान उसे असह्य" था ।

उसने कहा, ''सुनती नहीं हो कि कोई क्या कह रहा है, क्यों?''

सुनन्दा ने और मुँह फेर लिया ।

''क्या मो बकते रहने के लिए हूँ ।'

सुनन्दा भीतर-ही-भीतर घुट गई ।

''मो पूछता हूँ कि जब मो कह गया था, तब खाना ले जाने की क्या जरूरत थी?''

सुनन्दा ने मुड़कर और अपने को दबाकर धीमे से कहा, ''खाओगे नहीं? एक तो बज गया है।''

कालिंदी निरस्त्र होने लगा । यह उसे बुरा मालूम हुआ । उसने मानो धमकी के साथ पूछा, ''खाना और है?''

सुनन्दा ने धीमे से कहा, ''आचार लेते जाओ ।''

''खाना और नहीं है? अच्छा लाओ आचार ।''

सुनन्दा ने आचार दिया और लेकर कालिंदी भी चला गया ।

कालिंदी के चले जाने पर सुनन्दा की मनोदशा :

सुनन्दा ने अपने लिए कुछ भी बचाकर नहीं रखा था । उसे यह सूझा ही न था कि उसे भी खाना है । अब कालिंदी के लौटने पर उसे जैसे मालूम हुआ कि उसने अपने लिए कुछ भी

बचाकर नहीं रखा है । वह अपने से रुष्ट हुई । उसका मन कठोर हुआ, इस लिए नहीं कि उसने खाना क्यों नहीं बचाया । इस पर तो उसमें स्वाभिमान का भाव जागता था । मन कठोर यों हुआ कि वह इस तरह की बातें सोचती ही क्यों है? छि: यह भी सोचने की बात है । और उसमें कड़वाहट भी फैली । हठात यह उसके मन को लगता ही है कि देखो, उन्होंने एक बार भी नहीं पूछा कि तुम क्या खाओगी । क्या मो यह सह सकती थी कि मो तो खाऊँ और उनके मित्र भूखे रहें, पर पूछ लेते तो क्या था । इस बात पर उसका मन टूटता सा है । मानो उसका जो तनिक-सा मान था, वह भी कुचल गया हो । वह रह-रहकर अपने को स्वयं अपमानित कर लेती हुई कहती है कि छि! छि: सुनन्दा, तुझे ऐसी जरा-सी बात का अब तक ख्याल होता है । तुझे तो खुश होना चाहिए कि उनके लिए एक रोज भूखे रहने का तुझे पुण्य मिला । मो क्यों उन्हें नाराज करती हूँ? अब से नाराज न करुँगी, पर वह अपने तन की भी सुध तो नहीं रखते । यह ठीक नहीं है । मो क्या करूँ ।

और वह अपने बरतन माँजने में लग गयी । उसे सुन पड़ा कि वे लोग फिर जोर-शोर से बहस करने में लग गए हो । बीच-बीच में हँसी के कहकहे भी उसे सुनायी दिए । 'ओह!' सहसा उसे ख्याल हुआ, "बरतन तो पीछे भी मल सकती हूँ लेकिन उन्हें कुछ जरूरत हुई तो?" यह सोच झट-पट हाथ धोकर वह कमरे के दरवाजे के बाहर ही दीवार से लगकर खड़ी हो गयी ।

कहानी के अंत में सुनन्दा की तत्परता और पति परायणता :

एक मित्र ने कहा, "आचार और है? आचार और मंगाओं यार!" कालिंदी ने अभ्यासवश जोर से पुकारा, "आचार लाना भाई, आचार ।" मानो सुनन्दा कहीं दूर हो । पर वह तो बाहर द्वार से लगी खड़ी ही थी । उसने चुप-चाप आचार लाकर रख दिया ।

जाने लगी, तो कालिंदी ने तनिक स्निग्ध वाणी में कहा, "थोड़ा पानी भी लाना ।"

और सुनन्दा ने पानी ला दिया । देकर लौटी फिर बाहर द्वार से लगकर ओट में खड़ी हो गयी । जिससे कालिंदी कुछ मांगें, तो जल्दी से ला दे ।

9.3 कठिन शब्दों के अर्थ

तिरस्कृत = उपेक्षित, बदनाम, अपमानित; चौके = रसोई, संभ्रान्त = सभ्य और ऊँचा परिवार; अलसभाव = सहजभाव; झल्लाकर = चिढ़कर; जीने = सीढ़ी; तल्लनीनता = गहरा लगाव, आभा = चमक; कटिबद्ध = पूर्णशक्ति से तैयार; आतंकवाद = भयानक कार्रवाई; बुजुर्गी = बड़प्पन; अभिलाषा = तीव्र इच्छा; गर्ज = मतलब, इच्छा, स्पष्हणीय = मन की गहराई से चाही हुई, होस: उल्लास; अनायास = सहज भाव से, बिना प्रयास के; विपदा = दुःख; वायसराय = ब्रिटिश शासन का उच्चाधिकारी; बिसार = भूलना, भुलाना; अठखेलियां = बच्चों का खेलना, बालक्रीड़ा; विह्वल = दुःख मे अत्यधिक दुःखी होना, या सुख में अत्यधिक सुखी होना, चून की थाली = रोटी बनाने के बाद परथन वाले आटे की थाली; तैश = अत्यधिक गुस्से में; उत्ताप = अधिक क्रोध; मद = घण्ड, उनमत्त = मतवाला, पागल; निरस्त्र = विवश, बिना हथियार के, निरुत्तर; कुंठित- = मोथरा कमजोर, स्निग्ध = स्नेह युक्त, कोमल ।

9.4 संदर्भ सहित व्याख्या

(क) "वह अनायास भाव से पति के साथ रही है और कभी उनकी राह के बीच में आने की नहीं सोचती । वह एक बात जान चुकी है कि उसके पति ने अगर आराम छोड़ दिया है, घर का काम छोड़ दिया है, जान-आकर उखड़े-उखड़े और मारे-मारे जा फिरते हो, इसमें वे कुछ भला ही सोचते होंगे । इसी बात को पकड़कर वह आपत्ति-शून्य भाव से पति के साथ विपदा-पर-विपदा उठाती रही है । पति ने कहा भी है कि तुम मेरे साथ क्यों दुःख उठाती हो, पर सुनकर वह चुप रह गयी है । और सोचती रह गयी है कि जिसे सरकार कहते हो, वह सरकार उनके इस तरह के कामों से बहुत नाराज है ।

संदर्भ : प्रस्तुत गद्यांश श्री जैनेन्द्र की प्रसिद्ध कहानी 'पत्नी' से उद्धृत किया गया है । देश की स्वाधीनता के आन्दोलन में सक्रिय भाग लेने वाले पति कालिंदीचरण और उनके मित्रों की गर्मागर्म बहस की बात सुनन्दा की समझ में नहीं आती । आन्दोलन में अपना पूरा समय लगाने वाल कालिंदीचरण द्वारा पत्नी की काफी उपेक्षा होती है । इससे उसके मन में असंतोष भी है । उसकी बहुत इच्छा है कि पति उसके साथ भी इस प्रकार की बातें करें । लेकिन उसमें बुद्धि की कमी के कारण पति ऐसा नहीं कर पाता । इस अभाव और असंतोष के बावजूद पति द्वारा देश-सेवा के कार्य को उचित मानकर वह अपने पत्नी-धर्म का निर्वाह करती है । इस गद्यांश में अपनी सेवा-भावना के वशीभूत सुनन्दा इस प्रकार सोच रही है:

व्याख्या : सुनन्दा सोच रही है कि वह पति के अच्छे कार्यों के वशीभूत होकर वह बिना किसी दबाव के सहज भाव से उसके साथ रह रही है । कभी उनकी रह में बाधा बनने की बात भी वह नहीं सोचती । उसने विश्वास कर लिया कि पति ने अगर अपने सुख चैन को भुला दिया है । घरेलू काम-धाम भी छोड़ दिया है । दिन-रात चिन्ता से मारे-मारे फिरते हो, तो इसमें उन्होंने कुछ भला ही सोचा होगा । इसी बात पर विश्वास कर वह निःस्वार्थ भाव से दुख-पर-दुख झेलती हुई पति के साथ जीवन बिता रही है । उसे इस बात की खुशी है कि पति ने अपने साथ दुःख उठाने से मना भी किया है-लेकिन ऐसा करना उसे उचित नहीं लगा । सुनन्दा को इतना जरूर मालूम हो कि पति के इस तरह के काम से सरकार नाराज है और उस नाराजी की परवाह किए बिना यह अपने आंदोलनकारी कार्य के लिए कटिबद्ध हो । यह उसे अच्छा नहीं लगता।

विशेष :

1. सरकार के विरोध की बात से पता लगता है कि यह कहानी ब्रिटिश शासनकाल में लिखी गयी है, जिस समय स्वाधीनता आंदोलन चल रहा था । 2. आन्दालेन मे सक्रिय रहने के बावजूद कालिंदीचरण को पत्नी की उपेक्षा नहीं करनी चाहिए थी । 3. सुनन्दा का परम्परागत गृहणी-पत्नी की तरह विवशता में जीवन व्यतीत करना मुक्ति की भावना के विपरीत लगता है । 4. जैनेन्द्र की कथा भाषा की बहुत प्रशंसा की है, स्वयं प्रेमचंद ने उनके 'कहने' के ढंग को आकर्षक' बताया है, लेकिन इस गद्यांश चाल-चाल की भाषा होते हुए भी वाक्यविन्यास से शैली की प्रवाहमयता में बाधा दिखाया देती है ।

(ख) "आतंक से विवेक कुंठित होता है और या तो मनुष्य उससे उत्तेजित ही रहता है, या उसके भय से दबा रहता है । दोनों ही स्थितियां श्रेष्ठ नहीं हो । हमारा लक्ष्य बुद्धि को चारों ओर से जगाना है, उसे आतंकित करना नहीं । सरकार व्यक्ति के और राष्ट्र के विकास के ऊपर बैठकर उसे दबाना चाहती है । हम इसी विकास के अवरोध को हटाना चाहते हो इसी को मुक्त करना चाहते हो । आतंक से वह काम नहीं होगा । जो शक्ति के मद से उन्मत्त है, असली काम तो उसका मद उतारने और उसमें कर्त्तव्य-भावना का प्रकाश जगाने का है । हम स्वीकार करें कि मद उसकी टक्कर खाकर, चोट पाकर ही उतरेगा । यह चोट देने के लिए हमें अवश्य तैयार रहना चाहिए; पर यह नीचा-नोची उपयुक्त नहीं है ।"

संदर्भ : प्रस्तुत गद्यांश 'पत्नी' कहानी से लिया गया है, जिसके रचयिता जैनेन्द्र है । इस कहानी में जहाँ एक ओर कहानीकार ने सुनन्दा जैसी पति द्वारा उपेक्षित नारी की विवशता और उसकी कर्त्तव्य-परायणता को परम्परागत आदर्श पत्नी का रूप दिया है, वहीं दूसरी ओर स्वाधीनता आन्दोलन के स्वरूप पर भी विचार किया है । प्रस्तुत अंश में कहानीकार ने कालिंदीचरण के माध्यम से देश की स्वाधीनता के लिए आतंकवादी क्रूर गतिविधियों से अलग सरकार के हृदय परिवर्तन द्वारा उसकी कर्त्तव्य भावना को जगाने के मार्ग को सही ठहराते हुए लिखा है-

व्याख्या : आतंकवाद स्वाधीनता आन्दोलन का सही मार्ग नहीं है क्योंकि आतंक से विवेक-बुद्धि का नाश हो जाता है । इससे मनुष्य या तो उग्र रूप धारण कर लेता है या उसके भय से हमेशा घिरा रहता है । ये दोनों ही अवस्थाएं मनुष्य के लिए उपयुक्त नहीं है ।आन्दोलन में हमारा ध्येय यह होना चाहिए कि विवेक या बुद्धि को हर ओर से जागृत रखते हुए उसे आतंक के भय से मुक्त रखा जाए । आतंक के द्वारा यह कार्य नहीं हो सकता । यदि सरकार व्यक्ति और राष्ट्र के विकास में जबरदस्ती रोड़े अटकाती है, तो इन रोड़ों को हटाना, इनसे विकास को मुक्त रखना हमारा कर्तव्य होना चाहिए । जो शक्ति के घमंड में पागल हो गया है, उसके घमण्ड और पागलपन को दूर कर उसमें कर्त्तव्य की भावना का विकास करना जरूरी है । यह सही है कि हमारे प्रयासों की टक्कर खाकर ही यह घमण्ड चूर होगा । इस तरह की चोट पहुँचाने के लिए हमें तैयार रहना चाहिए । लेकिन नोचा-नोची या मनमाने हत्या-व्यापार से, क्रूर हिंसा से यह कार्य नहीं होगा, इसका उलटा असर ही अधिक पड़ेगा ।

विशेष : 1. देश की आजादी के आन्दोलन में आतंकवाद के विरोध के साथ गाँधीवादी अहिंसा के माध्यम से सत्ताधारी वर्ग के हृदय परिर्वतन की ओर संकेत । 2. राष्ट्र के विकास से पहले व्यक्ति के विकास की बात उठाकर अपनी व्यक्तिवादिता का परिचय । 3. नोचा-नोची के प्रयोग द्वारा क्रूर हत्यारी हिंसा का विरोध । 4. प्रस्तुत गद्यांश में जैनेन्द्र पर गाँधीवाद का प्रभाव स्पष्ट है, 5. भाषा सामान्य बोल-चाल की है, शैली प्रवाह युक्त है ।

9.5 कथावस्तु एवं शीर्षक की उपयुक्तता

प्रस्तुत कहानी के शीर्षक 'पत्नी' से ही लगता है कि इस कहानी के केन्द्र में कालिंदीचरण की पत्नी सुनन्दा है । पूरी कहानी में आरंभ से अंत तक उसकी उपस्थिति को कहानीकार ने प्रमुखता

से दिखाया है । उसके पति कालिंदीचरण और उनके मित्र बोलचालकर और बहसकर अपने चरित्र का उद्घाटन करते हो । लेकिन सुनन्दा प्राय: मूक-भाव से सोचती और चिन्ता करती हुई दिखायी गयी है । वह पूरी कहानी में केवल इतना ही बोलती है, "खाओगे नहीं? एक तो बज गया है ।" और "आचार लेते जाओ ।" कहानी. का आरम्भ उसके परिचय से इस प्रकार होता है:

"बाहर के एक ओर एक तिरस्कृत मकान । दूसरा तल्ला । वहाँ चौके में एक स्त्री अंगीठी सामने लिए बैठी है । अंगीठी की आग राख हुई जा रही है । उसकी अवस्था बीस-बाईस के लगभग होगी । देह से कुछ दुबली और उच्च कुल की मालूम होती है । दो प्राणी घर में रहते हो, पति और पत्नी । पति सवेरे से गए लौटे नहीं और पत्नी चौके में बैठी है ।"

कहानी का काल (कुल समय) डेढ़-दो घण्टों का और स्थान घर की चहार दीवारी, विशेष रूप से चौका और बैठक का कमरा है । प्रात: काल घर से निकलने वाले कालिंदीचरण दोपहर को तीन मित्रों के साथ घर आते हो और बैठक में देशोद्धार से संबंधित बातें होती हो । चारों व्यक्ति देशोद्धार के लिए कटिबद्ध हो । इनकी बहस का मुद्दा उपाय को लेकर है कि हिंसा और आतंकवाद के सहारे यह कार्य किया जाए या अहिंसात्मक ढंग से सुलह-सोपत के उदारवादी मार्ग से सत्ताधारी का हृदय परिवर्तित करके । लेकिन इसे कहानी का मुख्य कथानक या मुद्दा मानते नहीं बनता । मुख्य कथावस्तु नारी-पत्नी के रूप में व्यक्त की गयी सुनन्दा की चिन्ता ही दिखाई देती है । सुनन्दा एक लिंगगत व्यक्तित्व की इकाई है जो एक ओर समर्पिता पति-परायणा, सामाजिक मार्यादाओं में बंधी भारतीय नारी है, तो दूसरी ओर वह पति द्वारा मित्रों के बीच की गयी बातों को सुनना और समझना चाहती है कि भारत माता को स्वतंत्र किया जाना है । इस बात को लेकर पति का अति उत्साह उसकी समझ में नहीं आता ।

'पत्नी' कहानी में जैनेन्द्र ने पत्नी की सहज--स्वाभाविक आवश्यकताओं, स्वभाव और भारतीय परिवेश में जन्में संस्कारों को परखते हुए उसके मन की सूक्ष्म स्थितियों को मूक विरोधों और कोमलता को बिना किसी उलझाव के उद्घाटित किया है । कालिंदीचरणा के प्रश्नों के उत्तर में सुनन्दा का निरंतर कठोर मौन सब-कुछ कह जाता है । इसकी प्रतिक्रिया कालिंदी में एक भिन्न रूप लेती है । पत्नी के मौन को असह्यज महसूस कर उसे लगता है कि आतंक का उपयोग जरूरी है । यह पूरी कहानी कथावस्तु के स्थूल तथ्यों का आश्रय न लेकर भाव, अनुभूति, मनोदशा और मनोवैज्ञानिक सत्य को ही प्रकट करती है । कथा-वस्तु के अभाव की दिशा आगे आने वाली 'नयी कहानी' में कथावस्तु के लोप की ओर एक स्पष्ट संकेत मानी जा सकती है ।

शीर्षक की उपयुक्तता

प्रस्तुत कहानी में सुनन्दा की प्रतीक्षा को देखते हुए इसे प्रतीक्षा शीर्षक दिया जा सकता था । लेकिन इसके माध्यम से जैनेन्द्र की नारी-पत्नी के वास्तविक दृष्टिकोण का प्रतिनिधित्व नहीं हो पाता । प्रस्तावना (6.2) के अन्तर्गत आपने देखा है कि 'एक रात', 'ग्रामोफोन रिकार्ड' 'मास्टर जी' आदि बहुत सारी कहानियों की पत्नियाँ पति को दगा देकर अपने प्रेमियों के साथ सम्पर्क करती हो । लेकिन इस कहानी में पूरी तरह असंतुष्ट होकर भी सुनन्दा किसी प्रकार

की स्वच्छन्दता का परिचय नहीं देती । "वह अनायास भाव से पति के साथ रहती है । और कभी उसकी राह के बीच में आने की नहीं सोचती ।" यहाँ (पत्नी) के रूप में नारी का एक अलग चरित्र सामने आया है, जो 'पत्नी' शीर्षक की सार्थकता को सिद्ध करता है । यहाँ 'पत्नी' कहानी का एक पात्र है, जो कहानी की संपूर्ण विषय-वस्तु को अपने में समाविष्ट किए हुए है ।

एक नारी के चरित्र की मनोवैज्ञानिकता 'पत्नी' शीर्षक को अच्छी तरह उजागर करती है । पत्नी को मात्र पत्नी समझ लेना शीर्षक का एक गहन व्यंग्य है । सुनन्दा पूरी कहानी को एक मूक चलचित्र में बदल कर पत्नीत्व की रक्षा जरूर करती है, लेकिन वह स्वाभिमाननी भी है, जो अपने लिए खाना बचाकर न रखने के बावजूद प्रेम की भीख नहीं मांगती । वह माता भी हो चुकी है और प्रेम के एक-दूसरे स्वाद वात्सल्य को भोग कर पुन: उससे वंचित हो गयी है । इसलिए पति का स्नेह अब उसके लिए और अधिक जरूरी हो गया है, फिर भी यह उसे नहीं मिलता, जो 'पत्नी' शीर्षक की व्यंगात्मकता को और गहरा बना देता है । यह शीर्षक कहानी को संयोग में वियोग और आशा में शोक की कहानी बना देता है । सुनन्दा का कठोर मौन उसकी वाचालता से अधिक मुखर बनकर उसके पत्नीत्व को एक नयी आभा प्रदान करता है । अत: 'पत्नी' शीर्षक ही इस कहानी के लिए सर्वथा उपयुक्त है ।

9.6 चरित्र-चित्रण

प्रस्तुत कहानी में मुख्यत: दो ही पात्र है, सुनन्दा और उसके पति कालिंदीचरण । कहानी का केन्द्र बिन्दु सुनन्दा ही है, केवल विस्तार की दृष्टि से ही नहीं, वरन् कहानीकार की मूल चिन्ता की दृष्टि से भी । प्रेमचंद और प्रसाद ने अपनी कहानियों में मनुष्य को मनोवैज्ञानिक और दार्शनिक धरातल पर रखकर परखने का प्रयास शुरू कर दिया था, लेकिन जैनेन्द्र ने कुछ और गहरे उतर कर मनोवैज्ञानिकता को कई कोणों से प्रस्तुत किया है । सुनन्दा के चरित्र में इसकी पूरी पहचान मिलेगी । उसका पति कालिंदीचरण उसके साथ है । घर से प्रात: निकल कर देर से लौटता है । वह कोई आवारागर्दी न कर देशोद्धार के आन्दोलन से जुड़ा हुआ है । सुनन्दा भोजन के लिए चौके में उसकी प्रतीक्षा करती है । इसमें कोई नयी बात नहीं दिखायी देती । लेकिन जैनेन्द्र ने इसी पृष्ठभूमि को आधार बनाकर एक भरी-पूरी कहानी ही नहीं, सुनन्दा का एक भरा-पूरा चरित्र भी प्रस्तुत कर दिया है ।

सुनन्दा : जैसा कि पहले भी संकेत किया जा चुका है कि सुनन्दा पूरी कहानी में केवल इतना ही बोलती है, "खाओगे नहीं? एक तो बज गया ।" और "आचार लेते जाओ ।" शेष कहानी का तीन चौथाई भाग सुनन्दा के मौन से मुखरित है । वह पति के सभी प्रश्नों का उत्तर कठोर मौन के माध्यम से किसी भी वाचाल की अपेक्षा अधिक संगत ढंग से देती है । उसकी उपस्थिति से पूरी कहानी एक मूक और भावपूर्ण चल-चित्र सी बन गई है ।

घर के अभाव, रोज की घुटन, पति का बाहर बौद्धिक और राष्ट्रीय धरातल पर जीना, अनिच्छा से पत्नी की उपेक्षा इन सारी बातों की प्रतिछाया सुनन्दा के चरित्र की एक-एक रेखा को उभारती है । कहानी का आरंभ ही जैनेन्द्र ने सुनन्दा के चरित्र की एक पृष्ठभूमि के रूप में इस प्रकार प्रस्तुत किया है । "शहर के एक ओर एक तिरस्कृत मकान । दूसरा ताल्ला । वहाँ चौके में

एक स्त्री अंगीठी सामने लिए बैठी है । अंगीठी की आग राख हुई जा रही है । वह जाने क्या सोच रही है । उसकी अवस्था बीस-बाईस के लगभग होगी । देह से कुछ दुबली और संभ्रान्त-कुल की लग रही है । सुनन्दा सोचती है, नहीं सोचती कहाँ है, अलसभाव से वह तो बैठी ही है । सोचने को है तो यही कि कोयले न बुझ जाएँ । जाने कब आएंगे । एक बज गया है । "इस एक बजे से लेकर दो-ढाई बजे के बीच कहानी समाप्त हो जाती है । इसी अन्तराल में सुनन्दा की प्रतीक्षा, पति के मित्रों की बहस-मुबाहिसा की मानसिक प्रतिक्रिया, पूर्वादीप्ति[2] के रूप में बालक-पुत्र की मृत्यु का शोक, पति द्वारा खाने के सम्बन्ध में अनेक प्रश्नों पर कठोर मौन, खाने के लिए मना कर देने पर भी एक बड़ी थाली में सारा खाना मित्रों के बीच रखना, इसके लिए भी पति की झिड़की, खाते समय दरवाजे के निकट दीवार से सटकर पति के आदेश की प्रतीक्षा इन्हीं स्थितियों के बीच कहानीकार ने सुनन्दा के समूचे चरित्र को रेखांकित किया है । कालिंदी और सुनन्दा के रेखांकन में जैनेन्द्र ने दोनों के अपने सच प्रस्तुत करने में पूरी तटस्थता का परिचय दिया है । फिर भी उनकी सहानुभूति का रुख सुनन्दा की ओर है । पाठकीय सम्वेदना भी सुनन्दा की ओर ही उन्मुख होती है, जिसे जैनेन्द्र की सफलता माना जा सकता है ।

कालिंदी : कालिंदीचरण एक पढ़ा-लिखा शिक्षित मध्यवर्गीय, विशेष रूप से निम्न मध्यवर्गीय व्यक्ति है । वह अपने निजी स्वार्थ का परित्याग कर राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलन के साथ जुड़ा हुआ है । साथी आन्दोलनकारियों के बीच वह अपनी उदारता और जाग्रत विवेकपूर्ण व्यक्ति के रूप में सम्मानित है । इस सम्मान की अपेक्षा वह पत्नी से भी करता है । लेकिन कम शिक्षित, कम बुद्धि के कारण उसके साथ अपना तालमेल नहीं बिठा पाता । अत: अनजाने ही उससे पत्नी की उपेक्षा हो जाती है । पत्नी की कुण्ठा और जीवन के प्रति असंतोष का कारण होते हुए भी कहानीकार ने उसकी उपेक्षा नहीं की है । यह सही है कि सुनन्दा को अनजाने ही, सहज रूप से कहानी की नायिका का गौरव प्राप्त हो जाता है । लेकिन कालिंदी न नायक लगता है और न खलनायक । कम पढ़ी-लिखी सुनन्दा एक ऐसी सीढ़ी है जिस, पर पांव रखकर ही कालिंदी क्रांति के पथ पर बढ़ सकता है, लेकिन बार-बार उसे सुनन्दा की ओर लौटना पड़ता है, क्योंकि वह स्वयं भूखी रहकर उसे खिला सकती है और उसके लौटने की आतुर प्रतीक्षा भी कर सकती है । अत: कालिंदी और सुनन्दा मध्यवर्गीय समुदाय में पति-पत्नी के रूप में अपवाद नहीं माने जा सकते ।

9.7 वातावरण एवं परिवेश

'पत्नी कहानी की रचना भारत के स्वाधीनता आन्दोलन की पृष्ठभूमि पर हुई है । जैनेन्द्र जी ने इण्टर-मीडिएट तक शिक्षा ग्रहण करने के बाद गांधी जी के असहयोग आन्दोलन से प्रभावित होकर आगे की पढ़ाई छोड़ दी थी । स्वाधीनता आन्दोलन में भाग लेने के कारण इन्हें जेल की सजा भी भुगतनी पड़ी थी । जेल के वातावरण में ही इन्हें लिखने की प्रेरणा मिली थी । अत: पत्नी कहानी में आन्दोलनकारियों का संदर्भ इनके अपने अनुभवों पर आधारित है । हिंसक कार्रवाई, उग्र आतंकवाद का विरोध और गांधीवादी अहिंसक असहयोग पर आधारित आन्दोलन इनका आदर्श था । अपने विकासक्रम में फ्रायड, युंग आदि के मनोविश्लेषण, मनोवैज्ञानिक

काम-कुंठा, स्वच्छन्द यौवना-चरण, उन्मुक्त नारी भावना आदि के साथ अंत तक गांधीवाद, विशेष रूप से उनके हृदय पतिवर्त के प्रति इनकी आस्था बनी रही है । फिर भी गांधीवादी प्रभाव की अपेक्षा इनकी अधिकांश कहानियां मानव-मनोविज्ञान और मनोविश्लेषण से ही अधिक सम्बद्ध हो ।

'पत्नी' सामान्य मध्यवर्गीय सामाजिक परिवेश की कहानी है । इसमें पति-पत्नी एक-दूसरे को समझने में असमर्थ हो । पति कालिंदीचरण भारत की स्वतंत्रता की प्राप्ति के लिए अपने मित्रों से बहस करते हों, उनके साथ उठते-बैठते हो, खाना खाते है, चाय पीते हो, लेकिन पत्नी से न केवल इस बारे में बात करते हो, बल्कि किसी विषय में उसके साथ चर्चा करना जरूरी नहीं समझते । उन्होंने किसी भी स्तर पर पत्नी को समझने और मेल-मिलाप करने की कोशिश नहीं की । अत: लगता है कि वे निश्चित कर चुके हो कि पत्नी का कर्त्तव्य मात्र उनकी सेवा करना है । इससे पत्नी के मन में असंतोष का भाव आना मनोवैज्ञानिक दृष्टि से स्वाभाविक है । एक उदाहरण द्वारा इसे अच्छी तरह समझा जा सकता है । जब कालिंदीचरण खाने की अपर्याप्तता को देखते हुए पत्नी से कहते है कि "खाना बन सके तो कहो नहीं तो इतने में ही काम चला लेंगें" तब पत्नी के हृदय में जो प्रतिक्रिया होती है, उसका विश्लेषण करते हुए कहानीकार ने लिखा है, "सुनन्दा कुछ भी नहीं बोली । उसके मन में बेहद गुस्सा उठने लगा । वह उससे क्षमापार्थी-से क्यों बात कर रहे हो, हँसकर क्यों नहीं कह देते कि और खाना बना दो । जैसे मैं गैर हूँ । अच्छी बात, तो मैं भी गुलाम नहीं हूँ कि इनके ही काम में लगी रहूँ । मैं कुछ नहीं जानती खाना-वाना और वह चुप रही ।

यहाँ सुनन्दा की द्वन्द्वपूर्ण मनःस्थिति का कुछ संकेत लेखक की ओर से और कुछ स्वयं सुनन्दा की ओर से किया गया है । यही स्थिति पूरी कहानी में बार-बार दुहराई गई है, जिससे कहानी का स्वरूप मनोवैज्ञानिक हो गया है । यहां आकर कहानी अपने युगीन वातावरण से कुछ अलग हटकर मध्यवर्गीय सामाजिक परिवेश से जुड़ जाती है । अत: युगीन वातावरण और एक निश्चित परिवेश को कहानी अच्छी तरह रेखांकित करती है । स्वाधीनता के लिए आंदोलनकारी वातावरण ओर मध्यवर्गीय सामाजिक परिवेश इसमें स्पष्टता के साथ दिखाई देता है ।

9.8 सरंचना-शिल्प

इस बात का इकाई के आरम्भ में, प्रस्तावना के अन्तर्गत उल्लेख किया जा चुका है कि अपनी 'हंस नामक पत्रिका (वर्ष 3, अंक 4) में प्रेमचंद ने जैनेन्द्र के शिल्प की तारीफ करते हुए लिखा है, "उनमें साधारण ही बात को भी कुछ इस ढंग से कहने की शक्ति है, जो तुरंत आकर्षित करती है । उनकी भाषा में एक खास लोच, एक खास अंदाज है । "इस अंदाज को कुछ उदाहरणों द्वारा आसानी से समझा जा सकता है । इसका पहला उदाहरण है, कहानी के आरम्भ का भाषिक प्रयोग है,

"शहर के एक ओर एक तिरस्कृत मकान । दूसरा तल्ला । वहां चौके में एक स्त्री अंगीठी सामने लिए बैठी है । अंगीठी की आग राख हुई जा रही है । वह जाने क्या सोच रही है ।"

"सुनन्दा सोचती है नहीं सोचती कहाँ है, असलभाव से वह तो वहाँ बैठी ही है । सोचने को है तो यहीं कि कोयले न बुझ जाएँ । वह जाने कब आएंगे एक बज गया है । कुछ हो आदमी को अपनी देह की फिक्र तो करनी चाहिए । और सुनन्दा बैठी है । वह कुछ कर नहीं रही है।" इस प्रकार कुछ क्रिया विहीन और कुछ परस्पर असंबद्ध वाक्य सुनन्दा की उपेक्षित और तनावग्रस्त मानसिकता को अत्यन्त कुशलता से व्यक्त करते है । सुनन्दा के एकाकीपन, खीझ और थकान, कालिंदी के फाकेमस्त क्रान्ति-मित्रों की बहस और अस्वाभाविक जोश, अपने में खोयी सुनन्दा के विचार चक्र आदि सबके लिए जैनेन्द्र की अभिधापूर्ण सांकेतिक भाषा, प्रेमचंद की किस्सागोयी के स्थान पर एक नयी कथन-शैली की गवाही देती है ।

पति-पत्नी की बातचीत की ऊपरी कठोरता. पत्नी की छिपी हुई ममता में पाते से अपेक्षा, खाने की बात के बाद पति का मित्रों के पास लौटकर जाना, अपनी खीझ के कारण उग्र नीति का समर्थन, पूर्वादीप्ति के रूप में पत्नी का पुत्र शोक, बैठक के दरवाजे की दीवाल से लगकर पत्नी का चिर प्रतीक्षा में खड़े रहना आदि के माध्यम से कहानी करूणा से आरम्भ होकर करुणा पर ही समाप्त होती है । इन सब में जैनेन्द्र की कथन-शैली का विशेष योगदान है ।

जैनेन्द्र की शैली-शिल्प की विशेषता के लिए पत्नी के कठोर मौन की मुखरता के नमूने विशेष रूप से ध्यान आकृष्ट करते हो । इसके उदाहरण देखिए- "सुनन्दा खाना वाले हम चार हो । खाना हो गया?" "सुनन्दा चून की थाली और चकला-बेलन और बटलोई वगैरह खाली बर्तन उठाकर चल दी, कुछ भी बोली नहीं ।"

इसकी पुन: आवृत्ति पति-पत्नी के बीच की संवेदनहीनता को और अधिक संवेदनशील बनाती है-

'सुनतो नही हो कि कोई क्या कर रहा है ? क्यों?"

सुनन्दा ने और मुँह फेर लिया ।

"क्या मैं बकते रहने के लिए हूँ ?"

सुनन्दा भीतर-ही-भीतर घुट गयी ।

इस तरह का भाषिक प्रयोग कथानक को एक नयी भंगिमा देता है जो कथा की संरचना से जुड़ा हुआ है । यहाँ संरचना को लेकर प्रश्न उठाया जा सकता है कि कथानक की बुनावट चुस्त दुरुस्त है या शिथिल अथवा बिखरी हुई । वस्तुत: जैनेन्द्र की कथा-संरचना में यह बेमानी बन जाता है । इस मानक का अतिक्रमण करते हुए उन्होंने एक नये संरचना-शिल्प की महत संभावना का उद्घाटन 'पत्नी' शीर्षक कहानी में किया है ।

9.9 प्रतिपाद्य एवं उद्देश्य

प्रतिपाद्य या कथ्य और उद्देश्य को लेकर जैनेन्द्र की कहानियों पर प्रेमचंद ही नहीं प्रसाद की कहानियों की तरह भी विचार नहीं किया जा सकता । प्रेमचंद की दृष्टि जहां कथ्य के माध्यम से पाठक के चरित्र-निर्माण पर टिकी होती है, वहाँ प्रसाद एक द्वन्द्वपूर्ण स्थिति उत्पन्न कर प्रेम या घृणा अथवा प्रेम या कर्त्तव्य का प्रश्न उठाकर पाठक की नैतिक चेतना को जगाते है । जैनेन्द्र ऐसा कुछ नहीं करते । वे अपने कथ्य के द्वारा पाठक को एक विशिष्ट मनोजगत

में ले जाकर उसकी उलझी हुई गुत्थियों को सुलझाने या और अधिक उलझाने का एक आकर्षक आयोजन करते है ।

'पत्नी' कहानी एक ओर जहाँ मध्यवर्गीय जीवन की नीरस, यांत्रिक, अकेलेपन, विलगाव या विघटनोन्मुख जीवन को कथ्य का आधार बनाती है, वहाँ दूसरी ओर पति-पत्नी के बीच उत्पन्न अन्तराल को पाटने की एक क्षीण अपेक्षा भी लिए हुए है । कालिंदीचरण अपनी बौद्धिक शैक्षणिक उच्चस्तरीयता के कारण पत्नी से मन-ही-मन विलग होकर आन्दोलनकारी मित्रों की संगति में अपनी पूर्णता समझता है । जब कि संभ्रांत कुल की सुनन्दा कम पढ़ी होने के कारण अपने बलिदान में एक पुल बनी हुई है, जिसके ऊपर पांव रखकर बड़े-बड़े क्रांतिकारी आगे बढ़ पाते है । जैनेन्द्र यहाँ पाठक को देना क्या चाहते है या उनका आग्रह अथवा अनुरोध क्या है यह स्पष्ट नहीं है । वस्तुत: 'पत्नी' कहानी पर प्रतिपाद्य या उद्देश्य की दृष्टि से विचार करते हुए इसे मात्र पति-पत्नी या एक विशेष वर्ग की ही कहानी मान लेने पर उसकी चेतना की पूरी कराह नहीं सुनी जा सकती । इस सम्बन्ध में डा. जगदीश पाण्डेय का सुनन्दा के सम्बन्ध में यह कथन अत्यन्त सार्थक है कि "सुनन्दा की ट्रैजडी ग्रास विडो (मृत पति की विधवा) की ट्रेजडी न होकर विडो की है । वह चौके की बेवा (विधवा) है । उसका पति परदेश नहीं, साथ है । फिर भी चून की थाली, चकला-बेलन और बटलोई ही सुनन्दा की दुनिया है । उसकी ट्रेजडी में शाश्वत का व्यंग्य नहीं, नाटकीय ध्वंस का मूल्य नहीं, नित्य प्रति का मौन मरण है । दीर्घकालीन सर्द आह है, जहाँ दुःख यह नहीं कि आज दुःख है, बल्कि कल कौन सुख है, रोज ही मौत है ।" सुनन्दा की इस त्रासदी की बावजूद कालिंदीचरण के प्रति लेखक और पाठक के मन में कोई आक्रोश नहीं है । वह कोई अत्याचारी या अनाचारी पति नहीं है । सुनन्दा सहती है, पर कहती नहीं, मसोसती है; फिर भी उसकी सहनशीलता में सहज समर्पण है तो उसी अनुपात में स्वाभिमान भी, स्वाभिमान भी बस इतना कि सारा खाना मित्रों के बीच रख देने की बात जानते हुए भी पति ने एक बार भी यह नहीं पूछा कि "तुम क्या खाओगी? क्या मैं यह सह सकती थी कि मैं तो खाऊँ और उनके मित्र भूखे रहें, पर पूछ लेते तो क्या था।" कहानी का अन्त खाना खा रहे मित्रों को आचार देकर चुपचाप वापस लौटने से इस प्रकार होता है, "जाने लगी, तो कालिंदी ने तनिक स्निग्ध वाणी से कहा 'थोड़ा पानी भी लाना'-और सुनन्दा ने पानी ला दिया । देकर लौटी और फिर बाहर द्वार से लगकर ओट में खड़ी हो गयी । जिससे कालिंदी कुछ माँगें तो जल्दी से ला दे ।" आरम्भ और मध्य के साथ इस अन्त को देखने-परखने के बाद सुनन्दा को लेकर या 'पत्नी' कहानी को लेकर जैनेन्द्र जी के किसी आग्रह-अनुरोध या लेखकीय अपेक्षा (पाठक से की जाने वाली) का स्पष्ट पता नहीं चलता । सुनन्दा के प्रति सहानुभूति जाग्रत हो सकती है, कालिंदी चरण को हम निर्दोष मानकर बरी कर सकते हो, लेकिन इन पात्रों के चरित्र के माध्यम से जीवन जगत में अपने मार्ग-निर्धारण में या उसे समझने में कोई सहायता नहीं मिलती । अत: मनोरंजन के साथ ही मनोवैज्ञानिक जिज्ञासा पैदा करना ही इस कहानी का उद्देश्य माना जा सकता है ।

यदि सुनन्दा के चरित्र को केन्द्र में रखकर प्रतिपाद्य और उद्देश्य पर विचार किया जाए तो हम किसी निश्चित निष्कर्ष पर नहीं पहुँच पाते । आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी ने जैनेन्द्र की

पात्र-रचना पर विचार करते हुए लिखा है, "उनके सभी पात्र एक ऊँचे आदर्श को लेकर एक उच्च मानसिक भूमि पर व्यवहार करते दिखते है, किंतु सच्ची शारीरिक उच्चता और उदार मन: स्थिति उनमें नहीं । जैनेन्द्र अपने पात्रों को सुस्पष्ट व्यक्तित्व नहीं देते, न उनके सुख-दुःख को सुलझे हुए रूप में हमारे सामने रखते है । उनके पात्र एक बड़ी हद तक रहस्यवादी बने रहते है । उनके प्रति पाठकों की आकांक्षित सहानुभूति उत्पन्न नहीं होती ।" सुनन्दा के संबंध में भी उपयुक्त कथन पूर्णत: लाग होता है । कहानी के आरंभ में जिस तरह से सुनन्दा कालिंदीचरण के प्रति बेरूखी का परिचय देती है और कालिंदीचरण जो रुख अपनाता है, उसे देखते हुए कहानी के अन्त में सुनन्दा की मानसिकता में आने वाला बदलाव बहुत स्वाभाविक नहीं लगता । यही नहीं, वरन् पाठक सुनन्दा के चरित्र की जो अपेक्षा लेखक से रखता है, वह भी पूरी नहीं होती । कम-से-कम कालिंदी की ओर से इस प्रकार का कदम उठाया जाना या प्रयास किया जाना अपेक्षित लगता है, जो सुनन्दा के बदले हुए व्यवहार का औचित्य सिद्ध करता । नारी के रूप में ही नहीं, एक पत्नी के रूप में भी पाठकीय अपेक्षा के अनुरूप सुनन्दा की छवि नहीं उभर पाती । 'एक रात' कहानी की सुदर्शना 'ग्रामोफोन रिकार्ड' की विजया, मास्टर जी' की पत्नी का रुख या तेवर भी उसमें नहीं है, जो जैनेन्द्र के नारी मुक्ति का, चाहे असामाजिक ही सही, एक रुझान बना था । अत: सुनन्दा के चरित्र की दृष्टि से भी कहानी के प्रतिपाद्य या उद्देश्य का समुचित ताल-मेल नहीं बैठ पाता ।

जैनेन्द्र जी एक विचारक और चिन्तक भी माने जाते है; इस वैचारिकता के कारण उनसे, प्राय: लौकिक व्यवहार की उपेक्षा भी साहित्य में हुई है । इसका एक परिणाम यह हुआ है कि उनकी कला संबंधी अवधारणा जीवन की वास्तविकता से थोड़ी हटकर दिखाई देती है । प्रतिपाद्य और उद्देश्य संबंधी कुछ अभावों के बावजूद 'पत्नी' को जैनेन्द्र की श्रेष्ठतम कहानियों में जो स्थान मिला है-वह प्रश्न भी यहाँ विचारणीय है । इसका उत्तर स्वयं जैनेन्द्र की कला-संबंधी अवधारणा में मिलता है । उनके अनुसार कला की अवतारणा जीवन के अभाव छिद्रों को आत्म स्वर की रागिनी के भर देने के लिए होती है । सुनन्दा का समस्त क्रिया व्यापार आत्म-रागिनी से भरा हुआ है । उनकी अधिकांश श्रेष्ठ कहानियाँ इसी क्रम में आत्मोत्सर्ग और आत्मदान की भावना से परिपूर्ण है । सुनन्दा अपने तमाम भौतिक और मानसिक अभावों-तनावों को झेलते हुए आत्मोत्सर्ग का परिचय देती है । वह नहीं चाहती कि "वह स्वयं खाले और उनके (पति के) मित्र भूखे रहें ।' वह सिर्फ ताजा खाना देने के लिए ही पति की प्रतीक्षा नहीं करती, वरन् इस बात की भी प्रतीक्षा करती है कि पति कोई आदेश दे और वह उसे शीघ्र पूरा कर दे । कहानी का अंत इसकी इस भावना के रेखांकन से होता है । पति के आदेश. पर जब वह पानी देकर लौटी तो "फिर बाहर द्वार से लगकर ओट में खड़ी हो गयी । जिससे कालिंदी कुछ मांगें, तो जल्दी से उसे ला दे । "जैनेन्द्र ने इसी रूप में सुनन्दा के चरित्रगत उत्कर्ष की सार्थकता को सिद्ध किया है । देशोद्वार के लिए आन्दोलनकारियों की सैद्धान्तिक बहसों से उन्हें कुछ लेना-देना नहीं है । एक आदर्श पत्नी के रूप में सुनन्दा के आत्मोत्सर्ग को रेखांकित करने के लिए देशोद्धार का आन्दोलन एक युक्ति के रूप में यहाँ समाविष्ट किया गया है ।

9.10 संदर्भ ग्रन्थ

1. कहानीकार जैनेन्द्र: अभिज्ञान और उपलब्धि: डा. जगदीश पाण्डेय,पूर्वोदय प्रकाशन, 7/8 दरियागंज, नई दिल्ली- 110002
2. जैनेन्द्र की कहानियां: एक मूल्यांकन: 2500 शकुंतला वर्मा, अभिनव प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली- 110002
3. हिन्दी कहानी: विविध संदर्भ: डा. वेद प्रकाश जुनेजा, ज्योति बुक डिपो, करनाल (हरियाणा)
4. हिन्दी कहानी: बदलते प्रतिमान: डा. रघुवर दयाल वार्ष्णेय, पाण्डुलिपि प्रकाशन, ई- 11/5, कृष्णनगर, दिल्ली- 1100512

9.11 बोध - प्रश्न

इनमें कुछ ऐसे प्रश्न हो, जिनके सही उत्तर कहानी के आधार पर नहीं बल्कि इकाई में दी गयी सामग्री के आधार पर दिए जा सकते हो । कुछ प्रश्नों के उत्तर इकाई में आए तथ्यों के आधार पर दिए जा सकते है । नीचे दिए गए प्रश्नों के उत्तर उनके सामने दिए गए कोष्ठकों में दें और सही उत्तर के लिए 6.11 में दिए गए उत्तरों से जांच लें -

1. कहानी में आए पति-पत्नी का नाम बताएँ । ( )
2. पति-पत्नी के रूप में कालिंदी और सुनन्दा में तालमेल क्यों नहीं हो पाता ।?
   (क) सुनन्दा की कुरूपता के कारण
   (ख) कालिंदी के कठोर व्यवहार के कारण
   (ग) सुनन्दा के कम पढ़े-लिखे होने के कारण
   (घ) सुनन्दा के चिड़चिड़ेपन के कारण ( )
3. कालिंदीचरण और उसके मित्र किस मसले को लेकर बहस कर रहे थे-
   (क) अपने घरेलू मसलों को लेकर
   (ख) देशोद्धार के मसले को लेकर
   (ग) आपसी व्यवहार के मसले को लेकर
   (घ) किसी साहित्यिक मसले को लेकर ( )
4. सुनन्दा अंगीठी सामने रखे हुए किस चिन्ता में बैठी है?
   (क) भोजन सामाग्री की कमी की चिन्ता में
   (ख) चाय के लिए दूध की चिंता में
   (ग) पति के आने की प्रतीक्षा में
   (घ) कोयले खत्म हो जाने की चिन्ता में ( )
5. राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलन में कालिंदी किस मार्ग का समर्थक है?
   (क) हिंसात्मक आतंकवाद के मार्ग का
   (ख) सुलह-सोपत के मार्ग का
   (ग) असहयोग पर आधारित अहिंसक मार्ग का
   (घ) कानूनी या वैधानिक मार्ग का ( )

6. पत्नी के पास से वापस आकर कालिंदी के मत में परिवर्तन क्यों हुआ?
   (क) पत्नी के समझाने के कारण
   (ख) पत्नी से झगड़े के कारण
   (ग) परिवार की सुरक्षा की चिन्ता के कारण
   (घ) मित्रों के दबाव के कारण ( )
7. सीढ़ियों पर पैरों की आहट से सुनन्दा के मुख पर आने वाली आभा क्यों लुप्त हो गयी?
   (क) कई आदमियों को रोटी खिलानी पड़ेगी
   (ख) पति के भोजन में अब भी देर होगी
   (ग) पति कहीं खा-पोकर न आया हो
   (घ) रोटियों के ठण्डी हो जाने के डर से ( )
8. सुनन्दा पति के प्रश्नों का जवाब क्यों नहीं देती?
   (क) पति के भय के कारण
   (ख) अपने गुस्से के कारण
   (ग) आपसी विवाद को बढ़ने से रोकने के लिए
   (घ) पति की उपेक्षा के भाव के कारण ( )
9. सुनन्दा बैठक के दरवाजे के बाहर दीवार से लग कर क्यों खड़ी हुई?
   (क) बैठक में बैठे लोगों की बात सुनने के लिए
   (ख) खाने की तारीफ या निन्दा सुनने के लिए
   (ग) उनकी किसी जरूरत को जल्दी पूरा करने के लिए
   (घ) बर्तन खाली हो जाने पर उन्हें उठाने के लिए ( )
10. पत्नी को आचार लाने के लिए पति द्वारा अभ्यासवश जोर से बुलाने का क्या मतलब है?
   (क) क्या कालिंदी को जोर से बोलने की आदत है
   (ख) जोर से पुकार कर क्या वह जल्दी करना चाहता था
   (ग) इससे क्या वह पत्नी पर अपना दबदबा दिखाना चाहता था
   (घ) पति की उपस्थिति में पत्नी खाली समय में उससे प्राय: दूर रहती थी इसलिए 'अभ्यासवश जोर से पुकारने की बात कही गयी है । ( )
11. सुनन्दा किस वास्तवकिता से प्रेरित होकर आपत्ति-शून्य भाव से पति के साथ विपदा-पर-विपदा सहती हुई रह रही थी? उत्तर नीचे की दो-तीन पंक्तियों में दें ।
   .....
   .....
   .....
12. कालिंदीचरण ने आतंकवाद के किन प्रमुख दोषों का उल्लेख किया है? उत्तर नीचे की तीन-चार पंक्तियों में दें।
   .....

.....

.....

13. पूरी कहानी में कौन से तीन वाक्य हो जो सुनन्दा द्वारा पति के लिए बोले गए हो? उत्तर एक पंक्ति में दें ।

.....

14. कहानी में कहानीकार द्वारा कालिंदी चरण के किन गुणों का उल्लेख किया गया है? उत्तर चार पंक्तियों में दें।

.....

.....

.....

.....

15. जैनेन्द्र पर किस आरोप के कारण उनका विरोध किया जा रहा था? उत्तर चार-पांच पंक्तियों में दें ।

.....

.....

.....

.....

.....

9.12 बोध प्रश्नों के सही उत्तर

1 - कालिंदीचरण और सुनन्दा

2 - ग; 3-ख; 4-ग; 5-ग; 6-ख; 7-ख; 8-ख; 9-ग; 10-घ

11. उसके पति ने अगर आराम छोड़ दिया है, घर का काम छोड़ दिया है, जान-बूझ कर उखड़े-उखड़े और मारे-मारे जो फिरते हो, इससे वे कुछ भला ही सोचते होंगे । इन्हीं बातों पर दृढ़ विश्वास करके ।

12. आतंक से विवेक कुंठित होता है और या तो मनुष्य उससे उत्तेजित ही रहता है, या फिर उसके भय से दबा रहता है । हमारा लक्ष्य बुद्धि को चारों ओर से जगाना है, उसे आतंकित करना नहीं ।

13. 1, 'खाओगे नहीं? एक तो बज गया ।' 2, 'आचार लेते जाओ ।'

14. कालिंदीचरण अपने दल में उग्र नहीं समझे जाते, किसी कदर उदार समझे जाते हो । उनकी बात का दल में आदर है । कुछ लोग उनके धीमेपन पर रुष्ट भी हो । वह दल के विवेक के प्रतिनिधि और उत्ताप पर अंकुश का काम करते हो ।

15. जैनेन्द्र के समय के प्रगतिशील आलोचकों ने उन पर अश्लीलता और विकारग्रस्तता से युक्त भावों को बढ़ावा देने का आरोप लगाया था । इसके पीछे उनकी विकृत यौन-चेतना

और पति-पत्नी तथा एक प्रेमी के त्रिकोण पर आधारित असामाजिक प्रेमादर्श था, जिसके लिए उनके 'सुनीता' उपन्यास और बहुत सारी कहानियों को आधार बनाया गया था ।

9.13 अभ्यासार्थ कुछ दीर्घोत्तरी प्रश्न एवं टिप्पणियाँ

1. जैनेन्द्र के व्यक्तित्व एवं कृतित्व का संक्षिप्त परिचय दें । (इसके उत्तर के लिए इकाई में दी गयी प्रस्तावना को आधार बनाएं)
2. 'सुनन्दा के चरित्र के माध्यम से जैनेन्द्र ने पत्नी कहानी को एक भावमय मूक चलचित्र का रूप प्रदान किया है ।' इस कथन की सार्थकता को स्पष्ट करें । (इस प्रश्न के उत्तर के इकाई में दिए गए शीर्षक की उपयुक्तता और चरित्र चित्रण वाले अंश को देखें ।)
3. निम्न लिखित विषयों पर संक्षिप्त टिप्पणियाँ लिखें-

   (क) पत्नी कहानी का संरचना-शिल्प

   (ख) सामाजिक प्रभाव की दृष्टि से प्रेमचंद और जैनेन्द्र की तुलना

   (ग) 'पत्नी' कहानी की प्रमुख समस्या

   'क' के उत्तर के लिए इकाई के संरचना-शिल्प वाले अंश को देखें,

   'ख' के लिए 'प्रतिपाद्य और उद्देश्य' के अन्त को देखें और

   'ग' के लिए 'प्रतिपाद्य और उद्देश्य' के आरंभिक अंश को देखें)

इकाई- 10 (भाग- 1)

'पुरस्कार' (जयशंकर प्रसाद) : वाचन

इकाई की रूपरेखा

10.0 उद्देश्य
10.1 प्रस्तावना
10.2 कहानी का वाचन, पुरस्कार
10.3 कहानी का सार
10.4 कहानी की सन्दर्भ सहित व्याख्या
10.5 सारांश
10.6 संदर्भ ग्रन्थ
10.7 बोध प्रश्नों / अभ्यासों के उत्तर

10.0 उद्देश्य

इस इकाई में हम माँ भारती के वरद् पुत्र तथा छायावाद के आधार स्तम्भ महाकवि श्री जयशंकर प्रसाद की कहानी 'पुरस्कार' का अध्ययन करेंगे । कहानी के साथ ही लेखक का परिचय, कहानी का सार और उसके महत्त्वपूर्ण अंशों की संदर्भ सहित व्याख्या भी करेंगे । इस कहानी के अध्ययन के पश्चात् आप:

- कहानी की कथावस्तु का सार अपने शब्दों में लिख सकेंगे ।
- कहानी में आए कठिन शब्दों, मुहावरों व लोकोक्तियों के अर्थ बता सकेगे एवं उनके प्रयोग कर सकेगें ।
- कहानी के महत्त्वपूर्ण अंशों और उक्तियों की व्याख्या कर सकेंगे ।

10.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में हम प्रसिद्ध कहानीकार जयशंकर प्रसाद द्वारा रचित 'पुरस्कार' कहानी का अध्ययन करेगें । कहानी का सार लिखेंगे एवं महत्वपूर्ण अंशों और उक्तियों की व्याख्या करेंगे । इसके आगे की इकाई में हम इसी कहानी का विश्लेषण और मूल्यांकन करेंगे ।

छायावाद के प्रमुख कवि जयशंकर प्रसाद का जन्म 1889 ईस्वी में भगवान विश्वनाथ की परम पावन नगरी काशी में हुआ था । सूंघनी साहू परिवार में जन्मे सर्वतोमुखी प्रतिभा के धनी प्रसाद ने साहित्य की जिस भी विधा को अपनी लौह लेखनी से स्पर्श किया वही स्पर्शमणि के लोकोत्तर प्रभाव से प्रभावान्विति हो उठी । मूलत: कवि होते हुए भी उन्होंने कहानी, नाटक, उपन्यास और निबंध पर भी अपनी लेखनी चलाकर हस्तकौशल का परिचय दिया । प्रेमचंद के समकालीन होते हुए भी प्रसाद ने तात्कालीन समस्याओं के स्थान पर राष्ट्रीय व सांस्कृतिक चेतना को

कहानियों का कथ्य बनाया । इसके लिए उन्होंने ऐतिहासिक घटनाचक्रों को कल्पना से जोड़कर प्रस्तुत किया । प्रसादजी की कहानियों में भावात्मक संघर्ष और मानसिक अन्तर्द्वन्द्व का चित्रण विशेष रूप से मिलता है । प्रसादजी ने लगभग 70 कहानियाँ लिखीं जो पाँच संग्रहों में प्रकाशित हुई हैं । इन संग्रहों के नाम इस प्रकार हैं -

(1) छाया (1912) (2) प्रतिध्वनि (1922)

(3) आकाशदीप (1929) (4) आँधी (1931)

(5) इंद्रजाल (1936)

प्रस्तुत इकाई में हम कहानी का वाचन और महत्वपूर्ण अंशों की व्याख्या करेंगे । इसके लिए आवश्यक संकेत और निर्देश देकर हम आपकी सहायता करेंगे । कहानी के साथ बोध प्रश्न भी दिये गये हैं, जिससे आप जान सकेंगे कि आपने कहानी ध्यान से पढ़ी है या नहीं ।

10.2 कहानी का वाचन : पुरस्कार

आद्रा नक्षत्र; आकाश में काले-काले बादलों की घुमड़ जिसमें देव-दुन्दुभी का गम्भीर घोष । प्राची के एक निरभ्र कोने से स्वर्ण-पुरूष झाँकने लगा-देखने महाराज की सवारी । शैलमाला के अंचल में समतल उर्वरा भूमि से सोंधी बास उठ रही थी । नगर-तोरण से जयघोष हुआ, भीड़ में गजराज का चामरधारी पुण्ड उन्नत पड़ा । वह हर्ष और उत्साह का समुद्र हिलोर भरता हुआ आगे बढ़ने लगा ।

प्रभात की हेम-किरणों से अनुरंजित नन्हीं-नन्हीं बूंदों का एक झोंका स्वर्ण-मल्लिका के समान बरस पड़ा । मंगल-सूचना से जनता ने हर्ष-ध्वनि की ।

रथों, हाथियों और अश्वारोहियों की पंक्ति जम गई । दर्शकों की भीड़ भी कम न थी । गजराज बैठ गया, सीढ़ियों से महाराज उतरे । सौभाग्यवती और कुमारी सुन्दरियों के दो दल, आम्रपल्लवों से सुशोभित मंगल-कलश और फूल, कुंकुम तथा खीलों से भरे थाल लिये, मधुर गान करते हुए आगे बढ़े ।

महाराज के मुख पर मधुर मुस्कान थी । पुरोहित-वर्ग ने स्वस्त्ययन किया । स्वर्ण-रंजित हल की मूठ पकड़कर महाराज ने जुते हुए सुन्दर पुष्ट बैलों को चलने का संकेत किया । बाजे बजने लगे । किशोरी कुमारियों ने खीलों और फूलों की वर्षा की ।

कोशल का यह उत्सव प्रसिद्ध था । एक दिन के लिए महाराज को कृषक बनना पड़ता-उस दिन इन्द्र पूजन की धूमधाम होती; गोठ होती । नगर-निवासी उस पहाड़ी भूमि में आनन्द मनाते । प्रतिवर्ष कृषि का यह महोत्सव उत्साह से सम्पन्न होता; दूसरे राज्यों से भी युवक राजकुमार इस उत्सव में बड़े चाव से आकर योग देते ।

मगध का एक राजकुमार अपने रथ पर बैठा बड़े कुतूहल से यह दृश्य देख रहा था ।

बीजों का एक थाल लिये कुमारी मधूलिका महाराज के साथ थी । बीज बोते हुए महाराज जब हाथ बढ़ाते, तब मधूलिका उनके सामने थाल कर देती । यह खेत मधूलिका का था, जो इस साल महाराज की खेती के लिए चुना गया था; इसलिए बीज देने का सम्मान मधूलिका को ही मिला । वह कुमारी थी । सुन्दर थी । कोशेयवसन उसके शरीर पर इधर-उधर लहराता हुआ स्वयं शोभित हो रहा था । वह कभी उसे सम्हालती और कभी अपने रखे अलकों को । कृषक बालिका के शुभ्र भाल पर श्रमकणों की भी कमी न थी, वे सब बरौनियों में गुथे जा रहे थे । सम्मान और लज्जा उसके अधरों पर मन्दर मुस्कराहट के साथ सिहर उठते; किन्तु महाराज को बीज देने में उसने शिथिलता नहीं की । सब लोग महाराज का हल चलाना देख रहे थे- विस्मय से, कुतूहल से । और अरूण देख रहा था । कृषक-कुमारी मधूलिका को । अहा कितना भोला सौन्दर्य! कितना सरल चितवन!

शब्दार्थ

प्राची - पूरब दिशा, निरभ्र- बिना बादल का, मेघ शून्य, उर्वरा - उपजाऊ, अनुरंजित - अनुराग, प्रीति, किसी कन्या से पुरूष का प्रेमाचार करना, स्वस्त्ययन - मंगल जनक कर्म जिसके करने से अशुभ का नाश हो और शुभ प्राप्त हो ।

बोध प्रश्न

नीचे लिखे प्रश्नों के उत्तर दीजिए तथा अपने उत्तरों को इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से मिलाइये ।

प्र. 1 कृषि महोत्सव के लिए किसके खेत का चयन किया गया था?

(अ) मधूलिका (ब) अरूण (स) अग्निसेन (द) सेनापति

प्र. 2 मगध के राजकुमार का नाम क्या था?

.....

उत्सव का प्रधान कृत्य समाप्त हो गया । महाराज ने मधुलिका के खेत को पुरस्कार दिया, थाल में कुछ स्वर्ण-मुद्राएँ । वह राजकीय अनुग्रह था । मधूलिका ने थाली सिर से लगा ली; किन्तु साथ ही उसमें स्वर्ण-मुद्राओं को महाराज पर न्योछावर करके बिखेर दिया । मधूलिका की उस समय की ऊर्जस्वित मूर्ति लोग आश्चर्य से देखने लगे! महाराज की भृकुटी भी जरा चढ़ी ही थी । कि मधूलिका ने सविनय कहा -

देव! यह मेरे पितृ-पितामहों की भूमि है । इसे बेचना अपराध है; इसलिए मूल्य स्वीकार करना मेरी सामर्थ्य के बाहर है । महाराज के बोलने के पहले ही वृद्ध मन्त्री ने तीखे स्वर से कहा-अबोध! क्या बक रही है? राजकीय अनुग्रह का तिरस्कार! तेरी भूमि से चौगुना मूल्य है; फिर कोशल का तो यह सुनिश्चित राष्ट्रीय नियम है । तू आज से राजकीय रक्षणा पाने की अधिकारिणी हुई, इस धन से अपने को सुखी बना ।

राजकीय रक्षण की अधिकारिणी तो सारी प्रजा है, मंत्रिवर! महाराज को भूमि-समर्पण करने में तो मेरा कोई विरोध न था और न है; किन्तु मूल्य स्वीकार करना असंभव है । मधूलिका उत्तेजित हो उठी थी ।

महाराज के संकेत करने पर मन्त्री ने कहा-देव! वाराणसी-युद्ध के अन्यतम वीर सिंहमित्र की यह एक-मात्र कन्या है । महाराज चौंक उठे--सिंहमित्र की कन्या! जिसने मगध के सामने कोशल की लाज रख ली थी, उसी वीर की मधूलिका कन्या है?

- ही, देव! सविनय मन्त्री ने कहा ।
- इस उत्सव के परम्परागत नियम क्या हैं, मन्त्रिवर? महाराज ने पूछा
- देव, नियम तो बहुत साधारण है । किसी भी अच्छी भूमि को इस उत्सव के लिए चुनकर नियमानुसार पुरस्कार-स्वरूप उसका मूल्य दे दिया जाता है । वह भी अत्यन्त अनुग्रहपूर्वक अर्थात् भू-सम्पत्ति का चौगुना मूल्य उसे मिलता है । उस खेती को वही व्यक्ति वर्ष-भर देखता है । वह राजा का खेत कहा जाता है ।

महाराज को विचार-संघर्ष से विश्राम की अत्यन्त आवश्यकता थी । महाराज चुप रहे । जयघोष के साथ सभा विसर्जित हुई । सब अपने-अपने शिविरों में चले गये । किन्तु मधूलिका को उत्सव में फिर किसी ने न देखा । वह अपने खेत की सीमा पर विशाल मधूक-वृक्ष के चिकने हरे पत्तों की छाया में अनमनी चुपचाप बैठी रही ।

शब्दार्थ

अनुग्रह - कृपा, दया (सरकार या राज्य की ओर से होने वाली रियायत), विसर्जित - परित्याग, छोड़ना, मधूक-वृक्ष - महुआ का वृक्ष

बोध प्रश्न

प्र. 3 मधुलिका के खेत को पुरस्कार स्वरूप क्या दिया गया?

.....

प्र. 4 मधुलिका ने पुरस्कार को अस्वीकार क्यों कर दिया?

.....

प्र. 5 मधुलिका किसकी पुत्री थी?

.....

प्र. 6 कृषि महोत्सव के परम्परागत नियम क्या थे?

.....

रात्रि का उत्सव अब विश्राम ले रहा था । राजकुमार उसमें सम्मिलित नहीं हुआ-अपने विश्राम-भवन में जागरण कर रहा था । आँखों में नींद न थी । प्राची में जैसी गुलाली खिल रही थी, वह रंग उसकी आँखों में था । सामने देखा तो मुंडेर पर कपोती एक पैर पर खड़ी पंख फैलाये अँगड़ाई ले रही थी । अरूण उठा खड़ा हुआ । द्वार पर सुसज्जित अश्व था, वह

देखते- देखते नगर-तोरण पर जा पहुँचा । रक्षक गण ऊँघ रहे थे, अश्व के पैरों के षब्द से चौंक उठे ।

युवक-कुमार तीर-सा निकल गया । सिन्धु देश का तरंग प्रभात के पवन से पुलकित हो रहा था । घूमता-घूमता अरूण उसी मधूक-वृक्ष के नीचे पहुँचा, जहाँ मधूलिका अपने हाथ पर सिर धरे हुए खिन्न निद्रा का सुख ले रही थी ।

अरूण ने देखा, एक छिन्न माधवीलता वृक्ष की शाखा से च्युत होकर पड़ी है । सुमन मुकुलित, भ्रमर निस्पन्द थे । अरूण ने अपने अश्व को मौन-रहने का संकेत दिया, उस सुषमा को देखने के लिए, परन्तु कोकिल बोल उठा । जैसे उसने अरूण से प्रश्न किया-छि :, कुमारी के सोये हुए सौंदर्य पर दृष्टिपात करने वाले धृष्ट, तुम कौन? मधूलिका की आँखें खुल पड़ी । उसने देखा, एक अपरिचित युवक । वह संकोच से उठ बैठी । - भद्रे! तुम्हीं न कल के उत्सव की संचालिका रही हो?

- उत्सव! ही उत्सव ही तो था ।
- कल उस सम्मान
- क्यों, आपको कल का स्वप्न सता रहा है? भद्र! क्या मुझे इस अवस्था में सन्तुष्ट न रहने देंगे?
- मेरा हृदय तुम्हारी उस छवि का भक्त बन गया है, देवी!
- मेरे उस अभिनय का - मेरी विडम्बना का । आह! मनुष्य कितना निर्दय है, अपरिचित! क्षमा करो, जाओ अपने मार्ग।
- सरलता की देवी! मैं मगध का राजकुमार तुम्हारे अनुग्रह का प्रार्थी हूँ-मेरे हृदय की भावना अवगुण्ठन में रहना नहीं जानती । उसे अपनी ।
- राजकुमार! मैं कृषक-बालिका हूँ । आप नन्दनबिहारी और मैं पृथ्वी पर परिश्रम करके जीने वाली । आज मेरी स्नेह की भूमि पर से मेरा अधिकार छीन लिया गया है । मैं दुःख से विकल हूँ मेरा उपहास न करो ।
- मैं कोशल-नरेश से तुम्हारी भूमि दिलवा दूंगा ।
- नहीं, वह कोशल का राष्ट्रीय नियम है! मैं उसे बदलना नहीं चाहती-चाहे उसमें मुझे कितना ही दुःख हो ।
- तब तुम्हारा रहस्य क्या है?
- यह रहस्य मानव-हृदय का है, मेरा नहीं । राजकुमार, नियमों से यदि मानव-हृदय बाध्य होता, तो आज मगध के राजकुमार का हृदय किसी राजकुमारी की ओर न खिंचकर एक कृषक-बालिका का अपमान करने न आता! मधूलिका उठ खड़ी हुई।

शब्दार्थ

विकल व्याकुल, बैचेन, मुकुलित - आधाखुला और आधा बंद, निस्पन्द स्पंदनहीन, विकल - अवगुण्ठन - ढकना, छिपा घूंघट

बोध प्रश्न

प्र. 7 राजकुमार अरूण घूमता हुआ कहाँ पहुँच गया?

.....

प्र. 8 राजकुमार द्वारा प्रणय निवेदन करने पर मधूलिका का मनोभाव क्या होता है?

(अ) वह उसे स्वीकार कर लेती । (ब) अस्वीकार कर देती है ।

(स) असमंजस की स्थिति में रहती है । (द) अपमानित महसूस करती है ।

चोट खाकर राजकुमार लौट पड़ा । किशोर किरणों में उसका रत्न-किरीट चमक उठा । अश्व वेग से चला जा रहा था और मधूलिका निष्ठुर प्रहार करके क्या स्वयं आहत न हुई? उसके हृदय में टीस-सी होने लगी । वह सजल नेत्रों से उड़ती हुई धूल देखने लगी ।

मधूलिका ने राजा का प्रतिपादन, अनुग्रह नहीं लिया । वह दूसरे खेतों में काम करती और चौथे पहर रूखी-सूखी खाकर पड़ी रहती । मधूकवृक्ष के नीचे छोटी-सी पर्णकुटीर थी । सूखे डंठलों से उसकी दीवार बनी थी । मधूलिका का वही आश्रय था । कठोर परिश्रम से जो रूखा अन्न मिलता, वही उसकी सांसों को बढ़ाने के लिए पर्याप्त था ।

दुबली होने पर भी उसके अंग पर तपस्या की कान्ति थी । आस-पास के कृषक उसका आदर करते । वह एक आदर्श बालिका थी । दिन, सप्ताह, महीने और वर्ष बीतने लगे । शीतकाल की रजनी, मेघों से भरा आकाश, जिसमें बिजली की दौड़ धूप । मधूलिका का छाजन टपक रहा था । ओढ़ने की कमी थी । ठिठुरकर एक कोने में बैठी थी । मधूलिका अपने अभाव को आज बढ़ाकर सोच रही थी । जीवन से सामंजस्य बनाये रखने वाले उपकरण तो अपनी सीमा निर्धारित रखते हैं; परन्तु उनकी आवश्यकता और कल्पना भावना के साथ बढ़ती-घटती रहती है । आज बहुत दिनों पर उसे बीती हुई बात स्मरण हुई । दो नहीं-तीन वर्ष हुए होंगे, इसी मधूक के नीचे प्रभात में तरूण राजकुमार ने क्या कहा था?

वह अपने हृदय से पूछने लगी उन चाटुकारी के शब्दों को सुनने के लिए उत्सुक-सी वह पूछने लगी-क्या कहा था? दुःख-दग्ध हृदय उन स्वप्न सी बातों को स्मरण रख सकता था? और स्मरण ही होता, तो भी कष्टों की इस काली निशा में वह कहने का साहस करता । हाय री विडम्बना!

शब्दार्थ

किरीट - मुकुट, टीस - रह-रह कर उठने वाला दर्द, कसक होना, पर्णकुटीर - पत्ते से बनी कुटिया, छाजन - छप्पर, तरूण - युवा

बोध प्रश्न

प्र. 9 मधूलिका अपनी आजीविका किस प्रकार चला रही थी?

.....

.....

प्र. 10 मधूलिका के अभावग्रस्त जीवन को स्पष्ट करिए ।

.....

.....

प्र. 11 तीन वर्ष पश्चात् मधूलिका किन बातों का स्मरण कर रही थी ।

.....

.....

आज मधूलिका उस बीते हुए क्षण को लौटा लेने के लिए विफल थी । दारिद्रय की ठोकरों ने उसे व्यथित और अधीर कर दिया है । मगध की प्रासादमाला के वैभव का काल्पनिक चित्र-उन सूखे डंठलों के रन्ध्रों से, नभ में-बिजली के आलोक में-नाचता हुआ दिखाई देने लगा । खिलवाड़ी शिशु जैसे श्रावण की संख्या में जुगनू को पकड़ने के लिए हाथ लपकाता है, वैसे ही मधूलिका मन-ही-मन कह रही थी । 'अभी वह निकल गया ।' वर्षा ने भीषण रूप धारण किया । गड़गड़ाहट बढ़ने लगी; ओले पड़ने की संभावना थी । मधुलिका अपनी जर्जर झोपड़ी के लिए कांप उठी । सहसा बाहर कुछ शब्द हुआ ।

– कौन है यहाँ? पथिक को आश्रय चाहिए ।

मधूलिका ने डंठलों का कपाट खोल दिया । बिजली चमक उठी । उसने देखा, एक पुरूष घोड़े की डोर पकड़े खड़ा है । सहसा वह चिल्ला उठी-राजकुमार!

– मधूलिका? - आश्चर्य से युवक ने कहा ।

एक क्षण के लिए सन्नाटा छा गया । मधूलिका अपनी कल्पना को सहसा प्रत्यक्ष देखकर चकित हो गई-इतने दिनों के बाद आज फिर!

अरूण ने कहा-कितना समझाया मैंने-परन्तु

मधूलिका अपनी दयनीय अवस्था पर संकेत करने देना नहीं चहती थी । उसने कहा-और आज आपकी यह क्या दशा है?

सिर झुकाकर अरूण ने कहा - मैं मगध का विद्रोही निर्वासित कोशल में जीविका खोजने आया हूँ ।

मधूलिका उस अन्धकार में हँस पड़ी मगध के विद्रोही राजकुमार का स्वागत करे एक अनाथिनी कृषक बालिका, यह भी एक विडम्बना है, तो भी मैं स्वागत के लिए प्रस्तुत हूँ ।

शीतकाल की निस्तब्ध रजनी, कुहरे से धुली हुई चांदनी, हाड़ कंपा देने वाला समीर, तो भी अरूण और मधूलिका की वाणी में उत्साह था, किन्तु अरूण जैसे अत्यन्त सावधान होकर बोलता।

मधूलिका ने पूछा-जब तुम इतनी विपन्न अवस्था में हो, तो फिर इतने सैनिकों को साथ रखने की क्या आवश्यकता है?

शब्दार्थ

रन्ध्रों से - रोमछिद्रों से

बोध प्रश्न

प्र. 12 मधूलिका की कौनसी कल्पना सहसा प्रत्यक्ष हो उठी थी?

.....

.....

प्र. 13 राजकुमार को जीविका खोजने की आवश्यकता क्यों हो गई थी?

.....

.....

- मधूलिका! बाहुबल ही तो वीरों की आजीविका है । ये मेरे जीवन-मरण के साथी हैं, भला मैं इन्हें कैसे छोड़ देता? और करता ही क्या?
- क्यों? हम लोग परिश्रम से कमाते और खाते । अब तो तुम ।
- भूल न करो, मैं अपने बाहुबल पर भरोसा करता हूँ । नये राज्य की स्थापना कर सकता हूँ । निराश क्यों हो जाऊँ? - अरूण के शब्दों में कम्पन था; वह जैसे कुछ कहना चाहता था; पर कह न सकता था ।
- नवीन राज्य! ओहो, तुम्हारा उत्साह तो कम नहीं । भला कैसे? कोई ढंग बताओ, तो मैं भी कल्पना का आनन्द ले लूं।
- कल्पना का आनन्द नहीं मधूलिका, मैं तुम्हें राजरानी के सम्मान से सिंहासन पर बिठाऊंगा! तुम अपने छिने हुए खेत की चिन्ता करके भयभीत न हो ।

एक क्षण में सरल मधूलिका के मन में प्रसाद का अन्धड़ बहने लगा-द्वन्द्व मच गया । उसने सहसा कहा-आह, मैं सचमुच आज तक तुम्हारी प्रतीक्षा करती थी, राजकुमार ।

अरूण ढिठाई से उसके हाथों को दबाकर बोला-तो मेरा भ्रम था, तुम सचमुच मुझे प्यार करती हो?

युवती का वक्षस्थल फूल उठा, वह ही भी नहीं कह सकी, ना भी नहीं । अरूण ने उसकी अवस्था का अनुभव कर लिया । कुशल मनुष्य के समान उसने अवसर को हाथ से ना जाने दिया । 'तुरन्त बोल उठा - तुम्हारी इच्छा हो, तो प्राणों से पण लगाकर मैं तुम्हें इस कोशल सिंहासन

पर बिठा दूं । मधूलिके! अरूण के खड्ग का आतंक देखोगी ? - मधूलिका एक बार कांप उठी । वह कहना चाहती थी नहीं; किन्तु उसके मुंह से निकला-क्या?

सत्य मधूलिका, कोशल-नरेश तभी से तुम्हारे लिए चिन्तित हैं । यह मैं जानता हूँ तुम्हारी साधारण-सी प्रार्थना वह अस्वीकार न करेंगे । और मुझे यह भी विदित है कि कोशल के सेनापति अधिकांश सैनिकों के साथ पहाड़ी दस्युओं का दमन करने के लिए बहुत दूर चले गये हैं ।

मधूलिका की आँखों के आगे बिजलियाँ हँसने लगी । दारूण भावना से उसका मस्तक विकृत हो उठा । अरूण ने कहा-तुम बोलती नही हो?

– जो कहोगे, वह करूंगी..... मंत्रमुग्ध-सी मधूलिका ने कहा ।

बोध प्रश्न

प्र.14 राजकुमार को सर्वाधिक भरोसा किस पर था?

.....

प्र.15 राजकुमार मधूलिका को क्या बनाना चाहता था?

.....

स्वर्ण मंच पर कोशल- नरेश अर्द्धनिद्रित अवस्था में आँखे मुकुलित किये हैं । एक चामरधारिणी युवती पीछे खड़ी अपनी कलाई बड़ी कुशलता से घुमा रही है । चामर के शुभ्र आन्दोलन उस प्रकोष्ठ में धीरे-धीरे संचलित हो रहे हैं । ताम्बूलवाहिनी प्रतिमा के समान दूर खड़ी है । प्रतिहारी ने आकर कहा- जय हो देव! एक स्त्री कुछ प्रार्थना करने आई है ।

आँखें खोलते हुए महाराज ने कहा-स्त्री! प्रार्थना करने आई है? आने दो । प्रतिहारी के साथ मधूलिका आई । उसने प्रणाम किया । महाराज ने स्थिर दृष्टि से उसकी ओर देखा और कहा-तुम्हें कहीं देखा है?

– तीन बरस हुए देव! मेरी भूमि खेती के लिए ली गई थी ।
– ओह, तो तुमने इतने दिन कष्ट में बिताये, आज उसका मूल्य मांगने आई हो, क्यों ? अच्छा-अच्छा तुम्हें मिलेगा । प्रतिहारी!
– नहीं महाराज, मुझे मूल्य नहीं चाहिए ।
– मूर्ख! फिर क्या चाहिए?
– उतनी ही भूमि, दुर्ग के दक्षिणी नाले के समीप की जंगली भूमि, वहीं अपनी खेती करूंगी । मुझे एक सहायक मिल गया है । वह मनुष्यों से मेरी सहायता करेगा, भूमि को समतल भी बनाना होगा ।

महाराज ने कहा-कृषक बालिके! वह बड़ी उबड़- खाबड़ भूमि है । तिस पर वह दुर्ग के समीप एक सैनिक महत्त्व रखती है ।

– तो फिर निराश लौट जाऊँ?
– सिंहमित्र की कन्या! मैं क्या करूं, तुम्हारी यह प्रार्थना
– देव! जैसी आज्ञा हो!
– जाओ, तुम श्रमजीवियों को उसमें लगाओ । मैं अमात्य को आज्ञापत्र देने का आदेश करता हूँ ।
– जय हो देव! - कहकर प्रणाम करती हुई मधूलिका राजमन्दिर के बाहर आई ।

दुर्ग के दक्षिण, भयावने नाले के तट पर, घना जंगल है, आज मनुष्यों के पदसंचार से शून्यता भंग हो रही थी । अरूण के छिपे वे मनुष्य स्वतन्त्रता से इधर- उधर घूमते थे । झाड़ियों को काटकर पथ बन रहा था । नगर दूर था, फिर उधर यों ही कोई नहीं आता था । फिर अब तो महाराज की आज्ञा से वहाँ मधूलिका का अच्छा-सा खेत बन रहा था । तब इधर की किसको चिन्ता होती?

शब्दार्थ

मुकुलित - अधखुला, चामर - चँवर, प्रकोष्ठ - मुख्य द्वार के पास की कोठरी, बड़ा कमरा

बोध प्रश्न

प्र.16 मधूलिका अपनी जमीन के बदले राजा से क्या माँगने गई थी?

.....

.....

एक घने कुंज में अरूण और दूसरे को हर्षित नेत्रों से देख रहे थे । सन्ध्या हो चली थी । निविड़ वन में उन नवागत मनुष्यों को देखकर पक्षीगण अपने नीड़ को लौटते हुए अधिक कोलाहल कर रहे थे ।

प्रसन्नता से अरूण की आँखें चमक उठीं । सूर्य की अन्तिम किरण झुरमट में घुसकर मधूलिका के कपोलों से खेलने लगी । अरूण ने कहा- चार प्रहर और, विश्वास करो, प्रभात में ही इस जीर्ण- कलेवर कोशल-राष्ट्र की राजधानी श्रावस्ती में तुम्हारा अभिषेक होगा और मगध से निर्वासित मैं एक स्वतंत्र राष्ट्र का अधिपति बनूंगा, मधूलिके !

– भयानक ! अरूण, तुम्हारा साहस देख मैं चकित हो रही हूँ । केवल सौ सैनिकों से तुम.
– रात के तीसरे प्रहर मेरी विजय- यात्रा होगी ।
– तो तुमको इस विजय पर विश्वास है?
– अवश्य, तुम अपनी झोपड़ी में यह रात बिताओ; प्रभात से तो राज-मंदिर ही तुम्हारा लीला-निकेतन बनेगा ।

मधूलिका प्रसन्न थी किन्तु अरूण के लिए उसकी कल्याण- कामना संशक थी । वह कभी-कभी उद्विग्न-सी होकर, बालकों के समान प्रश्न कर बैठती । अरूण उसका समाधान कर देता । सहसा कोई संकेत पाकर उसने कहा-अच्छा, अन्धकार अधिक हो गया । अभी तुम्हें दूर जाना

है और मुझे भी प्राण-पण से इस अभियान के प्रारम्भिक कार्यों को अर्द्धरात्रि तक पूरा कर लेना चाहिए; तब रात्रि-भर के लिए विदा! मधूलिके!

मधूलिका उठ खड़ी हुई । कंटीली झाड़ियों से उलझती हुई क्रम से बढ़ने वाले अन्धकार में वह झोपड़ी की ओर चली ।

पथ अन्धकारमय था और मधूलिका का हृदय भी निविड़-तम से घिरा था । उसका मन सहसा विचलित हो उठा, मधुरता नष्ट हो गई । जितनी सुख कल्पना थी, वह जैसे अन्धकार में विलीन होने लगी । वह भयभीत थी; पहला भय उसे अरूण के लिए उत्पन्न हुआ, यदि वह सफल न हुआ तो । फिर सहसा सोचने लगी- वह क्यों सफल हो? श्रावस्ती दुर्ग एक विदेशी के अधिकार में क्यों चला जाए? मगध का चिर शत्रु! ओह, उसकी विजय! कोशल- नरेश ने क्या कहा था - सिंहमित्र की कन्या । सिंहमित्र, कोशल का रक्षक वीर, उसी की कन्या आज क्या करने जा रही है? नहीं, नहीं, मधूलिका! मधूलिका!!' जैसे उसके पिता उस अन्धकार में पुकार रहे थे । वह पगली की तरह चिल्ला उठी । रास्ता भूल गई ।

बोध प्रश्न

प्र.17 मधूलिका का हृदय निविडतम से क्यों घिरा हुआ था?

.....

.....

प्र.18 मधूलिका का हृदय द्वन्द्वग्रस्त क्यों था?

.....

.....

रात एक पहर बीत चली, पर मधूलिका अपनी झोपड़ी तक न पहुँची । वह उधेड़बुन में विक्षिप्त-सी चली जा रही थी । उसकी आँखों के सामने कभी सिंहमित्र और कभी अरूण की मूर्ति अन्धकार में चित्रित होती जाती । उसे सामने आलोक दिखाई पड़ा । वह बीच पथ में खड़ी हो गई । प्राय: एक सौ उलकाधारी अश्वारोही चले आ रहे थे और आगे- आगे एक वीर अधेड़ सैनिक था । उसके बायें हाथ में अश्व की वल्गा और दाहिने हाथ में नग्न खड्ग । अत्यन्त वीरता से वह टुकड़ी अपने पथ पर चल रही थी । किन्तु मधूलिका बीच पक्ष से हिली नहीं । प्रमुख सैनिक पास आ गया; पर मधूलिका अब भी नहीं हटी । सैनिक ने अश्व रोककर कहा- कौन? कोई उत्तर नहीं मिला । तब एक दूसरे अश्वारोही ने कड़ककर कहा-तू कौन है, स्त्री? कोशल के सेनापति को उत्तर शीघ्र दे ।

रमणी जैसे विकार-ग्रस्त स्वर में चिल्ला उठी-बांध लो, मुझे बांध लो! मेरी हत्या करो । मैंने अपराध ही ऐसा किया है ।

सेनापति हँस पड़े, बोले-पगली है ।

– पगली नहीं, यदि वही होती, तो इतनी विचार-वेदना क्यों होती? सेनापति! मुझे बांध लो । राजा के पास ले चलो ।
– क्या है, स्पष्ट कह ।
– श्रावस्ती का दुर्ग एक प्रहर में दस्युओं के हस्तगत हो जायेगा । दक्षिणी नाले के पार उनका आक्रमण होगा ।

सेनापति चौंक उठे । उन्होंने आश्चर्य से पूछा-तू क्या कह रही है?
– मैं सत्य कह रही हूँ शीघ्रता करो ।
सेनापति ने अस्सी सैनिकों को नाले की ओर धीरे-धीरे बढ़ने की आज्ञा दी और स्वयं बीस अश्वारोहियों के साथ दुर्ग की ओर बढ़े । मधूलिका एक अश्वारोही के साथ बांध दी गई ।

श्रावस्ती का दुर्ग, कोशल राष्ट्र का केन्द्र, इस रात्रि में अपने विगत वैभव का स्वप्न देख रहा था । भिन्न राजवंशों ने उसके प्राप्तों पर अधिकार जमा लिया है । अब वह केवल कई गाँवों का अधिपति है फिर भी उसके साथ कोशल के अतीत की स्वर्ण-गाथाएँ लिपटी हैं । वही लोगों की ईर्ष्या का कारण है । जब थोड़े-से अश्वारोही बड़े वेग से आते हुए दुर्ग-द्वार पर रूके, तब दुर्ग के प्रहरी चौंक उठे । उलका के आलोक में उन्होंने सेनापति को पहचाना, द्वारा खुला । सेनापति घोड़े की पीठ से उतरे । उन्होंने कहा-अग्निसेन! दुर्ग में कितने सैनिक होंगे?
– सेनापति की जय हो! दो सौ ।
– उन्हें शीघ्र ही एकत्र करो; परन्तु बिना किसी शब्द के । सौ को लेकर तुम शीघ्र ही चुपचाप दुर्ग के दक्षिण की ओर चलो । आलोक और शब्द न हों ।
सेनापति ने मधूलिका की ओर देखा । वह खोल दी गई । उसे अपने पीछे आने का संकेत कर सेनापति राजमंदिर की ओर बढ़े । प्रतिहारी ने सेनापति को देखते ही महाराज को सावधान किया । वह अपनी सुख-निद्रा के लिए प्रस्तुत हो रहे थे; किन्तु सेनापति और साथ में मधूलिका को देखते ही चंचल हो उठे । सेनापति ने कहा-जय हो देव! इस स्त्री के कारण मुझे इस समय उपस्थित होना पड़ा है ।

महाराज ने स्थिर नेत्रों से देखकर कहा-सिंहमित्र की कन्या! फिर यहाँ क्यों! क्या तुम्हारा क्षेत्र नहीं बन रहा है? कोई बाधा? सेनापति! मैंने दुर्ग के दक्षिणी नाले के समीप की भूमि इसे दी है । क्या उसी सम्बन्ध में तुम कहना चाहते हो?
– देव! किसी गुप्त शत्रु ने उसी ओर से आज की रात में दुर्ग पर अधिकार कर लेने का प्रबन्ध किया है और इसी स्त्री ने मुझे पथ में यह सन्देश दिया है ।
राजा ने मधूलिका की ओर देखा! वह काँप उठी । घृणा और लज्जा से वह गड़ी जा रही थी । राजा ने पूछा - मधूलिका, यह सत्य है ।

– हाँ, देव ।

बोध प्रश्न

प्र.19 मधूलिका ने सेनापति को क्या सूचना दी?

.....

.....

प्र.20 मधूलिका घृणा वे लज्जा से क्यों गड़ी जा रही थी ।

.....

.....

राजा ने सेनापति से कहा-सैनिकों को एकत्र करके तुम चलो । मैं अभी आता हूँ । सेनापति के चले जाने पर राजा ने कहा-सिंहमित्र की कन्या! तुमने एक बार फिर कोशल का उपकार किया । वह सूचना देकर तुमने पुरस्कार का काम किया है । अच्छा तुम यहीं ठहरो । पहले उन आततायियों का प्रबन्ध कर लूँ ।

अपने साहसिक अभियान में अरूण बन्दी हुआ और दुर्ग उल्का के आलोक में अतिरंजित हो गया । भीड़ ने जयघोष किया । सबके मन में उल्लास था । श्रावस्ती दुर्ग आज एक दस्यु के हाथ में जाने से बचा था । जवान-वृद्ध-नारी आनन्द से उन्मत्त हो उठे ।

उषा के आलोक में सभा-मण्डप दर्शकों से भर गया । बन्दी अरूण को देखते ही जनता ने रोष से हुंकारते हुए कहा'वध करो!' राजा ने सबसे सहमत होकर आज्ञा दी 'प्राण-दण्ड! मधूलिका बुलाई गई । वह पगली-सी आकर खड़ी हो गई । कोशल-नरेश ने पूछा-मधूलिका, तुझे जो पुरस्कार लेना हो, माँग । वह चुप रही । राजा ने कहा-मेरी निज की जितनी खेती है, मैं सब तुझे देता हूँ । मधूलिका ने एक बार बन्दी अरूण की ओर देखा । उसनेकहा-मुझे कुछ न चाहिए । - अरूण

हँस पड़ा । राजा ने कहा-नहीं, मैं तुझे अवश्य दूंगा । माँग ले ।

– तो मुझे भी प्राण दण्ड मिले । - कहती वह बन्दी अरूण के पास जा खड़ी हुई ।

बोध प्रश्न

प्र.21 कोशल देश के बालक-वृद्ध-नारी सभी आनन्द से उन्मत्त क्यों हो उठे थे?

.....

प्र.22 मधूलिका ने राजा से क्या पुरस्कार माँगा?

.....

10.3 कहानी का सार

आपने कहानी का वाचन ध्यानपूर्वक किया होगा । आपको कहानी की कथा स्पष्ट हो गई होगी । फिर भी, हम आपकी सुविधा के लिए कहानी का सार दे रहे हैं । ताकि आप कहानी की कथावस्तु के केंद्रीय भाव को ठीक से समझ सकें ।

'पुरस्कार' कहानी का प्रारम्भ कोशल के प्रसिद्ध व परम्परागत कृषि-उत्सव से होता है। परम्परानुसार उत्सव में राज्य द्वारा मधूलिका की कृषि भूमि अधिगृहीत कर ली जाती है और पुरस्कार स्वरूप कृषि-भूमि से चार गुना अधिक मूल्य की स्वर्ण मुद्राएँ दी जाती हैं । किन्तु मधूलिका पितृ-पितामहों की भूमि बेचना अपराध मानती है और पुरस्कार को अस्वीकार कर देती है । मधूलिका राजकीय नियमों का पालन करते हुए अपनी कृषिभूमि महाराज को समर्पित कर देती है । वह जीवन यापन के लिए कठिन श्रम करती है जो उसकी देशभक्ति और ईमानदारी का प्रमाण है ।

मधूक वृक्ष के नीचे निराश, उदास बैठी मधूलिका के समक्ष जब राजकुमार अरूण प्रणय निवेदन करता है तो वह उसे अपना अपमान समझकर अस्वीकार कर देती है किन्तु मन ही मन उससे प्रेम करने लगती है । तीन वर्ष पश्चात् जब प्रिय की कल्पना में लीन मधूलिका के समक्ष राजकुमार अरूण एक देशद्रोही के रूप में भी आकर खड़ा होता है तो वह प्रेमान्ध होकर उसके प्रेम को स्वीकार कर लेती है ।

नए राज्य की स्थापना का षडयन्त्र करने वाले राजकुमार का साथ देते हुए वह राजा से अपनी कृषिभूमि के बदले दुर्ग के दक्षिणी नाले के समीप की जंगली भूमि माँगती है ।

मधूलिका प्रसन्न होने के साथ-साथ संशकित भी थी । मधूलिका अर्ध रात्रि में कंटीली झाड़ियों से उलझती हुई गहन अंधकार में अपनी झोपड़ी की ओर चली जा रही हैं । पथ अंधकारमय था और मधूलिका का हृदय भी निविड़-तम से घिरा था । अचानक उसके मन की मधुरता नष्ट हो गई और मधुरता का स्थान भय ने ले लिया । वह सोचने लगी, सिंह मित्र, कौशल का रक्षक वीर, उसी की कन्या आज क्या करने जा रही है?" विचार-वेदना में डूबी मधूलिका सामने से आ रहे सेनापति के समक्ष षड्यन्त्र का पर्दा फाश करती है और राजा को भी इसकी सूचना देती है ।

मधूलिका की सूचना के आधार पर अरूण बन्दी हुआ और राजा ने उसे प्राणदण्ड देने की घोषणा की । कोशल-नरेश ने पूछा-मधूलिका तुझे जो पुरस्कार लेना हो, माँग । - तो मुझे भी प्राण दण्ड मिले । कहती वह बन्दी अरूण के पास जा खड़ी हुई ।

10.4 कहानी की संदर्भ सहित व्याख्या

आइए, अब हम कुछ महत्त्वपूर्ण अंशों की व्याख्या का प्रयास करेंगे । प्रत्येक कहानी में कुछ पंक्तियाँ ऐसी अवश्य होती हैं जो उस रचना के केन्द्रीय भाव को स्पष्ट करने में सहायक होती

हैं । मधूलिका के अन्तर्द्वन्द्व को प्रस्तुत करना इस कहानी का केन्द्रीय भाव रहा है । कहानी में यह भाव निम्नलिखित पंक्तियों में अभिव्यक्त हुआ है -

"वह भयभीत थी; पहला भय उसे अरूण के लिए उत्पन्न हुआ, यदि वह सफल न हुआ तो । फिर सहसा सोचने लगी - वह क्यों सफल हो? श्रावस्ती दुर्ग एक विदेशी के अधिकार में क्यों चला जाए? मगध का चिर शत्रु! ओह, उसकी विजय।"

आइए, हम इस उद्धरण की संदर्भ सहित व्याख्या का प्रयास करें । सबसे पहले हमें "संदर्भ" लिखना चाहिए । संदर्भ से तात्पर्य है कि उक्त अंश किस रचना से लिया गया है? उसका रचनाकार कौन है? रचनाकार की विशिष्टता क्या है और उस रचना का केन्द्रीय भाव क्या है? ये चारों बातें संक्षेप में लिखी जानी चाहिए । उदाहरण के लिए इस अंश का संदर्भ लिखें।

संदर्भ - प्रस्तुत उद्धरण जयशंकर प्रसाद की ऐतिहासिक कहानी पुरस्कार से लिया गया है । उक्त संदर्भ में रचना का नाम व लेखक के नाम का उल्लेख किया गया है । इसके बाद हम इसी के अन्तर्गत प्रसंग लिखेंगे । प्रसंग से तात्पर्य है, उस रचना में वह उद्धरण किस प्रसंग में आया है, उसका उल्लेख । अगर वह कथन किसी पात्र का कथन है तो यह बताना कि वह कथन किसने, किससे कहा है ।

मधूलिका एक ओर तो राजकुमार अरूण से प्रेम करती है और उसके साथ षडयन्त्र में शामिल होती है, दूसरी ओर देश भक्त होने कारण स्वयं को धिक्कारती है । यह मधूलिका का स्वगत कथन है ।

ऊपर के अंश से यह स्पष्ट हो जाता है कि उक्त पंक्तियाँ किसने, किससे और किस प्रसंग में कही हैं । अब इस अंश की व्याख्या करेंगे । व्याख्या का तात्पर्य है उस अंश में कही गई बात जो किंचित् विस्तार और स्पष्टता के साथ खोलकर प्रस्तुत की गई हो । इस अंश में मधूलिका अपने मन के द्वन्द्व को प्रस्तुत कर रही है । मधूलिका की मानसिक स्थिति इस समय अत्यन्त जटिल है । यह बात निम्नलिखित व्याख्या से स्पष्ट हो जाती है ।

व्याख्या - मधूलिका गहन अंधेरी रात्रि में द्वन्द्व से घिरी हुई आगे बढ़ रही है । उसके मन में भय उत्पन्न हो रहा है । पहल भय तो यह है कि यदि अरूण की जीत नहीं हुई तो क्या होगा? और दूसरा भय यह है कि यदि अरूण जीत गया तो क्या होगा । फिर अचानक वह सोचने लगती है कि अरूण की जीत ही क्यों हो? वह मगध का चिर शत्रु है और शत्रु के हाथों में श्रावस्ती का दुर्ग क्यों जाए । श्रावस्ती पराधीन क्यों हो जाए?

मधूलिका का यह कथन उसके व्यक्तिगत प्रेम व देश प्रेम में द्वन्द्वग्रस्त मन की पीड़ा को प्रतिबिम्बित करता है । व्याख्या के पश्चात् उक्त अंश की शिल्पगत विशेषताओं पर संक्षेप में टिप्पणी की जाती है जिसके अन्तर्गत शैली, भाषा आदि की विशेषता बताई जाती हैं । इसे

'विशेष' शीर्षक के अन्तर्गत क्रम देकर प्रस्तुत किया जा सकता है । उदाहरण के लिए उक्त अंश पर विशेष टिप्पणी देखें ।

विशेष -

1. उक्त अंश में नायिका मधूलिका के अन्तर्द्वन्द्व को प्रस्तुत किया गया है ।
2. भाषा संस्कृत निष्ठ होते हुए भी भावानुकूल है ।

अगर उद्धरण में भाषा की अन्य विशेषताएँ जैसे बिंबात्मकता प्रतीकात्मकता, काव्यात्मकता, आलंकारिकता आदि हो तो उसे भी रेखांकित किया जाना चाहिए ।

अब हम आपको इस कहानी के कुछ उद्धरण दे रहे हैं, आप स्वयं उसकी व्याख्या का प्रयास कीजिए । आपकी सहायता के लिए हम संकेत भी दे सकते हैं ।

अभ्यास -

1. ''यह रहस्य मानव हृदय का है, मेरा नहीं ।.....
   अपमान करने न आता ।"
   संदर्भ : संकेत: रचना का नाम
   रचनाकार का नाम
   प्रसंग: अरूण द्वारा मधूलिका के समक्ष प्रणय निवेदन करने पर मधूलिका का कथन ।
   .....
   .....
   .....
   .....
   विशेष : 1. मानव मन का मनोवैज्ञानिक चित्रण
   2. भाषा काव्यात्मक और सूत्रात्मक
   .....
   .....
2. ''आज मधूलिका उस बीते हुए क्षण को..... अभी वह निकल गया ।"
   संदर्भ : संकेत: रचना का नाम
   रचनाकार का नाम
   प्रसंग: अरूण द्वारा मधूलिका के समक्ष प्रणय निवेदन करने पर मधूलिका का कथन ।
   .....
   .....
   .....
   .....

प्रसंग : किसने, किससे कहा

.....

.....

.....

.....

व्याख्या : संकेत : 1. मधूलिका की विपन्नावस्था

2. राजकुमार की प्रणय-याचना का स्मरण

3. प्रकृति वर्णन

विशेष. 1. काव्यात्मक शैली, आलंकारिक शैली

2. भाषा संस्कृतनिष्ठ

3. दृश्य बिंब

.....

.....

इसके अतिरिक्त कई महत्त्वपूर्ण उद्वरण इस कहानी में हैं जिनकी प्रसंग सहित व्याख्या आप स्वयं करने का अभ्यास करें । इससे कहानी को समझने और उसके शिल्पगत सौन्दर्य को ग्रहण करने में मदद मिलेगी ।

10.5 सारांश

आपने 'पुरस्कार' कहानी का वाचन ध्यान से किया होगा । आपने अच्छी तरह से समझ लिया होगा कि कहानीकार इस कहानी में क्या कहना चाहता है । इस कहानी को पढ़ने के बाद अब आप :

- 'पुरस्कार' कहानी ऐतिहासिक कल्पना पर आधारित है । जिसमें मधूलिका व अरूण के प्रेम-संबंध और मधूलिका के अन्तर्द्वन्द्व का चित्रण किया गया है । आप कहानी के वाचन और उसके महत्त्वपूर्ण अंशों की व्याख्या द्वारा इनको अपने शब्दों में व्यक्त कर सकते हैं ।
- 'पुरस्कार कहानी में प्रयुक्त कठिन शब्दों और संदर्भों की व्याख्या कर सकते हैं ।

10.6 संदर्भ ग्रन्थ

1. मदान, डॉ. इंद्रनाथ : हिंन्दी कहानी : पहचान और परख, लिपि प्रकाश, नई दिल्ली
2. हिन्दी कहानी विविधा, मानविकी विद्यापीठ, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

10.7 बोध प्रश्नों / अभ्यासों के उत्तर

1. (अ) मधूलिका
2. अरूण
3. थाल में स्वर्ण मुद्राएँ

4. वह पितृ-पितामहों की भूमि बेचना अपराध समझती थी ।
5. कोशल के वीर सेनापति सिंह मित्र की कन्या थी ।
6. किसी भी अच्छी भूमि को चुनकर पुरस्कार स्वरूप भूमि सम्पत्ति का चौगुना मूल्य भू-स्वामी को देना ।
7. उस मधूक वृक्ष के नीचे जहाँ मधूलिका बैठी हुई थी ।
8. (द) अपमानित महसूस करती है ।
9. मधूलिका दूसरों के खेतों में कार्य करके आजीविका चला रही थी ।
10. मधूक वृक्ष के नीचे उसकी छोटी सी पर्णकुटीर थी । सूखे डंठलो से उसकी दीवार बनी थी । वही मधूलिका का आश्रय था और रूखा सूखा अन्त ही उसकी सांसों को चला रहा था।
11. तीन वर्ष पूर्व मधूलिका मधूक वृक्ष के नीचे राजकुमार अरूण द्वारा कहे गये शब्दों को याद कर रही थी ।
12. मधूलिका राजकुमार की कल्पना में खोई हुई थी, उसी को सामने देखकर उसे लगा कि उसकी कल्पना सहसा प्रत्यक्ष हो गई है ।
13. मगध से विद्रोह के कारण उसे निर्वासित कर दिया गया था ।
14. अपने बाहुबल पर ।
15. राजरानी
16. उतनी ही भूमि जो दुर्ग के दक्षिणी नाले के समीप जंगल में थी ।
17. उसे लग रहा था कि वह अरूण का साथ देकर राजद्रोह कर रही है ।
18. कोशल के रक्षक वीर सिंहमित्र की पुत्री होकर वह देशद्रोह करने जा रही थी ।
19. मधूलिका ने कहा कि श्रावस्ती का दुर्ग एक प्रहर में दस्युओं के हस्तगत हो जाएगा । दक्षिणी नाले के पार उनका आक्रमण होगा ।
20. वीर सिंहमित्र की पुत्री होकर भी उसने गुप्त शत्रु का साथ दिया यह सोचकर उसे स्वयं से घृणा हो रही थी और अपने इस कार्य के लिए वह लज्जा का अनुभव कर रही थी ।
21. श्रावस्ती दुर्ग आज एक दस्यु के हाथ में जाने से बच गया था ।
22. प्राणदण्ड ।

अभ्यासों के उत्तर आप स्वयं लिखिए ।

इकाई-10 (भाग-2)

'पुरस्कार' - विश्लेषण और मूल्यांकन

इकाई की रूपरेखा

10.0 उद्देश्य

10.1 प्रस्तावना

10.2 कथावस्तु

10.2.1 कहानी का आरम्भ

10.2.2 कहानी का विकास

10.2.3 कहानी की परिणति

10.3 चरित्र चित्रण

10.3.1 मधूलिका

10.3.2 अरूण

10.4 परिवेश

10.5 संरचना शिल्प

10.5.1 शैली

10.5.2 भाषा और संवाद

10.6 मूल्यांकन

10.7 सारांश

10.8 संदर्भ ग्रन्थ

10.9 बोध प्रश्नों / अभ्यासों के उत्तर

10.0 उद्देश्य

आप इस इकाई में 'पुरस्कार' कहानी का विश्लेषण पढ़ेंगे । इस इकाई को पढ़ने के बाद आप:

- कहानी की कथावस्तु का विश्लेषण कर सकेंगे और इस विश्लेषण के द्वारा कथा वस्तु की विशेषताएँ पहचान सकेंगे।
- कहानी के प्रमुख पात्रों का चरित्र चित्रण कर सकेंगे ।
- कहानी की परिवेशगत विशेषताएँ बता सकेंगे ।
- कहानी की भाषागत और शिल्पगत विशेषताएँ बता सकेंगे ।
- कहानी के प्रतिपाद्य और कहानीकार की दृष्टि का विश्लेषण कर सकेंगे ।
- कहानी के शीर्षक की उपयुक्तता का निर्णय कर सकेंगे ।
- उपर्युक्त सभी विशेषताओं के आधार पर कहानी का मूल्यांकन कर सकेंगे ।

10.1 प्रस्तावना

आपने पिछली इकाई में 'पुरस्कार कहानी का वाचन किया । इससे आपको कहानी को समझने में काफी मदद मिली होगी । कहानी का उसके तत्वों के आधार पर विश्लेषण और मूल्यांकन कैसे किया जाता है, यह 'पुरस्कार'कहानी के विश्लेषण द्वारा हम जानेंगे । आपने जयशंकर प्रसाद द्वारा रचित 'पुरस्कार' कहानी को ध्यानपूर्वक पढ़ा है । आपने जाना कि मधूलिका और अरूण एक दूसरे से प्रेम करते हैं । किन्तु मधूलिका के मन में वैयक्तिक प्रेम व देश प्रेम का संघर्ष दिखाया गया है । किस प्रकार वह इस संघर्ष पर विजय पाती है, यह हमें कहानी के वाचन से मालूम हो जाता है । हम कहानी के कथ्य और अन्य पक्षों का विश्लेषण करेंगे ।

10.2 कथावस्तु

कहानी की समीक्षा के लिए छः तत्वों को प्रमुख माना गया है -

1. कथानक 2. चरित्र-चित्रण 3. संवाद या कथोपकथन 4. देशकाल या वातावरण 5. भाषा शैली 6. उद्देश्य । कथानक या कथावस्तु कहानी का प्रथम व प्रमुख तत्व है ।'कथावस्तु का अर्थ है, कहानी में प्रस्तुत घटना । अगर इस दृष्टि से विचार करें तो 'पुरस्कार कहानी में भी अनेक घटनाएँ हैं । जैसे, प्रारम्भ में मधूलिका द्वारा राज-पुरस्कार को अस्वीकार करना, अरूण के प्रणय निवेदन को अस्वीकार करना, अरूण के षडयन्त्र में शामिल होना तथा अपनी देश भक्ति का परिचय देना । इस प्रकार विचार करने पर यह स्पष्ट हो जायेगा कि 'पुरस्कार कहानी में घटनाओं का एक सिलसिला है और कहानी एक निश्चित बिन्दु से आरम्भ होकर निश्चित परिणति पर जाकर समाप्त होती है । हम आगे कहानी के विकास क्रम का विश्लेषण करने का प्रयास करेंगे ।

10.2.1 कहानी का आरम्भ

'पुरस्कार' कहानी का आरम्भ रमणीय प्राकृतिक चित्र-योजना के साथ होता है । यथा - ''आर्द्रा नक्षत्र, आकाश में काले-काले बादलों की घुमड़ जिसमें दुन्दुभी का गम्भीर घोष । प्राची के एक निरभ्र कोने से स्वर्ण-पुरूष झाँकने लगा-देखने महाराज की सवारी ।'' इसके साथ ही कोशल प्रदेश के कृषि महोत्सव का वर्णन किया गया है । उस उत्सव में राजा को एक दिन के लिए कृषक बनना पड़ता है । किसी भी अच्छी भूमि का चयन कर नियमानुसार पुरस्कार स्वरूप उसका मूल्य दिया जाता है । इस वर्ष खेती के लिए वाराणसी युद्ध के अन्यतम वीर सिंहमित्र की कन्या मधूलिका के खेत को चुना जाता है । मधूलिका पुरस्कार स्वरूप दी गई स्वर्ण मुद्राएँ अस्वीकार कर देती है । किन्तु परम्परा का पालन करते हुए अपनी कृषि भूमि राज्य को समर्पित कर देती है । मधूलिका बाद में उत्सव में सम्मिलित नहीं होती है । जब मगध का राजकुमार उसके समक्ष प्रणय निवेदन करता है तो उसे भी अपमानित कर लौटा देती है । उपर्युक्त वर्णन से हमें कहानी के आरंभिक घटनाचक्र का पता चलता है तथा आगे घटित होने वाली घटनाओं का संकेत भी मिल जाता है, इस प्रकार कहानी आगे बढ़ती है ।

10.2.2 कहानी का विकास

कहानी का अब तक का विश्लेषण केवल कुछ घटनाओं को हमारे सामने लाता है । लेकिन किसी स्पष्ट और महत् उद्देश्य की जानकारी हमें नहीं मिलती । इन स्थूल घटनाओं में ही वे सूक्ष्म तत्व छिपे हैं जो कथावस्तु के मूलभाव को व्यक्त करते हैं और कहानी जिनके माध्यम से आगे बढ़ती है । आइए, हम इन सूक्ष्म तत्वों का अवलोकन और परीक्षण करें ।

कहानी के पहले भाग में मधूलिका राजा को खेत बेचना स्वीकार नहीं करती है तथा मगध राजकुमार के प्रणय निवेदन को भी अस्वीकार कर देती है । अब वह अपने खेत पर काम नहीं करके दूसरे के खेतों पर काम करने लगी है । कठिन परिश्रम करती है तथा रूखा-सूखा जो कुछ मिल जाता है, खा लेती है । अभावग्रस्त जीवन जीते हुए एक दिन मधूलिका को दो-तीन वर्ष पूर्व का राजकुमार का प्रणय निवेदन याद आता है और वह भाव-विह्वल हो उठती है । तभी झोपड़ी के बाहर आहट होती है । वह देखती है कि बाहर राजकुमार अरूण खड़ा है ।

इस तरह यह घटना चक्र कहानी को नयी दिशा की ओर मोड़ता है । अरूण के संबंध में निम्नलिखित जानकारी प्राप्त होती है,

1. वह मगध का विद्रोही राजकुमार है ओर निर्वासित है ।
2. कोशल में जीविका खोजने आया है ।
3. मधूलिका को राजरानी बनाने का आश्वासन देता है ।
4. मधूलिका को उकसा कर कोशल नरेश से दक्षिण नाले के पास की भूमि अपने खेत के बदले माँगने का आग्रह करता है ।

उपर्युक्त तथ्यों को जानने के पश्चात् क्या यह निश्चयपूर्वक कहा जा सकता है कि मधूलिका अरूण से प्रेम करती है । क्या वह अरूण के प्रस्ताव को स्वीकार करेगी? इससे स्पष्ट हो जाता है कि कहानी का विकास आगे किस प्रकार होगा।

जब कहानी आगे बढ़ती है तो हमारे सामने नए तथ्य आते हैं । मधूलिका कोशल नरेश से दक्षिणी नाले के पास की जमीन माँग लेती है और अरूण अपना षडयन्त्र प्रारम्भ कर देता है । किन्तु मधूलिका को कुल गौरव का स्मरण हो जाता है। उसका मन अन्तर्द्वन्द्व से ग्रस्त हो उठता है । वह सोचती है

''श्रावस्ती का दुर्ग एक विदेशी के अधिकार में क्यों चला जाए? मगध का चिर शत्रु!''

और मधूलिका कोशल नरेश के समक्ष समस्त षडयन्त्र का वर्णन कर देती है ।

10.2.3कहानी की परिणति

उपर्युक्त घटनाचक्र को पढ़ने के पश्चात् आपके मन में यह जिज्ञासा अवश्य उत्पन्न हो रही होगी कि मधूलिका और अरूण के प्रेम संबंधों की परिणति क्या होगी । कहानी आप पढ़ चुके हैं, आप स्वयं जानते हैं कि कहानी का अंत क्या हुआ? इसलिए अब प्रश्न यह उठता है कि मधूलिका ने यह मार्ग क्यों स्वीकारा । अर्थात् उसने अंत में पुरस्कार स्वरूप अरूण के साथ प्राणदण्ड की माँग क्यों की । वह अपने व्यक्तिगत प्रेम की वेदी पर, क्षण भर को भी देश भक्ति, कुल गौरव और नैतिक कर्त्तव्य की बलि नही दो है ।

मधूलिका स्वयं ही अरूण द्वारा किये गए षडयन्त्र की सूचना देकर उसे बन्दी बनवाती है फिर पुरस्कार स्वरूप उसके साथ ही अपने लिए भी प्राणदण्ड माँगती है । इस प्रकार वह अन्तर्द्वन्द्व पर विजय पाती है ।

यह है 'पुरस्कार' कहानी । अब आप स्वयं सरलता से इस कहानी की कथावस्तु का विश्लेषण कर सकते हैं । आप इसमें कितने सफल होते हैं, आइए, इन बोध प्रश्नों को हल करके जानते हैं ।

बोध प्रश्न -

1. कहानी के अंत से संबंधित निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए ।

   (क) मधूलिका षडयन्त्र का पर्दाफाश करने के लिए क्यों तैयार होती है?

   .....

   (ख) मधूलिका 'पुरस्कार में क्या माँगती है?

   .....

10.3 चरित्र चित्रण

'पुरस्कार' कहानी में मुख्य पात्र केवल दो हैं - मधूलिका और अरूण । इसके अतिरिक्त कोशल नरेश और सेनापति गौण पात्र हैं । लेकिन कहानी में ये पात्र अपना स्वतन्त्र व्यक्तित्व लेकर नहीं उभरे हैं । ये सभी पात्र घटना- विकास में सहायता करने के लिए गौण भूमिका निभाते हैं । इस प्रकार, इस कहानी में मुख्य पात्र दो ही हैं । - मधूलिका और अरूण । यही हम इन दोनों के चरित्र का विश्लेषण करने का प्रयास करेंगे ।

पात्रों का चरित्र-चित्रण लेखक कई विधियों से करता है । घटनाओं द्वारा पात्रों के कार्य द्वारा, अन्य पात्रों या स्वयं उसके कथन से, उसके या अन्य पात्रों के विचारों से । इस कहानी मे भी इनमें से कई विधियों का प्रयोग हुआ है । आइए, हम इन विधियों की परीक्षा करते हुए कहानी के उपर्युक्त दोनों पात्रों के चरित्र का विश्लेषण करें ।

10.3.1 मधूलिका

मधूलिका "पुरस्कार' कहानी की नायिका है । यही कहानी का केन्द्रीय चरित्र है । कहानी की कथावस्तु इसी के चारों ओर चक्कर लगाती है । मधूलिका का अन्तर्द्वन्द्व ही कहानी का केन्द्रीय विषय है । उसके चरित्र-चित्रण के. लिए लेखक ने वर्णन, संकेत, संवाद आदि विभिन्न पद्वतियों का आश्रय लिया हूए । आपने कहानी पढ़ते हुए स्वयं मधूल्किा की चारित्रिक विशेषताओं को रेखांकित किया होगा । आइए, हम कहानी के आधार पर मधूलिका के चरित्र की विशेषताएँ पहचानें ।

एक सामान्य बालिका होते हुए भी मधूलिका के स्वभाव में चारित्रिक दृढ़ता के साथ व्यक्तिगत स्वाभिमान की मात्रा इतनी अधिक है कि वह राज्यानुग्रह को तृणवत् ठुकरा देती है । विनयपूर्वक वह कहती है ।

"देव! यह मेरे पितृ- पितामहों की भूमि है । इसे बेचना अपराध है; इसलिए मूल्य स्वीकार करना मेरी सामर्थ्य के बाहर है ।"

मधूलिका के इस कथन से उसकी विनम्रता और व्यक्तिगत स्वाभिमान का परिचय मिलता है । किसी भी व्यक्ति का चरित्र उसके पारिवारिक और सामाजिक स्थितियों तथा वैयक्तिक रूझानों और क्षमताओं से निर्मित होता है । मधूलिका पर भी यही बात लागू होती है । वह स्वयं अरूण से कहती है;

"राजकुमार! मैं कृषक बालिका हूँ ।'

आइए, हम उसके चरित्र की अन्य विशेषताओं को भी पहचानने का प्रयास करें ।

मधूलिका में चारित्रिक दृढ़ता के साथ-साथ नारी सुलभ कोमलता एवं हृदयगत दुर्बलता भी है । यही कारण है कि वह राजकुमार के प्रणय निवेदन को अन्ततः स्वीकार कर लेती है । जब वह राजकुमार के षडयन्त्र में शामिल होती है तो ऐसा लगता है जैसे उसके अचेतन मन में कहीं पितृ-पितामहों की भूमि-छिन जाने की गहरी कसक है और वह बदले की भावना से प्रेरित होकर ही देशद्रोह जैसे षडयन्त्र में शामिल होती है । किन्तु कुल गौरव का स्मरण कर उसका मन अन्तर्द्वन्द्व ग्रस्त हो जाता है । वह सोचती है । श्रावस्ती दुर्ग एक विदेशी अधिकार में क्यों चला जाए? यहाँ पर उसके चरित्र का भव्य रूप प्रकट होता है । एक ओर वह देश भक्ति एवं कर्त्तव्य का पालन करती हुई अरूण के षडयन्त्र का पर्दाफाश करती है, दूसरी ओर प्रेमी के साथ प्राणदण्ड का 'पुरस्कार' माँग अपने पवित्र प्रेम का निर्वाह करती है । इस प्रकार हम देखते हैं । कि मधूलिका के व्यक्तित्व के अनेक पहलू खुलकर हमारे सामने आते हैं । प्रसादजी

ने प्रेम और कर्त्तव्य के इस संघर्ष में मधूलिका का चरित्रांकन मनोवैज्ञानिक और सूक्ष्म रेखाओं से युक्त एक विराट आन्तरिक द्वन्द्व की पृष्ठभूमि पर किया है ।

बोध प्रश्न -

कहानी के निम्नलिखित अंशों के आधार पर मधूलिका की चारित्रिक विशेषताएँ बताइये ।

2. "देव यह मेरे पितृ-पितामहों की भूमि है । इसे बेचना अपराध है; इसलिए मूल्य स्वीकार करना मेरी सामर्थ्य के बाहर है । " यहाँ मधूलिका के स्वभाव का कौनसा पक्ष व्यक्त हुआ है ।

   (क) स्वाभिमान (ख) देशप्रेम

   (ग) लालच (घ) घृणा

3. श्रावस्ती का दुर्ग एक विदेशी के अधिकार में क्यों चला जाए? मगध का चिर शत्रु । ओह, उसकी विजय । ' यहाँ मधूलिका के हृदय में कौनसा भाव उत्पन्न हुआ है?

   (क) देशप्रेम (ख) स्वाभिमान

   (ग) देशद्रोह (घ) व्यक्तिगत प्रेम

4. पथ अन्धकारमय था और मधूलिका का हृदय भी निविड़-तम से घिरा था । '' मधूलिका के मन में कौनसा द्वन्द्व चल रहा था ।

   (क) प्रेम और कर्त्तव्य का (ख) राजरानी बनने का

   (ग) देश प्रेम व देशद्रोह का (घ) प्रेम व घृणा का

10.3.2 अरूण

मधूलिका के चरित्र को अब आप कुछ-कुछ विश्लेषित कर सकते हैं । इस कहानी का दूसरा प्रमुख पात्र है, अरूण वह राजकुमार है और मधूलिका के समक्ष प्रणय निवेदन करता है । बाद में वह देशद्रोह के कारण निर्वासित होता है तथा अलग राज्य बनाने के अपने षडयन्त्र में मधूलिका को भी सम्मिलित करता है । यद्यपि अरूण का चरित्र भी महत्त्वपूर्ण है किन्तु उसके चरित्र का पूर्ण विकास नहीं हो पाया है । उसका चरित्र बहिर्मुखी की अपेक्षा अन्तर्मुखी अधिक है । उसके चरित्र में एक राजकुमार की विशेषताएँ दिखाई देती हैं । वह वीर है, साहसी है, भुजबल पर विश्वास रखता है, खतरों से खेलना जानता है । किन्तु उसे मधूलिका की तरह अंतर्द्वन्द्व से नहीं गुजरना पड़ता ।

बोध प्रश्न -

5. "सरलता की देवी! मैं मगध का राजकुमार तुम्हारे अनुग्रह का प्रार्थी हूँ- मेरे हृदय की भावना अवगुण्ठन में रहना नहीं जानती । उसे अपनी ।" अरूण के उक्त कथन से उसके हृदय का कौनसा भाव अभिव्यक्त होता है ।

   (क) साहस (ख) त्याग (ग) विनम्रता (घ) गहन प्रेम

6. “मधूलिका! बाहु बल ही तो वीरों की आजीविका है । ये मेरे जीवन-मरण के साथी हैं, भला मैं इन्हें कैसे छोड़ देता?” इस कथन में राजकुमार के हृदय के किस भाव का बोध होता
   (क) वीरता (ख) आत्मविश्वास (ग) दिखावा (घ) पराक्रम

10.4 परिवेश

प्रत्येक कहानी का संबंध किसी देश अथवा स्थान विशेष या काल विशेष से रहता है । इसीलिये कथा में विश्वसनीयता लाने के लिए कहानीकार को तत्कालीन देश-समाज का वातावरण स्पष्ट रूप से देना होता है । यह वातावरण प्राय: दो रूपों में उभारा जाता है -

1. व्यक्ति के अंतर्द्वन्द्व के द्वारा निर्मित वातावरण
2. बाह्य तथा भौतिक वातावरण

'पुरस्कार' कहानी में दोनों प्रकार का वातावरण अत्यन्त घनिष्ठ रूप में देखा जा सकता है । लेखक ने ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का निर्माण करके बड़ी कुशलता से उसमें मौलिक तथा काल्पनिक कथानक को संजोया है । मधूलिका के खेत पर परम्परानुसार कोशल नरेश का अधिकार हो जाता है और मधूलिका भी अपनी पैतृक सम्पत्ति का विक्रय करना स्वीकार नहीं करती है । परिणामत:, उसे जीवन में निर्धनता का मुख देखना पड़ता है । जब राजकुमार उसके समक्ष प्रणय निवेदन करता है तो वह उसके प्रस्ताव को ठुकरा देती है । तीन वर्ष पश्चात् जब राजकुमार अरुण मलीन वेश में उसके पास पहुँचता है तो वह उसका स्वागत करती है ।

प्रसादजी ने कहानी के प्रारम्भ में ही प्रकृति का बाह्य और भव्य चित्र अंकित किया है ।

“आद्रा नक्षत्र; आकाश में काले- काले बादलों की घुमड़ जिसमें देव-दुन्दुभी का गम्भीर घोष । प्राची के एक निरभ्र कोने से स्वर्ण-पुरूष झाँकने लगा-देखने महाराज की सवारी । षैलमाला के अंचल में समतल उर्वरा भूमि में सोंधी बास उठ रही थी ।“

वातावरण के निर्माण में प्रसादजी सिद्धहस्त रहे हैं । वैसे भी ऐतिहासिक कहानियों का प्राणतत्व वातावरण ही होता है । शिल्प की दृष्टि से प्रसादजी ने संवाद में आये बिम्बों का भरपूर प्रयोग किया है ।

बोध प्रश्न -

7. इस कहानी में परिवेश चित्रण की दो विशेषताएँ बताओ ।
   (क).....
   (ख).....

10.5 संरचना शिल्प

संरचना शिल्प के अन्तर्गत हम कहानी की शैली, संवाद और भाषा पर विचार करेंगे ।

10.5.1 शैली

'पुरस्कार' भावना प्रधान कहानी है । पात्रों के अन्तर्द्वन्द्व, प्रकृति चित्रण तथा उत्सव वर्णन के लिए प्रसाद जी ने विविध शैलियों का प्रयोग किया है । उन्होंने वर्णनात्मक शैली का आश्रय लेकर उत्सव के वर्णन को सजीवता प्रदान की है । जैसे, निम्नलिखित अंश देखिए :

"महाराज के मुख पर मधुर मुस्कान थी । पुरोहित-वर्ग ने स्वस्त्ययन किया । स्वर्ण-रंजित हल की मूठ पकड़कर महाराज ने जुते हुए सुन्दर पुष्ट बैलों को चलने का संकेत किया । बाजे बजने लगे । किशोरी कुमारियों ने खीलों और फूलों की वर्षा की ।"

मूलत: नाटककार होने के कारण प्रसाद ने नाटकीय शैली में पात्रों के हाव-भावों का वर्णन किया है । यह शैली हम इस उदाहरण में देख सकते हैं :

'सहसा वह चिल्ला उठी - राजकुमार ।
– मधूलिका? - आश्चर्य से युवक ने कहा । "

10.5.2 भाषा और संवाद

प्रस्तुत कहानी में विषय तथा प्रसंग के अनुकूल रोचक भाषा का प्रयोग हुआ है । भाषा औदात्य काव्यात्मक और लालित्यपूर्ण होते हुए भी अत्यन्त परिष्कृत, प्रौढ़ और परिमार्जित है । कहानी का प्रारम्भ ही काव्यात्मकता के साथ होता है । यह उदाहरण है-

"आर्द्रा नक्षत्र, आकाश में काले-काले बादलों की घुमड़ जिसमें देव दुंदुभी का गंभीर घोष ।" कहीं-कहीं उन्होंने आलंकारिक भाषा का भी प्रयोग किया है, जैसे;

"प्रभात की हेम किरणों में अनुरंजित नन्हीं-नन्हीं बूँदों का एक झोंका स्वर्ण मल्लिका के समान बरस पड़ा ।"
वास्तव में प्रसाद जी पहले कवि थे बाद में कहानीकार । इसीलिए उन्होंने एक कुशल शिल्पी की भाँति कहानी की भाषा की गरिमा के बनाए रखा । परिस्थिति के अनुकूल उसकी गति कभी मंद तो कभी झंझा के समान वेगवती हो जाती है।

इसकी भाषा संस्कृतनिष्ठ होने से कहीं-कहीं क्लिष्ट और दुरूह भी हो गयी है । इसका कारण है कहानी का कथ्य, जो ऐतिहासिक है तथा जिस काल से संबंधित कहानी है, उसके लिए तत्सम और संस्कृतनिष्ठ भाषा अपरिहार्य है ।
'पुरस्कार' कहानी के संवाद पात्रों के चरित्र पर प्रकाश डालते हैं । इसकी संवाद योजना संक्षिप्त, रोचक एवं प्रभावशाली है तथा कहानी के विकास एवं पात्रों की मनोगत भावनाओं को अभिव्यक्ति प्रदान करती है । अरूण और मधूलिका के निम्नलिखित संवाद देखिए ।

भद्रे । तुम्हीं न कल के उत्सव की संचालिका रही हो?

"उत्सव । हा, उत्सव ही तो था?"

मधूलिका के तीखे, रिक्त तथा तिरस्कार से युक्त और राजकुमार अरूण की कोमलता, शिष्टता, वीरता तथा प्रणय-भावना से युक्त निम्नलिखित संवाद देखिए:

"सरलता की देवी! मैं मगध का राजकुमार तुम्हारे अनुग्रह का प्रार्थी हूँ- मेरे हृदय की भावना अवगुण्ठन में रहना नहीं जानती ।"

राजकुमार! मैं कृषक बालिका हूँ । आप नन्दन बिहारी हैं और मैं पृथ्वी पर परिश्रम करके जीने वाली ।"

बोध प्रश्न -

8. 'पुरस्कार' कहानी की शैलीगत विशेषता क्या है, दो पंक्तियों में उत्तर दीजिये ।

.....

.....

9. प्रस्तुत कहानी में से भाषा और शैली की निम्नलिखित विशेषताओं वाले अंश उद्धृत कीजिए।

(क) आलंकारिक भाषा

.....

.....

(ख) काव्यात्मक भाषा

.....

.....

(ग) भावोद्वेग व्यक्त करने वाला संवाद

.....

.....

10.6 मूल्यांकन

प्रस्तुत कहानी के विविध पक्षों के विश्लेषण का अध्ययन हम कर चुके हैं । विश्लेषण के पश्चात् कहानी का मूल्यांकन करना आसान हो जाता है । मूल्यांकन का तात्पर्य कहानी के बारे में कोई निर्णय देना नहीं वरन् लेखक की दृष्टि, कहानी का प्रतिपाद्य और शीर्षक की उपयुक्तता पर विचार करना है । 'पुरस्कार' कहानी में प्रसाद जी ने मानव-मन की शाश्वत प्रवृत्तियों का

संघर्ष ऐतिहासिक प्रसंग में निरूपित किया है । प्रस्तुत कहानी में प्रेम और कर्त्तव्य के संघर्ष को जिस संवेदनात्मक अनुभूति के धरातल पर निरूपित किया है, वह अनूठा है ।

प्रसाद जी ने नायिका मधूलिका के अन्तर्द्वन्द् को कहानी का मुख्य कथ्य बनाया है । मधूलिका को देशभक्ति एवं वैयक्तिक प्रेम में से किसी एक को चुनना है । वह देशभक्ति को चुन लेती है, किन्तु वैयक्तिक प्रेम को छोड़ना भी उसे स्वीकार्य नहीं है । अत: जहाँ एक ओर देशभक्ति के लिए प्रेरित होती है, तो वहीं दूसरी ओर प्रेम की पूर्णता के लिए प्रेमी अरूण के साथ आत्मबलिदान के लिए प्रस्तुत हो जाती है । इस प्रकार प्रसाद जी ने प्रेम और कर्त्तव्य का अनूठा समन्वय प्रस्तुत किया है ।

'पुरस्कार' कहानी में जहाँ प्रेम और कर्त्तव्य का द्वन्द्व चित्रित है, वहीं उसमें कलात्मकता और नाटकीयता भी भरपूर मात्रा में मिलती है । प्रसादजी इस कहानी के माध्यम से यह संदेश देना चाहते हैं कि प्रेम जीवन की अनिवार्यता है तो कर्त्तव्य उसी अनिवार्यता का एक अंग है । कर्त्तव्य और प्रेम का संबंध अत्यन्त गहरा है जिसमें से एक को भी विस्मृत नहीं किया जा सकता है । यही कारण है कि कहानी की नायिका मधूलिका अपने प्रिय के साथ प्राणदण्ड माँगती है ।

"कोशल-नरेश ने पूछा-मधूलिका, तुझे जो पुरस्कार लेना हो, माँग ।"

"तो मुझे प्राणदण्ड मिले । कहती वह बन्दी अरूण के पास जा खड़ी हुई ।'

'पुरस्कार' शीर्षक की सार्थकता भी इसी अर्थ में है ।

बोध प्रश्न

10. पुरस्कार कहानी की मूल संवेदना का आधार क्या है?
    (क) प्रेम और घृणा का द्वन्द्व और उस पर विजय
    (ख) एक ही व्यक्ति के प्रति उत्पन्न विपरीत भावनाओं का द्वन्द्व
    (ग) वैयक्तिक प्रेम व देश प्रेम में द्वन्द्व और दोनों पर विजय
    (घ) भावना और कर्त्तव्य का संघर्ष
11. (क) 'पुरस्कार' शीर्षक की सार्थकता बताइये । दो पंक्तियों में उत्तर दीजिये ।

    .....

    .....

    (ख) प्रसाद जी इस कहानी के माध्यम से कौनसा मानवीय यथार्थ व्यक्त करते हैं, संक्षेप में लिखिए ।

    .....

10.7 सारांश

आपने 'पुरस्कार कहानी के विश्लेषण और मूल्यांकन का ध्यानपूर्वक अध्ययन किया होगा ।

- 'पुरस्कार एक ऐतिहासिक कल्पना पर आधारित कहानी है । इसमें व्यक्ति के अन्तर्द्वन्द्व को कथा का आधार बनाया गया है । वैयक्तिक प्रेम और देशप्रेम के बीच झूलते व्यक्ति मन की क्या दशा होती है, इस पृष्ठभूमि में आप 'पुरस्कार' की कथावस्तु का विश्लेषण कर सकते हैं ।
- 'पुरस्कार' कहानी में दो प्रमुख पात्र हैं, मधूलिका और अरूण । अरूण देशद्रोही और निर्वासित है और मधूलिका उससे प्रेम करती है । मधूलिका का चरित्र इसी देश प्रेम व वैयक्तिक प्रेम के अन्तर्द्वन्द्व पर टिका हुआ है । इसी के आधार पर आप मधूलिका और अरूण की चारित्रिक विशेषताएँ बता सकते हैं ।
- 'पुरस्कार' ऐतिहासिक कहानी होते हुए भी मानवीय भावनाओं की कहानी है और भाषा के माध्यम से भी यह इतिहास परक है । कहानी के परिवेश का आकलन आप इसी दृष्टि से कर सकते हैं ।
- प्रसाद जी मूलत: कवि हैं । इसलिए इनकी शैली में भावना का बाहुल्य, भाषा में बिंबात्मकता और संवादों में गहराई है । आप शैली और भाषा के द्वारा कहानी की इन विशेषताओं को पहचान सकते हैं ।
- पुरस्कार कहानी में प्रसादजी ने उत्सर्ग की पराकाष्ठा और नारी के भव्यरूप का अंकन किया है । कहानी के इस प्रतिपाद्य का आप विश्लेषण कर सकते हैं ।

10.8 संदर्भ ग्रन्थ

1. मदान, डॉ. इंद्रनाथ : हिंन्दी कहानी : पहचान और परख, लिपि प्रकाश, नई दिल्ली
2. हिन्दी कहानी विविधा, मानविकी विद्यापीठ, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

10.9 बोध प्रश्नों / अभ्यासों के उत्तर

1. (क) कुल गौरव का स्मरण कर मधुलिका अन्तर्ग्रस्त हो उठती है और देश भक्ति एवं कर्तव्य बोध से युक्त होकर वह षडयन्त्र का पर्दाफाश करने के लिए तैयार हो जाती है।
   (ख) अरुण के साथ मष्त्युदण्ड
2. (क) स्वाभिमान
3. (क) देश प्रेम
4. (क) प्रेम व कर्तव्य का
5. (घ) गहन प्रेम
6. (क) वीरता
7. (क) एतिहासिक पृष्ठ भूमि का मौलिक व काल्पनिक चित्रण हुआ है ।
   (ख) प्रकृति का ब्राह्म और भव्य चित्र अंकित किया है।

8. (क) वर्णनात्मक शैली का सहारा लेकर उत्सव का आकर्षक वर्णन किया है।
   (ख) नाटकीय शैली द्वारा पात्रों के हाव-भावों का वर्णन किया है।
9. (क) प्रभात की हेम किरणों ..... बरस पड़ा ।
   (ख) आर्द्रा नक्षत्र, आकाश में ..... गंभीर घोष ।
   (ग) भद्रे! तुम्हीं न ..... उत्सव ही तो था ।
10. (क) वैयक्तिक प्रेम व देश प्रेम में द्वन्द्व और दोनों पर विजय
11. (क) मधुलिका द्वारा अपने प्रेमी के साथ मृत्युदंड पुरस्कार में माँगता ही 'पुरस्कार' शीर्षक की सार्थकता प्रकट करता है ।
   (ख) प्रेम जीवन के अनिवार्यता है तो कर्तव्य उसका अंग है । दोनों में से एक को भी विस्मृत नहीं किया जा सकता है ।

अभ्यासों के उत्तर आप स्वयं लिखिये ।

खण्ड - 4 का परिचय

स्वतंत्रता से पूर्व एवं स्वतंत्रता के पश्चात् का सन्दर्भ भिन्न-भिन्न है. स्वतंत्रता से पूर्व देश की आर्थिक, सामाजिक स्थितियों में गरीबी, शोषण, सामाजिक पिछड़ापन और उससे उत्पन्न समस्यायें, समाज को आक्रान्त किये हुए थी । स्वतंत्रता के पश्चात् देश में समस्याऐं बनी रही, किन्तु उनके कारण कुछ-कुछ बदल गये । नये कहानीकारों ने देश के विभाजन, नई व पुरानी पीढ़ी के बीच उत्पन्न हुई दूरी, जनसंख्या के दबाव एवं लोक जीवन से कहानियों की विषयवस्तु को ग्रहण किया । इसलिए स्वतंत्रता पश्चात् की पाँच कहानियाँ ' परमात्मा का कुत्ता', 'चीफ की दावत', 'वापसी', ' आशा अमरधन' तथा 'नीलकान्त का सफर' इसी प्रकार की स्थितियों को लेकर रची गई हैं । इसको समझने के लिए 'चीफ की दावत और वापसी' पर आपका ध्यान केन्द्रित करेंगे ।

इन दोनों रचनाओं में भीष्म साहनी और उषा प्रियंवदा ने जीवन में आये हुए मूल्यगत बदलाव को ध्यान में रखा है । 'चीफ की दावत' का प्रमुख श्यामनाथ तथा 'वापसी' का प्रमुख पात्र बाबू गजाधर इसके उदाहरण हैं । श्यामनाथ यदि अंग्रेज अधिकारी की नजरों से अपनी बूढ़ी देहाती माँ को अलग रखना चाहता है और 'वापसी' कहानी में गजाधर बाबू रिटायरमेन्ट के बाद अपने ही परिवार में एक अवांछित व्यक्ति का व्यवहार पाते हुए फिर से छोटे से रेलवे स्टेशन की ओर वापसी करते हैं । ये दोनों रचनाएँ टूटते हुए जीवन मूल्यों को उभारती है। इस प्रकार भारतीय जीवन में स्वतंत्रता के बाद आये हुए बदलाव को रेखांकित करती है ।

इस खण्ड में ग्यारह, बारह, तेरह, चौदह और पन्द्रह पाठों की रचना हुई है । लेखकों ने आरम्भ में कहानी की समीक्षा प्रस्तुत की है । ध्यान देने योग्य बात यह है कि हिन्दी की कहानी कला क्रमश: प्रयोगधर्मिता और प्रौढ़ता की ओर अग्रसर होती रही है जिसका प्रमाण ये पाँचों कहानियाँ प्रस्तुत करती हैं । तुलनात्मक दृष्टि से स्वतंत्रता पूर्व की हिन्दी कहानी और स्वतंत्रता पश्चात् की हिन्दी कहानी की विषय वस्तु और शिल्प संरचना में आया हुआ अंतर भी इन पाठों से स्पष्ट हो जाता है ।

इकाई- 11 (भाग- 1)

'परमात्मा का कुत्ता (मोहन राकेश) : वाचन

इकाई की रूपरेखा

11.0 उद्देश्य
11.1 प्रस्तावना
11.2 कहानी का वाचन : परमात्मा का कुत्ता
11.3 कहानी का सार
11.4 कहानी की संदर्भ सहित व्याख्या
11.5 सारांश
11.6 संदर्भ ग्रन्थ
11.7 बोध प्रश्नों / अभ्यासों के उत्तर

11.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई में हम आधुनिक कथाकार मोहन राकेश द्वारा रचित 'परमात्मा का कुत्ता' कहानी का अध्ययन करेंगे । कहानी के साथ ही लेखक का परिचय, कहानी का सार और उसके महत्त्वपूर्ण अंशों की संदर्भ सहित व्याख्या भी करेंगे । इस कहानी को पढ़ने के बाद आप:

- कहानी की कथावस्तु का सार अपने शब्दों में लिख सकेंगे ।
- कहानी में आए कठिन शब्दों, मुहावरों व लोकोक्तियों के अर्थ बता सकेंगे एवं उनके प्रयोग कर सकेंगे 1
- कहानी के महत्वपूर्ण अंशों और उक्तियों की व्याख्या कर सकेंगे ।

11.1 प्रस्तावना

'प्रस्तुत इकाई में हम 'परमात्मा का कुत्ता' का अध्ययन करने जा रहे हैं । इससे पहले इकाई-10 में हमने सुप्रसिद्ध कथाकार जयशंकर प्रसाद द्वारा रचित 'पुरस्कार' कहानी का कथन, कथासार, ससंदर्भ व्याख्या एवं विश्लेषण और मूल्यांकन का अध्ययन किया था । इस इकाई में हम मोहन राकेश की कहानी 'परमात्मा का कुत्ता, का वाचन करेंगे, कहानी का सार लिखेंगे एवं महत्वपूर्ण अंशों और उक्तियों की व्याख्या करेंगे । इसके आगे की इकाई में हम इसी कहानी का विश्लेषण और मूल्यांकन करेंगे ।

'परमात्मा का कुत्ता कहानी के लेखक आधुनिक कथाकार मोहन राकेश हैं । 'नयी कहानी' आंदोलन के सूत्रधारों में प्रमुख मोहन राकेश का जन्म 1925 ई. में अमृतसर में और निधन 1972 ई. में दिल्ली में हुआ था । इन्होंने गद्य की सभी विधाओं पर अपनी लेखनी चलाई

। महानगरीय जीवन के तनाव, घुटन, बिखराव, अकेलापन के साथ सामाजिक चेतना, मानव के प्रति आस्था, जीवन मूल्यों के प्रति निष्ठा का भाव इनकी कहानियों को विशिष्ट बनाता है । राकेश जी को आधुनिक संवेदना का रचनाकार कहा जाता है एक सजग कथा शिल्पी होने के कारण मोहन राकेश का कहानी साहित्य न केवल प्रभावशाली है अपितु आधुनिक बोध और जीवन पद्धतियों का निरूपक भी है । उन्होंने अपनी कहानियों में एक ओर सामाजिक यथार्थ को चित्रित किया है तो दूसरी ओर व्यक्ति के यथार्थ को ।

राकेश जी की कहानियाँ निम्नलिखित कथा संग्रहों में संकलित है - इन्सान का खंडहर (1950) एक घटना, नये बादल (1957) जानवर और जानवर (1958) एक और जिन्दगी (1961), फौलाद का आकाश (1966)

आपने इकाई-10 में 'पुरस्कार' कहानी का वाचन किया था । उस इकाई का अध्ययन करने से आपको यह स्पष्ट हो गया होगा कि किसी कहानी का वाचन कैसे किया जाता है और उसके प्रमुख अंशों की व्याख्या कैसे की जाती है । इस इकाई में हम आपको कहानी की उतने विस्तार से व्याख्या नहीं करायेंगे बल्कि हम चाहेंगे कि आप स्वयं महत्वपूर्ण अंशों की व्याख्या कर सकें । इसके लिए आवश्यक संकेत और निर्देश देकर हम आपकी सहायता करेंगे । कहानी के साथ ही बोध प्रश्न दिये गये हैं जिससे आप जान सकेंगे कि आपने कहानी ध्यान से पढ़ी है या नहीं ।

11.2 कहानी का वाचन : 'परमात्मा का कुत्ता'

बहुत से 'लोग वहाँ सिर लटकाये हुए थे, जैसे किसी का मातम करने के लिए जमा हुए हों । कुछ लोग साथ लाई हुई पोटलियाँ खोलकर खाना खा रहे थे । दो-एक व्यक्ति पगड़ियाँ सिर के नीचे रखकर कम्पाउण्ड के बाहर सड़क के किनारे बिखर गये थे । चने, कुलचेवाले का रोजगार गर्म था और कमेटी के नल के पास छोटा-मोटा क्यू लगा था । नल के पास कुर्सी डालकर अर्जीनवीस धड़ाधड़ अर्जियाँ टाइप कर रहा था । उसके माथे से पसीना बहकर उसके ओठों पर आ रहा था, लेकिन उसे पोंछने की फुर्सत नहीं थी । सफेद डाढ़ियों वाले दो तीन लम्बे जाट अपनी लाठियों पर झुके हुए उसके खाली होने की प्रतीक्षा कर रहे थे । धूप से बचने के लिए लगाया हुआ उसका टाट हवा में उड़ा जा रहा था और थोड़ी दूर मूढ़े पर बैठा हुआ उसका लड़का अपनी अंग्रेजी प्राइमरी की रट्ट लगा रहा था - सी ए टी कैट, कैट माने बिल्ली, बी ए टी बैट, बैट माने बल्ला, एफ ए टी फैट, फैट माने मोटा । कमीजों के बटन आधे खोले हुए और फाइलें बगल में दबाये हुए कुछ बाबू एक दूसरे से छेड़खानी करते हुए रजिस्ट्रेशन ब्रांच की तरफ जा रहे थे । लाल बेल्टवाला चपरासी आसपास की भीड़ से उदासीन अपने स्कूल पर उकड़ू होकर बैठा मन ही मन कुछ हिसाब कर रहा था । कभी उसके ओंठ हिलते थे और कभी उसका सिर हिल जाता था । सारे कम्पाउण्ड में सितम्बर की खुली धूप फैली थी ।

चिड़ियाँ डालों से कूदने और फिर ऊपर को उड़ने का अभ्यास कर रही थीं और कौए पोर्च के सिर पर चहलकदमी कर रहे थे । एक सत्तर पचहत्तर वर्ष की बुढ़िया, जिनका सिर हिल रहा था और चेहरा झुर्रियों के गुंझल के सिवा कुछ नहीं था, लोगों से पूछ रही थी कि वह अपने लडके के मरने के बाद उसके नाम एलाट हुई जमीन की हकदार है या नहीं ।

अन्दर हाल-कमरे में फाइलें धीरे-धीरे हिल रही थीं । दो चार बाबू की मेज के पास-जमा होकर चाय पी रहे थे और उनमें से एक दफ्तरी कागज पर लिखी हुई अपनी ताजा गजल यारों को सुना रहा था और यार इस विश्वास के साथ सुन रहे थे कि वह जरूर उसने 'शमा' या 'बीसवीं सदी' के किसी पुराने अंक में से चुराई है ।

"अजीज साहब यह शेर आपने आज ही कहे हैं, या दो तीन साल पहले कहे हुए शेर आज अचानक याद आ गये हैं, सांवले चेहरे और घनी काली मूंछों वाले एक बाबू ने बाई आँख को जरा सा दबाकर पूछा । आसपास सब लोगों के चेहरे खिल गये ।

"यह मेरी बिलकुल ताजा गजल है", अजीज साहब ने अदालत के कटहरे में खड़े होकर हलफिया सच बोलने के लहजे से कहा, 'इससे पहले इसी वजन पर कोई और चीज कही हो तो याद नहीं ।" और आँखों से सबके चेहरे को टटोलते हुए उन्होंने हल्की-सी हंसी के साथ कहा, "अपना दीवान तो कभी कोई रिसर्च करने वाला ही मुस्तव करेगा ।

शब्दार्थ

कुलचेवाला - भटूरे बेचने वाला, क्यू-पंक्ति / कतार, अर्जीनवीस-दरख्वास्त लिखने का पेशा करने वाला, हलफिया सच - ईश्वर को साक्षी मानकर कही जाने वाली बात, दीवान - गजलों का संग्रह

बोध प्रश्न

नीचे लिखे प्रश्नों के उत्तर दीजिये और अपने उत्तरों को इकाई के अंत में दिये गये उत्तरों से मिलाइए ।

1. सरकारी कार्यालय के बाहर के वातावरण की दो विशेषताएँ बताओ ।

   (अ).....

   (ब).....

एक फरमायशी कहकहा लगा जिसे 'शी' 'शी' की आवाजों ने बीच में ही दबा दिया । कहकहे पर लगाई गई इस ब्रैक का मतलब था कमिश्नर साहब अपने कमरे में तशरीफ ले आये हैं । कुछ क्षणों का वक्फा रहा जिसमें सुरजीतसिंह वल्द गुरमीतसिंह की फाइल एक मेज से एक्शन के लिए दूसरी मेज पर चली गई, सुरजीतसिंह वल्द गुरमीतसिंह मुस्कराता हुआ हाल से बाहर

चला गया और जिस बाबू की मेज से फाइल गई थी, वह नये पांच रूपये के नोट को सहलाता हुआ चाय पीनेवालों के जमघट में आ शामिल हुआ । अजीज साहब अब काफी धीमी आवाज में अपनी गजल का अगला शेर सुनाने लगे ।

साहब के कमरे की घंटी हुई। चपरासी मुस्तैदी से उठ कर कमरे में गया और उसी मुस्तैदी से बाहर आकर अपने स्टूल पर बैठ गया ।

चपरासी से खिड़की का पर्दा ठीक कराकर कमिश्नर साहब ने मेज पर रखे हुए कागजों पर एक साथ दस्तखत किये, और पाइप सुलगाकर रीडर्स डाइजेस्ट' का ताजा अंक पढ़ने लगे । 'रीडर डाइजेस्ट' 'लाइफ' और अंग्रेजी ' आदि पत्रिकाओं के अंक घर से उनके साथ ही आते थे । लेटिशिया बाल्ड्रिज का लेख वे पढ़ चुके थे और लेखों में हृदय की शल्य चिकित्सा के सम्बन्ध में जे.डी. रैटक्लिफ का लेख सबसे पहले पढ़ने के लिए उन्होंने चुन रखा था । पृष्ठ एक सौ ग्यारह खोल कर उन्होंने हृदय के नये आपरेशन का ब्यौरा पढ़ना आरम्भ किया । तभी बाहर शोर सुनाई देने लगा ।

शब्दार्थ : वक्फा - ठहराव, मुस्तैदी - चुस्ती

बोध प्रश्न

2. कहकहे लगाते हुए बाबू अचानक चुप क्यों हो गए?
   (अ) नई गजल ध्यान नहीं आने पर
   (ब) चपरासी के आ जाने से
   (स) कमिश्नर के आ जाने से
   (द) अचानक काम याद आ जाने से
3. कमीश्नर साहब इनमें से कौनसी पत्रिका का अंक अपने साथ नहीं लाए थे ।
   (अ) रीडर डाइजेस्ट (ब) लाइफ
   (स) आर्गोजी (द) धर्मयुग

कम्पाउण्ड में पेड़ के नीचे बिखरकर बैठे हुए लोगों में तीन नई आकृतियाँ आ शामिल हुई थी । एक अधेड़ आदमी था, जिसने अपनी पगड़ी नीचे बिछा ली थी और हाथ पीछे को करके टांगें फैलाकर उस पर बैठ गया था । पगड़ी के खाली छोर पर एक उससे जरा बड़ी उमर की स्त्री और एक जवान लड़की बैठी थी और उनके पास ही खड़ा एक दुबला सा लड़का अपने आस-पास की हर चीज को घूर रहा था । पुलिस की फैली हुई टांगें धीरे-धीरे खुल गई थी और आवाज इतनी ऊँची हो गई थी कि कम्पाउण्ड के बाहर से भी बहुत से लोगों का ध्यान उसकी ओर खिंच गया था । वह बोलता हुआ साथ-साथ घुटने पर हाथ मार रहा था, "सरकार को अभी और वक्त चाहिये । दस-पांच साल में सरकार फैसला करेगी कि अर्जी मंजूर होनी चाहिये या नहीं, सरकार वक्त ले रही है । काल, यमराज भी तो हमारा वक्त गिन रहा है । उधर वह हमारा वक्त पूरा करेगा और इधर तुम कहना कि तुम्हारी अर्जी पास की गई ।"

चपरासी की टांग स्टूल के नीचे उतरी और वह सीधा हो गया । कम्पाउण्ड में बिखरकर बैठे और लेटे हुए सब लोग अपनी-अपनी जगह पर कस गये । कई लोग पेड़ के पास जमा हो गये।

"दो साल से अर्जी दे रखी है कि सालों, जमीन के नाप पर तुमने मुझे जो गड्ढा एलाट कर दिया है, उसकी जमीन दो, मगर दो साल से अर्जी दो कमरे पार नहीं कर पाई? "वह आदमी बोलता रहा, "इस कमरे से उस कमरे में अर्जी के जाने में वक्त लगता है । इस मेज से उस मेज पर जाने में वक्त लगता है । सरकार वक्त ले रही है । मैं आ गया हूँ अपना घस्बार लेकर यहीं पर; ले लो जितना वक्त तुम्हें लेना है । सात साल की मुखबरी के बाद मुझे जमीन दी है - सौ मरले का गड्ढा ! उसमें मैं बाप-दादों की अस्थियाँ गाढ़ूं । अर्जी दी थी कि मुझे सौ मरले के पचास मरले दे दो, लेकिन जमीन तो दो । मगर अर्जी दो साल से वक्त ले रही है । मैं भूखा मर रहा हूँ और अर्जी बख्त ले रही है ।

चपरासी अपने हथियार लिये उठा-माथे पर त्योरियां और आंखों में आक्रोश । आस-पास जमा भीड़ को हटाता वह उसके पास सामने आ गया ।

"ए मिस्टर, चल हियाँ से बाहर!" उसने हथियारों की पूरी चोट के कहा, "चल उठ"

"मिस्टर यहाँ से उठ नहीं सकेगा ।" वह आदमी बोला, "मिस्टर यहाँ का बादशाह है । पहले मिस्टर देश के बेताज बादशाहों की जय बुलाता था । अब वह किसी की जय नहीं बुलाता । अब वह आप बादशाह है - बेताज बादशाह! उसे कोई लाज-शरम नहीं है । उस पर किसी का हुक्म नहीं चलता । समझा चपरासी बादशाह ।"

शब्दार्थ

मरले का - जमीन का एक नाप, बख्त - समय

बोध प्रश्न

प्र.4 कम्पाउण्ड में आकर कौनसा व्यक्ति जोर-जोर से चिल्लाने लगा था?

.....

प्र.5 वृद्ध व्यक्ति ने कितने वर्षों से अर्जी दे रखी थी?

(अ) दस वर्ष (ब) सात वर्ष (स) दो वर्ष (द) पाँच वर्ष

प्र.6 चपरासी ने आकर वृद्ध से क्या कहा?

.....

प्र.7 चपरासी से वृद्ध ने क्या कहा?

.....

"अभी पता चल जायेगा तुझे कि तुझ पर किस का हुक्म चलता है या नहीं ।" चपरासी बादशाह और गर्म हुआ, "अभी पुलिस के सुपुर्द कर दिया जायेगा तो सारी की सारी बादशाही निकल जायेगी...."

"हाँ-हाँ! बेताज बादशाह हंसा, तेरी पुलिस मेरी बादशाही निकालेगी? मैं पुलिस के सामने नंगा हो जाऊँगा और कहूँगा कि निकालो मेरी बादशाही ! हम मैं से किसकी बादशाही निकालेगी पुलिस? ये मेरे साथ तीन बादशाह और हैं यह मेरे भाई की बेवा है - उस भाई की जिसे पाकिस्तान में टाँग पकड़ कर चीरा गया था । यह मेरे भाई का लड़का है, जो तपैदिक का मरीज हो गया है । और यह मेरे भाई की लड़की है जो अब ब्याहने लायक हो गई है । इसकी बड़ी बहन पाकिस्तान में है । आज मैंने इन सबको बादशाही दे दी है । ले आ, तू जाकर अपनी पुलिस । वह आकर इन सबकी बादशाही निकाल दे । कुत्ता! साला!"

अन्दर से कई एक बाबू निकल कर बाहर आ गये । "कुत्ता साला" सुन कर चपरासी अपने आप से बाहर हो गया । वह तैश में उसे बांह में पकड़ घसीटने लगा, "अभी तुझे मार-मार कर" और उसने उसे अपने टूटे हुए बूट की एक ठोकर दी । स्त्री और लड़की सहमकर वहाँ से हट गई । लड़का रोने लगा ।

बाबू लोग भीड़ हटाते हुए आगे बढ़ आये और उन्होंने चपरासी को पकड़कर हटा दिया । चपरासी बड़बड़ाता रहा, "कमीना आदमी, दफ्तर में आकर गाली देता है । मैं अभी तुझे । "एक नहीं तुम सबके सब कुत्ते हो", वह कहता रहा, तुम भी कुत्ते हो और मैं भी कुत्ता हूँ । फर्क इतना है कि तुम सरकार के कुत्ते हो । हम लोगों की हड्डियाँ चूसते हो और सरकार की तरफ से भौंकते हो । मैं परमात्मा का कुत्ता हूँ । उसकी दी हुई हवा खाकर जीता हूँ और उसकी तरफ से भौंकता हूँ । उसका घर इन्साफ का घर है । मैं उसके घर की रखवाली करता हूँ । तुम सब उसकी इन्साफ की दौलत के लुटेरे हो । तुम पर भौंकना मेरा फर्ज है । मेरे मालिक का फरमान है । मेरा तुमसे असली बेर है । कुत्ते का कुत्ता दुश्मन होता है । तुम मेरे दुश्मन हो, मैं तुम्हारा दुश्मन हूँ । तुम बहुत से हो मैं एक हूँ । इसलिए तुम मिलकर मुझे मारो । मुझे यहाँ से निकाल दो । लेकिन मैं फिर भी भौंकता रहूँगा । तुम मेरा भौंकनाबन्द नहीं कर सकते । मेरे अन्दर मेरे मालिक का नूर है, मेरे वाहगुरू का तेज हैं मुझे जहाँ बन्द कर दोगे, मैं वहाँ भौकूँगा और भौंक-भौंक कर सब लोगों के कान फाड़ दूंगा । साले, आदमी के कुत्ते, जूठी हड्डी पर मरने वाले कुत्ते, दुम हिला-हिलाकर जीने वाले कुत्ते..."

शब्दार्थ

बूट-जूता, तैश-गुस्सा, फरमान-आदेश

बोध प्रश्न

प्र.8 वृद्ध व्यक्ति के साथ और कौन-कौन व्यक्ति आए थे?

.....

प्र.9 वृद्ध व्यक्ति स्वयं को और सरकारी कर्मचारियों को किस नाम से संबोधित करता है?

.....

'बाबाजी बस करो ।' एक बाबू हाथ जोड़कर बोला: 'लोगों पर रहम खाओ और अपनी यह सन्तवाणी बन्द करो । तुम बताओ तुम्हारा केस क्या है, तुम्हारा नाम क्या है?'

मेरा नाम है बारह सौ छब्बीस बटा सात । मेरे माँ-बाप का दिया हुआ नाम खा लिया कुत्तों ने । अब यह नाम है जो तुम्हारे दफ्तर का दिया हुआ है । मैं बारह सौ छब्बीस बटा सात हूँ । मेरा और कोई नाम-पता नहीं हैं मेरा नाम याद कर लो । अपनी डायरी में लिख लो । वाह गुरू का कुत्ता बारह सौ छब्बीस बटा सात ।'

"बाबाजी, आज जाओ, कल-परसों फिर आना । तुम्हारी अर्जी की कार्यवाही तकरीबन-तकरीबन पूरी हो चुकी है....."

तकरीबन-तकरीबन पूरी हो चुकी है और मैं तकरीबन-तकरीबन आप पूरा हो चुका हूँ । अब सिर्फ यह देखना बाकी है कि पहले वह पूरी होती है कि पहले मैं पूरा होता हूँ । एक तरफ सरकार का हुनर है और दूसरी तरफ परमात्मा का हुनर । तुम्हारा तकरीबन-तकरीबन अभी दफ्तर में ही रहेगा और मेरा तकरीबन-तकरीबन कफन में पहुँच जायेगा । सालों ने सारी पढ़ाई खर्च करके दो लक्स ईजाद किये हैं - शायद और तकरीबन । 'शायद आपके कागज ऊपर चले गये हैं - तकरीबन-तकरीबन कार्यवाही पूरी हो गई है ।' शायद से निकालो तो तकरीबन में डाल दो और तकरीबन से निकालो तो शायद में गर्क कर दो । यही तुम्हारी तालीम है । 'तकरीबन तीन-चार महीने में तहकीकात होगी । शायद महीने दो महीने में रिपोर्ट आयेगी । ' मैं आज शायद और तकरीबन दोनों घर पर छोड़ आया हूँ । मैं यहाँ हूँ और यहींबैठूंगा । मेरा काम होना है तो आज ही होगा । और अभी होगा । तुम्हारे शायद और तकरीबन के ग्राहक ये सब खड़े हैं । ये ठगी इनसे करो-"

बाबू लोग अपनी सद्भावना से निराश होकर एक-एक करके अन्दर लौटने लगे ।

'बैठा है, बैठा रहने दो!'

'बकता है, बकने दो!'

'साला बदमाशी से काम निकालना चाहता है ।'

'लेट हिम वार्क हिमसेल्फ टू डेथ!'

बाबुओं के साथ चपरासी भी बड़बड़ाता हुआ अपने स्टूल पर लौट गया, मैं साले के दाँत तोड़ देता । अब बाबू लोग हाकिम हैं और हाकिमों का कहना मानना पड़ता है वर्ना....'

"अरे बाबा, शान्ति से काम ले । यहाँ मिन्नता चलती है, पैसा चलता है, धौंस नहीं चलती ।" भीड़ में से कोई उसे समझाने लगा ।

शब्दार्थ

रहम-दया, लफ्ज-शब्द, तालीम-शिक्षा, तहकीकात-खोज

बोध प्रश्न

प्र.10 "लोगों पर रहम खाओ और अपनी यह सन्तवाणी बन्द करो ।" वाक्य में बाबू का कौन सा भाव व्यक्त होता है-

(अ) खीझ (ब) व्यंग्य (स) दया (द) क्रोध

प्र.11 "मेरा नाम है बाहर सौ छब्बीस बटा सात । "यह वाक्य किसने, किससे कहा?"

.....

प्र.12 सरकारी कार्यालयों में किस प्रकार कार्य करवाया जाता है?

(अ) शान्ति से (ब) धौंस से

(स) गाड़कर (द) मिन्नत और पैसे से

वह आदमी उठकर खड़ा हो गया ।

'मगर परमात्मा का हुक्म सब जगह चलता है' वह कमीज उतारता बोला, 'और परमात्मा के हुक्म से आज बेताज बादशाह नंगा होकर कमिशनर साहब के कमरे में जाएगा । आज वह नंगी पीठ पर साहब के डंडे खाएगा । आज वह बूटों की ठोकरे खाकर प्राण देगा । लेकिन वह किसी की मिन्नत नहीं करेगा । किसी को पैसा नहीं चढ़ायेगा । किसी की पूजा नहीं करेगा । जो वाह गुरू की पूजा करता है, वह और किसी की पूजा नहीं करता तो अब वाह गुरू का नाम लेकर"

इससे पहले कि वह अपने कहे को किये में परिणत करता, दो एक आदमियों ने बढ़कर उसके हाथ पकड़ लिए । बेताज बादशाह हाथ छुड़ाने के लिये संघर्ष करने लगा ।

'मुझे जाकर इनसे पूछने दो कि क्या इसीलिये महात्मा गांधी ने इन्हें आजादी दिलायी थी कि ये आजादी के साथ इस तरह खिलवाड़ करें । उसकी मिट्टी खराब करें, उसके पवित्र नाम पर कलंक लगायें? उसे टके-टके की फाइलों में बांधकर जलील करें? लोगों के दिलों में उनके लिये नफरत पैदा करें? छोड़ दो । इन्सान के तन पर कपड़े देखकर बात इन लोगों की समझ में

नहीं आती । इन्हें समझाने का यही एक तरीका है । शरम उन्हें होती है जो इन्सान हो । मैं तो आप कहता हूँ कि मैं इन्सान नहीं, कुत्ता हूँ..."

बोध प्रश्न

प्र.13 वृद्ध किसकी पूजा करता था?

(अ) कमीशनर (ब) पैसा (स) बाबू (द) वाहे गुरू

सहसा भीड़ में एक दहशत सी फैल गयी । कमिश्नर साहब अपने कमरे से बाहर निकल आये थे । वे माथे की तैयारियों और चेहरे की झुर्रियों को गहरा किये हुए भीड़ के पास आ गये ।

"क्या बात है? क्या चाहते हो तुम?"

"आप से मिलना चाहता हूँ साहब!" वह व्यक्ति साहब को घूरता हुआ बोला, सौ मरले का एक गड्डा मेरे नाम एलाट हुआ है । वह गड्डा वापस करना चाहता हूँ ताकि सरकार उसमें एक तालाब बनवा दे ताकि अफसर लोग शाम को वहाँ मछलियाँ मारा करें । या सरकार उस गड्डे को एक तहखाना बना दे और मेरे जैसे कुत्तों को वहाँ बन्द कर दे-

"ज्यादा बातें मत करो! अपना केस लेकर मेरे पास आओ ।"

'मेरा केस मेरे पास नहीं है साहब, दो साल से सरकार के पास है । मेरे पास अपना शरीर और दो कपड़े हैं । चार दिन बाद ये भी नहीं रहने के, इसलिये इन्हें आज ही उतार देता हूँ । बाकी सिर्फ बारह सौ छब्बीस बटा सात रह जायेगा । वह बारह सौ छब्बीस बटा सात परमात्मा के हुजूर में भेज दिया जायेगा'

"बातें बन्द करो और मेरे साथ आओ!"

कमिश्नर साहब अपने कमरे की तरफ चल दिये वह आदमी भी कमीज कन्धे पर रखे हुए उनके साथ-साथ चल दिया।

"दो से साल चक्कर लगाता रहा किसी ने नहीं सुना । खुशामदें करता रहा किसी ' ने नहीं सुना । वास्ते देता रहा, किसी ने सुना"

चपरासी ने चिक उठा दी और वह कमिश्नर साहब के साथ अन्दर चला गया । घंटी बजी, फाइल हिली, बाबूओं की बुलाहट हुई और आध घण्टे बाद बेताज बादशाह मुस्कराता हुआ बाहर निकल आया । उत्सुक आंखों की भीड़ ने उसे देखा तो वह फिर बोलने लगा, "चूहों की तरह

बिटर-बिटर देखने से कुछ नहीं होता । भौंको-भौंको, सबके सब भौंको, अपने आप सालों के कानों के पर्दे फट जायेंगे । भौंको कुत्तों, भौंकों..."

उसकी भावज दोनों बच्चों के पास खड़ी प्रतीक्षा कर रही थी । वह दोनों बच्चों के कन्धों पर हाथ रखे हुए सचमुच बादशाह की तरह सड़क पर चलने लगा ।

"हयादार हो तो सालों मुंह लटकाये खड़े रहो । अर्जियाँ टाइप कराओ और नल का पानी पियो । सरकार वक्त ले रही है । और नहीं तो बेहया बनो । बेहयाई हजार बरकत है ।"

वह सहसा रूका और जोर से हँसा ।

"यारों, बेहयाई हजार बरकत है ।"

उसके चले जाने के बाद कम्पाउण्ड में और उसके आस-पास मातमी वातावरण और गहरा हो गया । भीड़ धीरे- धीरे बिखरकर अपनी पुरानी जगहों पर चली गई ।

चपरासी की टांगे फिर स्टूल पर उठ गई । सामने कैंटीन का लड़का बाबुओं के कमरे में एक सैट चाय ले गया । अर्जीनवीस की मशीन चलने लगी और टिक-टिक की आवाज के साथ उसका लड़का फिर अपना सबक दोहराने लगा, पी इ एन, पेन, पेन माने कलम, एच इ एन, हेन, हेन माने मुर्गी, डी इ एन, डेन, डेन डेन डेन माने अंधेरी गुफा ।

बोध प्रश्न

प्र.14 भीड़ में अचानक दहशत क्यों फैल गयी?

(अ) पुलिस आ गई थी (ब) कमिश्नर साहब आ गये थे

(स) वृद्ध व्यक्ति मार-पिटाई करने लगा था (द) चपरासी आ गया था ।

प्र.15 आधे घण्टे बाद “बेताज बादशाह” मुस्कराता हुआ क्यों आया?

.....

प्र.16 'भौंको-भौंको, सबके सब भौंको । "अधेड़ व्यक्ति ने किससे कहा?

.....

11.3 कहानी का सार

आपने कहानी का वाचन ध्यानपूर्वक किया होगा । आपको कहानी की कथा स्पष्ट हो गई होगी । फिर भी, हम आपकी सुविधा के लिए यहाँ कहानी का सार दे रहे हैं ताकि आप कहानी की कथावस्तु के केन्द्रीय भाव को ठीक से समझ सकें।

'परमात्मा का कुत्ता कहानी का प्रारम्भ सरकारी कार्यालय के बाहरी दृश्य से होता है । कार्यालय के बाहर लोगों की अच्छी खासी भीड़ है । कम्पाउण्ड में बिखरे हुए लोगों में से कुछ साथ लाया हुआ खाना खा रहे हैं, तो कुछ वहीं पर सो गये हैं । अर्जीनवीस धड़ाधड़ अर्जियां टाइप कर रहा है । बाबू एक दूसरे से छेड़खानी कर रहे हैं और चपरासी स्कूल पर बैठा-बैठा कुछ हिसाब लगा रहा है ।

दफ्तर के अंदर बाबू लोग गप्पे मार रहे हैं; उनकी काम में जरा भी रूचि नहीं है । कमिशनर साहब भी सरकारी कामकाज के स्थान पर पत्रिकाएँ में विशेष रूचि रखते हैं, इसी कारण एक कागज को एक टेबल से दूसरी टेबल पर जाने में महीनों लग जाते हैं ।

इसी कार्यालय के कम्पाउण्ड में एक ऐसा व्यक्ति आता है जो स्वयं को 'बेताज बादशाह' और 'परमात्मा का कुत्ता' कहता है । वह जोर-जोर से चिल्लाकर कहता है - "दो साल से अर्जी दे रखी है कि सालों जमीन के नाम पर तुमने मुझे जो गड्ढा एलाट कर दिया है, उसीकी जमीन दो, मगर दो साल से अर्जी दो कमरे पार नहीं कर पाई?"

चपरासी यह सब सुनकर उसे वहाँ से हटाने के लिए आता है किन्तु वह व्यक्ति चपरासी को डाँटते हुए कहता है, "मिस्टर यहाँ से उठ नहीं सकेगा । मिस्टर यहाँ का बादशाह है । पहले मिस्टर देश के बेताज बादशाहों की जय बुलाता था । अब वह किसी की जय नहीं बुलाता । अब वह आप बादशाह है - बेताज बादशाह!" उसके द्वारा काफी हो-हल्ला करने पर बाबू उसे समझाते हैं, परन्तु वह चुप नहीं होता है और उन सबको 'कुत्ता' कहता है,तुम भी कुत्ते हो और मैं भी कुत्ता हूँ । फर्क इतना है कि तुम सरकार के कुत्ते हो । हम लोगों की हड्डियाँ चूसते हो और सरकार की तरफ से भौंकते हो । मैं परमात्मा का कुत्ता हूँ ।

इतना शोर गुल सुनकर अन्त में कमिश्नर साहब बाहर आते हैं और उसे अपने साथ अन्दर ले जाकर कुछ ही मिनटों में उसकी अर्जी के अनुकूल फैसला दे देते हैं । इस प्रकार वह हँसता हुआ कार्यालय के बाहर आता है । बाहर खड़ी भीड़ को देखकर कर वह कहता है, 'चूहों की तरह बिटर-बिटर देखने से कुछ नहीं होता । भौंको-भौंको, सबके सब भौंको, अपने आप सालों के कानों के पर्दे फट जायेंगे । भौंको कुत्तों, भौंको ।

11.4 कहानी की संदर्भ सहित व्याख्या

इस इकाई में हम कुछ महत्वपूर्ण अंशों की संदर्भ सहित व्याख्या करेंगे । प्रत्येक कहानी में कुछ ऐसी पंक्तियाँ अवश्य होती हैं जो उस रचना के केन्द्रीय भाव को स्पष्ट करने में सहायक होती हैं । कहानी में यह भाव निम्नलिखित पंक्तियों में व्यक्त हुआ है -

"तुम भी कुत्ते हो और मैं भी कुत्ता हूँ । फर्क इतना है कि तुम सरकार के कुत्ते हो । हम लोगों की हड्डियाँ चूसते हो ओर सरकार की तरफ से भौंकते हो । मैं परमात्मा का कुत्ता हूँ । उसकी दी हुई हवा खाकर जीता हूँ और उसकी तरफ सेभौंकता हूँ ।"

आइए, हम उस उद्धरण की संदर्भ सहित व्याख्या का प्रयास करें ।

संदर्भ : प्रस्तुत उद्धरण मोहन राकेश द्वारा रचित कहानी 'परमात्मा का कुत्ता' से लिया गया है ।

उक्त संदर्भ में रचना व रचनाकार के नाम का उल्लेख किया गया है ।

अब हम इसी के अन्तर्गत 'प्रसंग' लिखेंगे । प्रसंग से तात्पर्य है, उस रचना में वह उद्धरण किस प्रसंग में आया है, उसका उल्लेख । अगर वह किसी पात्र का कथन है तो यह बताना कि वह कथन किसने, किससे कहा है । कमिश्नर साहब के कार्यालय के बाहर जब कहानी का नायक 'कृषक' प्रशासन में व्याप्त भ्रष्टाचार और लालफीताशाही के विरोध में जोर-जोर से चिल्लाने लगता है तो कार्यालय के चपरासी से उसकी कहासुनी हो जाती है । यह देखकर बाबू लोग उसे वहाँ से हटा देते हैं । तब वह ग्रामीण कृषक उन सभी को सरकारी कुत्ते कहकर संबोधित करता है ।

उपर्युक्त अंश से यह स्पष्ट हो जाता है कि उक्त पंक्तियाँ किसने, किससे और किस प्रसंग में कही है । अब हम इस अंश की व्याख्या करेंगे । व्याख्या का तात्पर्य है उस अंश में कहीं गई बात को किंचितविस्तार और स्पष्टता के साथ खोलकर प्रस्तुत करना । इस अंश में नायक कृषक सरकारी कार्यालय में व्याप्त भ्रष्टाचार पर अपना आक्रोश प्रकट करता है ।

व्याख्या : नायक कृषक सरकारी कर्मचारियों को संबोधित करते हुए कहता है कि तुम सब कुत्ते हो और मैं भी कुत्ता हूँ । परन्तु हममें इतना ही फर्क है कि तुम सरकार के कुत्ते हो । तुम साधारण जनता से रिश्वत लेते हो और जनता के रिश्वत रूपी खून से सनी हुई हड्डियों को चूसते हो और सरकार की तरफ से भौंकते हो । मैं भी कुत्ता हूँ परन्तु मैं परमात्मा का कुत्ता हूँ । परमात्मा जो वायु या अन्य खाद्य सामग्री मुझे देता है, मैं उसी को खाकर जीवित रहता हूँ और उसी की तरफ से भौंकता हूँ । मेरा जीवन पूर्णतया भगवान पर आश्रित है । इसलिए मैं जो कुछ कहता हूँ और भ्रष्टाचार का विरोध करता हूँ उसके पीछे परमात्मा की ही प्रेरणा

विशेष :

1. उक्त अंश में सरकारी कर्मचारियों के आचरण तथा रिश्वतखोरी पर तीखा व्यंग्य किया गया है ।
2. संक्षिप्त वाक्यों में सशक्त भावाभिव्यक्ति की गई है ।
3. भाषा में सरलता, प्रतीकात्मकता और भावानुकूलता है ।

अगर उद्धरण में भाषा की अन्य विशेषताएँ जैसे, बिंबात्मकता, प्रतीकात्मकता, काव्यात्मकता आलंकारिकता आदि हो तो उसे भी रेखांकित किया जाना चाहिए ।

अब हम आपको इस कहानी के कुछ उद्धरण दे रहे हैं, आप स्वयं उसकी व्याख्या का प्रयास कीजिए ।

अभ्यास

1. "सरकार को अभी और वक्त चाहिए । दस-पाँच साल में सरकार फैसला करेगी कि अर्जी मंजूर होनी चाहिए या नहीं, सरकार वक्त ले रही है । काल, यमराज भी तो हमारा वक्त गिन रहा है । उधर वह हमारा वक्त पूरा करेगा और इधर तुम कहना कि तुम्हारी अर्जी पास की गई ।"

   संदर्भ : संकेत : रचना का नाम
   रचनाकार का नाम

   .....

प्रसंग :ग्रामीण कृषक का कमिश्नर के कार्यालय के बाहर खड़े' होकर, प्रशासन में व्याप्त भ्रष्टाचार का विरोध करना ।

.....

.....

व्याख्या : संकेत : ग्रामीण व्यक्ति का निर्भीक होकर विरोध करना
प्रशासनिक तन्त्र पर व्यंग्य
यथार्थ स्थिति का चित्रण

.....

.....

.....

.....

.....

विशेष : 1. भाषा सरल
2. व्यंग्यात्मक शैली

.....

2. "घंटी बजी, फाइल हिली, बाबुओं की बुलाहट हुई और आधा घंटे बाद बेताज बादशाह मुस्कराता हुआ बाहर निकल आया । उत्सुक आँखों की भीड़ ने उसे देखा तो वहफिर बोलने लगा, "चूहों की तरह बिटर-बिटर देखने से कुछ नहीं होता । भौंको-भौंको, सबके सब भौंको, अपने आप सालों के कानों के पर्दे फट जायेंगे । भौंको कुत्तो, भौंको ।

   संदर्भ : रचना का नाम
   रचनाकार का नाम

   .....

   .....

   प्रसंग :किसका कथन

किससे

अनपढ़ किसान द्वारा उपस्थित जनता को सरकारी तन्त्र में व्याप्त भ्रष्टाचार के विरूद्ध आवाज उठाने के लिए कहना ।

.....

.....

व्याख्या : संकेत : किसान का कार्य पूर्ण होना, जनता को जागरूक बनने की सलाह देना तथा सरकारी कार्यालय में व्याप्त भ्रष्टाचार का वर्णन ।

.....

.....

.....

.....

विशेष : 1 भाषा सरल व भावानुकूल

2. व्यंग्यात्मक व प्रतीकात्मक शैली

.....

इसके अतिरिक्त कई महत्त्वपूर्ण उद्धरण इस कहानी में आये हैं जिनकी प्रसंग सहित व्याख्या आप स्वयं करने का अभ्यास करें । इससे कहानी को समझने और उसके शिल्पगत सौन्दर्य को ग्रहण करने में मदद मिलेगी ।

11.5 सारांश

आपने 'परमात्मा का कुत्ता' कहानी का वाचन ध्यान से किया होगा । आपने अच्छी तरह से समझ लिया होगा कि कहानीकार इस कहानी में आपसे क्या कहना चाहता है । इस कहानी को पढ़ने के बाद अब आप :

- 'परमात्मा का कुत्ता' सरकारी तन्त्र में व्याप्त भ्रष्टाचार पर करारा व्यंग्य है । जिसमें एक अनपढ़ किसान को भ्रष्टाचार के विरूद्ध आवाज उठाते हुये दर्शाया गया है । आप कहानी के वाचन और उसके महत्त्वपूर्ण अंशों की व्याख्या द्वारा इनको अपने शब्दों में व्यक्त कर सकते हैं ।
- 'परमात्मा का कुत्ता' में प्रयुक्त कठिन शब्दों और संदर्भों की व्याख्या कर सकते हैं ।

11.6 संदर्भ ग्रन्थ

मदान, डॉ. इंद्रनाथ : हिन्दी कहानी : पहचान और परख, लिपि प्रकाश, नई दिल्ली

11.7 बोध प्रश्नों / अभ्यासों के उत्तर

1. (क) बहुत से लोग सिर लटकाये इधरउधर बैठे हुए थे ।
   (ख) अर्जीनवीस धड़ाधड़ अर्जियाँ टाइप कर रहा था ।
2. (ग) कमिश्नर के आ जाने से
3. (घ) धर्मयुग

4. एक अधेड़ व्यक्ति
5. (ग) दो वर्ष
6. चल उठ, यहाँ से
7. मिस्टर यहाँ का बादशाह है ।
8. वृद्ध व्यक्ति के साथ तीन व्यक्ति और आए थे - उसके भाई की बेवा, उसके भाई का लड़का और भाई की अविवाहित लड़की ।
9. वृद्ध व्यक्ति स्वयं को 'परमात्मा का कुत्ता' और कर्मचारियों को सरकारी कुत्ता कहकर पुकारता है ।
10. (ख) व्यंग्य ।
11. वृद्ध ने बाबू से कहा ।
12. (घ) मिन्नत और पैसे से ।
13. (घ) वाहे गुरू ।
14. (ख) कमिश्नर साहब आ गए थे ।
15. क्योंकि उसका कार्य पूरा हो गया था ।
16. अपनी बारी का इन्तजार करने वाले निष्क्रिय जन समाज से कहा ।

अभ्यासों के उत्तर आप स्वयं लिखें ।

इकाई- 11 (भाग-2)

'परमात्मा का कुत्ता' : विश्लेषण और मूल्यांकन

इकाई की रूपरेखा

11.0 उद्देश्य

11.1 प्रस्तावना

11.2 कथावस्तु

11.2.1 कहानी का आरंभ

11.2.2 कहानी का विकास

11.2.3 कहानी की परिणति

11.3 चरित्र चित्रण

11.3.1 अधेड़ कृषक

11.4 परिवेश

11.5 संरचना शिल्प

11.5.1 शैली

11.5.2 भाषा और संवाद

11.6 मूल्यांकन

11.7 सारांश

11.8 संदर्भ ग्रंथ

11.9 बोध प्रश्नों /अभ्यासों के उत्तर

11.0 उद्देश्य

आप इस इकाई में 'परमात्मा का कुत्ता' कहानी का विश्लेषण पढ़ेंगे । इस इकाई को पढ़ने के बाद आप :

- कहानी की कथावस्तु का विश्लेषण कर सकेंगे और इस विश्लेषण के द्वारा कथावस्तु की विशेषताएँ पहचान सकेंगे।
- कहानी के प्रमुख पात्रों का चरित्र-चित्रण कर सकेंगे ।
- कहानी की परिवेशगत विशेषताएँ बता सकेंगे ।
- कहानी की भाषागत और शिल्पगत विशेषताएँ बता सकेंगे ।
- कहानी के प्रतिपाद्य और कहानीकार की दृष्टि का विश्लेषण कर सकेंगे ।
- कहानी के शीर्षक की उपयुक्तता का निर्णय कर सकेंगे ।
- उपर्युक्त सभी विशेषताओं के आधार पर कहानी का मूल्यांकन कर सकेंगे ।

11.1 प्रस्तावना

आपने पिछली इकाई में 'परमात्मा का कुत्ता' कहानी का वाचन किया । इससे आपको कहानी को समझने में काफी मदद मिली होगी । कहानी का उसके तत्त्वों के आधार पर विश्लेषण और मूल्यांकन कैसे किया जाता है, यह 'परमात्मा का कुत्ता' कहानी के विश्लेषण द्वारा हम जानेंगे । इससे आप स्वयं कहानी का विश्लेषण और मूल्यांकन कर सकने में समर्थ हो सकेंगे । इकाई-10 में हमने 'पुरस्कार' कहानी का विश्लेषण व मूल्यांकन प्रस्तुत किया था । इस इकाई में हम कहानी का विस्तृत विश्लेषण प्रस्तुत नहीं करेंगे, वरन् विश्लेषण कैसे किया जाता है, इस पर विचार करेंगे और ऐसा करते हुए हमारे सामने व्यवहार में 'परमात्मा का कुत्ता' कहानी होगी ।

आपने मोहन राकेश की कहानी 'परमात्मा का कुत्ता' को ध्यानपूर्वक पढ़ा है । आपने जाना कि किस प्रकार एक अशिक्षित कृषक सरकारी कार्यालय में व्याप्त भ्रष्टाचार की धज्जियाँ उड़ा देता है तथा अन्य लोगों को भी भ्रष्टाचार के खिलाफ लड़ने की प्रेरणा प्रदान करता है । व्यंग्यात्मक शैली में इस कहानी के द्वारा भ्रष्टाचार का यथार्थ अंकन किया गया है । इस कहानी के कथ्य और अन्य पक्षों का इसी संदर्भ में विश्लेषण करेंगे ।

11.2 कथावस्तु

कथावस्तु कहानी का प्रथम व प्रमुख तत्व है । 'कथावस्तु' का अर्थ है, कहानी में प्रस्तुत घटना । इस दृष्टि से विचार करें तो 'परमात्मा का कुत्ता' में भी कुछ घटनाएँ हैं । जैसे, ग्रामीण कृषक का सरकारी कार्यालय के बाहर आकर जोर-जोर से चिल्लाना, कमिश्नर द्वारा आकर उसे ले जाना और उसका कार्य सम्पन्न करना तथा कृषक द्वारा बाहर आकर सबको भौंकने के लिए कहना । कहानी एक निश्चित बिंदु से प्रारम्भ होकर निश्चित परिणति प्राप्त करती है । कथानक का प्रारम्भ जितना गतिशील व कौतूहल वर्धक है, अन्त उतना ही रोमांचक है । हम आगे कहानी के विकासक्रम का विश्लेषण करने का प्रयास करेंगे ।

11.2.1 कहानी का आरंभ

प्रस्तुत कहानी का आरंभ परिवेश वर्णन से होता है । 'परमात्मा का कुत्ता' कहानी निष्क्रियता के विरूद्ध क्रियाशीलता के संकल्प की कहानी है । प्रशासन में व्याप्त भ्रष्टाचार और लालफीताशाही का इसमें डटकर विरोध हुआ है । कहानी का प्रारंभ सरकारी कार्यालय के बाहरी वातावरण से होता है । सरकारी कार्यालय के कम्पाउण्ड में लोग इधर-उधर घूम रहे हैं, कुछ साथ लाई हुई पोटलियों में से खाना खा रहे हैं, तो कुछ अपनी बारी का इन्तजार करते हुए लेट गए हैं । अर्जीनवीस धड़ाधड़ अर्जियाँ टाइप कर रहा था । बाबू एक दूसरे से छेड़खानी करते हुए रजिस्ट्रेशन ब्रांच की तरफ जा रहे थे । चपरासी स्टूल पर बैठकर कुछ हिसाब लगा रहा था । कमिश्नर साहब के कमरे में अनेक पत्रिकाएँ रखी हैं जो उनके काम की अपेक्षा पत्रिकाएँ पढ़ने की रूचि को प्रदर्शित करती हैं ।

इस वातावरण से कहानी के आरम्भिक घटनाचक्र का पता चलता है, किन्तु यह पता नहीं चला पाता है कि कहानी के मुख्य व अन्य पात्र कौन हैं । उनके नाम क्या हैं? आदि । लेकिन बाद के घटनाक्रम में हमें पर्याप्त जानकारी मिल जाती है । इस तरह जैसे-जैसे कहानी आगे बढ़ती है, हमें पात्रों का परिचय, उनका वहाँ आने का उद्देश्य, उनके प्रयत्न और सफलता का विवरण मिलता है । कहानी के आरंभ में घटित होने वाली घटनाओं से हमें आगे होने वाली घटनाओं का संकेत मिल जाता है । जैसे, बाबुओं व कमिश्नर की निष्क्रियता ही मुख्य पात्र को उत्तेजित करती है और वह उन सबको 'सरकारी कुत्ता' कहकर संबोधित करता है ।

11.2.2 कहानी का विकास

कहानी का अब तक का विश्लेषण केवल सरकारी कार्यालय के बाहरी व आन्तरिक परिवेश को हमारे सम्मुख प्रस्तुत करता है । क्या यह परिवेश अपने आप में पर्याप्त है? क्या यही वास्तविक कथावस्तु है? क्योंकि अब तक जो कुछ वर्णित हुआ है उससे किसी स्पष्ट और महत् उद्देश्य की जानकारी हमें नहीं मिलती है । किन्तु वास्तविकता यह है कि स्थूल घटनाओं में ही वे सूक्ष्म तत्व छिपे होते हैं जो कथावस्तु के मूलभाव को अभिव्यक्त करते हैं और कहानी जिनके माध्यम से आगे बढ़ती है । आइए, हम इन सूक्ष्म तत्त्वों का अवलोकन और परीक्षण करें । कहानी के आरम्भिक भाग में सरकारी कार्यालय के बाहरी व भीतरी परिवेश का परिचय मिलता है । जिससे यह अनुमान होता है कि सरकारी कार्यालय में पूर्णत: निष्क्रियता व्याप्त है, वहाँ सरकारी कामकाज बहुत धीमी गति से होता है तथा जनसाधारण में चेतना का अभाव होने के कारण वह इस स्थिति को सहर्ष स्वीकार कर लेता है । तभी कम्पाउण्ड में तीन नई आकृतियों का आगमन होता है, जो कहानी को नई दिशा प्रदान करता है । उन तीन व्यक्तियों में एक अधेड़ व्यक्ति भी है, जो कहानी का मुख्य पात्र है, किन्तु लेखक ने सम्पूर्ण कहानी में उसके नाम का कहीं उल्लेख नहीं किया है । वही अधेड़ व्यक्ति घटनाक्रम में अचानक परिवर्तन लाता है । कम्पाउण्ड के बीच में बैठकर जोर-जोर से चिल्लाने लगता है, "सरकार को अभी और वक्त चाहिये । दस-पाँच साल में सरकार फैसला करेगी और अर्जी मंजूर होनी चाहिए या नहीं, सरकार वक्त ले रही है । काल, यमराज भी तो हमारा वक्त गिन रहा है । उधर वह हमारा वक्त पूरा करेगा और इधर तुम कहना कि तुम्हारी अर्जी पास की गई ।"

इस तरह यह घटनाचक्र कहानी को नई दिशा की ओर मोड़ता है । अब प्रश्न यह उठता है कि क्या उस अधेड़ पुरूष को न्याय मिलेगा?

कहानी जब आगे बढ़ती है तो हमारे सामने नए तथ्य आते हैं । अधेड़ व्यक्ति वहाँ खड़ा होकर जोर-जोर से चिल्लता है, चपरासी को भी आड़े हाथों लेता है तथा बाबुओं की बात अनसुनी कर देता है । यह सब करने के बाद क्या वह अपने उद्देश्य में सफल हो पाएगा? आइए कहानी के निम्नलिखित अंश देखें:

1. 1 “दो साल से अर्जी दे रखी है कि सालो, जमीन के नाम पर तुमने मुझे जो गड्ढा एलाट कर दिया है, उसकी जमीन दो, मगर दो साल से अर्जी, दो कमरे पार नहीं कर पाई?” (अधेड़ व्यक्ति कार्यालय में कर्मचारियों से)
2. “मिस्टर यहाँ का बादशाह है । पहले मिस्टर देश के बेताज बादशाहों की जय बुलाता था । अब वह किसी की जय नहीं बुलाता ।"
   (अधेड़ व्यक्ति चपरासी से)
3. “तुम सभी भी कुत्ते हो और मैं भी कुत्ता हूँ । फर्क इतना है कि तुम सरकार के कुत्ते हो ।"
   (अधेड़ व्यक्ति कर्मचारियों से)

अभ्यास

1. 'परमात्मा का कुत्ता' कहानी के उपर्युक्त उद्धारणों से अधेड व्यक्ति की किस मानसिक अवस्था का परिचय' प्राप्त होता है । 100 शब्दों में लिखिए ।

11.2.3 कहानी की परिणति

अधेड़ व्यक्ति की मानसिक अवस्था को समझने के पश्चात् आपके मन में यह जिज्ञासा अवश्य उत्पन्न हो रही होगी कि कहानी की परिणति क्या होगी? अधेड़ व्यक्ति की सुनवाई होगी या नहीं । कहानी आप पढ़ चुके हैं आप स्वयं जानते हैं कि कहानी का अंत क्या हुआ? इसलिए अब प्रश्न यह उठता है कि अधेड़ व्यक्ति ने यह मार्ग क्यों अपनाया । अर्थात् आक्रोश का मार्ग, विद्रोह का मार्ग । वह प्रशासन में व्याप्त भ्रष्टाचार के विरूद्ध लड़ता है, निष्क्रियता के विरूद्ध क्रियाशीलता लाने का संकल्प लेकर आता है । सरकारी कर्मचारियों को सरकारी कुत्ते तथा स्वयं को ‘परमात्मा का कुत्ता’ कहता है । वह न्याय प्राप्ति के लिए भौंकता है तथा अन्य लोगों से भी भौंकने के लिए कहता है ।

यह है 'परमात्मा का कुत्ता' कहानी, जिसकी कथावस्तु का विश्लेषण आप सरलता से कर सकते हैं । आप इसमें कितने सफल होते हैं, इसका पता निम्नलिखित बोध प्रश्नों को हल करने से लग सकता है ।

बोध प्रश्न

रिक्त स्थान में प्रश्नों का संक्षिप्त उत्तर दीजिए और अपने उत्तरों को इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से मिलाइये ।

1. अधेड़ व्यक्ति के कम्पाउण्ड में पहुँचने के पहले वहाँ के वातावरण का उल्लेख करिए -
   (क).....
   (ख).....
   (ग).....

"मिस्टर यहाँ से उठ नहीं सकेगा" वह आदमी बोला," मिस्टर यहाँ का बादशाह है । पहले मिस्टर देश के बेताज बादशाहों की जय बुलाता था । अब वह किसी की जय नहीं बुलाता । अब वह आप बादशाह है- बेताज बादशाह! उसे कोई लाज शरम नहीं है । उस पर किसी का हुक्म नहीं चलता । समझा चपरासी बादशाह!"

2. 'बेताज बादशाह' से क्या तात्पर्य है?

   .....

   .....

3. 'बेताज बादशाह' की कोई दो विशेषताएँ बताओ ।

   .....

   .....

4. अधेड़ व्यक्ति स्वयं को बेताज बादशाह क्यों कहता है?

   .....

   .....

5. अधेड़ व्यक्ति का इस प्रकार का वार्तालाप उसकी किस स्थिति को अभिव्यक्त करता है?

   .....

   .....

11.3 चरित्र चित्रण

कहानी का आकार छोटा होता है, इसलिए उसमें पात्रों की संख्या कम होनी चाहिए । उसमें पात्रों का चरित्र-चित्रण सूक्ष्म रेखाओं के द्वारा इस प्रकार उभारा जाना चाहिए कि पात्रों के व्यक्तित्व का विकास सहज रूप में हो जाए । 'परमात्मा का कुत्ता' कहानी में आपने देखा कि मुख्य पात्र केवल एक है - अधेड़ कृषक । इसके अतिरिक्त कुछ गौण पात्र भी हैं जैसे - चपरासी, कमिश्नर आदि । ये पात्र केवल घटना विकास में सहायता करते हैं, आइए अब हम कहानी के मुख्य पात्र "अधेड़ कृषक" के चरित्र की विशेषताएँ पहचानें ।

11.3.1 अधेड़ कृषक

स्वयं को 'परमात्मा का कुत्ता' कहने वाला कृषक प्रस्तुत कहानी का नायक है । कहानी का फलागम भी उसी को प्राप्त होता है और कहानीकार ने उसी के माध्यम से अपने कथ्य का प्रतिपादन किया है । कृषक का चरित्र कई विधियों से उभरकर हमारे सामने आता है । उसका आक्रोश, निडरता, संघर्ष, प्रतिक्रिया आदि । आपने कहानी पढ़ते हुए स्वयं कृषक की चारित्रिक विशेषताओं को रेखांकित किया होगा । आइए, हम कहानी के आधार पर कृषक की चारित्रिक विशेषताओं को पहचाने । कम्पाउण्ड में कृषक के आते ही जोर-जोर से चिल्लाकर शासन तन्त्र के विरूद्ध आवाज उठाने से उसके निडर व्यक्तित्व का पता चलता है । वह सरकारी कार्यालयों में व्याप्त लालफीताशाही से परेशान हैं ।

यह अंश देखिए :

“इस कमरे से उस कमरे में अर्जी के जाने में वक्त लगता है । इस मेज से उस मेज पर जाने में वक्त लगता है ।“

वह परेशान है तथा इन्तजार करते-करते उसके जीवन में घोर निराशा व्याप्त हो चुकी है ।

वह अपने आक्रोश को इस प्रकार व्यक्त करता है :

"सात साल की मुखबरी के बाद मुझे जमीन दी है - सौ मरले का गड्ढा! उसमें मैं बाप-दादों की अस्थियाँ गाढ़ूँ । अर्जी दी थी कि मुझे सौ मरले के पचास मरले दे दो लेकिन जमीन तो दो, । मगर अर्जी दो साल से वक्त ले रही है । मैं भूखा मर रहा हूँ और अर्जी वक्त ले रही है ।

इससे स्पष्ट हो जाता है कि कृषक निडर तो है ही साथ ही उसके मन में सरकारी तन्त्र में व्याप्त लालफीताशाही के प्रति आक्रोश है । इस प्रकार कृषक के चरित्र की दो विशेषताएँ निडरता तथा आक्रोश की भावना उजागर होती है । बाद का घटनाक्रम इन दोनों विशेषताओं को और पुष्ट करता है ।

किसी भी व्यक्ति का चरित्र उसके पारिवारिक, सामाजिक और आर्थिक स्थितियों से निर्मित होता है । यही बात कृषक पर लागू होती है । उसके परिवार का परिचय कहानी के माध्यम से इस प्रकार मिलता है :

ये मेरे साथ तीन बादशाह और हैं..... यह मेरे भाई की बेवा है - उस भाई की जिसे पाकिस्तान में टांग पकड़कर चीरा गया था । वह मेरे भाई का लड़का है, जो तपैदिक का मरीज हो गया है और वह मेरे भाई की लड़की है जो अब ब्याहने लायक हो गई है ।“ उपर्युक्त अंश से जहाँ हमें उसकी पारिवारिक पृष्ठ भूमि का परिचय मिलता है, वहीं यह भी मालूम होता है कि उसके आक्रोश का स्त्रोत क्या है?

किसान के व्यक्तित्व के कई पहलू हमारे सामने आते हैं । प्रारम्भ में वह संयम, शिष्टाचार एवं शालीनता से शान्त रहता है । परन्तु सात साल व्यतीत हो जाने पर भी उसे जमीन का टुकड़ा नहीं मिलता है, उसका परिवार भूखों मरने लगता है । तो वह शिष्टाचार एवं शालीनता को छोडकर सरकारी तन्त्र से संघर्ष के लिए तैयार हो जाता है । कहानी के निम्नलिखित अंशों के आधार पर आप कृषक के चरित्र की कुछ और विशेषताएँ पहचानिए ।

बोध प्रश्न

6. कहानी के निम्नलिखित अंशों के आधार पर कृषक की चारित्रिक विशेषताएँ बताइये ।
   "हाँ-हाँ ! बेताज बादशाह हँसा, तेरी पुलिस मेरी बादशाही निकालेगी? मैं पुलिस के सामने नंगा हो जाऊँगा और कहूँगा कि निकालो मेरी बादशाही!" यहाँ कृषक के स्वभाव को कौनसा पक्ष व्यक्त हुआ है ।
   (क) क्रोधी (ख) निडरता (ग) निर्लज्जता (घ) विवशता
7. "मुझे जाकर उनसे पूछने दो कि क्या इसीलिए महात्मा गाँधी ने इन्हें आजादी दिलायी थी कि ये आजादी के साथ इस तरह खिलवाड़ करें । उसकी मिट्टी खराब करें, उसके पवित्र नाम पर कलंक लगायें?" यहाँ कृषक के हृदय का कौनसा भाव व्यक्त हुआ है ।

(क) दीनता (ख) आक्रोश (ग) संवेदनहीनता (घ) विवशता

11.4 परिवेश

आपने इससे पूर्व 'पुरस्कार' कहानी का अध्ययन किया था, वह एक ऐतिहासिक कहानी थी । 'परमात्मा का कुत्ता' वर्तमान काल के शासन तन्त्र में व्याप्त भ्रष्टाचार, लालफीताशाही तथा सरकारी कार्यालयों के वातावरण का चित्रण करती है । कहानीकार ने वर्तमान में सरकारी कार्यालयों की वास्तविक स्थिति का चित्रण किया है । कार्यालयों में व्याप्त भ्रष्टाचार, कार्यालय के बाहर लगी भीड़, रिश्वत खोरी, कर्मचारियों की लापरवाही, सामान्य जनता की निष्क्रियता का सुन्दर चित्रण इस कहानी में किया गया है ।

प्रस्तुत कहानी में लेखक ने सरकारी कार्यालय के अन्दर व बाहर के परिवेश, कमिश्नर के कमरे के परिवेश की संरचना युगानुकूल की है । कहानी में परिवेश के अनुकूल ही भाषा का प्रयोग हुआ है । कहानी का प्रमुख पात्र अपने नाम के स्थान पर फाइल का नम्बर बताता है । परिवेश के अनुसार ही लेखक ने आजकल कार्यालयों में बढ़ते अंग्रेजी के प्रयोग को ध्यान में रखकर-अंग्रेजी शब्दों का बहुतायत में प्रयोग किया है । साथ ही उर्दू शब्दों का प्रयोग भी हुआ है ।

इस तरह लेखक ने सरकारी कार्यालय का दृश्य उपस्थित किया है । कार्यालय के बाहर लोगों की अच्छी-खासी भीड़ है । लोग अपनी-अपनी अर्जियाँ टाइप करवाकर बाबुओं को पेश करते हैं । कार्यालय के अन्दर बाबू लोग गप्पे मार रहे हैं, उनकी काम करने में कोई रूचि नहीं है । कमिश्नर साहब को सरकारी कार्य के स्थान पर रीडर डाइजेस्ट' पढ़ने में अधिक रूचि है ।

बोध प्रश्न-

8. इस कहानी में परिवेश चित्रण की दो विशेषताएँ बताइये ।
   (क).....
   (ख).....,.....
9. 'परमात्मा का कुत्ता' कहानी की शैलीगत विशेषताएँ बताओ ।

.....

.....

10. इस कहानी में से भाषा और शैली की निम्नलिखित विशेषताओं वाले अंश उद्धृत कीजिए।

(क) व्यंग्यात्मक शैली (ख) नाटकीय भाषा

(ग) मनोविश्लेषणात्मक भाषा (घ) भावोद्वेग प्रकट करने वाला संवाद

11.5 संरचना शिल्प

संरचना शिल्प के अन्तर्गत हम कहानी की शैली, संवाद और भाषा पर विचार करेंगे । हमने इससे पूर्व 'पुरस्कार' कहानी के संरचनाशिल्प का अध्ययन लिया था । आइए, हम देखें कि इस कहानी की अपनी विशिष्टताएँ क्या हैं ।

11.5.1 शैली

'परमात्मा का कुत्ता' एक समस्या प्रधान कहानी है । प्रस्तुत कहानी में लेखक ने हमारे सामाजिक ढाँचे में शासन तन्त्र की अव्यवस्था को एक समस्या के रूप में उभारा है । इस समस्या से प्रबुद्ध जन भी परिचित हैं, परन्तु किसी में साहस नहीं है कि वे शासन-तन्त्र में फैली इस अव्यवस्था का निराकरण कर सकें । अत: लेखक ने व्यंग्यात्मक शैली अपनाते हुए शासन तन्त्र की दुर्दशा और सामाजिक जड़ता पर सशक्त प्रहार किया है ।

11.5.2 भाषा और संवाद

भाषा की दृष्टि से राकेश जी की कहानियों में सहजता एवं प्रवाहमानता हैं । कहीं-कहीं भाषा अलंकृत भी हो जाती है । मूल रूप से नाटककार होने के कारण भाषा में नाटकीय लहजा भी है |

'मिस्टर यहाँ से उठ नहीं सकेगा ।" वह आदमी बोला, 'मिस्टर यहाँ का बादशाह है ।"

नाटकीयता लाने के लिए लेखक ने 'मिस्टर और 'बादशाह जैसे शब्दों का प्रयोग करके कहानी को कौतूहलवर्धक बना दिया है । पात्रों के भावों और मन:स्थिति के अनुकूल भाषा का प्रयोग कहानी में स्वाभाविकता लाता है ।

'मेरा नाम है बारह सौ छब्बीस बटा सात । मेरे माँ-बाप का दिया हुआ नाम खा लिया कुत्तो ने |"

इन पंक्तियों से पात्र की मन:स्थिति का पूर्ण आंकलन हो जाता है । प्रस्तुत कहानी में लेखक ने परिवेश के अनुकूल भाषा का प्रयोग किया है । अंग्रेजी, उर्दू और तदभव शब्दों की बहुलता इस बात की परिचायक है कि आज सरकारी कार्यालयों में अंग्रेजी भाषा का चलन बढ़ गया

हैं, लेखन ने पात्र के अनुकूल स्थान-स्थान पर गँवारू शब्दों, मुहावरों-लोकोक्तियाँ का भी प्रयोग किया है ।

संवाद कहानी का वह प्रमुख तत्व जो कहानी को आकर्षक, प्रभावशाली, व गतिशील बनाता है । संवाद के माध्यम से ही पात्र की चारित्रिक विशेषताएँ उभर कर आती हैं । प्रस्तुत कहानी में संवाद पात्रों के व्यक्तित्व और उनकी मनोदशा के परिचायक हैं । प्रस्तुत कहानी में कृषक के संवाद अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं क्योंकि उसके संवादों के द्वारा ही उसी मनःस्थिति और वर्तमान शासनतन्त्र के प्रति आक्रोश का भाव स्पष्ट होता है ।

"चूहों की तरह बिटर-बिटर देखने से कुछ नहीं होता । भौंको-भौंको, सबके सब भौंको, अपने आप सालों के कानों के पर्दे फट जायेंगे । भौंको कुत्तों, भौंको" कृषक के उपर्युक्त संवाद में उसका आक्रोश तथा साथ ही निष्क्रिय जनता में चेतना जाग्रत करने की भावना छिपी हुई है।

निम्नलिखित अंश देखिए ।

'तुम भी कुत्ते हो और मैं भी कुत्ता हूँ । फर्क इतना है कि तुम सरकार के कुत्ते हो । हम लोगों की हड्डियाँ चूसते हो और सरकार की तरफ से भौंकते हो । मैं परमात्मा का कुत्ता हूँ।"

उपर्युक्त अंश में व्यंग्यात्मक शैली के साथ-साथ आवेशात्मक और वर्णनात्मक शैली का भी प्रयोग हुआ है । लेखक ने भावात्मक और मनोविश्लेषणात्मक शैली का प्रयोग भी भावानुकूल किया है ।

प्रस्तुत अंश देखिए ।

"मेरा केस मेरे पास नहीं है । साहब, दो साल से सरकार के पास है । मेरे पास अपना शरीर और दो कपड़े हैं। चार दिन बाद ये भी नहीं रहने के, इसलिए इन्हें आज ही उतार देता हूँ ।'

11.6 मूल्यांकन

इस कहानी के विभिन्न पक्षों के विश्लेषण का हम अध्ययन कर चुके हैं । विश्लेषण के पश्चात् कहानी का मूल्यांकन करना आसान हो जाता है । जैसा कि पहले भी स्पष्ट किया जा चुका है कि मूल्यांकन का तात्पर्य कहानी के बारे में कोई निर्णय देना नहीं वरन् लेखक की दृष्टि, कहानी का प्रतिपाद्य और शीर्षक की उपयुक्तता पर विचार करना है ।

'परमात्मा का कुत्ता एक समस्या प्रधान कहानी है । लेखक का उद्देश्य वर्तमान समाज में पीड़ित मानवता का चित्रण कर उसे पराजित करने वाली दानवता तथा शासन तन्त्र की लालफीताशाही और भ्रष्टाचार पर व्यंग्य करना रहा है । कहानीकार ने 'परमात्मा का कुत्ता' एक ऐसा प्रतीक पात्र उपस्थित किया है जो शासन-तन्त्र की जड़ स्थिति को झकझोर डालता है ।

मोहन राकेश ने प्रशासन में व्याप्त निष्क्रियता की समस्या को कहानी का प्रमुख कथ्य बनाया तथा कृषक को 'परमात्मा का कुत्ता' के रूप में प्रस्तुत किया है । वह कमिश्नर कार्यालय के बाहर इसीलिए जोर-जोर से चिल्लाता (भौंकता) है, ताकि सरकारी नियमों, आदेशों और कानून आदि का पालन होता रहे । वह वहाँ उपस्थित अन्य फरियादी लोगों से भी इसी तरह जोर-जोर से भौंकने के लिए कहता है ।

कहानीकार ने कृषक के माध्यम से यह व्यक्त किया है कि लालफीताशाही के इस युग में बिना प्रबल विरोध किये कुछ भी कार्य नहीं हो सकता । सामान्य जनता शासन-तन्त्र की लालफीताशाही को दूर नहीं कर सकती, इसके लिए तो क्रान्तिकारी व्यक्तियों की आवश्यकता है । इसी तथ्य को व्यक्त करने के लिए कहानी का शीर्षक 'परमात्मा का कुत्ता' रखा गया है, जो उपयुक्त है|

11.7 साराश

आपने 'परमात्मा का कुत्ता' के विश्लेषण और मूल्यांकन का ध्यानपूर्वक अध्ययन किया होगा।

परमात्मा का कुत्ता' एक समस्या प्रधान कहानी है । इसमें लेखन ने शासनतन्त्र में व्याप्त भ्रष्टाचार का यथार्थ चित्रण किया है । अपनी समस्या के निवारण के लिए संघर्षरत व्यक्ति की मनोदशा क्या होती है, इस पृष्ठ भूमि में आप 'परमात्मा का कुत्ता' की कथावस्तु का विश्लेषण कर सकते हैं ।

'परमात्मा का कुत्ता' में कृषक प्रमुख पात्र हैं । वह समस्या ग्रस्त है तथा संघर्षरत है । अंत में फल की प्राप्ति करता है । इसी आधार पर आप कृषक की चारित्रिक विशेषताएँ बता सकते हैं ।

'परमात्मा का कुत्ता' वर्तमान परिवेश की कहानी है । जो देश की एक प्रमुख समस्या को प्रस्तुत करती है । इसकी भाषा पात्रानुकूल है तथा वर्तमान परिवेश को प्रस्तुत करती है । कहानी के परिवेश का इस दृष्टि से आप विश्लेषण कर सकते हैं । मोहन राकेश मूलत: नाटककार हैं । इसीलिए उनकी शैली में प्रतीकात्मकता, भावनात्मकता व मनोविश्लेषणात्मकता के साथ-साथ नाटकीय शैली का भी समावेश हुआ है । भाषा में भावनात्मकता है । आप शैली और भाषा के द्वारा कहानी की इन विशेषताओं को पहचान सकते हैं । 'परमात्मा का कुत्ता' के द्वारा मोहन राकेश यह स्पष्ट करना चाहते हैं कि शासन तन्त्र में व्याप्त भ्रष्टाचार की जड़ें इतनी गहरी पैठ चुकी हैं कि सामान्य व्यक्ति उन्हें उखाड़ फेंकने में अक्षम है । अत: इसके लिए क्रान्तिकारी व्यक्तित्व की आवश्यकता है । कहानी के इस प्रतिपाद्य का आप विश्लेषण कर सकते हैं ।

11.8 संदर्भ ग्रन्थ

मदान, डॉ. इंद्रनाथ : हिंन्दी कहानी : पहचान और परख, लिपि प्रकाश, नई दिल्ली

11.9 बोध प्रश्नों / अभ्यासों के उत्तर

1. (क) कम्पाउण्ड में लोग इधर-उधर बैठकर अपनी बारी का इंतजार कर रहे थे ।
   (ख) अर्जीनवीस धड़ाधड़ अर्जियाँ टाइप कर रहा था ।
   (ग) बाबू लोग एक दूसरे से हँसी मजाक कर रहे थे ।
2. किसी के द्वारा न चुने जाने पर भी. स्वयं को सर्वोच्च मानने वाला वह व्यक्ति जो किसी का आदेश नहीं मानता है।
3. (क) विद्रोही
   (ख) क्रोधी
4. वह चाहता है कि अब कोई उस पर हुक्म नहीं चलाए, बल्कि वह सबको आदेश देकर अपना काम पूर्ण करवाए।
5. वह काम न होने के कारण बहुत चिड़चिड़ा और क्रोधी स्वभाव का हो गया है ।
6. (ख) निडरता
7. (ख) आक्रोश
8. (क) कहानीकार ने वर्तमान में सरकारी कार्यालयों में व्याप्त भ्रष्टाचार का यथार्थ चित्रण किया है ।
   (ख) परिवेश के अनुकूल ही भाषा का वर्णन किया है ।
9. लेखक ने व्यंग्यात्मक शैली के माध्यम से समाज की जड़ता और प्रशासन तन्त्र में व्याप्त भ्रष्टाचार पर करारा व्यंग्य किया है ।
10. (क) तुम भी कुत्ते ..... परमात्मा का कुत्ता हूँ ।
    (ख) मिस्टर यहाँ से उठ नहीं सकेगा ..... बादशाह है ।
    (ग) मेरा नाम है बारह सौ छब्बीस बटा ..... खा लिया है कुत्तों ने ।
    (घ) चूहों की तरह ..... भौंको कुत्तों भौंको ।

इकाई 12

'चीफ की दावत (भीष्म साहनी)

इकाई की रूपरेखा

12.0 उद्देश्य

12.1 प्रस्तावना

12.2 व्याख्या खण्ड (कहानी के मूल पाठ से)

12.3 कथावस्तु

12.3.1 कथा का विकास

12.3.2 बोध प्रश्न

12.4 चरित्र चित्रण

12.4.1 शामनाथ

12.4.2 माँ

12.4.3 बोध प्रश्न

12.5 परिवेश

12.6 संरचना-शिल्प

12.6.1 भाषा शैली

12.6.2 संवाद कौशल

12.7 मूल्यांकन

12.8 उद्देश्य

12.9 शीर्षक की उपयुक्तता

12.10 सारांश

12.11 संदर्भ ग्रन्थ

12.12 अभ्यास प्रश्न

12.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई में आप भीष्म साहनी की 'चीफ की दावत' का विवेचन विश्लेषण पढ़ेंगे । इस कहानी का उद्देश्य विद्यार्थियों को कहानी के गद्यांशों की व्याख्या, कहानी के तत्वों के आधार पर उसका विवेचन, विश्लेषण तथा शीर्षक. की उपयुक्तता का निर्णय करने की अभिवृद्धि प्रदान करने के साथ-साथ निम्न बिन्दुओं की जानकारी देना भी है ।

1. भीष्म साहनी उन कहानीकारों में से है जिन्होंने आजादी के बाद की परिस्थितियों में किसी आंदोलन या वाद से न बंधकर समकालीन परिदृश्य में निम्न और मध्यवर्ग के अन्तर्द्वेद्वों और दुविधाओं को ईमानदारी से अभिव्यक्ति दी ।
2. उनकी कहानियों में बदलते मूल्य भी हैं, पुराने मूल्यों के प्रति करूणा भी और बहुत ही सहज ढंग से अंहग्रस्त मनुष्य के प्रति व्यंग्य भी ।
3. उनकी कहानियों की भाषा लोकधर्मी और सादगी से युक्त है - इसलिए वे अपने समय से आगे जाकर सदा याद भी रहती हैं ।
4. भीष्म साहनी मुख्य रूप से आम आदमी की पीड़ा को अभिव्यक्ति देते हैं पर यह पीड़ा कई आयामों में दिखती है और एक नयी समस्या की ओर संकेत करती है, इसलिए यह विशिष्ट भी बन जाती है ।

12.1 प्रस्तावना

'चीफ की दावत' कहानी आजादी के बाद होने वाले सामाजिक परिवर्तन को और व्यक्ति की बदलती सोच को अभिव्यक्त करती है । भारतीय संस्कृति में बुजुर्ग सदा पूज्य होते थे किन्तु भौतिकता और महत्वाकांक्षाओं बढ़ते प्रसार के साथ माता-पिता उपेक्षित और फालतू होते गए । आत्मकेन्द्रित संतान सिर्फ स्वार्थ की पूर्ति के लिए उनका उपयोग करने लगी । लेखक ने इस कहानी के माध्यम से संवेदनहीनता और स्वार्थ-प्रेरित मानसिकता को बहुत बारीकी और कलात्मक ढंग से प्रस्तुत किया है । छोटी-छोटी घटनाएं पाठक पर गहरा असर छोड़ती है और मन के भीतर चलने वाली उठापटक को स्पष्ट कर देती हैं । उनके प्राय: सभी पात्र बेहद सजीव और हमारे आसपास के परिचित पात्र प्रतीत होते हैं ।

भीष्म साहनी नये परिवर्तनों को स्वीकारते हैं । किन्तु पुराने मूल्यों का त्याग नहीं करते । वे अपने आसपास घटने वाली घटनाओं को बहुत आत्मीयता से देखते हैं और बहुत ही सरल ढंग से पाठकों के समक्ष रखते हैं लेकिन उनकी संवेदनाओं का प्रभाव बहुत गहरा होता है । उनकी कहानी पाठक की चेतना पर सीधा प्रभाव डालती है और पाठक स्वयं को उस समस्या का हिस्सा मानकर अपनी चेतना को टटोलने लगता है । चीफ की दावत भी मध्यवर्गीय जीवन की ऐसी ही मानसिकता को सामने रखती है जिसमें पाठक स्वयं का आईना देखता है ।

12.2 व्याख्या खण्ड (कहानी के मूल पाठ से)

व्याख्या खंड- 1 चीफ की दावत

'आखिर पाँच बजते बजते तैयारी मुकम्मल होने लगी । कुर्सियाँ, मेज, तिपाइयाँ, नैपकिन, फूल सब बरामदे में पहुँच गए । ड्रिंक का इन्तजाम बैठक में कर दिया गया । अब घर का फालतू सामान आलमारियों के पीछे और पलंगों के नीचे छिपाया जाने लगा । तभी शामनाथ के सामने सहसा एक अड़चन खड़ी हो गई माँ का क्या होगा?'

संदर्भ-

उपर्युक्त अवतरण भीष्म साहनी द्वारा रचित कहानी 'चीफ की दावत' से लिया गया है । इसमें शामनाथ के घर में दावत की तैयारियों का ब्यौरा है और बूढ़ी माँ की चिन्ता है ।

व्याख्या-

मध्यवर्गीय परिवार में छोटे घर होते हैं । आधुनिकता की माँग है कि पश्चिमी सभ्यता के अनुसार तैयारी हो अत: पूरा घर ही उलट-पुलट हो जाता है । भोजन से पहले 'ड्रिंक' अर्थात् ' शराब' का सेवन, स्त्रियों के लिए कोल्डड्रिंक और कुछ नाश्ते आदि की आरम्भिक औपचारिकता बैठक में कर ली गई । भोजन के लिए बरामदे में मेज, कुर्सियाँ, तिपाइयाँ, फूल आदि का प्रबन्ध किया गया । घर में बहुत सा सामान ऐसा होता है जो उपयोगी तो होता है मगर ऐसे अवसरों के लिए फालतू हो जाता है अत: ऐसे सामान को अस्थायी तौर पर आलमारियों के पीछे या पलंगों के नीचे डाल दिया जाता है । इस अवतरण में अन्तिम पंक्ति का विशेष अभिप्राय है । फालतू सामान के साथ माँ की चिन्ता अर्थात् माँ को भी फालतू सामान समझ लिया गया है किन्तु मुश्किल यह है कि माँ को आलमारी के पीछे या पलंग के नीचे नहीं डाला जा सकता, न ही उन्हें मेहमानों के सामने पेश किया जा सकता है । क्योंकि माँ अनपढ़ है और गाँव की रहने वाली है । बेटा और बहू आधुनिक होने के दंभ में देशी विदेशी मेहमानों के सामने माँ को नहीं ला सकते । ताकि भ्रम बना रहे ।

विशेष-

लेखक ने मध्यवर्गीय, समाज की नौजवान पीढ़ी की महत्वाकांक्षा, आडम्बर और पश्चिमी सभ्यता की नकल को सहज खरासे सामने रखा है ।

कठिन शब्द

मुकम्मल = पूर्ण, ड्रिंक = शराब, अड़चन = बाधा

बोध प्रश्न

1. घर में किस बात की तैयारी की जा रही थी?
2. घर का फर्नीचर बरामदे में क्यों पहुँच गया?
3. घर का फालतू सामान अलमारियों के पीछे और पलंगों के नीचे क्यों छिपाया जाने लगा?
4. शामनाथ के सामने कौन सी अड़चन आ गई थी?
5. शामनाथ को माँ की चिन्ता क्यों हुई?

व्याख्या खण्ड - 2

'साहब तो ड्रिंक को दूसरे दौर में ही और कहानियाँ कहने लग गए थे । दफ्तर में जितना रौब रखते थे, यहाँ पर उतने ही दोस्त-परवर हो रहे थे और उनकी स्त्री, काला गाउन पहने, गले में सफेद मोतियों का हार, सेंट और पाउडर की महक से ओत-प्रोत, कमरे में बैठी सभी देसी स्त्रियों की आराधना का केन्द्र बनी हुई थीं । बात-बात पर हँसती, बात-बात पर सिर हिलाती और शामनाथ की स्त्री से तो ऐसे बातें कर रही थी, जैसे उनकी पुरानी सहेली हो ।'

संदर्भ-

उपर्युक्त गद्यांश भीष्म साहनी द्वारा लिखित कहानी 'चीफ की दावत' से लिया गया है । इसमें शामनाथ के घर पर होने वाली दावत में साहब और उनकी पत्नी के व्यवहार और उनकी प्रसन्नता के विषय में बताया गया है ।

व्याख्या-

मध्यवर्गीय समाज के छोटे अफसर अपने बड़े अधिकारी अफसरों को प्रसन्न करने के लिये ऐसी दावतों का आयोजन करते हैं । आधुनिकता की इस दौड़ में स्त्रियाँ भी अपने पतियों के साथ शामिल होती हैं । प्राय: भोजन से पहले ' शराब' क दोरा चलते हैं । यही समय होता है जब बड़े अफसर भी, दफ्तरी औपचारिकता छोडकर सबसे हिल मिल कर बातें करते हैं । शराब का नशा चढ़ते ही गंभीरता के मुखौटे उतर जाते हैं । शामनाथ की पार्टी में भी अमरीकन साहब बहुत जल्दी हँसी मजाक के मूड में आ गए थे । दफ्तर में वे एक गम्भीर अनुशासन रखने वाले अधिकारी थे किन्तु यहाँ मित्ररूप में दिख रहे थे । उनकी पत्नी विशेष औपचारिक काला गाउन पहने हुए थीं - क्योंकि अमेरिका में काले रग की विशेष पोशाकें पार्टियों में पहनी जाती हैं, जो गोरे रंग की स्त्रियों पर अच्छी लगती हैं । साहब की पत्नी ने गले में सफेद मोतियों का हार पहन रखा था और वे सेंट और पावडर की खुशबू में डूबी हुई थीं, अन्य सब स्त्रियाँ उनका विशेष ध्यान रखे हुई थीं, क्योंकि सभी उन्हें खुश करना चाहती थीं । वह बात-बात पर हँस कर सिर हिला रही थी । इस प्रकार वह अपनी खुशी जाहिर कर रही थी । शामनाथ की स्त्री से वह सहेली की तरह बात कर रही थी । शामनाथ के घर की सजावट और पार्टी की अन्य तैयारियाँ उसे अच्छी लगी थीं ।

विशेष-

लेखक ने आजादी के बाद मध्यवर्गीय समाज और नौकरशाही में इस प्रकार की दावतों का सजीव चित्रण किया है । स्त्रियाँ भी इन दावतों का हिस्सा होती हैं ।

साहब की स्त्री की वेशभूषा का वर्णन पश्चिमी सभ्यता के अनुसार किया गया है । भारतीयों पर पश्चिमी सभ्यता के प्रभाव का संकेत भी यहाँ स्पष्ट है ।

कठिन शब्द -

दोस्त परवर = मित्रता निभाने वाले, ओत-प्रोत = भरी हुई, आराधना = पूजा, केन्द्र = धुरी

12.3 कथावस्तु

'चीफ की दावत' आजादी के बाद के मध्यवर्गीय समाज को एक परिवार का चित्र खींचती है जिसमें माता और महत्वाकांक्षी और प्रदर्शनप्रिय स्वार्थी पुत्र के रिश्तों का मार्मिकता से उकेरा गया है ।

'चीफ की दावत' अपनी सरल संरचना में बेहद लोकप्रिय कहानी है और अपने प्रभाव में सदा नयी और प्रासंगिक प्रतीत होती है । भीष्म साहनी ने आजाद भारत में भी पश्चिमी संस्कृति से आक्रान्त मगर महत्वाकांक्षी दम्पत्ति की मानसिकता को व्यक्त किया है । शामनाथ अपने अंग्रेज चीफ को घर परदावत के लिए आमन्त्रित करता है? आरम्भ में दम्पत्ति की व्यस्तता,

व्यग्रता को लेखक ने थोड़े से शब्दों में बड़ी कुशलता से सामने रखा है। घर की सफाई, सामान और फर्नीचर की सूची और हर चीज को बहुत बारीकी से देखा जाने लगा । तभी शामनाथ को लगा कि माँ का क्या होगा? यह कठिनाई पाठक को चौंकाती है और यहीं से एक आशंका पाठक को व्याकुल करने लगती हैं ।

माँ को मेहमानों के सामने नहीं ला सकते । माँ कमरे में सो नहीं सकती - उनके खर्राटों से मेहमान परेशान होंगे - उन्हें पड़ौस में नहीं भेज सकता - नहीं तो उनकी बुढ़िया सहेली का आना जाना बढ़ जायेगा - गरज यह कि माँ को कहाँ छिपाया जाए - जिससे वह कुरूप जर्जर शरीर कहीं नजर न आये - उसकी कोई हरकत न हो। वह उस फालतू सामान की तरह भी नहीं है जिसे पलंग के नीचे या आलमारी के पीछे छिपाया जा सके - माँ एक सजावट की वस्तु भी नहीं थी - यह सब वर्णन करूणा, आक्रोश और विद्रूपता के साथ व्यंग्य का भी तीव्र भाव जगाता है ।

12.3.1 कथा का विकास

माँ की दुविधा और चिन्ता यह है कि वह बेटे के हुक्म को नहीं टाल सकती, चाहे उसे स्वयं कितनी ही परेशानी क्यों न उठानी पड़े ।

लेखक ने ड्रिंक पाटी का बड़ा सजीव चित्रण किया है विहस्की से लेकर कमरे की सजावट और हँसी खिलखिलाहटों के दौर के बाद रात को साढ़े दस बजे माँ का थक कर कुर्सी पर बैठे सा जाना, खर्राटे लेना सिर का लुढ़कना आदि सारी क्रियाएं वही होती है, जिनसे शामनाथ बचना चाहते थे । जहाँ विदेशी अफसर माँ का आदर करता है, वही देशी अफसरों की स्त्रियाँ उस पर हँसती है । शामनाथ माँ को गाँव की रहने वाली बताता है तो साहब खुश होकर गाँव के गीत और नाच की फरमाइश करता है । रात का बरम, माँ की थकान और घबराहट, विदेशी अफसर और मेहमान, बेटे का डर - ऐसे में माँ का लजाते शब्दों में लोकगीत गाना - जहाँ वातावरण को हल्का और आनन्द दायी बना गया - वहाँ माँ की स्थिति ने उस बेहद करूणाजनक भी बना दिया है । शामनाथ ने माँ के लोकगीत और लोक कला को भी भुना लिया मगर माँ के दिल का दर्द अपनी बेबसी और अथाह पीड़ा से कराह उठा और वह बेटे के लिए दुआ माँगती हुई भी छलछल आँसू बहाने लगी । कथा का समापन -

शामनाथ खुश था, मगर माँ के लिए वह सारा वातावरण दुर्वह था । वह हरिद्वार जाने की बात करती है तो बेटा फुलकारी बनवाना चाहता है, अपनी तरक्की के लिए और बेटे की खुशी के लिए वह बूढी जर्जर, उपेक्षित माँ अपनी कमजोर नज़र से भी फुलकारी बनाने के लिए तैयार हो जाती है माँ हर हाल में अपने बेटे की खैर ही माँगती है और कुर्बानी के लिये तैयार रहती है ।

12.3.2 बोध प्रश्न

नीचे दिये गए प्रश्नों के उत्तर रिक्त स्थान में लिखिए और अपने उत्तरों को इकाई के अंत में दिये उत्तरों से मिलाइए:-

(1) शामनाथ और उनकी धर्मपत्नी चीफ की दावत की तैयारी कैसे कर रहे थे?

.....

.....

.....

.....

(2) शामनाथ के सामने अचानक कौनसी अड़चन आ गई?

.....

.....

.....

.....

(3) शामनाथ ने माँ को क्या निर्देश दिए: -

.....

.....

.....

.....

(4) साहब ने माँ से क्या क्या कहा?

.....

.....

.....

.....

(5) शामनाथ के सामने अचानक कौनसी अड़चन आ गई?

.....

.....

.....

.....

12.4 चरित्र-चित्रण

भीष्म साहनी की कहानी 'चीफ की दावत' मुख्यत: मध्यवर्गीय चरित्रों की मानसिकता का सूक्ष्म विश्लेषण करती हैं । कहीं अंह कभी करूणा, कहीं संवेदनहीनता, कहीं उदारता, कहीं व्यंग्य के स्वर पूरी कहानी में बिखरे हुए हैं ।

इस कहानी के पात्र इतने आम और परिचित हैं कि उन्हें विशिष्ट या आदर्शवादी कहना बेमानी लगता है ये सभी पात्र अपने वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं । लेखक ने मध्यवर्ग में पनपने

वाली प्रदर्शन प्रियता, भीरूता और दम तथा संवेदनहीनता को बारीकी से दर्शाया है । स्वतन्त्रता के पश्चात् आये मध्यवर्गीय मानसिकता में परिवर्तनों और ऊपरी आवरणों की पोल जगह जगह खुलती दिखाई स्थिति वहाँ स्पष्ट है। ये पात्र आधुनिकता का दम भरने वाले परन्तु नैतिकता से हीन हैं ।

शामनाथ इस कहानी का नायक है और दूसरी महत्वपूर्ण पात्र शामनाथ की माँ है । कहानी का उद्देश्य इन दो पात्रों के रिश्ते और सोच में निहित हैं । इनके अतिरिक्त शामनाथ की पत्नी और अमेरिकन साहब के चरित्र भी कथा के विस्तार और प्रभाव में अलग महत्त्व रखते हैं । इने चरित्र- विश्लेषण से कहानी स्पष्ट हो जाती है ।

12.4.1 शामनाथ

शामनाथ अपने घर पर शाम को होने वाली चीफ की दावत के प्रबन्धों में बेहद व्यस्त है । शामनाथ की चिन्ता सिगरेट पर सिगरेट फूकने से व्यस्त हो रही है । शामनाथ हर चीज में पूर्णता चाहते हैं । संचालन उनके हाथ में था। खूंटियॉ कमरों में कहां लगायी जाय, श्रीमती कौनसी साडी पहनें, मेज किस साइज की हो..ऐसे में माँ'अगर साहब के सामने आ गयी तो क्या होगा।

शामनाथ माँ को उसकी सहेली के घर भी नहीं भेजना चाहता, क्योंकि उसे बुढिया का उनके घर आना जाना अच्छा नहीं लगता । शामनाथ को बूढ़ी जर्जर, अनपढ़, ग्रामीण परिवेश की' माँ फालतू सामान की तरह लगती है किन्तु उसे वह पलंग के नीचे या आलमारी के पीछे नहीं छिपा सकता । शामनाथ आधुनिक होने का दिखावा करता है किन्तु विवेक युक्त आधुनिकता का अर्थ नहीं समझता । वह माँ को निर्देश देता है कि तुम सोना मत, खर्राटे मत भरना-मेहमानों के सामने मत आना फिर भी ऐहतियात के तौर पूर सफेद कपड़े पहनो, चूड़ीयाँ-वुड़ीयाँ पहन लो। लेकिन वह माँ के किए त्याग को याद भी नहीं करना चाहता।

संयोग से शामनाथ की माँ का सामना बॉस से हो जाता है तो शामनाथ शर्मिन्दा हो उठता है वह मन ही मन सोचता है माँ को धक्के देकर कोठरी मैं धकेल दें पर जब साहब माँ से आत्मीयता से बात करता है और खुश हो जाता है ते शामनाथ माँ को'बाँहों में बांधकर अपनी खुशी जाहिर करता है । लेकिन माँ की हरिद्वार जाने की बात सुनकर वह खीझ उठता है -

'तुम चली जाओगी,तो फुलकारी कौन बनायेगा' साहब से तुम्हारे. सामने ही फुलकारी देने का इकरार किया है1

शामनाथ को माँ की जर्जर अवस्था, धुंधली आँखों की रोशनी से कोई वास्ता नहीं है । वह हर प्रकार से साहब को खुश करने के लिए, अपनी तरक्की के लिए माँ को घेरना चाहता है, भावनात्मक रूप से उसका उपयोग करना चाहता है।

शामनाथ की द्वद्वात्मक मनःस्थिति और उसके चरित्र के अन्तर्विरोधको यह कहानी बहुत सशक्त ढंग से प्रस्तुत करती है। यह स्थिति मध्यवर्ग को पहचान बन गई है। भीष्म साहनी को यह पात्र वस्तुस्थिति से संघर्ष भी करता है, कहीं दुविधाग्रस्त भी होता है तो कहीं विडम्बना को चित्रित भी करता है। चीफ की दावत में शामनाथ का चरित्र पारदर्शी मनःस्थितियों का चित्र प्रस्तुत करता है।

शामनाथ का अपनी माँ से रिश्ता एक दुनियाची रिश्ता है। लोग क्या कहेंगे-बेटै ने माँ को नहीं रखा। माँ के अतीत की कुरबानियों के प्रति काई कृतज्ञता भाव उसमें नहीं हे। माँ को अपने पास रखकर भी वह अपने ही खाते में 'बड़प्पन' डालना चाहता है। माँ कुरूप और साधारण न दिखे-इसकी चिन्ता उसे है किन्तु उसके लिये माँ को कुछ देना गवारा नहीं है।

शामनाथ पार्टी से पहले जहाँ माँ को लगातार हिदायतें देता है - मसलन - जल्दी खाना खा लेना, जल्दी सो मत जाना - तुम्हारे खर्राटों की आवाज दूर तक जाती है । टांगे उपर चखकर नहीं बैठते, नंगे पाँव नहीं ' घूमना, खडाऊं मत पहनना आदि, वही पार्टी के बाद उसका दूसरा ही रूप सामने आता है - तुम जानबूझकर हरिद्वार जा बैठना चाहती हो, ताकि दुनिया कहे कि बेटा भी को अपने पास नहीं रख सकता । तुम चली जाओगी तो_ फुलकारी कौन बनायेगा - इस प्रकार माँ की ममता ' को बाँधकर वह उसे अपने उपयोग का माध्यम बना डालता है और प्रसन्न होकर लड़खड़ाते हुए अपने कमरे की ओर चला-जाता है।

भीष्म साहनी ने शामनाथ चरित्र किसी भी प्रकार के मनोविश्लेषणवादी सिद्धान्तों से नहीं बुना है न ही किन्ही जटिल घटनाक्रमों में उलझाया है । सामान्य तौर पर एक दिन के विशेष प्रसंगों के आधार पर उसका पूरा व्यक्तित्व, सोच, इच्छाएं, रुचियाँ - अन्त: संबंध - सभी व्यक्तिवादी रूप में अभिव्यक्त हो गये हैं, किन्तु साथ ही वह एक। व्यक्ति पूरे मध्यवर्ग की मानसिकता और महत्वाकांक्षाओं का भी प्रतिनिधित्व कर देता है । भीष्म साहनी की यही खूबी है कि बिना लेखकीय आरोपण के पात्र स्वयं जीवंत प्रतीत होते हैं ।

2.4.2. माँ

चीफ की दावत का दूसरा महत्त्वपूर्ण पात्र है माँ - जो मातृत्व की शाश्वत गरिमा के साथ एक पूरी पीढ़ी और एक पूरे युग को साकार करती है।

सामान्य तोर पर माँ एक पुरानी पीढ़ी की दयनीय और पराश्रित वृद्धा है । माँ के बारे में बेटे बहू की चिन्ता उनके स्वास्थ्य आदि के लिए नहीं है बल्कि चीफ के सामने उनके पड़ने न पड़ने की समस्या से है । माँ देर रात तक जागती रहें - खर्राटे न ले अर्थात् कोई भी विकृत स्थिति न उत्पन्न करें । सार रूप में माँ फालतू सामान की तरह है । माँ बेटे बहू की चिन्ता से परिचित है । वह अपनी कोठरी में चौकी पर बैठी, दुपटे में मुँह सिर लपेटे, माला जप रही

थी । यहाँ माँ स्वयं को बेटे बहू के साथ-साथ स्वयं से भी छुपा रही है । खायेगी - पर उसके भूखे रहने से बेटे बहू को कोई फरक नहीं पड़ता।

बेटे की बातें वह अवाक होकर सुनती है । खर्राटे लेने की आदत से स्वयं को लज्जित अनुभव करती है । कपड़ों की बात पर वह कहती है -

जो है, वही पहनूँगी बेटा। - छोटे से वाक्य में माँ अपने संयम का परिचय दे देती है।
सारी सतर्कता के बाद भी शामनाथ अंग्रेजी में अपनी पत्नी से कहते हैं - यह माँ का झमेला ही रहेगा। बेटे द्वारा जेवर पहनने की बात पर माँ सहज ही कह जाती है - चूडियाँ कहाँ से लाऊं बेटा, तुम तो जानते हो सब जेवर तुम्हारी पढ़ाई में बिक गए।

इस एक वाक्य से माँ का अतीत, संघर्ष और बेटे के लिए उसका त्याग झाँकता सा प्रतीत होता है । लेकिन वह इतनी सहमी है कि उसकी सहनशीलता फौरन उससे कहलाती है -

मेरी जीफ जल जाये बेटा, तुमसे जेवर लूँगी? मेरे मुँह से यूँ ही निकल गया । जो होते तो लाख बार पहनती।
बेटे के हुक्म से बँधी वह देर रात कुर्सी पर से टाँगे लटकाये बैठी रही।

लेखक ने बहुत थोड़े शब्दों में और थोड़े से वाक्यों के द्वारा माँ के अतीत और वर्तमान को स्पष्ट कर दिया है।

कहानी में नाटकीय मोड़ तक आता है जब समस्त निर्देशों के बावजूद माँ को नींद आ जाती है, सिर से पन्ना खिसक जाता है, आधे झड़े बाल अस्त व्यस्त हो जाते हैं, सिर नींद में दायें बायें झूल रहा होता है और माँ के खर्राटे गूँज रहे होते हैं यह दृश्य देखकर देसी अफसरों की कुछ स्त्रियाँ हंस देती हैं । मगर चीफ सहानुभूति से कहता है - पुअर डीयर लेखक ने यहाँ उन लोगों की सोच पर व्यंग्य किया है । जो मानवीय संवेदना को छोड़ दिखावे में विश्वास करते हैं । यह सारा वर्ग शामनाथ जैसे लोगों का ही वर्ग है।

माँ की घबराहट, दुविधा उनके व्यवहार के अटपटेपन में व्यक्ति हो गई है। कभी वह ढंग से नमस्ते नहीं कर पाती है तो कभी बांया हाथ साहब से मिलता है । जो वातावरण वहाँ देर रात बना है, उसमें माँ से नाचगाना की फरमाइश ही बेतुकी है मगर वे सब लोग तो शराब के नशे में मस्त थे । शामनाथ के डर से माँ ने उस हालत में गाना भी गाया बेटै ने उनसे फुलकारी बनाने का दबाव भी बनाया ।

एकान्त होते ही कोठरी में माँ की सारी व्यथा आसूँओ में छलक उठी। माँ की बेबसी, ग्लानि और स्वाभिमान सब स्पष्ट हो गये हैं । माँ सहजही सब बातों को नहीं मानती। वह अपना तर्क भी रखती हैं।

'बेटा, तुम मुझे हरिद्वार भेज दो अथवा

मेरी आँखें अब नहीं है बेटा, जो फुलकारी बना सकूँ। तुम कहीं और से बनवा लो । बनी-बनायी ले लो ।

लेकिन जब वह बेटे की तरक्की की बात सुनती है त उनका झुर्रियों भरा मुँह खिलने लगा, आँखों में हल्की-हल्की चमक आने लगी। माँ का बड़प्पन और उदारता इन शब्दों में प्रकट होती है।

तो मैं बना दूंगी, बेटा, जैसे बन पड़ेगा, बना दूँगी । माँ दिल ही दिल में फिर बेटे के उज्जवल भविष्य की कामनाएं करने लगी।

शामनाथ की पत्नी का चरित्र पूरक और आत्मकेन्द्रित रूप से है किन्तु 'चीफ' बहुत थोड़े समय में भी अपनी उदारता की छाप छोड़ देता है।

1.2.4.3 बोध प्रश्न

(1) शामनाथ के चरित्र की प्रमुख विशेषता है : -

1. परिश्रमी
2. सुरूचि सम्पन्न
3. मातृ भक्ति
4. महत्वाकांक्षा

(2) शामनाथ के चरित्रिक गुणों का स्पष्ट कीजिए?

.....

.....

.....

.....

(3) नीचे दी गई पंक्तियों से शामनाथ की किस विशेषता का पता लगता है?

क. माँ का क्या होगा?

ख. मैं नहीं चाहता कि उस बुढ़िया का आना-जाना यहाँ फिर से शुरू हो।

ग. यह माँ का झमेला ही रहेगा।

घ. यह कौन सा राग छेड़ दिया माँ।

ड. तुम मुझे बदनाम करना चाहती हो माँ?

च. तुम चली जाओगी तो फुलवारी कौन बनायेगा?

छ. तरक्की यूँ ही हो जायेगी? सहाब को खुश रखूँगा, तो कुछ करेगा ।

(4) माँ के चरित्र की प्रमुख विशेषताओं पर प्रकाश डालिए?

.....

.....

.....

.....

12.5 परिवेश

'चीफ की दावत' स्वातंत्रयोत्तर भारत के मध्यवर्गीय समाज की मानसिकता और महत्वाकांक्षा को व्यक्त करने वाली कहानी है। अपने विदेशी अफसर को घर पर बुलाना उन्हें दावत देना और तरक्की प्राप्त करने का रास्ता बनाना आम रिवाज बन गया है। लेखक ने यहाँ एक परिवेश तैयार किया है' शामनाथ के घर चीफ की दावत है और वह अपनी पत्नी के साथ-तैयारियों में व्यस्त है - आखिर पाँच बजते-बजते तैयारी मुकम्मल होने लगी । कुर्सियाँ, मेज, तिपाइयाँ, नैपकिन, फूल सब बरामदे में पहुँच गए । ड्रिंक का इन्तजाम बैठक में कर दिया गया। अब घर का फालतू सामान आलमारियों के पीछे और पलंगों के नीचे छिपाया जाने लगा।'

यह सारा वर्णन परिवार की दिनचर्या से अलग हटकर दावत की तैयारियों का संकेत देता है। भीष्म साहनी परिवेश की सच्चाइयों से भली भाँति परिचित हो। इसीलिए उनकी कहानी आत्मीय और परिचित जान पड़ती है। परिवेश- जो अनुभूतियों को व्यक्त करता है दूसरा जो बाहरी वस्तुओं से निर्मित किया जाता है। इस निर्माण में यथार्थ का जितना अधिक ध्यान रखा जाता है, परिवेश उतना ही स्वाभाविक बन पड़ता है।'चीफ की दावत' में भीष्म साहनी माँ के प्रति आत्मीयता रखने के कारण वे छोटी चीजों से परिवेश गढ़ते हैं जैसे एक कामयाब पार्टी वह है, जिसमें ड्रिंक कामयाबी से चल जायें। शामनाथ की पार्टी सफलता के शखर चूमने लगी । वार्तालाप उसी में बह रहा था, जिस रौ में गिलास भरे जा रहे थे। कहीं कोई रूकावट न थी, कोई अड़चन न थी । साहब के हिजाइन पसंद आई थी। मेमसाहब के पर्दे पसन्द आये थे, सोफाकवर का डिजाइन 'पसन्द आया था, कमरे की सजावट पसंद आई थी, इससे बढ़कर क्या चाहिए।

भीष्म साहनी ने ड्रिक पार्टी में ही साहब और मेमसाहब के चरित्रों को एक अलग पहचान दे दी है। लेखक ने कहा है 'साहब तो ड्रिंक के दूसरे दौर में ही चुटकुले और कहानियाँ कहने लग गए थे।' साहब के व्यक्तित्व की यह झलक ही आगे जाकर शामनाथ की माँ का संकट दूर करने में सहायक बनती है । पार्टी का सदाबहार परिवेश बहुत कम शब्दों में लेखक ने साकार किया है। ऐसी पार्टीज में स्त्रियों का साजश्रृगांर, परिधान और वार्ता का तरीका निश्चित रूप

से एक विशेष प्रकार के परिवेश को सजीव बना देता है । ' चीफ की दावत' कहानी का यह टुकड़ा दावत के पारिवेशिक आनन्द को सजीव बना देता है। दफ्तर में जितना रौब रखते थे, यहाँ पर उतने ही दोस्त - परवर हो रहे थे, और उनकी स्त्री काला गाउन पहने,गले में सफेद मोतियों का' हार सेंट और पाउडर की महक से ओत प्रोत कमरे में बैठी - 13, सभी देसी स्त्रियों की आराधना का केन्द्र बनी हुई थी।

भीष्म साहनी ने शहर के मध्यवर्ग को अपनी रचनाओं का आधार बनाया है । उनके साहित्य में आद्योपान्त जीवन का समदर्शी दृष्टिकोण मिलता है । युग सत्य का बोध, काल विशेष के प्रत्येक व्यक्ति को होता है परन्तु सभी के पास वह विशेष दृष्टि नहीं होती जो लेखक के पास होती है । लेखक की यही भीतर से बाहर की ओर जाने की मन स्थिति ही एक सजीव परिवेश बनाती हैं भीष्म साहनी मध्यवर्गीय जीवन की उथल पुथल और सपनों को बहुत अच्छी तरह पहचानते हैं। इसीलिए वे उचित पृष्ठभूमि की रचना करते हैं। उनकी कथा जगत पंजाबी परिवेश को साकार करता है। उनकी कथा जगत पंजाबी परिवेश को साकार करता है।

12.6 संरचना-शिल्प

कहानी की संवेदना को उसकी भाषा, शैली, संवाद - योजना आदि के द्वारा सम्प्रेषित किया जाता है। भीष्म साहनी की कहानी कला सादगी में भी अद्भूत प्रौढ़ता व परिपक्वता का परिचय देती है । भीष्म साहनी अपनी अपनी सहजता के लिए चर्चित रहे है। इसी सहजता के कारण उनकी कहानियाँ यथार्थ का गहराई से चित्रण करती है और पाठक के मन को छू जाती है । उनकी कहानियों में अतिरिजकता कहीं भी नहीं है । वे पात्रों के गुण दोषों को पात्रों कथन और हावभाव से व्यक्त कर देते हैं । स्वयं कुछ नहीं हैं।। उनकी कथनों में से ही व्यंग्य करूणा आदि स्पष्ट हो जाते हैं। विसंगतियों के प्रति विद्रोह व आक्रोश ध्वसांत्मक न होकर यथार्थ प्रकट होता है।

12.6.1 भाषा शैली

भीष्म साहनी अपने समकालीन लेखकों में भाष्म की सादगी मगर प्रभाव पूर्ण सम्प्रेषण के लिये सर्वाधिक जाने जाते है। उनकी भाम प्रेमचन्द की हिन्दुस्तानी से मिलती जुलती बोलचाल की हिन्दी ही है। भीष्म साहनी की भाषा चूँकि आजाद भारत के मध्यवर्ग से सम्बन्धित है, इसलिए उर्दू और अंग्रेजी शब्दों के द्वारा कथा का प्रवाह लगातार बना रहता है।

चरित्रों की मन: स्थिति के द्वंद्व को लेखक ने छोटे छोटे सरल शब्दों में व्यक्त किया है लेकिन इन थेड़े से शब्दों की ध्वन्यात्मकता पाठक को झकझोर देती है जैसे - ' और जो सो गई, तो?'

अथवा - 'माँ का क्या होगा? '

माँ का चुपचाप दयनीय सा व्यक्तित्व अपने आहत दर्प के साथ एकान्त पाता है तो उसकी अगाध पीड़ा तथा शाश्वत ममत्व का समन्वित रूप लेखक के शब्दों में बाँध तोड़ वह निकला है -

'मगर कोठरी में बैठने की देर थी कि आँखों से छलछल आँसू बहने लगे। वह दुपट्टे से बार-बार उन्हें पोंछती पर वे बार बार उमड़ आते, जैसे बरसों उन्हें पोंछती, पर वे बार बार उमड़ आते, जैसे बरसों का बाँध तोड़कर उमड़ आये हों। माँ ने बहु तेरा दिल को समझाया, हाथ जोड़े भगवान का नाम लिया, बेटे के चिरायु होने की प्रार्थना की, बार बार आँखें बन्द की, मगर आँसू बरसात के पानी की तरह जैसे नमने में ही न आते थे।'

भीष्म साहनी की भाषा में आये अंग्रेजी शब्द मध्यवग्रीय जीवन चर्या में खुल गये हैं । ड्रैसिंग गाएन, ओक डिनर आदि क्योंकि आजादी के बाद यहाँ के मध्य वर्ग ने अंग्रेजी सभ्यता की गुलामी को पन्नता पूर्वक अपना लिया था। भीष्म साहनी के प्राय: सारे कथा साहित्य में पंजाबी शब्दों का भी सुन्दर प्रयोग है। इस कहानी में ही पंजाबी लोकगीत दस्तकारी, माँ का परिधान आदि जैसे सलवार - कमीज दुपट्टा आदि के द्वारा कहानी को एक भिन्न पहचान दी गई है । लेखक ने इस कहानी में प्राय: छोटे छोटे वाक्यों का सहारा लिया गया है। लेखक का अपना वरूत्व या चिंतन अलग से कहीं भी आरोपित नहीं है।

भीष्म साहनी की शैली वर्णनात्मक नहीं है, संवादात्मक है। सरल और छोटे संवादों से ही पात्रों के अन्तरचीरत्र अन्तर्द्वंद्व और व्यंग्य का स्वर प्राप्त होता है वे कथात्मक शैली का प्रयोग करते है। पंजाबी भाषा की रवानी कथा में तैरती सी प्रतीत होती है।

व्यंग्य के साथ उनकी कहानियों में मुहावरों प्रयोग भी पंजाबी, उर्दू स्वर को व्यस्त करती है । उलटी-सीधी बात होना, आ अम्मी तुमने जो आज रंग ला दिया, लड़ूँरा, थर- थर काँपना आदि । अप्रस्तुतों का प्रयोग सी स्वाभाविक गति से हुआ है।

चूंकि इनकी भाषा जनजीवन से जुड़ी है, अत: भाषा के माध्यम से परिवेश घटना, पात्र सभी आत्मीय हो जाते हैं। भीष्म समष्टिहित को सर्वोपरि मानते हैं अत: व्यक्तिगत स्वर प्रमुख न होकर वर्ग गत स्वर बन जाता है । शामनाथ महत्वाकांक्षी पीढ़ी का प्रतिनिधि बन जाता हैं संवेदना की गहराई को व्यक्त करने वाली भीष्म साहनी की भाषा न तो नितान्त व्यक्तिगत प्रतीत होती है और न ही चौंकने वाला चमत्कार उत्पन्न करती है बल्कि हल्की सी चुभन ओर खरोंच छोड़ने वाला व्यंग्य युग के परिवर्तन की मूल्य हीनता को जरूर स्पष्ट कर देता है। उनकी भाषा की ही यह खुबी है कि जब वे माँ की बात करते हैं तो माँ का व्यक्तित्व सजीव को उठता है जैसे- मेरी जीभ जल जाय, बेटा, तुमसे जेवर लूँगी? मेरे मुँह से यूँ ही निकल गया। जो होते, जो लाख आर पहनती।

और जब वे शामनाथ का तेवर दिखाते हैं तो उनके शब्दों में एक आत्म केन्द्रित बेटे का पात्र साकार हो उठता है - यह कौन सा राग छोड़ दिया है । सीधा कह दो, नहीं है जेवर इससे पढ़ाई बढ़ाई का क्या तालुक है? जेवर बिका तो कुछ बनकर ही आया हूँ।

12.6.2 संवाद कौशल

भीष्म साहनी की कहानियों की सबसे बड़ी विशेषता ही उनका संवाद कौशल हैं उनके पात्र छोटे छोटे वाक्य बोलते हैं और कहप्री पर्त दर पर्त खुलती चली जाती है। चीफ की दावत में संवाद पात्रों के चरित्र चित्रण में सफल है। कभी उनके अन्तर्द्वंद्व, कभी आक्रोश और कभी विरोध ओर कभी विवशता केवल एक संवाद में ही स्पष्ट हो जाती है। एक उदाहरण देखिए कपड़े कौन से पहनोगी, माँ?

जो है वही पहनूँगी बेटा। जो कहो, पहन लूँ लेखक ने न तो कोई दार्शनिक पद्धति अपनाई है न ही बहुत सी घटनाओं को रखा है, बस सहज रूप में छोटे छोटे ब्यौरों में अपनी बात कह दी है -

तो तेरी तरक्की होगी, बेटा?

तरक्की यूँ ही हो जायेगी? साहब को खुश रखूँगा, तो कुछ करेगा,वरना उसकी खिदमत करने वाले और थोड़े हैं?

तो मैं बना दूंगी, बेटा जैसे बन पड़ेगा, बना दूँगी । उपर्युक्त संवाद में माँ की कुरबानी बेटे का स्वार्थ और नौकरशाही व्यवस्था में भेंटों उपहारों की खिदमता से तरक्की पाने की जुगाड बिठाना सभी अत्यन्त सरलता से वर्णित हो गया है।

12.7 मूल्यांकन

रचनाकार की दृष्टि कहानी का उद्देश्य और शीर्षक विशेष महत्त्व रखते हैं ।

लेखकीय दृष्टि :

भीष्म साहनी की रचनाशीलता की दिशा युगानुरूप रही है । वे परिवर्तन के पक्ष धर ..हैं पस्त उनकी वैचारिकता की एक विशिष्टता यह भी है कि पुराने का त्याग नहीं करते बल्कि पुराने' को' साथ लेते हुए ही नवीनता का आग्रह रखते हैं। उनकी सृजन धर्मिता में ये विशिष्टताएं हर स्थान पर अभिव्यक्त हुई है। और इनका निर्वाह वे बड़ी खूबी के साथ. करते जाते हैं । लेखक ने समाज की रोज की घटनाओं को बडी पैनी नजर से पकड़ा है।

और आम आदमी के अन्तर्द्वंद्व को महसूस किया है पारिवारिक सम्बन्धों के बदलते स्वरूप को भीष्म साहनी ने जितने मार्मिक ढंग से व्यक्त किया है वह उनकी संवेदनशील की पहचान है। चीफ की दावत संबन्धों के मध्य आती अर्थप्रधानता और महत्वाकांक्षा से उत्पन्न शिथिलता

को दर्शाने वाली कहानी है। शामनाथ के लिये सारे दुख सहने वाली माँ छिपाने की वस्तु बन गई है।

अंग्रेजियत के पीछे भागने की मानसिकता की अभिव्यक्ति उनकी कई कहानियों में हुई है। अंग्रेजी तौर तरीके अपनाकर मध्यवर्ग स्वयं को आधुनिक दिखाना चाहता है। चीफ की दावत में अमेरिकन साहब की दावत से ड्रिंक पार्टी का आयोजन होता है। लेकिन सोती हुई बूढी माँ से साहब का हाथ मिलवाना या हाऊ डू यू डू कहलवाना जहाँ शामनाथ के प्रति आक्रोश जगता है वहीं साहब की उदारता का अधिक परिचय मिलता है।

अत: पारिवारिक सम्बन्ध, प्रेम, नफरत, स्वार्थ तथा रिश्तों की बदलती पीरभाषा से जुड़ने की और समभागी होने की उदार चेतना दिखलाई देती है। जीवन मूल्यों की टूटन उन्हें व्यक्तिगत रूप से बहुत व्यथित करती रही है। वे परम्परा का अंधानुकरण नहीं करते परम्परा उनकी जीवनी शक्ति को पुष्ट करती है और आधुनिकता बदलते युग को एक विशिष्ट अर्थ -प्रदान करती हैं चीफ की दावत में माँ का सम्मान और महत्त्व अन्तर्निहित ध्वनि देता है जो हमारा परम्परा गत मूल्य है। अपने पुराने मूल्यों से उखड़कर न केवल संयुक्त परिवार का विघटन हुआ बल्कि एकल परिवारों में माता-पिता और बुर्जुगों का न केवल स्थान समापत हुआ बल्कि उनका'आदर और महत्त्व भी स्वार्थ प्रेरित हो. गया है। वे फालतू हो गए हैं।

भीष्म साहनी की विशेषता है कि वे अपने 'पात्रों को कमजोर और दयनीय चित्रित अवश्य करते हैं क्योंकि यथार्थ का आग्रह है किन्तु पाठक के मन में उसके तरस की भावना भरना उनका उद्देश्य कभी नहीं रहा। चीफ की दावत में शामनाथ की माँ बूढी, कमजोर और कम नजर वाली है। लेखक उपस्थित परिस्थितियों के मध्य शामनाथ को एक ऐसे पुत्र के रूप में उपस्थित करते हैं कि वह आज -के आस मध्यवर्गीय और महत्वाकांक्षी व्यक्ति का प्रतिनिधित्व करते है। कहानी पढ़ते समय पाठक' उस स्थिति को बीता है और इसी जीने के दौरान उसके मन में करुणा उत्पन्न होती है ग्लानि का अनुभव होता है ओर वही आत्मग्लानि उसमें व्यवहार के परिवर्तन के रूप में संवेदित होती है।

12.8 उद्देश्य

भीष्म साहनी कहानी के द्वारा यह प्रकट करना चाहते हैं कि माता-पिता की, आज के मध्यवर्गीय समाज में जो उपेक्षा की जा रही है, वह एक बड़ी समस्या का रूप धारण कर चुकी है। शामनाथ की माँ ऐसे ही मध्यवर्गीय परिवारों के उपेक्षित माता-पिता की प्रतिनिधि है। कहानी में कहीं भी माँ अपने अधिकारों का अथवा अपने शोषण का जिक्र नहीं करती, परन्तु वह अपने आप ही प्रकट होता रहता है, जो वह भोग रही हैं।

संघर्ष, आक्रोश व विद्रोह' की आबाज को बुलन्द करने के पीछे निहित उद्देश्य जन जाग्रति लाना है।

इसी के साथ यह कर्तव्य भी है कि इस विद्रोह का रूप निर्माणात्मक हो , विध्वंसात्मक नहीं। कहानी में सामाजिक यथार्थ कै बिन्दु इस प्रकार उठाये जाएं कि वह पाठक को एकदम उत्तेजित न कर दे बल्कि उसे कुछ सोचने पर विवश कर दे। भीष्म साहनी कहानी में किसी एक संवाद द्वारा कोई दिशा या ' निर्णय जैसी स्थिति नहीं रचते न ही शामनाथ का हृदय परिवर्तन कर कहानी में ' भावुकता का समावेश करतें हैं। पाठक आत्मविश्लेषण द्वारा स्वयं निर्णय लेता है कि क्या वास्तव में माता-पिता की उपेक्षा उचित है।

12.9 शीर्षक की उपयुक्तता

शीर्षक में ही कहानी का उद्देश्य छिपा होता है इस कहानी में चीफ अंग्रेजी का और दावत उर्दू का शब्द है। यह शीर्षक हमारे समाज की बदलती सोच, नौकरशाही और मध्यवर्गीय समाज पर पश्चिमी सभ्यता के प्रभाव का सूचक है। चूंकि यह समाज पश्चिमी सभ्यता को विशेष आग्रह से अपनाता है, अत: माँ के रूप में पुराने मूल्य व्यर्थ प्रतीत होने लगते हैं, फिर भी हम गुलाम मानसिकता के कारण विदेशी साहब के दृष्टिकोण को गदद् होकर स्वीकार लेते हैं । साहब ने माँ के प्रति. उदार रवैया अपनाया - अत: सभी 'देसी लोगों के लिए माँ की वाहवाही हो गई। लेखक का उद्देश्य इसी शीर्षक से पूरी तरह व्यक्त होता है और यह उचित कहा जा सकता है।

12.10 सारांश

'चीफ की दावत' अपने शिल्प में सुगम और सरल प्रतीत होते हुए भी पाठक की चेतना को झकझोरती और पाठक को अपनी संवेदना का सहभागी बनाती है। छोटे-छोटे वाक्यों से बनी भाषा तथा संवाद किसी दार्शनिक पद्धति के मोहताज नहीं है, वे मन में चलने वाली दुविधाओं को बखूबी व्यक्त -कर देते हैं। उनकी सत्यान्वेषी दृष्टि गहराई तक पहुँचती है, इसलिए अनपढ माँ भी दर्पमयी हो उठती है और शिक्षित बेटा अपने आप ही स्वार्थी बन जाता है। इसलिए सरल, आत्मीय कथा का ताना-बाना बुनते हुए वे उस बीज को बो देते हैं। जो प्रत्येक मनुष्य के अन्दर सोई हुई मानवता को झिझोंड देती है।

12.11 संदर्भ ग्रन्थ

1. भीष्म साहनी व्यक्ति और रचना : सं. राजेश्वर सक्सेना व प्रताप ठाकुर
2. सक्रिय कहानी की भूमिका - सं. राकेश वत्स
3. हिन्दी कहानी के सौ वर्ष - डॉ. वेद प्रकाश अमिताभ
4. कहानी. स्वरूप और 'संवेदना - राजेन्द्र यादव

12.12 अभ्यास प्रश्न

1. 'चीफ की दावत' कहानी का परिवेश पात्रों को विशिष्टता प्रदान करता है, स्पष्ट कीजिए।
2. 'चीफ की दावत' कहानी के मध्यवर्गीय परिवेश को उदाहरण सहित विश्लेषित कीजिए।
3. क्या परिवेश का चित्रण यथार्थ को प्रकट करता है? कहानी के आधार पर बतलाइये।

4. भीष्म कहानी की भाषागत विशेषताओं को 'चीफ की दावत' कहानी के आधार पर स्पष्ट कीजिए।'
5. 'चीफ की दावत' कहानी के संवाद कौशल की विशेषता बताते हुए कहानी के व्यंग्य को समझाइये ।
6. कहानी के संवाद कौशल में ही उद्देश्य निहित है - सोदाहरण समझाइये।
7. कहानी का मूल्यांकन करते हुए कहानी की मुख्य संवेदना'पर प्रकाश डालिए।
8. क्या ' चीफ की दावत' केवल माँ बेटे की कहानी है अथवा इसमें मूल्य परिवर्तन के भी संकेत हैं - विस्तार पूर्वक समझाइये।
9. 'चीफ की दावत' कहानी में द्वंद्व के स्वरूप का विश्लेषण कीजिए।
10. क्या 'चीफ की दावत' कहानी को सीधी, सपाट सरल कहानी कहा जा सकता है अथवा उसमें अन्त: विरोध भी है?

इकाई 13

'वापसी' (उषा प्रियम्वदा)

इकाई की रूपरेखा

13.0 उद्देश्य
13.1 प्रस्तावना
13.2 व्याख्या खण्ड (कहानी के मूल पाठ से)
13.3 कथावस्तु
13.3.1 कथा का विकास
13.3.2 कथा का समापन
13.4 चरित्र चित्रण
13.4.1 गजाधर बाबू
13.4.2 पत्नी
13.4.3 अन्य पात्र
13.5 परिवेश
13.6 संरचना-शिल्प
13.6.1. भाषा शैली
13.6.2 संवाद कौशल
13.7 उद्देश्य
13.8 मूल्यांकन
13.9 संदर्भ ग्रन्थ
13.10 अभ्यास प्रश्न

13.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई में आप उषा प्रियम्वदा की कहानी 'वापसी' को पढ़ेंगे ।

(1) इस इकाई में आप उषा प्रियम्वदा की लोकप्रिय और चर्चित कहानी ' वापसी' का अध्ययन करेंगे ।

(2) कहानी के मूलपाठ से परिचित होकर पति-पत्नी के सम्बन्धों में आई तटस्थता और बदलते सामाजिक मूल्यों से अवगत होंगे।

(3) कहानी की शिल्पगत विशेषताओं को समझ सकेंगे।

13.1 प्रस्तावना

वापसी कहानी के नायक गजाधर बाबू स्थानान्तरण की नौकरी के कारण सदा घर-परिवार से दूर रहे हैं। रिटायरमेंट के बाद घर लौटे तो स्वयं को अजनबी पाया और वे आहत होकर पुन: नौकरी करने चले जाते हैं।

यह कहानी एक भिन्न धरातल पर समस्या हो उठती है। पुरानी पीढ़ी के लिए पति-पत्नी के इस रूप की कल्पना करना पुराने आदर्शवाद के खिलाफ है। विशेष रूप से पुरानी पत्नी की भूमिका एक नये मनोविज्ञान के साथ चित्रित की गई है। समकालीन जीवन के विरोधाभास और विडम्बनाएं इसमें स्पष्ट दिखाई देती है। गजाधर बाबू का अकेलापन आधुनिक जीवन का अकेलापन है जो अपने परिवार के पालन पोषण और सुविधाएं जुटाने के दायित्व निभाने के बावजूद अकेला है। उस दौर में पीढी भेद अधिक दिखाई देता है। जैसे पिता-पुत्र भेद अथवा माता-पिता के प्रति संतान की उपेक्षा। परन्तु वापसी में आधुनिकता बोध एक बिल्कुल भिन्न धरातल पर है। अपने ही परिवार के मुखिया होने पर भी उनकी प्रतिक्रियाएं भावात्मक सरोकारों से उत्पन्न हुई है। वे महसूस करते हैं कि घर में उनके दखल को कोई बर्दाश्त नहीं करता। मूल्यों की टकराहट की ध्वनि कथा में स्पष्ट सुनाई पड़ती है। गजाधर बाबू पुराने मूल्यों के प्रतीक हैं। जो पहले अस्वीकृत और फिर बहिष्कृत हो जाते हैं। यह वह बिन्दु है जहाँ संबंध मात्र शब्द बन गए हैं, संवेदनात्मकता गायब हो गई है अन्यथा धनार्जन करने वाले गजाधरबाबू को रिटायर्ड होने पर बहिष्कृत नहीं होना पड़ता।

13.2 व्याख्या खण्ड (कहानी के मूल पाठ से)

व्याख्या - खण्ड - 1

रेलवे क्वार्टर का वह कमरा जिसमें उन्होंने कितने वर्ष बिताये थे, उनका सामान हट जाने से कुरूप और नग्न लग रहा था। आंगन में रोपे पौधे भी जान पहचान के लोग ले गए थे और जगह जगह, मिट्टी बिखरी हुई थी। पर पत्नी, बाल-बच्चों के साथ रहने की कल्पना में यह बिछोह, एक दुर्बल लहर की तरह उठकर विलीन हो गया।

संदर्भ :

गजाधर बाबू रिटायरमेंट के बाद रेलवे क्वार्टर छोडकर दूसरे शहर अपने घर-परिवार के पास जा रहे हैं। लेखिका ने उनके सरकारी आवास की स्थिति और लगाव का स्वाभाविक चित्रण किया है।

व्याख्या :

गजाधर बाबू ने रेलवे क्वार्टर के कमरे को ही अपना निवास बना रखा था, क्योंकि उनका परिवार शहर में रहता था। बच्चों की पढ़ाई और नौकरी के कारण उनकी पत्नी भी वहीं रहती थी। गजाधर बाबू ने बडे श्रम से शहर में अपना मकान बनवा लिया था। अब वे सेवानिवृत्त होकर अपने घर, अपने परिवार को पास जा रहे थे और प्रसन्न थे। उनका सामान बँध गया था, इसलिए कमरा खाली और बेरंग सा हो गया था। उनके जाने की खबर से परिचित लोग आंगन के पौधे भी उखाड़ कर ले गए थे। मिट्टी चारों तरफ बिखर गई थी। वहाँ का वातावरण उनके जाने की

गवाही दे रहा था। गजाधर बाबू ने, न केवल कमरा सँवार रखा था, बल्कि आँगन में पौधे भी लगा रखे थे। उनके व्यक्तित्व और लगाव का परिचय इन बातों से मिलता है। उन्हें कहीं न कहीं उस स्थान से बिछुड़ने का दुःख भी था, जिसने उन्हें धनी आत्मीयता दी थी । किन्तु एक लम्बे समय के पश्चात् उनकी तपस्या का अंत हुआ था और वे अपनी पत्नी और बच्चों के साथ रहने के सुख की कल्पना से ही प्रसन्न थे। अत: इस अस्थायी निवास से बिछुड़ने का दुःख भी एक हल्की सी भावना बनकर उभरा और खो गया । क्योंकि पाने का सुख छूटने के सुख से बड़ा था।

विशेष :

गजाधर बाबू के व्यक्तित्व और जीवन' शैली का परिचय मिलता है।

भाषा सरल सहज और स्वाभाविक है। सामान्य बोलचाल के शब्दों का प्रयोग किया गा है।

कठिन शब्द :

कुरूप और नग्र = बेरौनक और खाली, बिछोह : बिछुड़ना, दुर्बल = कमजोर, विलीन = गुम हो जाना, खो जाना।

बोध प्रश्न :

1. रेल्वे क्वार्टर का कमरा कुरूप और नग्र क्यों लग रहा था?
2. 'जगह जगह मिट्टी क्यों बिखरी हुई थी ?
3. गजाधर बाबू किस कल्पना मे डूबे थे ?

व्याख्या खण्ड - 2

उन्होनें अनुभव किया कि -वह पत्नी व बच्चों के लिए केवल धनोपार्जन के निमित्त मात्र हैं। जिस व्यक्ति के अस्तित्व से पत्नी माँग में सिंदूर डालने की अधिकारी है, समाज में उसकी प्रतिष्ठा है। उसके सामने वह दो वक्त भोजन की थाली रख देने से सारे कर्त्तव्यों से छुट्टी पा जाती हैं। वह घी और चीनी के 'डिब्बों में इतनी रमी हुई है कि अब वही उनकी सम्पूर्ण दुनिया बन गई हैं।

संदर्भ :

उपर्युक्त गद्यांश उषा प्रियम्वदा द्वारा लिखित कहानी 'वापसी से उद्धृत किया गया है । इसमें लेखिका ने गजाधर बाबू की मनोवेदना का वर्णन किया है। सेवानिवृत्ति के पश्चात् वर्षों अलग रहने पर, जब वे घर लौटते हैं तो उनकी पत्नी के पास उनके लिए समय नहीं हे। तब वे दुःखी होकर सोचते हैं।

व्याख्या :

गजाधर बाबू की अपने ही घर में कोई जगह नहीं है। उम्र भर वे अपने परिवार के लिए कमाते रहे, उन्हें पैसा भेजते रहे, स्वयं अकेले रहे। अब जब वे घर आ गए हैं तब अनचाहे मेहमान की तरह हैं। उन्हें लगता है कि पति के अस्तित्व के कारण ही पत्नी सुहागन है, समाज में सब उसकी इज्जत करते हैं। वह केबल दो समय पति को भोजन देकर अपना फर्ज पूरा कर लेती है। पति के साथ सुख-दुख बांटने का समय उसे पास नहीं है, क्योंकि घर और रसोई की चिन्ता के लिए सर्वोपरि है। उनकी पत्नी को यही चिन्ता लगी रहती है कि बहू-बेटी अधिक

घी-तेल न खर्च करें ' या लापरवाही न करें। दरअसल, उनका सोच ही गलत है। वे बहू-बेटी को जिम्मेदारी सिखाना ही नही चाहती। ऐसे में गजाधर बाबू स्वयं को उपेक्षित और अकेला अनुभव करते हैं।

विशेष:

गजाधर बाबू की घर के सुख की कल्पना टूट जाती है । वे स्वयं को पहले से भी अधिक अकेला अनुभव हैं।

गजाधर बाबू के घर से दूर रहने के कारण उनके परिवार पर कोई नियन्त्रण नहीं रहता । इसलिए परिवार के सदस्य अपनी आजादी में उन्हें रुकावट मानते है।

वृद्धावस्था में पति-पत्नी को एक दूसरे के साथ ही अधिक इच्छा रहती है।

कठिन शब्द:

धनोपार्जन = धन कमाना, निमित्त = बहाना, साधन, प्रतिष्ठा = सम्मान।

बोध प्रश्न :

1. गजाधर बाबू घर लौटने पर क्या अनुभव करते हैं?
2. पत्नी की समाज में प्रतिष्ठा किस कारण है?
3. गजाधर बाबू की पत्नी अपना मुख्य कर्त्तव्य क्या मानती है?
4. वह किन वस्तुओं को अपनी सम्पूर्ण दुनिया माने हुए हैं?
5. गजाधर बाबू की पीड़ा क्या है?

13.3 कथावस्तु

'वापसी' कहानी एक रेलवे कर्मचारी गजाधर बाबू के इर्द-गिर्द बुनी हुई है, जो अपने बच्चों की पढ़ाई की खातिर परिवार को शहर में रखकर स्वयं छोटे स्टेशनों पर रहे। शहर में उन्होंने मकान बनवायी दो बच्चों की शादियाँ की, दो बच्चें ऊंची शिक्षा प्राप्त कर रहे थे। अवकाश प्राप्ति के बाद वे परिवार के साथ रहने की कल्पना मात्र से पुलकित हो घर पहुँचते हैं, मगर अब घर में उनके लिए कोई गुंजाइश नहीं हे। उनके आने से बेटे, बहू दोनों अविवाहित लड़केलड़की की स्वतंत्रता, स्वच्छंदता में कमी आ जाती है, पत्नी सारी शिकायतों के बावजूद रसोई के घी चीनी के डिब्बों रमी , है, उसके पास उनके लिए समय नहीं है, तथा वे उपेक्षित और बहिष्कृत होकर पुन: नौकरी के लिए घर छोड़ देते हैं, जिससे उनका परिवार प्रसन्न ही होता है। वे केवल धनोपार्जन का जरिया बन कर रह जाते हैं। निम्न मध्यमवर्गीय परिवारों की यह मानसिकता बदलते समय की तस्वीर के साथ अनेक सवाल छोड़ जाती है।

13.3.1 कथा का विकास

कथा में तनाव तब उत्पन्न होता है जब गजाधर बाबू घर में परिवार के साथ आनन्दपूर्वक रहना चाहते हैं, बच्चों के साथ हंसना-बोलना चाहते हैं, पत्नी के साथ सुख-दुख बाँटना चाहते

हैं, किन्तु न तो बच्चों को उनके साथ रहने की आदत थी, न पत्नी को रसोई से फुर्सत थी। गजाधर बाबू के आने से बहू और बेटी की स्वतंत्रता पर भी बंधन लग गए थे सबसे बड़ी चिन्ता थी कि उस घर में गजाधर बाबू के लिए कोई स्थान ही नहीं था। वे केवल धनार्जन के माध्यम बन कर रह गए थे।

13.3.2 कथा का समापन

गजाधर बाबू का अपने परिवार से मोह भंग होने लगा था। -परिवार की उपेक्षा के कारण उन्हें अपने दफ्तर के चपरासी गनेशी और उसके परिवार का आदर अधिक याद आने लगा था। रेलवे क्वार्टर और वहाँ के वातावरण तथा संगी साथी अधिक प्रिय लगने लगे थे। वे चुप रहने लगे थे और उन्होंने परिवार के सदस्यों पर अपना हक जताना छोड़ दिया था, लेकिन इससे किसी को कोई फर्क नहीं पड़ा। वे स्वयं को उपेक्षित और बहिष्कृत अनुभव करने लगे और पुन: कहीं नौकरी के लिए जाने की तैयारी कर लेते हैं। लेकिन कहानी का अंत यहाँ नहीं होता। मार्मिक स्थिति तब बनती है जब उनका बेटा मुस्तैदी से उनका बिस्तर बाँधता है और उनकी पत्नी उनके लिए मठरियाँ और लाडडू बनाती है । उन्हें विदा करने के लिए रिक्शा बुलाया जाता है। गजाधर बाबू की पत्नी का अन्तिम वाक्य एक डंक की तरह बदलते रिश्तों पर मंडराता रहता है-

"अरे नरेन्द्र, बाबूजी की चारपाई कमरे से निकाल दे । उसमें चलने तक की जगह नहीं है।"

यह वाक्य मध्यमवर्गीय समाज की बदलती सोच, स्वार्थान्धता, शहरी प्रभाव नि:संगता और एक पुरुष के अकेलेपन को गहरा जाता है। भारतीय समाज में पुराने समय से घर के पुरुष धनार्जन के लिए परदेस जाते रहे हैं और बीच बीच में कुछ समय के लिए अवकाश पर आते रहे हूँ परन्तु उस स्थिति और इस स्थिति में अन्तर है। यहाँ घर का मुखिया बरसों से परिवार के सुख के लिए प्रतीक्षारत है और अवकाश प्राप्ति के साथ पत्नी के साथ सुख-दुख बाँटने को व्याकुल है। परिवार के बीच ही वह अपने होने को अनुभव करना चाहता है, जो वह नहीं कर पाता।

13.4 चरित्र चित्रण

वापसी' कहानी मध्यमवर्गीय चरित्रों को सजीव रूप से प्रस्तुत करती है । छोटे-छोटे सुखों की इच्छा, स्वच्छन्दता, आत्मकेन्द्रितता, आर्थिक स्थिति की कतरब्योंत, पीढ़ी भेद आदि अनेक स्थितियाँ मनोविश्लेषणात्मक रूप से अभिव्यक्ति पा सकी है।

'वापसी' कहानी के पात्र हमारे आस पास के जीवंत पात्र है । एक प्रकार से वे व्यक्ति पात्र न होकर वर्गीय पात्र है। किन्तु एक परिवार के मुखिया के रूप में गजाधर बाबू एक तरफ और उनकी पत्नी व बच्चे दूसरी तरफ खड़े प्रतीत होते हैं। यथार्थ का रंग इनमें इतना सहज और

स्वाभाविक है कि पुराने मूल्यों या आदर्शों को खोजना बेमानी है। यहाँ बाहर की दुनिया का कोई संघर्ष या टकराव नहीं हैं, बल्कि अपनों के बीच ही खुशी ढूँढने की व्याकुलता हैं।

13.4.1 गजाधर बाबू

गजाधर बाबू इस कहानी के केन्द्रीय पात्र हैं। आरम्भ में ही पाठक से उनका परिचय एक उदार त्यागी, स्नेहशील एवं गम्भीर व्यक्ति के रूप में होता है। वे अपने चपरासी गनेशी के स्नेह और आदर से अभिभूत हैं। अपने परिवार के साथ रहने के ख्याल से ही प्रफुल्लित हैं। बरसों अकेले रहकर वे अपने मन में पुरानी यादों की कल्पना में खोये रहते।

गजाधर बाबू घर लौटकर स्वयं को परिवार की गतिविधि में शामिल करना चाहते हैं। वे अपने मुखिया होने के अधिकार को भी जताना चाहते हैं किन्तु विगत वर्षों से समय बदल चुका है। घर के बहू बेटी और बेटों को उनकी टोका टोकी के बिना रहने की और स्वतन्त्रता की आदत पड़ चुकी है। वे अपने पिता के हस्तक्षेप से खुश नहीं है। यहाँ तक कि उनकी उपस्थिति भी गवारा नहीं है। गजाधर बाबू पहले अपने बच्चों पर अपना अधिकार जताना चाहते हैं। बहू को सुबह का खाना और बेटी को शाम का खाना बनाने का आदेश देते हैं किन्तु दोनों ही इतनी लापरवाही से काम करती है कि गजाधर बाबू की पत्नी को ही रसोई में लौटना पड़ता है, बेटों को भी उनका घर में रहना बुरा लगता है क्योंकि अब उनके दोस्तों की बैठक वहाँ नहीं जम पाती।

गजाधर बाबू सबसे ज्यादा आहत हैं - अपनी पत्नी के व्यवहार से क्योंकि उनसे आटे घी के कनस्तर नहीं छूटते और पति से बात करने की फुर्सत ही नहीं है । रिटायर होने के बाद आय कम हो गई है, किन्तु उनकी पत्नी उस सच्चाई को स्वीकार न कर उलाहना देती है - 'यही जोड़ गाँठ करते करते बूढ़ी हो गई, न मन का पहना न ओढ़ा। '

गजाधर बाबू के मन में बसी पत्नी के अतीत की छवि धूमिल हो जाती है और वे बहुत अकेलापन अनुभव करने लगते हैं। वर्तमान स्थिति के साथ पुरानी यादें जुड़कर मनोवेदना को अवांछित पाकर वे एकदम चुप हो जाते हैं और संकल्प करते हैं कि अब वे परिवार में किसी को भी कुछ भी नहीं कहेंगे। लेकिन उनकी चुप्पी से परिवार के लोग उनकी पीड़ा का अनुमान नहीं लगा सकते। गजाधर बाबू दायित्व निभाने वाले मगर स्वाभिमानी व्यक्ति हैं। वे पुन: नौकरी करने के लिये अपने ही घर से विदा हो जाते हैं । वह वापसी रिटायरमेन्ट के बाद ही वापसी नहीं है बल्कि अपनों से मोहभंग के बाद एक निर्वासित जीवन जीने की वापसी है।

13.4.2 पत्नी :

कहानी के अन्य पात्र अपनी छोटी-मोटी भूमिकाओं में महत्त्वपूर्ण है। इनमें प्रमुख है गजाधर बाबू की पत्नी। वह घर की धूरी हैं। पति के बाहर रहने पर बच्चों को सम्भालती है। उसका साम्राज्य और अधिकार सत्ता है रसोई। वह इस अधिकार और रसोई में इतना रम गई है कि इससे बाहर सोच भी नहीं पाती। जिस व्यक्ति के अस्तित्व से पत्नी माँग में सिन्दूर डालने

की अधिकार है, समाज में उसकी प्रतिष्ठा है, उसके सामने वह दो वक्त भोजन की थाली रख देने से सारे कर्त्तव्यों से छुट्टी पा जाती है।

गजाधर बाबू की पत्नी अपनी बहू की शिकायत भी करती है और उसे रसोई में काम भी नहीं करने देती, क्योंकि वह महीने भर का घी पाँच दिन में खत्म कर देती है। उसकी बेटी बसन्ती रोज शाम को पड़ौस में बैठी रहती है,माँ का हाथ नहीं बँटाती, उसकी शिकायत करके भी उनकी पत्नी का नियन्त्रण बहू बेटी पर नहीं है। अपने बेटों के प्रति वह अत्यन्त ममतालू है। वह नरेन्द्र को अपने हाथों से खाना बनाकर खिलाती है। अमर के मित्रों का जमघट बैठक में लगा रहता है और चाय नाश्ता बनकर जाता रहता है। किसी भी फिजूल खर्ची पर कोई नियंत्रण नहीं है। गजाधर बाबू के टोकने पर सबको बुरा लगता है। उनकी पत्नी उनकी घुटन, पीड़ा और अपेक्षाओं को समझ नहीं पाती। उन्हें लगता है- ' 'यही थी क्या उनकी पत्नी, जिसके - हाथों के कोमल स्पर्श, जिसकी मुस्कान की याद में उन्होंने सम्पूर्ण जीवन काट दिया था?''

गजाधर बाबू की पत्नी उम्र भर अपने घर की स्वामिनी बनकर पति से अलग रहने की आदी हो चुकी है । वह श्रीहीन, रूखी और पति के प्रति तटस्थ हो चुकी है । इसीलिए जब गजाधर बाबू अपने ही घर से दुबारा नौकरी के लिये निकलते हैं तो वह उनके साथ जाने से इन्कार कर देती है और बड़ी तत्परता से उनके लिए लाडडू, मठरी तैयार करती है और अपने बेटे से कहती है कि बाबूजी की चारपाई कमरे से निकाल दे।'

गजाधर बाबू की पत्नी के रूप में एक घरेलू स्त्री की मानसिकता, उसकी दिनचर्या, उसकी अधिकार चेतना और सबसे बड़ी बात की पत्नी से ज्यादा मातृत्व का हावी होना है। वह मध्यवर्ग की घर में रमी स्त्री की प्रतिनिधि मात्र है।

13.4.3 अन्य पात्र

गजाधर बाबू के बडे बेटे-बहू और अविवाहित बेटा-बेटी भी बदलते सामाजिक मूल्यों, स्वच्छन्दता और उत्तरदायित्व हीनता से पूर्ण है। पिता का निरन्तर नियन्त्रण न होने के कारण अनुशासन के वे आदी नहीं हैं । पिता का आना, बैठक में सोना, काम करने के लिये टोकना, पैसों की बचत के लिए नौकर को हटाना, उन्हें कतई पसंद नहीं। माँ भी कमोबेश उन्हीं के साथ है। यह वह युग, जब पुरानी परम्परा के अनुसार बड़ों का सम्मान घटता जा रहा था। विशेष रूप से घर का मुखिया पुरुष नई पीढ़ी के साथ तालमेल न बिठा पाने के कारण अलग- अलग पड़ता जा रहा था। अंत में घर का मुखिया पुरूष अर्थात् गजाधर बाबू पुन: धनार्जन करने के लिए घर से बाहर चले जाते हैं। उनके घर से बाहर निकलते ही बहू और बेटी सिनेमा जाने की फरमाइश करती है और उनकी पत्नी बची मठरियाँ कटोर दान में रखने और उनकी चारपाई बाहर निकालने में व्यस्त हो जाती है।

13.5 परिवेश

वापसी कहानी मध्यवग्रीय परिवार की कहानी है। इसका केन्द्रीय पात्र रेलवे का एक बाबू है। रिटायरमेंट के समय रेलवे क्वार्टर का बड़ा स्वाभाविक चित्रण किया है। रेलवे क्वार्टर का वह कमरा, जिसमें उन्होंने कितने वर्ष बिताये थे, उनका सामान हट जाने से कुरूप और नग्र लग रहा था। (आँगन में रोपे पौधे भी जान-पहचान के लोग ले गए थे और जगह-जगह, मिट्टी बिखरी हुई थी।)

यह चित्रण गजाधर बाबू के व्यक्तित्व की पृष्ठभूमिक तैयार करता है। किसी भी कहानी के लिए परिवेश की आयोजना कथावस्तु और पात्रों को विश्वसनीय बनाने के लिए की जाती है। पात्रों के क्रियाकलाप, उनकी मानसिक बुनावट में पीरवेश की एक महत्त्वपूर्ण भूमिका है। स्थानीय रंग, आस पारा का चित्रण भी परिवेश को विशिष्ट बना देते हैं और कहानी के उद्देश्य को देश काल के अनुसार यथार्थ - परक रंग दे देते हैं। कथा प्रसंगों के अनुसार परिवेश का संयोजन भिन्न-भिन्न प्रकार से किया जाता है किन्तु जिनकी सूक्ष्म अन्विति एक दूसरे को प्रभावी बनाती है। जैसे वापसी कहानी में रेलवे क्वार्टर का वर्णन गजाधर बाबू के घर के चित्रण से उनकी जिंदगी का तुलनात्मक रूप प्रस्तुत करता है। उनके घर में उनके लिए ही कोई स्थान न था। उनकी पत्नी के पास अन्दर एक छोटा -सा कमरा अवश्य था, पर वह एक ओर अचारों के मर्तबान, दाल, चावल के कनस्तर और घी के डिब्बों से घिरा था - दूसरी ओर पुरानी रजाइयाँ, दरियों में लिपटी और रस्सी से बँधी रखी थी, उसके पास एक बड़े से टीन के बक्स में घर-भर के गरम कपड़े थे। बीच में एक अलगनी बँधी हुई थी, जो प्राय: मध्यवर्ग के छोटे से घर की सूचना ही नहीं देता, बल्कि उनकी पत्नी की उस अधिकार सत्ता का भी परिचय देता है जिसके कारण घर की आर्थिक व्यवस्था उनके कब्जे में है, पर पत्नी के उस कमरे में धनार्जन करने वाले पति के लिए कोई गुंजाइश नहीं है। अत: यह वर्णन मात्र वर्णन ही नहीं है- बल्कि मुख्य पात्रों की जीवन शैलू और अलगाव के भावी संकेत का सूचक भी है।

उषा प्रियम्वदा ने इस कहानी में आजादी के बाद आये सामाजिक परिवर्तन को बेहद स्वाभाविकता और युगीन सत्य के परिप्रेक्ष्य में अभिव्यक्ति किया है। इसी परिवेश के कारण पात्रों के मन के द्वंद्व, उलझनें, भिन्न रुचियाँ और अपेक्षाएं सजीव हो गई है। यदि गजाधर बाबू अपने परिवार की आत्मीयता चाहते हैं तो उनकी पत्नी को रसोई की फिकर है और बच्चों को स्वच्छंदता की । कहानी की पृष्ठभूमि से परिवार के सदस्यों के बदलते परस्पर सम्बन्धों और स्वार्थीवृति का पता चलता है।

13.6 संरचना-शिल्प

कहानी की मूल संवेदना की अभिव्यक्त भाषा- शैली, संवाद योजना दृश्यात्मकता आदि के द्वारा होती है। उषा प्रियम्वदा ने भारतीय समाज, संस्कृति, परम्परा, दिनचर्या आदि के द्वारा बहुत अंतरंगता से परखा है। उनकी यह कहानी बिना किसी आडम्बर और दार्शनिक बोझिलता के

हमारे आसपास के जीवन को साकार करती है। उनके पात्रों की भाषा, संवाद -योजना, भाव भंगिमा आदि के द्वारा कहानी के विकास और तनाव को सजीव अभिव्यक्ति मिली है। पात्र अपनी स्वाभाविकता में पूर्ण दिखाई देती है। प्रत्येक पात्र की भाषा बिना किसी अवरोधके मन की बात स्पष्ट करती है - यहाँ गुण और दोष कोई निर्धारित रेखा नहीं खींचते, एक संवेदनहीनता की स्थिति बारीक व्यंग्य के रूप में उभरती है।

13.6.1 भाषा- शैली

उषा प्रियम्वदा की भाषा बिल्कुल क्लिष्ट नहीं है। कहानी जिस वर्ग, समाज और पात्रों के इर्द गिर्द बुनी गई है उसी के अनुसार उनकी भाषा व्यावहारिक और आम जनता को सहज रूप से समझ आने वाली है। उनकी भाषा में प्रवाह, पात्रानुकूलता, भावात्मकता, व्यंग्यात्मकता और सम्प्रेषणीयता है। प्राय: बोलचाल के शब्दों का ही अधिक प्रयोग है।

आरम्भ में ही गजाधर बाबू के रिटायर्ड जीवन और बीते हुए जीवन का सरल सा परिचय मिल जाता है - '

“गजाधरबाबू खुश थे, बहुत खुश। पैंतीस साल की नौकरी के बाद वह रिटायर होकर जा रहे थे । इन वर्षों में अधिकांश समय उन्होंने इसी समय की कल्पना की थी, जब वह अपने परिवार के साथ रह सकेंगे । इसी आशा के सहारे वह अपने अभाव को बोझा ढो रहे थे।"

करूणा जगाने वाले यही अभाव आगे चलकर उनकी विगत स्मृतियों का आधार बन जाता है। अपने घर की उपेक्षा से वे अतीत में खो जाते हैं-

"उन्हें अचानक ही गनेशी की याद आ गई । रोज सुबह, पैसेंजर आने से पहले वह गरम गरम पूरियाँ और जलेबी बनाता था। गजाधर बाबू जब तक उठकर तैयार होते, उनके लिए जलेबियाँ और चाय लाकर रख देता था। चाय भी कितनी बढ़िया, काँच के ग्लास में ऊपर तक भरी, लबालब, पूरे ढाई चम्मच चीनी और गाड़ी मलाई।"

गजाधर बाबू अपनी पत्नी की निसंगता और रूखपन देखकर सोचते हैं -

'यही थी क्या उनकी पत्नी, जिसके हाथों के कोमल स्पर्श, जिसकी मुस्कान की याद में उन्होंने सम्पूर्ण जीवन काट दिया था।'

इस कहानी में स्मृतियों का विशेष महत्त्व है, जो गजाधर बाबू के व्यक्तित्व की स्निग्धता, भावाकुलता और स्नेहाकांक्षा को व्यक्त करती है। उनकी पत्नी वर्तमान में जीती है, अत: उनका व्यक्तित्व निम्न पंक्तियों में सजीव हो गया है - 'देखा बहू को, चौका खुला छोड आई, बिल्ली

ने दाल की पतीली गिरा दी। सभी तो खाने को हैं अब क्या खिलाऊंगी ' वह साँस लेने को रूकी और बोली - " एक तरकारी और चार परोठे बनाने में सारा डिब्बा घी उडेलकर रख दिया।" इन पंक्तियों में उनकी संलग्रता, आयु और स्थिति का स्वयमेव परिचय हो जाता है।

नरेन्द्र माँ से कहने लगा- अम्मा! तुम बाबूजी से कहती क्यों नहीं? बैठे - बिठाये कुछ नहीं तो नौकर ही छुड़ा दिया। अगर बाबूजी यह समझें कि मैं साइकल पर गेहूँ रखकर आटा पिसाने जाऊंगा तो मुझसे यह नहीं होगा। ' 'हाँ अम्मा' ' - बसन्ती का स्वर था, मैं कॉलेज भी जाऊं और लौटकर घर में झाड़ू भी लगाऊं, यह मेरे बस की बात नहीं है। ' 'बूढ़े आदमी है " अमर भुनभुनाया " चुपचाप पड़े रहें। हर चीज में दखल क्यों देते हैं। "

उपर्युक्त वाक्य में नई पीढ़ी की प्रदर्शन प्रियता, आलस्य, आडम्बर और कामचोरी तथा पुरानी पीढ़ी के प्रति उपेक्षा भाव एक साथ स्पष्ट हो गये हैं। लेखिका ने इन वाक्यों में मध्यवर्गीय सोच, महत्वाकांक्षाओं तथा देश काल को सजीव कर दिया है।

लेखिका ने जहाँ भी अन्तर्मन की बात की है, वह गजाधर बाबू की पीड़ा की ही सूचक है। इस तरह की भावात्मक चिन्तन परक शैली कथानायक के परिवार में भी अकेलेपन को दर्शाती है - 'किसी बात में हस्तक्षेप न करने के निश्चय के बाद भी उनका अस्तित्व उस वातावरण का एक भाग न बन सका। उनकी उपस्थिति उस घर में ऐसी असंगत लगने लगी थी, जैसे सजी हुई बैठक में उनकी चारपाई थी।'

ऐसे स्थानों पर तत्सम शब्दों का प्रयोग तुलनात्मक रूप से अधिक हुआ है । कथातत्व इस कहानी में पर्याप्त है। इसी कथातत्व और स्मृतियों के सहारे गजाधर बाबू की उपेक्षित जिंदगी का सच प्रभावी बन पड़ा है । आर्थिक दायित्वों को निभाते निभाते वे पारिवारिक आत्मीयता खो बैठते है और बच्चों को सामंजस्य और उनके अस्तित्व के महत्त्व के संस्कार नहीं मिल पाते। यह कहानी वर्णनात्मक, कथात्मक और स्मृति परक शैली के मेल से बनी है।

13.6.2 संवाद - कौशल

वापसी' कहानी में कई स्थानों पर छोटे छोटे संवादों के द्वारा पात्रों के पूरे व्यक्तित्व को अभिव्यक्ति दी गई है। इनके माध्यम से गौण पात्र भी सजीव हो उठे है साथ ही कथानायक के व्यक्तित्व को गाढ़ा रग प्रदान करते हैं-

“कभी-कभी हम लोगों की भी खबर लेते रहियेगा। " गनेशी बिस्तर में रस्सी बाँधता हुआ बोला।

"कभी कुछ जरूरत हो तो लिखना, गनेशी। "

कथानायक के व्यक्तित्व के विपरीत उनकी पत्नी का चरित्रांकन निम्न संवाद में हो जाता है-

" बहुत हलके से उन्होंने कहा कि अब हाथ में पैसा कम रहेगा, कुछ खर्च कम होना चाहिए।"

"सभी खर्च जो वाजिब है किसका पेट काँटू? "

"यही जोड़-गाँठ करते करते बूढ़ी हो गई, न मन का पहना, न ओढ़ा। "

यह सामान्य सा कथन गजाधर बाबू को बेहद आहत कर जाता है ।
'नरेन्द्र, और. बसन्ती का कथोपकथन भी गजाधरबाबू के चरित्र को अधिक आहत करने में सहायक है-

"मैं ऐसा खाना नहीं खा सकता।"
बसन्ती तुनक कर बोली - ' 'तो न खाओ, कौन तुम्हारी खुशामद करता है।"

'तुमसे खाना बनाने को कहा किसने था? ' नरेन्द्र चिल्लाया बाबू जी ने ' 'बाबू जी को बैठे बैठे यही सूझता है।"

उपर्युक्त उदाहरणों की यही खूबी है कि हर तरफ से चोट गजाधर बाबू को ही लगती है जबकि परिवार के सदस्यों के खोखलेपन और कामचोरी पर छिपा हुआ व्यंग्य उजागर हो जाता है।

उषा प्रियम्वदा ने छोटे छोटे वाक्यों द्वारा पात्रों के मन की चिन्ता, तीव्रता, बददिमागी, लापरवाही और अक्खडता सब कुछ स्पष्ट हो जाती है।

ये संवाद कथा को गति भी प्रदान करते हैं और कथा के ताने बाने में सघनता तथा द्वद्वात्मक स्थिति को भी उत्पन्न करते हैं।

कहानी के अन्तिम चरण का यह संवाद गजाधर बाबू की हताशा और कहानों के शीर्षक को चुटीला बना देता है-

'परसों जाना है। तुम भी चलोगी?'

"मैं? पत्नी ने सकपका कर कहा - मैं चलूँगी तो यहाँ का क्या होगा इतनी बड़ी गृहस्थी, फिर सयानी लड़की..।"

'वापसी' की संवाद योजना पात्रों के चरित्र को उभारती है, कथा को गति प्रदान करती है, एक वातावरण तैयार करती है और कहानी को स्वाभाविक बनाती हैं। संवाद संक्षिप्त, भावात्मक और आवेगपूर्ण हैं। व्यंग्य और परिवेश के निर्माण में सहायक है।

13.7 उद्देश्य

प्रत्येक रचना का एक निहित उद्देश्य होता है - जिससे लेखक पाठक तक अपना मन्तव्य पहुँचना चाहता है। कभी यह मनोरंजन के रूप में, कभी किसी गम्भीर विचार के रूप में, तो कभी जीवन सत्य के रूप में । प्राय: रचना के शीर्षक में ही रचना का उद्देश्य छिपा रहता है। लेखक शीर्षक ही ऐसा रखता है जो कौतूहल जगाने वाला हो, कोई रहस्य सा प्रतीत हो या पूरी कथा का सार रूप हो। कई बार कथा की त्रासदी या करुणा उत्पन्न करने वाली घटना भी शीर्षक में ही सिमट आती है

'वापसी' कहानी का शीर्षक भी बहुत सा कौतूहल, सार और रहस्य को आत्मसात् किये हैं। सामान्य तौर पर यह गजाधर बाबू की घर वापसी है । सारी उम्र' वे अपने परिवार से अलग रहे। रिटायरमेन्ट के बाद बहुत से सपनों के साथ वे घर लौटते हैं लेकिन घर पर परिवार के साथ उन्हें सबसे अपार अकेलापन मिलता है क्योंकि घरवालों के लिए वे धनोपार्जन के निमित्त मात्र होते हैं ओर सबको स्वतन्त्रता में बाधक भी, अत: अपेक्षित भी हो जाते हैं। यह वापसी उन्हें फिर घर से बाहर जाने को प्रेरित करती है और एक बार फिर उनके अकेलेपन की वापसी होती है। इस वापसी में मूल्यहीनता है, पीढ़ी भेद है, सामाजिक सम्बन्धों में आने वाला परिवर्तन हैं और एक व्यक्ति के स्तर पर भोगी जाने वला पीड़ा है। सबसे बड़ी बात यह है कि परम्परा. से चली आरही पितृसत्तामक व्यवस्था का नकार भी है क्योंकि घर का मुखिया ही यहाँ उपेक्षित हैं।

13.8 मूल्यांकन :

लेखक का उद्देश्य, शीर्षक और प्रस्तुति उसकी रचनाशीलता को महत्वपूर्ण बनाते हैं। उषा प्रियम्बदा ने समय की नब्ज को पहचाना ओर बदलते सम्बन्धों को यथार्थ रूप में सामने रखा। आजादी के बाद आदर्शवादी स्वरूप समाप्त हो चला था। समाज अर्थकेन्द्रित हो रहा था। मध्यवर्ग की महत्वाकांक्षाएँ और सपने बढ़ने लगे थे। दिखावा बढ रहा था और नई पीढ़ी कर्मठता के बजाय मौजमस्ती में घिरने लगी थी। पुरानी पीढी अपने संस्कारों के कारण इस नवीन मूल्यहीनता को स्वीकार नहीं कर पा रही थी।

लेखिका ने इस बदलते दौर को गजाधर बाबू के चरित्र के द्वारा चित्रित किया है। नये मूल्य बनते हैं किन्तु यदि नयी सोच नकारात्मक या कर्महीनता को बढ़ावा देती है तो पाठक की चेतना को झकझोरती है। इस कहानी की विशेषता यह है कि पाठक की सहानुभूति गजाधरबाबू

को मिलती है। पाठक परिवार में बढ़ती स्वार्थवृत्ति को स्वीकार नहीं कर पात । गजाधर बाबू की पीड़ा यहाँ त्रासदी में बदल गई है।

लेखिका ने बड़ी सूक्ष्म दृष्टि से परिवार में घटने वाली छोटी छोटी बातों को साकार कर दिया है । एक प्रकार से गजाधर बाबू के घर का पूरा दृश्य पाठक कल्पना में सजीव रूप में देख सकता है । हरपात्र वहाँ अपना आकार लिये खड़ा है और उन सबके बीच गजाधर बाबू की घुटन और द्वद्वात्मक स्थिति को भी अनुभव कर सकता है। पूरा परिवार उनकी कमाई पर खड़ा है, फिर भी वे उपेक्षित और अनुपयोगी हैं । यही द्वंद्व इस कहानी की मूल संवेदना है।

इस कहानी के माध्यम से उन्होंने नयी परिस्थितियों में टूटने वाली पुरानी संस्कार शील मान्यताओं ओर नैतिक मर्यादाओं की चुनौती को यथार्थ रूप में अंकित किया हैं।

इस कहानी में समाज के बदलते मूल्यों, आर्थिक अभावों व दायित्व बोध की विविध प्रतिबद्धताओं के कारण जिस पीड़ा, दंश, घुटन, एकाकीपन ओर बलिदानी चेतना में व्यक्ति को धुलना पड़ रहा है, उस सबका चित्रण है। वहाँ एक ओर व्यक्ति की निजी भूमिका है तो साथ ही समूचे समाज की चटकती तस्वीर भी हैं। मानव सम्बन्धों की बदलती व्याख्या में समूचे पुराने संदर्भ बदलने लगे हैं । संघर्ष और तनाव की भूमिका पर उभरने वाला अन्तर्द्वंद्व व्यक्ति का पर्याय बन गया है। यही कारण है कि ' वापसी' कहानी का वृद्ध पिता नई पीढ़ी की स्वतन्त्रता में 'मिसफिट' है। उषा प्रियम्बदा हमें किसी अनजान स्थिति के लिए चौंकाती नहीं हैं बल्कि क्रमश स्थितियाँ ही ऐसी बन जाती हैं कि पात्र की परिणति स्वाभाविक प्रतीत होने लगती है। इनकी कहानी में आदर्शवादिता का दुराग्रह नहीं हैं। अत: लेखकीय दृष्टि तटस्थ व निरपेक्ष प्रतीत होती है।

13.9 अभ्यास प्रश्न

1. गजाधरबाबू का रेल्वे क्वार्टर का जीवन कैसा था?
2. गजाधर बाबू अपने घर लौटने पर रेलवे के जीवन को क्यों और कैसे याद करते हैं?
3. 'गजाधर बाबू स्वभाव से बहुत स्नेही व्यक्ति थे और स्नेह के आकांक्षी भी। ' इस पंक्ति के आधार पर उनके चरित्र की विशेषताएं बतलाइये।
4. 'वापसी' कहानी क्या दो पीडियों के संस्कारों के टकराव की कहानी है? स्पष्ट कीजिए ।
5. ' वापसी' कहानी में मध्यवर्ग का चित्रण किन आधारों पर किया गया है ।
6. ' वापसी' कहानी का परिवेश यथार्थपरक है, स्पष्ट कीजिए ।
7. 'वापसी' की संवाद योजना सफल और सार्थक है - उदाहरण सहित स्पष्ट कीजिए ।
8. 'वापसी' में गजाधर बाबू की पत्नी की चारित्रिक विशेषताओं पर प्रकाश डालिए ।
9. 'वापसी' कहानी का शीर्षक, उसके उद्देश्य को व्यक्त करने में कहाँ तक सफल कहा जा सकता है?

10. वापसी कहानी की मूल संवेदना का विश्लेषण कीजिए ।
11. जिस व्यक्ति के अस्तित्व को पत्नी माँग में सिन्दूर डालने की अधिकारी है, समाज में उसकी प्रतिष्ठा है - क्या यह पंक्ति एक पति की पीड़ा व्यक्त करती है या समाज व्यवस्था की सूचक है? इस पंक्ति में छिपे हुए परिवर्तन को स्पष्ट कीजिए ।

13.10 संदर्भ

1. डॉ. नामवर सिंह - कहानी: नयी कहानी
2. डॉ. सुरेश सिन्हा - नयी कहानी की मूल संवेदना
3. कमलेश्वर - नयी कहानी की भूमिका
4. डॉ. इन्द्रनाथ मदान - हिन्दी कहानी: अपनी जबानी
5. डॉ. देवी शंकर अवस्थी - विवेक के रंग

इकाई 14

'आशा अमरधन' (विजयदान देथा)

इकाई की रूपरेखा

14.0 उद्देश्य
14.1 प्रस्तावना
14.2 कहानी का वाचन
14.3 कठिन शब्दों के अर्थ
14.4 संदर्भ सहित व्याख्या
14.5 कथावस्तु
14.6 चरित्र चित्रण
14.7 वातावरण (परिवेश)
14.8 संरचना शिल्प (भाषा शैली)
14.9 सारांश
14.10 संदर्भ ग्रन्थ
14.11 बोध प्रश्न एवं उनके उत्तर

14.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई में आप विजयदान देथा की कहानी 'आशा अमरधन' को पढ़ेंगे ।

विजयदान देथा (बिज्जी) देशज परंपरा के सिद्धहस्त कथाकार हैं जिन्होंने राजस्थान की लोककथाओं का संग्रहण - पुर्नसृजन किया है । उनकी अपनी कहानियाँ भी लोक की बोली-बानी से इस तरह उपजती हैं मानों वे भी लोक कथाएँ ही हों । 'आशा अमरधन' उनकी ऐसी ही प्रसिद्ध कहानी है जहाँ मानव चरित्रों का सूक्ष्म अंकन मिलता है । मनोवृतियों को ठीक-ठीक पहचानना और उन्हें पहचानकर सटीक अभिव्यक्ति देना कहानी को कोरे मनोरंजन से ऊपर उठाकर सृजनात्मक उपलब्धि बना देता है । बिज्जी इस कला में सिद्धहस्त हैं, वे कहानी की निष्कपट प्रतीक्षा का मार्मिक चित्र खींचते हैं । कहानी कहने की उनकी शैली ऐसी है कि कथा रस में पाठक अंदर तक भीग जाता ओर और कहानी खत्म होने के बाद भी उसके भीतर स्थाई जगह बना लेती है ।

इस कहानी को पढ़ने के बाद आप :

1. कहानी के मूल पाठ का वाचन, कठिन शब्दों के अर्थ तथा गद्यांशों की व्याख्या करने की योग्यता में अभिवृद्धि कर सकेंगे ।
2. कहानी के तत्वों के आधार पर उसका विवेचन विश्लेषण कर सकेंगे ।
3. कहानी के शीर्षक की उपयुक्तता का निर्णय कर सकेंगे ।

14.1 प्रस्तावना

आशा अमरधन' राजस्थान केर रेतीले क्षेत्र मारवाड़ के गरीब किसान परिवार की कहानी है । एक किसान बनिये से कर्ज लेकर कुआँ खोदने की हिम्मत करता है लेकिन अकाल पड़ गया और उसकी पत्नी की मृत्यु भी । किसान के परिजन उसका नाता (पुनर्विवाह) करवा देते हैं और उसके दोनों अबोध बच्चों के लिए सौतेली माँ आ जाती है । इधर हालात ऐसे कि सालभर इंतजार करते-करते आखिर पति पत्नी (अकाल से बचने) मालवा जाने का मानस बनाते है।

सौतेली माँ प्रस्ताव रखती है कि दोनों बच्चों की 'यहीं मार-मूरकर खिसक जाएँ तो ठीक रहेगा । 'पिता इस प्रस्ताव से भौचक रह जाता है और समझौता यह होता है कि दोनों बच्चों को घर में बंदकर चले जाएँगे ताकि हत्या का पाप भी न लगे और छुटकारा भी मिल जाए । वे मालवा चले जाते हैं । बहन-भाई को यह दिलासा देकर कि मजदूरी पर जाते हैं सांझ ढलते ही आ जाएँगे, भूख लगे तो सोगरे-राब खा लेना ।

मालवा में साल भर बीताने के बाद वर्षा ऋतु का आगमन होता है । बादल ऐसे बरसे कि कुछ मत पूछो । इधर पीछे भाई बहन से पूछता है माँ और बापू कब आएँगे? बहन का उत्तर है, साँझ तो बहन से पूछता है माँ और बापू कब आएँगे? बहन का उत्तर है सांझ तो उनके आने पर ही होगी । उनके आये बिना भला साँझ कैसे हो सकती है? 'बिज्जी लिखते हैं - 'और उस झोपड़ी में पूरे बरस तक साँझ पड़ी ही नहीं । उन बच्चों का अडिग विश्वास था कि साँझ पड़ती तो उनके माँ बाप जरूर आते । 'दोनों पति पत्नी घर लौटे, पत्नी की गोद में चार महीने का बाल गोपाल था । पत्नी घर आते ही, घर के भीतर बच्चों की आवाजें सुनती हैं तो उतावली से कूंटा खोल अंदर जाती है । और दो-दो तमाचे जड़ कर न मरने के लिए कोसती है । दोनों बच्चे यह सुनते ही लुढ़क गए । बिज्जी की यह कहानी लोक विश्वास का अदम्य उदाहरण है जहाँ आशा उन बच्चों के लिए अमरधन साबित होती है ।

14.2 कहानी का वाचन

किसान जीवन

किसी गाँव के पुराने घूरे पर एक किसान की झोंपड़ी थी । साठ-पैंसठ बीघा मगरेटी (पथरीली) जमीन! मारवाड़ में बादलों के भरोसे पानी की बजाय दूसरे-तीसरे बरस कुर्रा या अकाल तो निश्चित टपकते हैं । इस जोखम से बचने के लिए नासमझ किसान ने एक बनिये को बोहरा थरप काटा-मिती और चक्रवष्द्धि ब्याज की दर से कुआँ खोदने का दुस्साहस किया । घुटने के बीच दबा बकरा कसाई के हाथ की छुरी से बचे तो 'नो-कूँटी मारवाड़' का किसान बोहरे के कान में खोंसी कलम से बचे । कुएँ में सहजे का पानी, बोहरे का कर्ज, पाँवों के नीचे मगरेटी जमीन, ऊपर आकाश में अविश्वासी बादल, घर में प्रतिवर्ष ब्यानेवाली जोय और आठों प्रहर नोचने को ठाकुर-इन छह दुश्मनों के चंगुल में स्वयं भगवान भी फँस जाए तो मुँह में त्रण लेकर उसे सौ बार शिकस्त खानी पड़े । फिर मारवाड़ के जनम-दुखियारे किसान की तो बिसात ही क्या!

पत्नी की मृत्यु और नाता

प्रतिवर्ष प्रसव से उत्पीड़ित घरवाली तो दो रोते-बिसुरते बैरियों को पीछे छोड़कर उस नारकीय जिन्दगी से हमेशा के लिए छुटकारा पा गयी । पर रक्त-संबंधों की पुश्तैनी आत्मीयता का दावा करते हुए परिजनों ने किसान की भलाई के निमित्त उसका 'नाता' करवा दिया ।

.....सौतेली-माँ का शुभागमन मौत की अपेक्षा अधिक भयानक होता है ।

मालवा जाने का मानस और छुटकारा

बनिये का ब्याज तो चालू था, मगर सहजे का पानी खूट गया और किसान की आँखों के स्रोत चारों ओर से खुल गये ।

.....माँ-बाप ने सलाह-सूत विचार कर मालवा जाने का मानस बनाया । सद्व्यवहार, शिष्टाचार या दिखावा जैसी फालतू बातों से माँ का दूर-दराज तक कोई सरोकार नहीं था । कसैली वाणी में पति को अपने ओजर की बात बतायी, 'इन जमदूतों को साथ लें तो मालवा में भी चैन नहीं मिलेगा । इन्हें यहीं मार-कूकर खिसक जाएँ तो ठीक रहेगा । '

पति की जुगत

पति ने सफाई देते कहा, 'मै साथ लेने की बात नहीं करता । हत्या का पाप भी न लगे और इन अभागों से पीछा छूट जाए, ऐसा उपाय बताऊँ तो मानेगी?'

.....बस आठ-दस सोगरों और हँड़िया-भर राब से सारा काम सलट जाएगा । हम आज ही मालवा के लिए रवाना हो सकते हैं । कोई दिक्कत नहीं । बाहर कूँटा लगाकर बच्चों को भीतर छोड़ देंगे । छींके में राव की हाँडी और सोगरे धरकर इन्हें अदीठ किस्मत के हवाले कर दें । फकत विदा होते समय तू जरा लाड़ से पुचकार कर कहना कि दिहाड़ी लेकर साँझ को वापस आ रहे हैं । अबूझ बच्चे कुछ दिन तक हमारी बाट देखते रहेंगे । फिर भूखे-प्यासे अपने-आप ही सूखकर पिंजर हो जाएँगे ।

माँ का दुलार

होशियार घरवाली ने पति के मन की बात ताड़ ली । उसका मन रखने की नीयत से दोनों बच्चों का माथा सहलाया । गालों पर चुम्मे दिये । चाशनी की नाई मीठे स्वर में मुस्कराते बोली, 'मेरे सयाने बच्चों, तुम आपस में लड़ना नहीं । रूठना नहीं । एक-दूजे से प्रेम करना । हम मजदूरी करके साँझ की वेला वापस आ रहे हैं । तुम्हारे लिए दो झुनझुने लाएँगे । खूब खेलना-रमना । छींके में राव और सोगरे पड़े हैं । भूख लगे तो खा लेना । टिमची पर पानी की मटकी भरी है । प्यास लगे तो पी लेना । मेरे राज-दुलारो, अब हम जाएँ? '

सारी माया पानी

मार्ग में पति पत्नी का संवाद चल रहा है ।

(पति के) भीतर का मवाद बाहर आने के लिए छटपटा रहा था । लेकिन परिणाम के भय से तमाम शरीर में सिहरन दौड़ गयी । अदेर मन की बात सँवारते बोला, 'अपनी अथक मेहनत से खोदा कुआँ छोड़ने पर टीस उठती ही है ।'

पत्नी ने राहत की साँस ली । विमुक्त भाव से कहा, 'अब कहीं मन को चैन मिला । मैंने तो सोचा, बात कुछ दूसरी ही है । पर कुएँ में पानी न हो तो हम भी क्या करें? यदि कुएँ का पानी नहीं खूटता ता जिन्दा रहते उसे छोड़ते भला? लाचारी जो न कराए, थोड़ा है । कुएँ में पानी न हो तो उसमें धमाक देने से रहे ?'

जाने-अजाने ही पिता की दुखती रग छिड़ गयी । कहने लगा, हाँ, यह बात तो तेरी एकदम सही है । इस संसार में सारी माया पानी की है । बस, पानी को तो पानी की माँ ने ही जना है । मरना अच्छा, पर भगवान किसी का पानी नही खुटाए!'

कबूतर जैसा कमजोर दिल

और यों चलते-चलते आकाश में चारों ओर साँझ घिर आयी । एक गहरे-घुमेर बरगद की छाँह में दोनों विश्राम करने के लिए बैठे । पश्चिम दिशा में हलके सिन्दूरी रंग की लाली फैल रही थी । पिता ने अनमने भाव से पूछा, 'बच्चे अपनी बाट जोह रहे होंगे । रात का अँधेरा छाने पर वे जरूर रोएँगे । चिल्लाएँगे । कोई दयावन्त उनकी पुकार सुनकर उन्हें अपने घर ले जाए तो कैसा उम्दा काम बने!'

पत्नी को हलका-सा झटका लगा, मानो माथे पर किसी ढीठ ततैया ने डंक मार दिया हो । क्षण भर के लिए वह तिलमिला उठी । फिर एक गहरा उच्छ्वास भरकर तिक्त वाणी में कहने लगी, 'इतनी दूर आने पर भी तुम्हारे मन में वही कसमसाहट टीस रही है? ऐसा ही स्नेह उमड़ रहा है तो वापस लौट जाओ । अभी तो कुछ नहीं बिगड़ा ।'

पति ने गरदन हिलाते सफाई देनी चाही, 'वापस लौटने की बात मैंने कब कही? पर मन में बच्चों का बिछोह कहीं-न-कहीं साल रहा है । हिम्मत रखने की बहुत कोशिश करता हूँ फिर भी याद फड़फड़ाये बिना नहीं रहती ।'

'यह तो फकत तुम्हारे मन की कमजोरी है ।' अँगुलियों के कटके निकालते पत्नी बोली, 'ऐसा कमजोर दिल तो कबूतर का भी नहीं होता ।'

साँझ कब ढलेगी

और उधर बच्चों की झोपड़ी में गोधूली का उजास सिमटने लगा तो अटपटी वाणी में भाई ने पूछा, 'साँझ ढलने में अब कितनी देर है? माँ और बापू कब आएँगे?'

भाई को आश्वस्त करने के लिए बहन पुचकारकर बोली, 'साँझ तो उनके आने पर ही होगी! उनके आये बिना भला साँझ कैसे हो सकती है? '

आधी रात ढलने पर उसने फिर पूछा, 'क्या साँझ हो गयी?'

बहन उसे थपथपाते कहने लगी, 'साँझ पड़ती तो माँ-बापू आ नहीं जाते? अभी साँझ होने में काफी देर है ।'

और उस झोपड़ी में पूरे बरस तक साँझ पड़ी ही नहीं । उन बच्चों का अडिग विश्वास था कि साँझ पड़ती तो उनके माँ-बाप जरूर आते ।

एक बरस बाद

पूरे एक बरस के उपरान्त ऋतुओं का प्रत्यावर्तन सम्पन्न हुआ । सावन-भादों के दौरान काले-कजरारे बादल धरती पर ऐसे बरसे कि कुछ मत पूछो! मानो समन्दर ही उलट पड़ा हो । दोनों पति-पत्नी छलकते मन से अपने गाँव लौट रहे थे ।

बादलों के पानी का परस पाते ही धरती तो जैसे मुँह बोलने लगी । पत्नी की गोद में चार महीनों का नन्हा बाल-गोपाल था । आकाश के बादलों में मीठा पालर पानी था ।

अपने कुएँ की बाड़ के पास आते ही जब माँ की गोद में ऊँघता बच्चा रोया तो उसका रिरियाना सुनकर बाप की आँखों में आँसू छलक आये । वह रुँधे गले से बोला, तेरा दिल बहुत मजबूत है । और मैं बेहद डरपोक हूँ । अब तो वे दोनों सूखकर कंकाल हो गये होंगे । पहले तू झोपड़ी में जाकर उन्हें बाहर फेंकना । मुझ से नहीं फेंके जाएँगे । बस, इतनी दया और कर दे तो तेरा एहसान कभी नहीं भूलूँगा ।'

झोंपड़ी के भीतर

पत्नी तेज-तेज कदमों से और पति सिहरते-धूजते पाँवों से झोपड़ी के पास पहुँचे तो उन्हें भीतर कुछ फुसफुसाहट सुनाई दी । कानों पर यकायक भरोसा नहीं हुआ । बाहर का कूँटा जसका-तस लगा हुआ था । आँखों पर अभरोसा भी कैसे करें? कहीं भूत-पलीतों की लीला तो नहीं है?

माँ कच्ची दीवार से कान सटाकर सुनने लगी । सचमुच झोपड़ी के भीतर किसी बच्चे की आवाज, सुनाई दी, 'माँ-बापू क्यों नहीं आये? क्या अब तक साँझ नहीं हुई?'

बच्ची ने लाड़ से दुलारते ढाढस बँधाया, 'मेरे लाड़ले बीर, अभी साँझ कहीं हुई? साँझ होती तो माँ -बापू वापस आते नहीं क्या? तू थोड़ी हिम्मत रख वे हमारे लिए दो झुनझुने लाएँगे।

'साँझ हो गयी

माँ ने उतावली से कूँटा खोला । खड़खड़ाहट सुनकर दोनों भाई-बहन खुशी में तालियाँ बजाते हुए नाचने लगे, 'साँझ हो गयी! साँझ हो गयी! माँ-बापू आये । हमारे लिए झुनझुने लाये । 'पर झुनझुनो के बदले उनके गालों पर दो-दो तमाचे इनायत हुए । रोष के मारे वह दाँत पीसते

बोली, 'दुष्ट, हरामजादो, तुम अभी तक जीवित हो? मरे नहीं? तुम शैतानों से तो मौत भी बिदकती है!'

माँ का इतना कहना हुआ कि दोनों बच्चे चकरघिन्नी खाकर अदेर नीचे लुढ़क पड़े । माँ का विकराल रूप देखकर मौत ने उन्हें तुरन्त गले लगा लिया । बाप ने पागल की नाई उन्हें खूब झिझोड़ा, तब भी उनकी आँखें नहीं खुलीं । मानो विश्व-जगत् के समूचे आलोक को वे अपने भीतर लील रही हों!

14.3 कठिन शब्दों के अर्थ

घूरा - कचरे का ढेर, बीर-भाई, खूट जाना- समाप्त हो जाना, ओजर की बात - मन की बात, निरावष्त - नग्न, अकरम - दुष्कर्म, अनैतिक कार्य, निर्मम - ममताहीन उनमान - समान, नैसर्गिक - सहज, प्राकृतिक, पोसाल - पाठशाला, स्कूल, मुरौवत - शील, संकोच, कूँटा - अर्गला, आड़ू, ताबेदार - आज्ञापालक करकसा - कर्कशा, खराब स्वभाव वाली, मगज - दिमाग, मस्तिष्क, अदीठ - दृष्टि के पीछे से, ठोलों - दुत्कार, नौ कूँटी मारवाड़ - नौ दिशाओं वाला मारवाड़ ।

14.4 संदर्भ सहित व्याख्या

1. दुनिया में एक दिन सब-कुछ खूटता है पर मनुष्य के मन हो कभी आशा नहीं खूटती । यह आधार-आकाश फकत आशा के सहारे ही जुगजुगान्तर से टिका हुआ है ।

संदर्भ- ये पंक्तियाँ विजयदान देथा द्वारा रचित 'आशा अमरधन' कहानी से उद्धृत हैं । पति-पत्नी, अकाल के कारण मारवाड़ छोड़, मालवा जा रहे हैं । दोनों को इस बात की पीड़ा है कि कुएँ में पानी खूट गया और उन्हें घर छोड़कर जाना पड़ा । पत्नी को आशा है कि अगले बरस सब बातें भली होंगी । पानी बरसेगा और उसकी कोख भी भरेगी । तब उसका पति कहता है कि मनुष्य के मन से आशा नहीं खूटती ।

व्याख्या- पति स्वीकार करता है यह ठीक है कि अगले बरस सब बातें भली होंगी और खूब पानी होगा । फिर वह कहता है कि दुनिया में सारी चीजें नष्ट होती हैं, लेकिन मनुष्य के मन की आशा कभी नहीं खत्म होती । दर असल पति पत्नी की जिद के कारण घर पर अपने दो अबोध बच्चों को छोड़ आया है ताकि वे भूखे प्यासे मर जाएँ लेकिन उसके भीतर भोली आशा है कि शायद कोई दयावन्त उन्हें उनकी चीख पुकार सुन उन्हें ले जाए और वे बच जाएँ । तभी वह आगे कहता है कि यह आकाश केवल आशा के सहारे ही टिका हुए है बाकी जाने कब धरती पर आ गिरता । यहाँ पिता की भावनाओं का उद्वेलन द्रष्टव्य है जहाँ उसका विवेक जानता है कि बच्चे बचेंगे नहीं क्योंकि वे दोनों उनकी मृत्यु का इंतजाम कर आए है लेकिन मन फिर भी नहीं मानता । यही आशा का अमर धन जो मनुष्य को सारी विपत्तियों से जूझने और हार न मानने की प्रेरणा देता है ।

विशेष

विजयदान देथा मनुष्य के भीतर चल रहे द्वन्द्व के बीच भी आशा की अमरता का विश्वास जगाते हैं । कहानी लोक कथा की भाँति युगों-युगों के अनुभूत सत्य की सृष्टि करती है जहाँ पिता के दुःखी मन से भी आशा का अमर धन क्षरित नहीं हुआ है और वह आकाश के टिके रहने की भाँति एक भोला विश्वास मन में बाँधकर चल रहा है ।

2. 'बेचारे ये पंछी-जिनावर आदमी की जरूरत और चिन्ता के बारे में क्या समझें? क्या जानें? इनमें इतनी बुद्धि ही कहीं है जो दूर की सोच सकें । भविष्य की सार-संभाल कर सकें । उसे सँवर सें । ओर तो और ये पानी तक भरकर नहीं रख सकते! हर बार प्यास लगने पर पानी की टोह में भटकते रहते हैं । और आदमी अपनी सुविधा के लिए परिण्डे में पानी भरकर रखता है । टीका ओर कुआँ खुदवाता है । ऊँट, हाथी और घोड़े उनकी जरूरतों के लिए नहीं आदमी की खातिर अपनी पीठ पर बोझा ढोते हैं । अपने गले उतरेगा तो अपनी भूख मिटेगी! आदमी का मगज मिला है तो आदमी की तरह सोचो । समझो ।'

संदर्भ -

उपर्युक्त गद्यांश विजयदान देथा की कहानी 'आशा अमरधन' से लिया गया है । इन पंक्तियों में मारवाड़ से घर छोड़ मालवा जा रहे किसान पति-पत्नी का संवाद है । पति बार-बार घर पर मरने के लिए छोड़ लिए गए बच्चों की याद में अधीर हो रहा है । इन बच्चों की मृत्यु का कारण सौतेली माँ अर्थात् किसान की नयी पत्नी है । वह नहीं चाहती थी कि पहली पत्नी की ये निशानियाँ जीवित रहे । अकाल के कारण उसे इन्हें मारने का अवसर मिल गया था।

व्याख्या -

पति पत्नी मालवा जा रहे हैं । रास्ते में टिटहरी का जोड़ा उनके सिर पर से गुजरता है पति कहता है ये पंछी भी अपने बच्चों से मिलने की खातिर लौट रहे है । तब पत्नी प्रतिवाद करती है और वह मन के ऊपर तर्क की (कुटिल बुद्धि की) स्थापना करती हुई कहती है कि पंछी और जानवर मनुष्य की तरह सोचने समझने में असमर्थ हैं । इन्हें भविष्य की सार-संभाल और संवारने की समझ नहीं है । वह उदाहरण देती है कि प्यास तो इन्हें भी लगती है लेकिन ये मनुष्यों की भांति परिण्डां भर कर नहीं रख सकते, प्यास लगने पर भटकते हैं । फिर कहती है कि ऊँट, हाथी-घोड़े आदमी की जरूरत के लिए बोझा ढोते हैं । वह कहती है अपने गले उतरेगा तो अपनी भूख मिटेगी! आदमी का मगज मिला है तो आदमी की तरह समझो । वस्तुतः वह पति के बच्चों की हत्या को उचित ठहराने के लिए तर्क दे रही है कि यदि बच्चे भी मालवा साथ चलते तो पति-पत्नी कमाने से ज्यादा उनकी देखभाल में ही लगे रहते अथवा यह मान लिया जाए कि उनकी वजह से खर्चा तो होता ही और उनके जीवित रहने में सौतेली माँ को कोई लाभ नहीं दिखाई दे रहा था । मनुष्य का दिमाग मिलने का उसका मतलब है कि अपने हित की बात सोचो । पत्नी को अपना हित नजर आ रहा था, उसे लगता था कि जब उसके अपने बच्चे होंगे तब भी अगर पिछली पत्नी के बच्चे जीवित रह गए तो उसके बच्चों का हित प्रभावित होगा । अतः वह अपना स्वार्थ पति पर थोपा रही है और उसे उचित ठहरा रही है ।

विशेष-

विजयदान देथा स्त्री पात्र के मन की गहराई को उकेर रहे हैं । यहाँ स्त्री का मन और त्रिया चरित्र अपने पूरे रंग-राग के साथ उपस्थित हुआ है ।

भाषा की दृष्टि से देखें तो उनकी कहानी लोक रंग के तमाम उपकरणों को साधने में सफल रही है । यह भाषा देशज शब्दों के माध्यम से आंतरिक सच्चाई को प्रकट करने में सर्वथा सक्षम है ।

14.5 कथावस्तु

आशा अमरधन कहानी का वस्तु विन्यास लोक कथा शैली में ढला हुआ सुध्ड़ है । नाटकीयता, अनार्द्वन्द्व और कौतुहल मिलकर कहानी को अत्यंत रोचक बना देते हैं । सौतेली माँ की कुटिलता, पिता की लाचारी और बच्चों की दृढ़ आशा कहानी को गतिमान करते हैं । लोक कथा शैली में ढली होने से कहानी में कहावतों और लोक जीवन के शब्दों का प्रचुर प्रयोग किया गया है ।

कहानी का आरम्भ लोक कथाओं जैसा हुआ है - समन्दर गहरा कि आशा गहरी । धरती भारी कि आशा भारी । पहाड़ अविचल कि आशा अविचल । फूल हलका कि आशा हलकी । हवा सत्वर कि आशा सत्वर । सूर्य प्रखर कि आशा प्रखर । ईश्वर अमर या आशा अमर । फिर आगे बिज्जी लिखते हैं किसी गाँव के पुराने पूरे पर एक किसान की झौंपड़ी थी । कहानी सुनाने का यह अंदाज ठेठ देसी है । अकाल का मारा किसान अपनी दूसरी पत्नी, पहली पत्नी की अकाल मौत हुई है, के साथ परदेस जा रहा है । सौतेली माँ बच्चों को मार डाल डालना चाहती है । पिता उसे रोकता है ओर फिर वे उन्हें घर में बंद कर छोड़ जाते हैं । साल भर बाद जब लौटते हैं तो दोनों जीवित मिलते हैं लेकिन सौतेली माँ की दुत्कार उन्हें मृत्यु तक पहुँचा देती है ।

इस घटनाक्रम में साल भर बच्चों का जीवित रहना असंभव प्रतीत होता है लेकिन यह लोक शैली है जहाँ ऐसे जादू पर अविश्वास नहीं किया जाता । दरअसल यह हमारा अपना देसी जादुई यथार्थवाद है जैसे तोता मैना की जोड़ी । बच्चों का मासूम विश्वास की साँझ होते ही माँ-बापू आ जाएँगे उन्हें जिलाए रखता है । कहानी किसान की पीड़ा से प्रारंभ होती है और बच्चों की मृत्यु से अंत वेदनापूर्ण हो जाता है । बिज्जी, इसे रोचक बनाए रखने के साथ सवाल छोड़ जाते हैं कि पड़ी-पड़ी मटकियाँ यों पानी सोखती रहें तो प्यासे गलों का क्या हाल होगा ? प्रश्नों से शुरू हुई कहानी प्रश्न पर ही पूरी होती है ।

14.6 चरित्र चित्रण

कहानी में कुल चार पात्र है - किसान पति, उसकी पत्नी और दो अबोध बच्चे । किसान की पहली पत्नी की मृत्यु का आशिक विवरण और नयी पत्नी से उत्पन्न पुत्र का उल्लेख भी कहानी में है । कहानी के सबसे प्रभावशाली पात्र हैं दोनों बच्चे । तीन बरस की बहन और भाई दो बरस का । सौतेली ही सही माता तो उनके लिए माता है । माता पिता परदेस जा रहे हैं । माँ झूठी प्रीत दिखाकर लाड़ जता रही है ताकि जाने में अवरोध न हो । पिता जानता था कि

लाड़ की वजह क्या है इसलिए उसकी आँखे भर आयी और गला रूँध गया । बेटी से देखा न गया और माँ से बोली "माँ, थोड़ा इधर देख, बापू रो रहे हैं । हमारा सोच करने की जरूरत क्या है? हम तो साँझ तक यूँ ही खेलते-कूदते रहेंगे । मैं अपने भैया को खूब रमाऊँगी ।" और आखिर में जब पिता कूँटा लगाकर किवाड़ बंद कर रहे थे, फिर कहती है, 'बापू! शाम को जल्दी आना । हमारे लिए झुनझुने लाना । 'अब दोनों अकेले हैं । एक बरस तक । भाई को याद आई तो बहन से पूछा माँ बापू कब आऐगे? तो बहन का विश्वास देखिए - "साँझ तो उनके आने पर ही होगी! उनके आये बिना भला साँझ कैसे हो सकती है ? जब आस टूटी विश्वास दरका तो मौत ने उन्हें तुरन्त गले लगा लिया । बच्चों के मन की कोमलता पाठक को विश्वास दिलाती है कि वे जरूर जीवित रहे होंगे भले ही एक बरस तक उन्हें रोटी-पानी न मिला हो।

बिज्जी स्त्री के मन की गहराई जानते हैं तभी वे सौतेली माँ का दमदार चरित्र गढ़ सके । सौतेली माँ को आमतौर पर पति के पहले वाले बच्चे नहीं सुहाते । तभी अकाल का बखत आते ही वह पहली बात यही कहती है 'इन जमदूतों को साथ लें तो मालवा में भी चैन नहीं मिलेगा । इन्हें यहीं मार-मूरकर खिसक जाएँ तो ठीक रहेगा ।'

सौतेली माँ का कलेजा बड़ा मजबूत होता है । जब तय हो गया कि बच्चों को घर में बंद कर मरने के लिए छोड़ जाएँगे तब बुझी-बुझी चाल से झोपड़ी में जाकर सगी माँ के समान सौतेले बच्चों का लाड़-दुलार किया । लूगड़ी के पल्लू से उनकी आँखें पोंछी । अपने मेहँदी लगे हाथ से उनका मुँह धोया । आँखों में काजल सारकर उन्हें पुचकारा । गुड़ के समान मीठी वाणी में उन्हें बहलाया । यह सोचकर कि अब तो इन दुष्टों से पीछा छूट जाएगा' । पति कहता है कि आठ-दस सोगरे और धर दे । कुल्हड़ की बजाय राब से हाँडी भर दे । लेकिन उसका कलेजा नहीं काँपा - 'ये सँपोले पाँच दिन में ठिकाने लगें तो वही बात और दस दिन में ठिकाने लगें तो वही बात । आखिर एक दिन तो ये मर-खूटेंगे ही । फिर इतना सामान क्यों बरबाद करने पर तुले हो । कुछ तो मगज लडाओ ।' फिर जाते जाते उसने बच्चों को और लाड़ लड़ाए; सहलाया, चूमा, झुनझुने लाने का वादा किया । दर असल वह दुष्ट पात्र है और होशियार - चतुर भी, जो अपनी बात मनवाना जानती है । दुष्टता को ऐसी गहरी समझ देकर बिज्जी ने इस पात्र को बहुत महत्त्वपूर्ण बना दिया । उसके बोल उसकी मानसिक मजबूती के गवाह हैं- 'मैं आसानी से थकने वाली नहीं हूँ और 'अपने गले उतरेगा तो अपनी भूख मिटेगी ।' अंत में जब उसे ज्ञात होता है कि बरस बीतने पर भी बच्चे जीवित हैं तो वह सह नहीं पाती उन्हें तमाचे जडती है और कोसती है 'दुष्ट, हरामजादो, तुम अभी तक जीवित हो ? 'मरे नहीं' तुम शैतानों से तो मौत भी बिदकती है ।'

पिता का चरित्र बेहद कमजोर है । बिज्जी उसे लुगाई का ताबेदार कहते हैं, ढुलमुल और लाचार । बच्चों को मार डालने के प्रस्ताव पर सहमती वाणी मे कहता है 'इस अकरम की खातिर मुझसे तो 'हाँ' भी नहीं भरी जाती । बहुत कमजोर दिल है मेरा । तेरे जित्ती हिम्मत नहीं

है मुझमें । 'और जुगत देता है । बाहर कूँटा लगाकर बच्चों को भीतर छोड़ देंगे । छींके में राव की हाँडी और सोगरे धरकद इन्हें अदीठ किस्मत के हवाले कर दे । 'अबूझ बच्चे कुछ दिन तक हमारी बाट देखते रहेंगे । फिर भूखे-प्यासे अपने-आप ही सूखकर पिंजर हो जाएँगे । बहलाने से वे रोऐगे-रीकेंगे नहीं । बता, मुझे कैसा उपाय सूझा? वह अव्यावहारिक है और भावुक भी । जब बच्चों छोड़ दिया तो उन्हें मारना ही है ऐसे में और सोगरे रखने का क्या तुक! पत्नी उसे ठीक हड़काती है और इसे झूठा दिखावा कहती है । वह पूछता है - तू अपने जायो जनमों को इस तरह छोड़ सकती है? पत्नी बेहद सुन्दर जवाब देती है - 'तुम अपने जाये-जनमो को छोड़कर जा ही रहे हो!' यात्रा में फिर भावुकता भरी बातें करता है और दुःख से भरे बयान भी- 'बस, पानी को तो पानी की माँ ने ही जना है ।'

वस्तुत: कहानी में आए चरित्र तो गाँव के पथरीले यथार्थ से उपजे हैं और अपने गुणों - दुर्गुणों को लिए प्रति प्रतिनिधि देशज पात्र बनने की योग्यता रखते हैं ।

14.7 वातावरण

'आशा अमरधन' राजस्थान में अक्सर पड़ने वाले अकाल और सूखे के वातावरण से उपजी है । अकाल की काली छाया पूरी कहानी पर मंडरा रही है । यह सूखा अत्यधिक भयानक हो जाता है जब सौतेली माँ की सारी ममता को ही लालच में सुखा डालता है । मारवाड़ का गाँव । किसान । पूरे पर झोपड़ी और मगरेटी जमीन । प्रारंभ के ये वाक्य ही पूरे वातावरण की समष्टि कर देते हैं । अकाल के जोखम से बचने के लिए किसान ने उधार लेकर कुआँ खोदने का दुस्साहस किया और कुआँ भी सूख गया ।

कहानी चरित्र प्रधान है अत: यहाँ दूसरे वर्णनों के लिए बहुत अवकाश न था लेकिन बिज्जी यहाँ भी बीच में जरा सी गुंजाइश निकाल लेते हैं । एक उदाहरण - 'पीपल के पान फरफराते रहे । पंछी इधर-उधर उड़ते रहे । धूप चटखती रही । हवा इठलाती रही ।'

आखिर में बरसात होती है । झमाझम । लेकिन कथाकार का कौशल यह कि ट्रेजेडी का अवसाद कैसे निकल आता है - 'कुदरत किसी के लिए भी आहत या सन्तप्त नहीं होती । वह तो अपनी मौज से अपने हर कार्य-व्यापार में मशगूल रहती है । उसकी मौज हो तो बरसे, न हो तो सूखा पड़े । पर उस दिन वह अपनी मौज में झमाझम बरस रही थी । बादल अपनी गर्जन-तर्जन में मगन थे । बिजलियाँ रह-रहकर अपनी मौज में दमक रही थीं । बाहर धरती की सोंधी गन्ध महक रही थी । और झोपड़ी के भीतर हाँडी में राव की फफूँद मार धधक रही थी ।'

14.8 संरचना शिल्प: भाषा शैली

सुपरिचित साहित्यकार कर्मेन्दु शिशिर ने लिखा है - 'यह अकारण नहीं कि देथा की भाषा में जातीय परंपरा अपने पूरे वैभव के साथ प्रस्तुत हुई है । उनकी भाषा तो कहावतों, मुहावरों,

लोकोक्तियों और कथन की चुटीली उक्तियों से अँटी पड़ी हैं । भाषा का वाग्वैदग्ध ऐसा कि पाठकीय कौतूहल अन्त तक बना रह जाता है, क्योंकि उनकी भाषा में एक तरह का सम्मोहन है ।

विजयदान देथा मूलत: मनुष्य की पीड़ा का उद्घाटन करने वाले कथाकार हैं और इस पीड़ा के उद्घाटन में वे आध्यात्म का भरपूर सहारा लेते हैं । यह कारण है कि उनके यहाँ कवित्वपूर्ण दृष्टि और मार्मिक उक्तियाँ जहाँ तहाँ मिल जाती है । खास बात यह है कि वे इनका उपयोग कर कहानी को रोचक और विश्वसनीय बना देते हैं ।

भाषा का जादू कहानी में आए कुछ वाक्यों ही देखा जा सकता है -

- उसने तो कहीं किसी पोसाल में लिहाज-मुरौवत की बारहखड़ी सीखी नहीं थी ।
- लुगाई का ऐसा ताबेदार ढुलमुल पति बड़ी मुश्किल से मिलता है ।
- कुएँ में पानी न हो तो उसमें धमाक देने से रहे ।
- घुटने के बीच दबा बकरा कसाई के हाथ की छुरी से बचे तो "नौ-कूँटी मारवाड़" का किसान बोहरे के कान में खोंसी कलम से बचे ।
- प्रतिवर्ष प्रसव से उत्पीड़ित घरवाली तो दो रोते-बिसुरते बैरियों को पीछे छोड़कर उस नारकीय जिन्दगी से हमेशा के लिए छुटकारा पा गयी ।

14.9 उद्देश्य

विजयदान देथा अपने कहानी संग्रह 'उजाले के मुसाहिब' की भूमिका में लिखते हैं - 'यदि मनुष्य का चरित्र दिन-ब-दिन भ्रष्ट हो रहा है, यदि लाल व नीली बत्तियों वाली जीपों की संख्या लगातार बढ़ रही है तो यह परिवर्तन, यह विकास और यह आसुरी सभ्यता सब बेमानी है! मनुष्य के उदात्त गुणों की कीमत पर ये तमाम पैशाचिक उपलब्धियाँ निरर्थक हैं और आज हम उसी अधःपतन का जश्न मना रहे हैं! आतंक के प्रति समर्पित हो रहे हैं । बिज्जी की मूल चिन्ता है मनुष्य, और मनुष्यता का क्षरण उन्हें बेचैन करता है, विचलित करता है । "आशा अमरधन" उनकी इसी चिन्ता को उपजी कहानी है । वे यहाँ यथार्थ को पैना बनाने के लिए ही सौतेली माँ और बच्चों को जैसे आमने-सामने रखते हैं । एक ओर भयानक कठोरता और हृदयहीनता है तो दूसरी और अदम्य भरोसा - अटूट आशा । जीत-हार से कहानी के उद्देश्य पर असर नहीं पड़ता । असल बात है मनुष्यता को क्षरित होने से रोकने की कोशिश । वे पूछते हैं - 'यदि पड़ी-पड़ी मटकियाँ यों पानी सोखती रहें तो प्यासे गलों का क्या हाल होगा? यह मामूली सा प्रश्न आज भी युग युगान्तर से अनुतरित है ।" दरअसल बिज्जी कह रहे है कि यह प्रश्न मामूली सा नहीं है, वे वाकई मनुष्यता के उदात्त गुणों को खूटते देख बेचैन है ।

"कहानी के नये प्रतिमान" पुस्तक में प्रतिष्ठित आलोचक प्रो. कुमार कृष्ण ने लिखा है "आशा अमरधन की त्रासदी की इंटेंसिटी "तिरिछ" के बाद किसी दूसरी कहानी में देखने को नहीं मिलती । "आशा अमरधन की मूल संवेदना हृदयहीनता और अटूट आशा के बीच उपजे द्वन्द्व की प्रस्तुति है । बच्चों का एक साल तक भूखे प्यासे रहकर भी जीवित रह जाना यदि पाठक को

भौंचक करता है तो माँ की दुत्कार से उनकी मष्त्यु उतनी ही गहराई से विचलित भी करती है । निष्कर्षत: 'आशा अमरधन' मनुष्य की नष्शंस करतूतों के बावजूद मनुष्यता के उदात्त गुणों को बचाए रखने की मासूम जिद है ।

14.10 संदर्भ ग्रन्थ

1. नामवरसिंह - कहानी: नयी कहानी, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद
2. सुरेन्द्र चौधरी - हिंदी कहानी: प्रक्रिया और पाठ, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली
3. मधुरेश-हिन्दी कहानी का विकास, सुमित प्रकाशन, इलाहाबाद
4. कुमार कृष्ण - कहानी के नये प्रतिमान, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली
5. आलोचना - सं. अरुण कमल, राजकमल प्रकाशन 2-3 नेताजी सुभाष मार्ग, नई दिल्ली -2

14.11 बोध प्रश्न

नीचे लिखे प्रश्नों के उत्तर दीजिए और अपने उत्तरों को इकाई के अन्त में दिए गए उत्तरों से मिलाइए ।

1. अकाल से पीड़ित किसान ने कहाँ जाने का निश्चय किया?
   (क) मारवाड़ (ख) मेवाड़
   (ग) मालवा (घ) हाड़ौती (ग)
2. माँ बच्चों को क्यों मार डालता चाहती थी?
   (क) क्योंकि वह सौतेली माँ थी ।
   (ख) लम्बी यात्रा पर जाना था ।
   (ग) वे अत्यंत गरीब थे ।
   (घ) अकाल की मार मार के कारण । (क)
3. जाते समय माँ ने बच्चों से क्या लाने का वादा किया?
   (क) मिठाई (ख) झुनझुने
   (ग) गाड़ी (घ) डमरू (ख)
4. माता पिता के जाने पर बच्चे खुश क्यों थे ।
   (क) उन्हें कोई डाँटने वाला न था ।
   (ख) उनके लिए खिलौने आने वाले थे ।
   (ग) उन्हें पाठशाला नहीं जाना पड़ेगा ।
   (घ) माँ ने पहली बार उन्हें दुलार किया था । (घ)
5. जाते समय पिता रोने लगा क्योंकि
   (क) बच्चों को ले जाने में असमर्थ था ।
   (ख) बच्चों की मृत्यु आसन्न थी ।
   (ग) बेटे की तबीयत खराब थी ।
   (घ) बेटी की तबीयत खराब थी । (ख)

6. 'इस संसार में सारी माया पानी की है । यह किसने कहा?

(क) पति ने (ख) पत्नी ने

(ग) बच्चे ने (घ) बोहरे ने (क)

7. 'आदमी का मगज मिला है तो आदमी की तरह सोचो ।' यह किसने कहा?

(क) पति ने (ख) पत्नी ने

(ग) बच्चे ने (घ) बोहरे ने (ख)

8. दोनों पति पत्नी अपने गाँव वापस कब लौटे?

(क) एक वर्ष (ख) दो वर्ष

(ग) तीन वर्ष (घ) तीन माह (क)

9. लौटने पर पत्नी की गोद में कितने माह का बालक था?

(क) एक माह (ख) तीन माह

(ग) चार माह (घ) छह माह (ग)

10. लौटने पर पहले झोपड़ी में कौन गया ।

(क) पति (ख) छोटा बच्चा

(ग) पत्नी (घ) कोई नहीं (ख)

11. झोपड़ी में क्या देखा?

(क) दोनों बच्चों में कंकाल पड़े थे ।

(ख) कोई नहीं था ।

(ग) दोनों बच्चे प्रतीक्षा कर रहे थे ।

(घ) इनमें से कोई नहीं । (ग)

12. 'मगरेटी' जमीन' का आशय है -

(क) बंजर जमीन (ख) सूखी जमीन

(ग) रेतीली जमीन (घ) पथरीली जमीन (घ)

13. 'पानी को तो पानी की माँ ने ही जना है।' इस वाक्य में है -

(क) विडंबना (ख) हास्य

(ग) व्यंग्य (घ) क्षोभ (ग)

14. विजयदान देथा का लोकप्रिय नाम है -

(क) बिज्जी (ख) देथासा

(ग) विजय जी (घ) देथाजी (क)

15. 'आशा अमरधन' विजयदान देथा के किस संग्रह से ली गई है

(क) चौधराइन की चतुराई

(ख) उजाले के मुहासिब

(ग) बातां री फुलवारी

(घ) उलझन (ख)

16. जाते समय माता पिता ने बच्चों के लिए क्या छोड़ा

(क) खिचड़ी (ख) दलिया

(ग) सोगरे-राब (घ) मिठाई (ग)

17. बरखा बरसने से क्यों डर गई?

(क) बोहरा नहीं चाहता था ।

(ख) ग्रामीण नहीं चाहते थे ।

(ग) बच्चों की आँखे निसदिन बरसती थी ।

(घ) इनमें से कोई नहीं । (ग)

18. आशा अमरधन का भावार्थ बताइए?

उत्तर-आशा कभी नष्ट न होने वाला धन है ।

19. आशा अमरधन का उद्देश्य बताइए ।

(क) सौतेली माता के अत्याचार बताना ।

(ख) अकाल की विभिषिका ।

(ग) आशा ही जीवन का सबसे बड़ा धन है ।

(घ) उपर्युक्त सभी । (ग)

20. किसान की पहली पत्नी की मृत्यु कैसे हुई?

(क) दुर्घटना से (ख) प्रसव से

(ग) अकाल से (घ) आत्महत्या से (ख)

21. 'नौ कूँटी मारवाड़' में कूँटी क्या है?

(क) दिशाएँ (ख) दीवारें

(ग) धन-संपदा (घ) तलवारें (क)

इकाई 15

'नीलकान्त का सफर' (स्वयं प्रकाश)

इकाई की रूपरेखा

15.0 उद्देश्य
15.1 प्रस्तावना
15.2 कहानी का वाचन
15.3 कठिन शब्दों के अर्थ
15.4 संदर्भ सहित व्याख्या
15.5 कथावस्तु
15.6 चरित्र चित्रण
15.7 वातावरण (परिवेश)
15.8 संरचना शिल्प (भाषा शैली)
15.9 सारांश
15.10 संदर्भ ग्रन्थ
15.11 बोध प्रश्न एवं उनके उत्तर

15.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई में आप स्वयं प्रकाश की कहानी 'नीलकांत का सफर' पढ़ेंगे-

'नीलकान्त का सफर' हमारे देश की सामाजिक विषमताओं और सुविधाभोगी मनोवृति पर प्रहार करने वाली कहानी है । यह कहानी श्रम की महत्ता और सामाजिक जवाबदेही की आवश्यक कता का प्रतिपादन करती है । रेल के सामान्य सफर के घटना के माध्यम से कथाकार स्वयं प्रकाश इस कहानी को बुनते हैं और कहानी खत्म होते होते पाठक को प्रतीत होता है कि यह सामान्य सफर दरअसल सामान्य नहीं है बल्कि यह देश का रूपक बनता जा रहा है । स्वयं प्रकाश मार्क्सवादी विचारधारा से जुडे प्रतिबद्ध कथाकार हैं और यही उनकी स्पष्ट सोच रही है कि व्यवस्था के प्रश्न को आम पाठक भले सुलझा न सके लेकिन वह उस पर सवाल तो करे । सवाल करना ही समस्या में धँसने की पहली शर्त है ।

इस कहानी में रेल का थर्ड क्लास का डिब्बा, डिब्बे की बंद खिड़कियाँ, बदबू से भभकता प्रसाधन, खचाखच भरी सवारियाँ, बर्थ पर कब्जा जमाए कुछ यात्री और परेशान होते -स्त्री, पुरुष बच्चे । यह सब कुछ हमारा देखा जाना है और कथाकार इस देखे जाने के प्रति पाठक के विवेक को जागृत करता है । कहानी समाप्त होते-होते पाठक वही नहीं रह जाता, जो पढ़ने से पहले था । इस कहानी को पढ़ने के बाद आप-

1. कहानी के मूल पाठ का वाचन, कठिन शब्दों के अर्थ तथा गद्यांशों की व्याख्या करने की योग्यता में अभिवृद्धि कर सकेंगे ।

2. कहानी के तत्वों के आ१गर पर -उसका विवेचन विश्लेषण कर सकेंगे ।
3. कहानी के शीर्षक की उपयुक्तता का निर्णय कर सकेंगे ।

15.1 प्रस्तावना

'नीलकान्त का सफर' स्वयं प्रकाश के दूसरे कहानी संग्रह 'सूरज कब निकलेगा' से ली गई है । स्वयं प्रकाश प्रगतिशील-जनवादी कहानी परंपरा में प्रेमचंद - अमरकान्त - भीष्म साहनी - काशीनाथ सिंह के बाद महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं । राजस्थान की हिन्दी कहानी में रांगेय राघव के बाद उनका नाम अत्यंत सम्मान से लिया जाता है ।

नीलकान्त का सफर स्वयं प्रकाश की प्रसिद्ध कहानी है जिसमें नीलकान्त नाम के एक व्यक्ति की रेल यात्रा का वर्णन है । रेल के तृतीय श्रेणी अनारक्षित डिब्बे में नीलकान्त सफर कर रहे थे । थर्ड क्लास का डिब्बा रेल के सबसे अंत में था । डिब्बे में भारी भीड़ थी । लोग भेड़ - बकरियों की तरह भरे हुए थे । नीलकांत जब चढ़े तो उन्हें पैर रखने की जगह संडास में मिल पाई, फिर वे धीरे-धीरे मुश्किल से आगे बढ़ने में सफल तो हो गए लेकिन आगे गर्मी बहुत ज्यादा थी । उन्होंने ध्यान दिया कि सारी खिड़कियाँ बंद है, उन्होंने बैठे हुए (और बेशर्मी से लेटे हुए) लोगों से कहा कि खिड़की खोल दें । जवाब मिला नहीं खुलती । उन्होंने कोशिश की लेकिन बेकार । तरह-तरह के विचार उनके मस्तिष्क में आने लगे कि ट्रेन में इतनी जगह नहीं है तो क्यों इतने टिकट देते हैं । ज्यादा मुसाफिर हैं तो ज्यादा गाड़ियाँ क्यों चलाते? कौन दोषी है? बुकिंग क्लर्क जिसने ज्यादा टिकट काट दिए? मिस्त्री जिन्होंने रेल के खिडकी दरवाजे नहीं जाँचे ? वे जो बर्थ पर कब्जा किए हुए है? या वे अमीर जिनके लिए पाँच-पाँच फर्स्ट के डिब्बे बीच में लगाए गए है? असली जिम्मेदार कौन है?

गर्मी, बेचैनी, परेशानी और उहापोह में यात्रा हो रही है कि आगे एक स्टेशन पर आठ-दस काले-कलूटे फटेहाल मजदूर डिब्बे में चढ़ आते है । उनके साथ दो 'धाकड़ लुगाइयॉ भी थीं । फिर उन मजदूरों ने अपनी गेंती के जोर से खिड़कियाँ खोल दी । खिड़कियाँ खुलते ही डिब्बे में उजाला हो गया, हवा आने लगी ।

15.2 कहानी का वाचन

थर्ड क्लास का डिब्बा

नीलकांत सफर कर रहे थे ।
चूंकि वह जनता थे, इसलिए थर्ड क्लास में सफर कर रहे थे और चूंकि वह थर्ड क्लास था, इसलिए ट्रेन के आखिरी डिब्बे का आखिरी कम्पार्टमेंट था । बाकी ट्रेन या तो फर्स्ट थी या शयनयान या आरक्षित या और कुछ । लगता था, साधारण थर्ड के इस कम्पार्टमेण्ट को भी पीछे ही पीछे मात्र दयावश या औपचारिकता निभाने के लिए जोड़ दिया गया है ।
डिब्बे का दृश्य

डिब्बे में भारी भीड़ थी । लोग भेड़ - बकरियों की तरह भरे हुए थे । कुछ लोगों की नजर में हो सकता है, यह उचित ही हो, पर मुझे पूरा भरोसा है कि आप उन कुछ लोगों में से नहीं हैं । क्योंकि आपको भी ऐसी ही स्थितियों में सफर करना पड़ता है । तो.... लोग एक-दूसरे पर लदे जा रहे थे । जितने बैठे थे, उनसे ज्यादा खड़े थे और कुछ लटके भी थे । ऊपर की सीटें सामान से भरी हुई थीं और फर्श औरतों से ।..... डिब्बे की सीटों पर एक-दो-तीन बाकायदा नंबर पड़े हुए थे ओर एक तरफ की दीवार पर लिखा हुआ था 'पैंतीस सवारियों के लिए' । इसे पढ़कर अंदाजा होता था कि रेलवे में काम करने वाले आदमी कितने मजाकियां हैं । मसलन ये लिखने वाले । अब पाखाने का आलम देखिए । इस डिब्बे
के यात्री, थर्ड क्लास के मुसाफिर, खासकर नन्हे या किशोर मुसाफिर जनरल-नॉलेज के क्षेत्र में दिशा-मैदान या जंगल के परिचय से आगे नहीं बढ़ पाये थे और पाखाने में घुसते ही पता चलता था कि वे बेचारे काफी देर इसी दुविधा में पड़े रहे होंगे कि किधर मुंह करके बैठा जाए। तिस पर टोंटियों में पानी भी नहीं था । साबुन के स्थान पर किसी धर्मप्राण ने ढेर सारी मिट्टी जरूर भर रखी थी और आईना नहीं था तो क्या बुरा था ? ऐसी स्थिति में अपना थोबड़ा देखकर खामखां आदमी का मूड ऑफ ही होता !

नीलकांत की कठिनाई

इसी डिब्बे में नीलकांत सफर कर रहे थे । खड़े हुए । इसी संडास में ।

खैर, बाद में उन्हें डिब्बे में धंसने में सफलता भी मिल गयी, पर संडास की बदबू, दिमाग से नहीं गयी । और हालांकि इस संघर्ष में उनकी बूढ़ी अटैची का कमजोर हैण्डल टूट गया और नतीजतन उन्हें उस बूढी अटैची को बच्चों की तरह छाती से चिपकाकर रखना पड़ा । पर घुस तो गया ही, पाखाने से तो अच्छे ही हैं ।

लेटे हुए लोग

यहां आकर नीलकांत ने देखा कि जहां बहुत सारे आदमियों को पांव सरकाने को भी जगह नहीं है और कई अब तक लटक रहे हैं या निरंतर इस ताक में टंगे हैं कि कब आदमियों की तरह आराम से पैर टिकाने या पुट्ठे टिकाने का मौका मिल जाए वहीं कुछ आदमी लेटे हुए हैं।

नीलकांत को लगा, जो लेटे हुए हैं, वे कितने हृदयहीन हैं! माना कि आपने पांच रुपये दिये हैं और आपको बहुत दूर जाना है, पर कम दूरी वाले क्या मुफ्त में सफर कर रहे है? क्या उन्हें टिकने भर का अधिकार नहीं? औरतों तक खड़ी हुई हैं और ये बेशरम पैर पसारे पड़े हुए हैं । यह कोई इंसानियत है?

डिब्बे की गर्मी

तभी अचानक नीलकांत को महसूस हुआ कि गर्मी कुछ ज्यादा ही है । पंखे देखे । चल रहे थे । खिड़कियां बंद थीं । नीलकांत को आश्चर्य हुआ कि इस तरफ उनका ध्यान अब गया! यह भी कि अब तक किसी ने खिडकियां खोली क्यों नहीं?

नीलकांत ने फिर जोर लगाया । जांच - परख की । फिर जोर लगाया, फिर दिमाग लगाया । फिर ताकत, फिर दिमाग, लेकिन खिड़की नहीं खुली । दूसरी भी नहीं खुली । तीसरी तक उन्हें किसी ने जाने नहीं दिया । बीसियों लोग पहले ही कोशिश कर चुके थे । सारी खिड़कियां जाम थीं । नीलकांत हताश हो गए । पसीने-पसीने हो गए । खीझ गए ।

आखिर गलती किसकी है?

आखिर गलती किसकी है? नीलकांत सोचने लगे । जब ट्रेन में इतनी जगह नहीं है तो क्यों इतने टिकट देते हैं! ज्यादा मुसाफिर हैं तो ज्यादा गाड़ियां क्यों नहीं चलाते ?

क्यों ? कौन दोषी है ? क्या वह बुकिंग क्लर्क जिसने, इतने ज्यादा टिकट काट दिए? या वह मिस्त्री, जिसने रेल रवाना होने से पहले खिड़की-दरवाजे नहीं जांचे? या वे सज्जन जो कुलियों को पांच-पांच रुपये देकर पूरी बर्थ पर कब्जा किए हुए है? या वे अमीर, जिनके लिए पांच-पांच फर्स्ट के डिब्बे बीच में लगाए जाते हैं?

सोचने लगे । फिर उलझ गए । पर सोचने तो लगे, हालांकि नतीजे तक नहीं पहुंचे । पर उलझे तो । पर पता नहीं, क्यों इन चीजो पर सोचने लगे, हालांकि पढ़ते तो धर्मयुग, इलस्ट्रेट वीकली वगैरह ही हैं । वे लोग तो चाहते थे कि नीलकांत प्रदूषण के बारे मे सोचें, जातियों के तुलनात्मक विवेचन पर सोचें, परामनोविज्ञान और आधुनिक प्रेतविद्या के बारे में सोचें..... ।

गाड़ी से उतर जाने पर वह गाड़ी के बारे में सब भूल जायेंगे और फिर यही सोचने लगेंगे, जो सेठ लोग सोचवाना चाहते हैं । पर क्या पता ? अगर कल कोई दूसरी तकलीफ आयी-आयेगी हीं-और वे सोचने लगे कि उसका असली जिम्मेदार कौन है - तो ?

लौटने की इच्छा

नीलकांत की इच्छा हुई वापस उसी संडास में चले जायें । खड़े यहां भी हैं, वहां भी थे । वहां कम से कम थोड़ी बहुत हवा तो थी, मानाकि बदबू और गंदगी और सबसे ज्यादा अपने संडास में होने का अहसास-ऐसी ही कुछ परेशानियां थी, पर यहां क्या कम परेशानी है ? और सुविधा क्या है ? सिवा इस गरिमा के कि डिब्बे में हैं, संडास में नहीं? लिहाजा चलो वापस संडास में ।

लेकिन वापस जाना असंभव था । बहुत कुछ बाह्य था और कुछ भीतर भी था, जो रोक रहा था । झख मारकर भविष्य के बारे में सोचने लगे । संडास वाले का क्या भविष्य है? किसी को भी हाजत होते ही वहां से बाहर निकाल दिया जाना । और यहां 'संभावना है कि कभी तो कोई स्टेशन आएगा, तो कुछ सवारियां उतरेंगी तैर उन्हें भी टिकाने को जगह मिलेगी ही । उस सुंदर भविष्य के लिए-जब वे दूसरों की बराबरी में बैठे होंगे-इस वर्तमान में कुछ कष्ट उठा लें तो क्या हर्ज है ?

आगमन

तभी प्लेटफार्म की तरफ से आठ-दस काले-कलूटे फटेहाल मजदूर दांत निकालते हुए दौड़ते हुए आए और एक-दूसरे को पुकारते-चीखते एक-एक करके सब उसी में चढ़ गए । पहले एक चढ़ा... ..... उसने दूसरे का हाथ पकडकर उसे भी चढ़ा लिया, उसने तीसरे को-इस तरह सब चढ़ गए । पीछे-पीछे दो धाकड़ लुगाइयां भी चढ़ा ली गयी और भागते-भागते आखिरी आदमी ने गेंती-फावड़े- तगारी वगैरह भी चढ़वा दिए और छलांग मारकर खुद भी चढ़ गया ।

इस नयी भीड से दरवाजे और गलियारे में खड़े लड़के और बाबू लोग बुरी तरह अंदर की तरफ धकेल दिए गए, एकदम कचरे की तरह । परस्पर धक्के; को ठेठ अन्त तक महसूस किया गया और डिब्बे में चिल-पुकार मच गयी ।

..... उनके कपड़े कोयले के बुरादे से काले हो रहे थे और उस पर मैल और पसीने की मोटी तहें जमी हुई थीं । सफेयतपसंद आदमी यथासंभव उनसे बचने की कोशिश कर रहे थे और एक साहब ने- जो दुर्भाग्य से उनके पास ही फंसे थे - नाक पर रूमाल भी लगा लिया था । उनका बस चलता तो वे आख, कान, सिर, पूरे शरीर पर रूमाल लगा लेते । पर इससे होता क्या?

खुल गई खिड़कियाँ

मर्दों ने अन्दर पहुंचते ही खिड़कियों के सामने से लोगों को हटाकर उन्हें जांचा, परखा, खोलने की कोशिश की और फिर उनमें से एक ने - जो थोड़ा-सा पढ़ा-लिखा, बल्कि उनके मेट जैसा लग रहा था - अपनी भाषा में पीछे दरवाजे के पास खड़े आदमी को पुकार कर कुछ कहा । गेंती मांगी थी, क्योंकि वह लोगों के बीच से ही होती हुई आ गयी । गेंती का सिरा एक खिड़की के सबसे निचले खांचे के एक खास कोण से फंसाकर उसने अपने साथी से कहा - दबा । अब इस दूसरे आदमी ने गेंती के हत्थे पर एक खास जगह नयी-सधी ताकत लगायी और एक झटके में खिड़की खुल गयी । सब लोग अपढ़ मजदूरों के इस कारनामे को बड़े कौतुहल से देख रहे थे ओर जाहिर है कि वे खिड़की के खुल जाने से चकित और खुश हुए । वे भी, जिन्होंने बहुत कोशिश की थी और नाकामयाब रहे थे और सोच रहे थे, जब हम पढ़े-लिखों से नहीं खुली तो इन अपढ़ गंवारों से क्या खुलेगी? वे भी, जिन्हें मजदूरों की क्षमताओं पर पूरा-पूरा संदेह था और वे भी, जिन्हें डर था कि गेंती या ताकत के इस्तेमाल से खिड़कियां टूट जायेंगी । सिर्फ लेटे हुए लोग खिड़कियां खुल जाने से खुश नहीं थे । उन्हें चिन्ता हो रही थी कि अब उनका लेटा होना बाहर से भी दिख जायगा और सब साले मच्छरों की तरह इस डिब्बे पर टूट पड़ेंगे।

और सफर

खिड़कियां खुलते ही सारे डिब्बे में उजाला हो गया था और ताजी हवा के ठंडे झोंके सपाटे भर रहे थे । बाहर हरे-भरे लहराते खेत थे और पेड और नदियों और पहाड़-और उन सब पर बड़ी सुहानी शाम बिखर रही थी ।

थोड़ी देर में ये लोग कोई गीत शुरू कर देंगे । उदासियां दूर भाग जायेंगी ।

नीलकांत खुश थे, हालांकि खड़े थे । नीलकांत सफर कर रहे थे, पर खुश थे ।

15.3 कठिन शब्दों के अर्थ. जानकारी

सफर-यात्रा, शाश्वत - नित्य, चिर स्थायी, सुराग - पता, अनुसंधान., हमदर्दी - सहानुभूति धर्मयुग - एक मासिक पत्रिका जिसके संपादक धर्मवीर भारती थे, सातवें दशक की लोकप्रिय पत्रिका । इलस्ट्रेट वीकली - प्रसिद्ध अंग्रेजी पत्रिका, हाइजिन - कीटाणुरहित, स्वच्छ, एग्जास्ट फैन - भीतर की गर्म हवा को बाहर फेंकने वाला पंखा, उप एंड डाउन- आवागमन, आदी - अभ्यस्त, लालयित - बेहद इच्छुक

15.4 संदर्भ सहित व्याख्या

1. चूंकि वह जनता थे, इसलिए थर्ड क्लास में सफर कर रहे थे और चूंकि वह थर्ड क्लास था, इसलिए ट्रेन के आखिरी डिब्बे का आखिरी कम्पार्टमेंट था । बाकी ट्रेन या तो फर्स्ट थी या शयनयान या आरक्षित या और कुछ । लगता था, साधारण थर्ड के इस कम्पार्टमेण्ट को भी पीछे ही पीछे मात्र दयावश या औपचारिकता निभाने के लिए जोड़ दिया गया है ।

संदर्भ-

ये पंक्तियाँ स्वयं प्रकाश की प्रसिद्ध कहानी 'नीलकांत का सफर से ली गई हैं । नीलकांत नाम के एक व्यक्ति की रेल यात्रा का वर्णन करते हुए स्वयं प्रकाश रेल के डिब्बे का परिचय दे रहे है ।

व्याख्या-

स्वयं प्रकाश यहाँ रेल के थर्ड क्लास के डिब्बे का वर्णन करते हुए बताते हैं कि इसी डिब्बे में नीलकांत यात्रा कर रहे हैं क्यों कि वे जनता हैं । जनता अर्थात् आम आदमी, जो फर्स्ट क्लास या ए.सी. में यात्रा नहीं कर सकता । और बताते हैं कि थर्ड क्लास होने के कारण ही वह रेल के आखिरी डिब्बे का आखिरी कम्पार्टमेंट था । वे आगे बताते हैं कि रेल के बाकी डिब्बे या तो प्रथम श्रेणी वाले या शयन यान या आरक्षित या इसी तरह और कुछ थे, जिनमें नीलकांत जैसे आम आदमी यात्रा नहीं कर सकते । इन डिब्बों में यात्रा करना महँगा होता है ओर सभी के लिए महँगी यात्रा करना संभव नहीं । कहते हैं कि जिस डिब्बे में नीलकांत हैं व साधारण थर्ड का कम्पार्टमेंट है और ऐसा लगता है यह इसलिए नहीं जोड़ा गया है कि इसकी आम आदमी को जरूरत है बल्कि इसका जोड़ा जाना नियम के अनुसार जरूरी है ।

स्वयं प्रकाश की विशेषता है सामान्य घटनाओं-सामान्य बातों में व्यंग्य का पुट देकर उनसे हमारे समय और समाज की विडंबनाओं का उद्घाटन करवाना । इस मामूली वर्णन में यह विशेषता है । किसी भी देश की असली ताकत वहाँ की जनता है और हमारे देश की जनता की स्थिति यह है कि उसके लिए केवल एक डिब्बा है जो ट्रेन के अंत में लगा है । वे बाकी ट्रेन को फर्स्ट शयनयान या आरक्षित या और कुछ बताकर स्पष्ट कर देते हैं कि आम आदमी के लिए उसमें कोई जगह नहीं है । उस व्यंग्य का चरम अगली पंक्ति में है जब वे कहते हैं "साधारण थर्ड के इस कम्पार्टमेण्ट को भी पीछे ही पीछे मात्र दयावश या औपचारिकता निभाने

के लिए जोड़ दिया गया है ।" सामान्य वाक्य का ही जादू यह है कि वे देश की व्यवस्था के असमान विभाजन की ओर गंभीर इशारा करने में सफल हुए हैं ।

विशेष

यह दरअसल केवल एक रेल का और रेल यात्रा का ही प्रसंग नहीं है बल्कि लेखक इसके माध्यम से पूरे देश और देशवासियों की स्थिति पर व्यंग्य कर रहा है ।

चुहल और छेड़छाड़ की भाषा में स्वयं प्रकाश कहानी में पाठक की दिलचस्पी पैदा कर देते हैं ।

2. खैर, सेठजी चिन्ता न करें, नीलकांत इन तकलीफों के बारे में तभी तक सोचेंगे, जब तक उन्हें बैठने के लिए ठीक-ठाक जगह नहीं मिल जाती, या हद से हद जब तक यह सफर जारी है । गाड़ी से उतर जाने पर वह गाड़ी के बारे में सब भूल जायेंगे और फिर यही सोचने लगेंगे, जो सेठ लोग सोचवाना चाहते हैं । पर क्या पता ? अगर कल कोई दूसरी तकलीफ आयी-आयेगी ही-और वे सोचने लगे कि उसका असली जिम्मेदार कौन है - तो?

संदर्भ-

उक्त अवतरण स्वयं प्रकाश की कहानी 'नीलकांत का सफर' से उद्धष्त किया गया है । नीलकान्त रेल का सफर कर रहे हैं जहाँ उन्हें बैठने की जगह नहीं मिली है और वे बार-बार सोच रहे हैं कि आखिर गलती किसकी है जिसकी वजह से वे और उन जैसे लोग यात्राओं में तकलीफें उठाते हैं ।

व्याख्या-

नीलकान्त सफर करते हुए जब सोचने लगते हैं कि आखिर गलती किसकी है, जिसकी वजह से लोग लटक-लटककर सफर कर रहे हैं जबकि रेलवे फिर भी घाटे में जा रहा हैं । तब लेखक बीच में बताता है कि पता नहीं, क्यों इन चीजों पर सोचने लगे, हालांकि पढ़ते तो धर्मयुग, इलेक्ट्रेट वीकली ही है । दरअसल स्वयं प्रकाश यहाँ एक साथ दो प्रवृत्तियों पर कटाक्ष कर रहे हैं पहला सेठाश्रयी (व्यावसायिक, मुनाफे को सामाजिक सरोकार से महत्वपूर्ण मानने वाली) पत्रकारिता पर - जो जनता के असली मुद्दों को न उठाकर वायवी बातों पर चक्कर लगाती है । दूसरा- नीलकांत जैसे लोगों की मध्यवर्गीय मनोवृत्ति पर जो अवसरानुकूल आचरण करते हैं ।स्वयं प्रकाश कहते हैं कि गाड़ी से उतर जाने पर वह गाड़ी के बारे में सब भूल जायेंगे और फिर यही सोचने लगेंगे, जो सेठ लोग सोचवाना चाहते हैं । इसका मतलब यह है कि एक तरफ नीलकांत की मध्यवर्गीय मानसिकता जो अपनी सुविधा - अपने सुख की ही चिंता करती है और दूसरी तरफ मीडिया की असली मुद्दों से भटकाने वाली प्रवृति, लेखक दोनों को निशाना बना रहा है । लेकिन बात केवल कटाक्ष पर खत्म नहीं होती । वे आगे कहते हैं और वे सोचने लगे कि उसका असली जिम्मेदार कौन है - तो.....?

वस्तुत: व्यवस्था को देखना, समझना और उस पर सवाल खड़ा करना ही व्यवस्था को बदलने की बुनियादी शुरुआत है । स्वयं प्रकाश यही चाहते हैं तभी वे कटाक्ष से आगे निकलकर सवाल खड़ा करने की बात करते हैं ।

विशेष -

महान साहित्य का यही लक्षण है कि वह छोटी बहुत छोटी बातों में बड़ी और गैर मामूली चीजों की ओर इशारा करे । 'नीलकांत का सफर' का महत्व इसी दृष्टि से है । इस प्रसंग मे भी मामूली बातें करते हुए व्यवस्था परिवर्तन जैसे बड़े सवाल को वे बातों बातों में पाठक के समक्ष खड़ा का देते हैं ।

15.5 कथावस्तु

'नीलकांत का सफर' कहानी की कथा वस्तु ठीक उसी पारंपरिक अर्थ में नहीं है जैसी आमतौर पर हम पढ़ते हैं । इसके बावजूद इसका वस्तु विन्यास बेहद सुगठित और नाटकीय कथानक है । कथ्य के नाम पर दी गई एक स्थिति जहाँ भीड़ भरा डिब्बा गर्मी, बन्द खिड़की और इनके बीच एक साधारण आदमी नीलकांत । स्वयं प्रकाश कहानी गढ़ते नहीं सुनाते हैं तभी उनका वाचक जहाँ-तहाँ बीच-बीच में पाठक से सीधे बात करता टोका-टाकी करता नजर आता है ।

'कहानी यथार्थ की पहली परत को पार कर वहाँ पहुँच जाती है जहाँ सारा सफर आजादी के तैंतीस वर्षो के हिन्दुस्तान और जनशक्ति की वास्तविक पहचान का प्रतीक बन जाता है ।' प्रो. जवरीमल्ल पारख के इस कथन के संदर्भ में कहानी में आए मजदूरों को देखा जाना चाहिए । जिस खिड़की को खुला देखने की इच्छा प्रत्येक यात्री में थी लेकिन वैसा प्रयास तो किसी ने भी नहीं किया जो मजदूरों (अनपढ़ - गंवार - काले कलूटे-फटेहाल) ने आते ही किया । यह श्रम की महत्ता का स्वीकार ही नहीं है बल्कि उसकी अनिवार्यता और मध्यमवर्गीय अवसरवादी मनोवृत्ति का खोखलापन भी दर्शाता है।

बेहद सामान्य से घटनाक्रम में मामूली बातों से ही स्वयं प्रकाश नाटकीयता उत्पन्न करते हैं और पाठक की रुचि कहानी में अन्त तक बनी रहती है । हेतु, भारद्वाज के शब्दों में 'कहानी का कथ्य बहुत दूर तक हमारे जीवन के मध्य वर्ग की मानसिकता और वर्ग भेद की परतें खोलता है ।

15.6 चरित्र चित्रण

कहानी में बहुत अधिक पात्र नहीं हैं । बल्कि ठीकठीक तो एक ही पात्र है नीलकांत, जिसे पाठक नाम से जानते हैं । इसके अतिरिक्त लेटे हुए लोग, मजदूर और उनकी लुगाइयां वस्तुत: अपने-अपने वर्गो के प्रतिनिध हैं जिनकी उपस्थिति कहानी को संपूर्ण बनाती है मिले ही इनके नाम कहानी में न हों लेकिन इनके बिना कहानी भी आगे नहीं बढ़ेगी ।

नीलकांत मध्यवर्ग की सुविधाभोगी मनोवृत्ति के परिचायक है । वे कुछ करना तो चाहते हैं लेकिन केवल इस सफर तक ही..... यह क्षण जीवी क्रांतिकारिता दरअसल हमारी बोली बानी

में 'श्मशान वैराग्य' ही है जिसका कोई अर्थ नहीं । नीलकांत चाहते हैं खिड़की खुले, लेटे हुए लोग बड़े हुए लोगों को बैठने लायक जगह दें । गार्ड आए और अपनी ड्यूटी निभाए..... लेकिन कर कुछ नहीं पाते ।

वहीं मजदूर जिनका आगमन किसी को अच्छा नहीं लग रहा था, लेकिन उनकी ही गेंती से खिड़कियाँ खुल सकीं और डिब्बे में हवा-रोशनी आई । इन मजदूरों और लेटे हुए सज्जनों को कथाकार आमने सामने कर वर्गीय दृष्टिकोण का सम्यक उद्घाटन कर देते हैं । जहाँ मजदूर डिब्बे में आकर न लड़ रहे थे, न घबड़ा रहे थे, न आपा खो रहे थे । उन्हें देखकर लगता था कि वे इस भीड़ और परेशानी के आदी हैं । वहीं "लेटे हुए लोग खिड़कियां खुल जाने से खुश नहीं थे उन्हें चिन्ता हो रही थी कि अब उनका लेटा होना बाहर से भी दिख जायगा और सब साले मच्छरों की तरह इस डिब्बे पर टूट पड़ेंगे ।"

इन मजदूरों की स्त्रियाँ, जिन्हें कथाकार स्त्रियाँ नहीं लुगाइयां कह रहा है, कहीं किसी 'एक्शन' में नहीं है लेकिन उनका वर्णन ही उनके चरित्र की सबलता दिखाता है 'उन्होंने अपने कसे हुए जिस्मों पर कसी हुई कांचली पहन रखी थी और उनके सिर के बालों की चोटी खूब ताकत से कस कर गूंथी हुई । पीठ लगभग नंगी थी, पसीने में तर । 'और भी 'बड़े भारी उनके घाघरे थे और जूतियां इतनी मरदानी और ऐसी भारी कि एक पड़ जाय तो थोबड़ा लहूलुहान हो जाय । वे हंस रही थीं और ठिठोली के मूड में थीं, पर किसी की क्या मजाल जो उन्हें छेड़ने की सोच भी सके । 'वे भले ही महिलाएँ नहीं लुगाइयां है लेकिन जो काम नीलकांत जैसे भद्र पुरुष नहीं कर पाए इन लुगाइयों ने कर दिया - 'उनमें से दो को तो लुगाइयों ने ही पैर सिकोड़ने पर बाध्य कर दिया था और खुद आराम से बैठ कर पसीना सुखा रही थीं । उन्होंने अपनी भाषा में लेटे हुओं को डांट कर कुछ कहा था - वे जिसका अर्थ तो नहीं, आशय जरूर समझ गये थे कि पैर नहीं हटाए तो पुट्ठे भी हटाने पड़ेंगे ।'

15.7 वातावरण

'नीलकांत का सफर' कहानी एक व्यक्ति की रेल यात्रा का वर्णन है । स्वयं प्रकाश सूक्ष्म ब्यौरे देकर कहानी कहने की कला जानते हैं । रेल का तृतीय श्रेणी का डिब्बा और वहाँ गर्मी-घुटन का बारीक चित्रण कहानी के वास्तविक संसार की सृष्टि करता है ।

यह कहानी चुहल और व्यंग्य में वर्गभेद और विषमता की बात करती है । एक उदाहरण - तो..... ..लोग एक-दूसरे पर लदे जा रहे थे । जितने बैठे थे, उनसे ज्यादा खड़े थे और कुछ लटके भी थे । ऊपर की सीटें सामान से भरी हुई थीं और फर्श औरतों से । दोनों स्थान पर बीच-बीच में कुछ आदमी भी फंसे हुए थे । बच्चों को हर जगह पाया जा सकता था । वे पानी मांग रहे थे और गर्मी से बेजार हो रहे थे । उन्हें पानी पिलाया जा रहा था और पेशाब करवाया जा रहा था । वे रो रहे थे या सो रहे थे या छींक रहे थे । वे हैरान थे कि हलकान थे ।" तथा

'अब पाखाने अब पाखाने का आलम देखिए । इस डिब्बे के यात्री, थर्ड क्लास के मुसाफिर, खासकर नन्हे या किशोर मुसाफिर जनरल-नॉलेज के क्षेत्र में दिशा-मैदान या जंगल के परिचय से आगे नहीं बढ़ पाये थे और पाखाने में घुसते ही पता चलता था कि वे बेचारे काफी देर इसी दुविधा में पड़े रहे होंगे कि किधर मुंह करके बैठा जाए । तिस पर टोंटियों में पानी भी नहीं था । साबुन के स्थान पर किसी धर्मप्राण ने ढेर सारी मिट्टी जरूर भर रखी थी और आईना नहीं था तो क्या बुरा था? ऐसी स्थिति में अपना थोबड़ा देखकर खामखां आदमी का मूड ऑफ ही होता !'

इस कहानी की समूची परिकल्पना सामाजिक विषमता उद्घाटन और श्रम की महत्ता का प्रतिपादन करने में बसी है । थर्ड क्लास का डिब्बा, भेड़-बकरियों की तरह भरे लोग, संड़ाध मारता संडास, लेटे हुए सज्जन, और फटेहाल मजदूर मिलकर देश का वास्तविक दृश्य बनाने में सफल हुए हैं ।

15.8 संरचना शिल्प : भाषा शैली

आलोचक कमला प्रसाद ने स्वयं प्रकाश की भाषा के संबंध में लिखा है - 'गंभीर विचार मंथन से अर्जित अनुभव से भाषा डूबी हुई है । उसमें पैनापन और व्यंग्य के अकूत सिलसिले मौजूद हैं । यह व्यंग्य भाषा को निर्मम बनाता है और भाषा अपनी सहजता में भी कई जगह से मार करती हैं । इस भाषा के आगे बड़ी से बड़ी हस्तियाँ एक्सपोज होती है । मसलन, बात रेलगाड़ी के थर्ड क्लास डिब्बे की है- "चूंकि वह जनता थे, इसलिए थर्ड क्लास में सफर कर रहे थे और चूंकि वह थर्ड क्लास था, इसलिए ट्रेन के आखिरी डिब्बे का आखिरी कम्पार्टमेंट था । बाकी ट्रेन या तो फर्स्ट थी या शयनयान या आरक्षित ।" अब इसमें ट्रेन के स्थान पर देश कर दें तो क्या यही भाषा जनता के साथ सरकार के व्यवहार को व्यक्त नहीं करेंगी? क्या इस भाषा में रेल के डिब्बे के बहाने सारी व्यवस्था पर तीखी भेदक चौट नहीं है यह निश्चय ही संघर्ष की भाषा है ।'

भाषा के संबंध में स्वयं प्रकाश अचूक सावधानी रखते हैं कि उसने रोचक होना ही चाहिए और वह गढ़ी हुई किताबी न होकर सामान्य जीवनानुभव की भाषा हों 'लुगाई' के स्थान पर 'महिला' लिख दें तो क्या वही छवि उभर कर आ सकती है जो मजदूरों के साथ आने वाली औरतों की उभरी हैं ।

जनवादी कहानी ने अपने शिल्प में 'बतकही', 'बतरस' और 'पाठकीय भागीदारी' का भरपूर प्रयोग किया है । स्वयं प्रकाश मानते हैं कि 'पाठक की भागीदारी सिर्फ ग्रहणकर्ता के रूप में नहीं रहनी चाहिए बल्कि एक सह चिंतक के रूप में रहनी चाहिए ।' इसलिए वे यही कहानी शुरू होते ही कहते हैं । - 'कुछ लोगों की नजर में हो सकता है, यह उचित ही हो, पर मुझे पूरा भरोसा है कि आप उन कुछ लोगों में से नहीं हैं । क्योंकि आपको भी ऐसी ही स्थितियों

में सफर करना पड़ता है ।' यह एकमात्र उदाहरण नहीं है वस्तुत: पूरी कहानी पढ़ते हुए पाठक को लगता है वह कहानी पढ़ नहीं रहा अपितु सुन रहा है ।

15.9 सारांश

स्वयं प्रकाश मार्क्सवादी वामपंथी विचारधारा के पक्षधर है और लेखन को प्रेमचंद की तरह सोद्देश्यता से जोड़ना जरूरी समझते हैं । जनता के सुख-दुख और आशा - आकांक्षा का चित्रण करने के साथ वे जनविरोधी ताकतों को बेपर्दा करना जरूरी समझते हैं । 'नीलकान्त का सफर' उनकी सबसे चर्चित - प्रतिनिधि और लोकप्रिय कहानी है जहाँ उनकी कला का सर्वोत्तम उदाहरण मिलता है । कहानी की मूल संवेदना रेल यात्रा के कष्टों का विवरण देना या रेल के डिब्बे की अव्यवस्था का मजाक उड़ाना नहीं है बल्कि कथाकार इसके माध्यम से समूची व्यवस्था के औचित्य पर सवाल खड़ा करते हैं । इस कहानी का प्रकाशन लगभग पच्चीस तीस साल पहले हुआ था लेकिन स्थितियों में बहुत बदलाव नहींहुआ है । आम आदमी का संघर्ष अभी भी वैसा ही कठोर और तीखा है । नामवर सिंह कहते हैं कि कहानी छोटे मुँह बड़ी बता करती है । ऐसा इशारा इस कहानी में है । लेटे हुए लोगों से खड़े हुए लोग बहस कर रहे हैं और कहते हैं 'आपका कोई रिजर्वेशन नहीं है, चाहे बम्बई से आओ चाहे लंदन से । लंदन का इशारा गंभीर इशारा है । लंदन क्यों? क्योंकि अंग्रेजी साम्राज्यवाद हमारी जनता ने भोगा है और अब वह अपने अधिकार के प्रति जागरूक है । खिड़कियाँ खोलने का प्रतीकार्थ समझा जाए तो कथाकार का उद्देश्य स्पष्ट हो जाता है । श्रम की अनिवार्य उपस्थिति और वर्ग भेद की समाप्ति को स्वयं प्रकाश देश के लिए जरूरी मानते हैं । जब चालीस लोग खड़े हों और चार लोग पूरी-पूरी बर्थ घेर कर सो रहे हों तब सफर सुखद नहीं हो सकता, इसी रूपक को देश के साथ बदल लिया जाए तो सारी बात समझ में आ जाती है । वस्तुत: स्वयं प्रकाश इस व्यवस्था पर सवाल खड़ा करते है और गहरी प्रश्नाकुलता कहानी को सफल बनाती है ।

निष्कर्षत: नीलकान्त का सफर स्वयं प्रकाश की श्रेष्ठ कहानी है जहाँ बतकही का रस, सूक्ष्म चरित्रांकन, वातावरण का सजीव चित्रण और गहरी प्रश्नाकुलता के गुण मौजूद है ।

15.10 संदर्भ ग्रन्थ

1. साहित्य और विचारधारा - कमला प्रसाद, साहित्यवाणी इलाहाबाद
2. हिन्दी कहानी अस्मिता की तलाश-आधार प्रकाशन, पंचकूला
3. साहित्य से संवाद - गोपेश्वर सिंह, मेधा बुक्स, नई दिल्ली
4. सम्बोधन, स्वयं प्रकाश विशेषांक, जनवरी मार्च 2007,
   सं. कुमर मेवाड़ी, चांदपोल, कांकरोली - 313324
5. चर्चा-7 स्वयं प्रकाश विशेषांक, सं. योगेंद्र दवे, ब्रह्मपुरी, पीपलिया जोधपुर - 342001
6. कथादेश दिसंबर 2004 एवं जनवरी 2005,
   सं. हरिनारायण, सी 52/1 जेड-3 दिलशाद गार्डन. दिल्ली-। 10095

15.11 बोध प्रश्न

नीचे लिखे प्रश्नों के उत्तर दीजिए और अपने उत्तरों का इकाई के अंत में दिये गए उत्तरों से मिलाइए ।

1. नीलकान्त किसमें सफर कर रहे थे

उत्तर- रेल के तष्तीय श्रेणी के कम्पार्टमेंट में

2. संडास में साबुन के स्थान पर किसी धर्मप्राण ने क्या रख दिया था?

   (क) वाशिंग पाउडर (ख) सोडा

   (ग) मिट्टी (घ) राख (ग)

3. नीलकांत के पास सफर में क्या सामान था?

   (क) अटैची (ख) पानी की बोतल

   (ग) किताबों का बस्ता (घ) ट्रांजिस्टर (क)

4. किसने कहा 'सब रेलवाले चोर हैं?

   (क) नीलकांत ने (ख) लेटे हुए मुसाफिर ने

   (ग) उग्र से व्यापारी सज्जन ने (घ) मजदूरों ने (ग)

5. नीलकांत को खिड़की तोड़ डालने का सुझाव कौन दे रहा था ?

   (क) लेटा हुआ मुसाफिर (ख) ऊपर आराम से बैठा दढ़ियल

   (ग) मजदूर (घ) खिड़की के पास खड़ा लड़का (ख)

6. नीलकांत की वापस संडास में जाने की इच्छा क्यों हुई?

   (क) अब वहाँ बदबू नहीं थी ।

   (ख) अगले स्टेशन पर उन्हें उतर जाना था

   (ग) वहाँ उनका मित्र खड़ा था ।

   (घ) वहाँ हवा आ रही थी । (घ)

7. निराश होकर नीलकांत किसे बुलाना चाहते थे ।

   (क) टी.टी का (ख) गार्ड को

   (ग) स्टेशन मास्टर को (घ) रेलवे पुलिस को (ख)

8. नीलकांत आखिर कुछ कर क्यों नहीं पाते?

   (क) उनके पास औजार नहीं था ।

   (ख) लेटे हुए लोग बहुत बलशाली थे ।

   (ग) उन्हें अगले स्टेशन पर उतर जाना था ।

   (घ) मध्यवर्गीय मानसिकता उन्हें कुछ करने से रोक देती थी । (घ)

9. नीलकान्त का सफर का प्रयोजन क्या है?

   (क) रेलवे की अव्यवस्था दिखाना

   (ख) मजदूरों की ताकत दिखाना

   (ग) गंदगी और भीड़ दिखाना ।

   (घ) देश और व्यवस्था का दर्शन (घ)

10. 'क्या भरोसा कि इतना सब करने पर भी मुझे जगह मिल ही जाएगी । नीलकांत के इस कथन मे उसकी कौनसी भावना व्यक्त हुई है?

(क) उपेक्षा (ख) सुविधाभोगी अवसरवादिता

(ग) चतुराई (घ) कायरता (ख)

11. खिड़कियाँ खुल जाने से कौन खुश नहीं था?

(क) रेलवे का गार्ड (ख) व्यापारी

(ग) लेटे हुए लोग (घ) मजदूरों की लुगाइयाँ (ग)

12. 'यदि इस समय डिब्बे में किसी सज्जन या देवी को इस भव्य कक्ष की आपातकालीन जरूरत पड़ जाए जिस पर 'प्रसाधन लिखा है । इस वाक्य में कौनसा भाव है ।

(क) व्यंग्य (ख) विडंबना

(ग) अंतर्विरोध (घ) हास्य (क)

13. 'नीलकान्त का सफर' में अंततः कहानी किसका रूपक बन जाती है ।

(क) रेलयात्रा का (ख) देश का

(ग) संत्रास का (घ) कोई नहीं (ख)

14. नीलकांत के स्थान पर यदि आप होते तो क्या करते?

(क) चुपचाप यात्रा करते

(ख) दूसरी श्रेणी का टिकट ले लेते

(ग) कुली को ऊपर देकर सीट ले लेते ।

(घ) अधिकार के लिए सभी संभव संघर्ष करते । (घ)

15. खिड़कियां खुलने पर कौन गाने लगा था?

(क) नीलकांत (ख) लेटे हुए लोग

(ग) मजदूर (घ) कोई नहीं (ग)

16. कहानी के अंत में नीलकान्त खुश क्यों थे?

(क) उन्हें बैठने की जगह मिल गई थी ।

(ख) मजदूरों ने गीत गाना शुरू कर दिया था ।

(ग) खिड़कियाँ खुल गई थीं ।

(घ) इनमें से कोई नहीं (ग)

17. स्वयं प्रकाश किस धारा के कथाकार है?

(क) प्रगतिशील - जनवादी

(ख) नयी कहानी

(ग) अकहानी

(घ) समांतरकहानी (क)

18. नीलकान्त का सफर स्वयं प्रकाश के किस संग्रह से ली गई है?

(क) मात्रा और भार (ख) सूरज कब निकलेगा

(ग) आसमॉ कैसे-कैसे (घ) अगले जनम (ख)

खण्ड - 5 का परिचय

खण्ड पाँच हिन्दी उपन्यास पर केन्द्रित है । अध्ययन के लिये 'निर्मला' (प्रेमचन्द) और 'महाभोज' (मन्नू भण्डारी) की रचनाओं को पाठ्यक्रम में स्थान दिया गया है । इन दोनों रचनाओं पर दो-दो पाठ तैयार किए गए हैं । 'निर्मला' पर पहला पाठ उसके प्रतिपाद्य को लेकर लिखा गया है । प्रेमचन्द ने अपनी इस रचना में अनमेल विवाह और दहेज प्रथा की क्रूरता के मध्य पिसती हुई निम्न मध्य वर्ग की स्त्री (निर्मला) का चित्र प्रस्तुत किया है । संक्षेप में यही 'निर्मला' का प्रतिपाद्य हैं । 'निर्मला' पर लिखा गया दूसरा पाठ उसकी संरचना और शिल्प को लेकर है । प्रेमचन्द ने निर्मला के और उसके अधेड़ आयु के पति मुंशी तोताराम के मनोविज्ञान को समझने का प्रयास किया है । साथ ही संरचना की दृष्टि से इस कृति में स्वप्न और प्रलाप शैली का भी पुट दिया गया है । भाषा की दृष्टि से भी प्रेमचन्द इसमें एक नवीन भंगिमा लिये हुए हैं । कुल मिलाकर इन दो पाठों में 'निर्मला' के प्रतिपाद्य और उसकी संरचना पर प्रकाश डाला गया है । इन पात्रों की सहायता से आप उपन्यास के मर्म को समझने में सफल होंगे ।

'महाभोज' पर भी 'निर्मला' की भाँति दो पाठ आप के अध्ययन के लिए प्रस्तुत किये गए हैं । 'महाभोज' आज की छल प्रपंचों से भरी हुई राजनीति को ध्यान में रखकर रचा गया है । लेखिका ने राजधानी के निकट सरोहा गाँव में होने वाले मध्यावधि चुनाव को केन्द्र बनाकर इस उपन्यास का ताना-बाना बुना है । इस रचना में राजनीति करने वाले लोगों की कथनी और करनी में दिखायी पड़ने वाले अंतर को भी उभारा गया है । यही उपन्यास का कथ्य है । साथ ही उपन्यास में सांकेतिकता, प्रतीकात्मकता और व्यंग्य विधा का भी भरपूर प्रयोग किया गया है । उपन्यास कलेवर में छोटा है किन्तु उसकी व्यंजना गहरी और व्यापक है इसीलिए समकालीन जीवन के यथार्थ को पकड़ने में यह रचना सफल मानी गयी है तथा चर्चित और प्रशंसित भी रही है ।

इन दो उपन्यासों को पाठ्यक्रम में स्थान देकर आपको भारतीय जीवन की समस्याओं को समझने अमै चिंतन करने की प्रेरणा भी मिलेगी । कुल मिलाकर इस प्रश्न-पत्र के माध्यम से आप हिन्दी कथा साहित्य (कहानी और उपन्यास) की प्रमुख रचनाओं से परिचित होकर उनका आस्वादन करेंगे और जीवन के यथार्थ पर अपने विचारों को भी दिशा दे सकेंगे ।

इकाई- 16

'निर्मला' का अंश (प्रेमचन्द) / प्रतिपाद्य (भाग- 1)

इकाई की रूपरेखा

16.0 उद्देश्य
16.1 प्रस्तावना
16.2 कहानी का वाचन
16.3 कठिन शब्दों के अर्थ
16.4 संदर्भ सहित व्याख्या
16.5 कथावस्तु
16.6 चरित्र चित्रण
16.7 वातावरण (परिवेश)
16.8 संरचना शिल्प (भाषा शैली)
16.9 सारांश
16.10 संदर्भ ग्रन्थ
16.11 बोध प्रश्न एवं उनके उत्तर

16.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई में आप प्रेमचन्द के उपन्यास 'निर्मला' का अंश पढ़ेंगे ।

प्रेमचन्द ने अपने समय के यथार्थ को भलीभाँति परखा था । वे जानते थे, समाज में बहुत सी ऐसी विकृतियाँ हैं, जिनसे समाज का कमजोर वर्ग सदा दबाया जाता है । किसानों और मजदूरों की समस्याओं से भी पहले उन्होंने नारी की स्थित, परिस्थिति, मनोविज्ञान और दुर्गति को बहुत अच्छी तरह समझ लिया था । 'अर्थ' का प्रभाव केवल वर्गगत भेदभाव पर ही नहीं था बल्कि अर्थ के अभाव के कारण और पर्याप्त दान-दहेज न दे पाने के कारण अनेक पिता अपनी किशोरी बेटियों का विवाह अधेड़ या वृद्ध एवं दुहाजू दरों से कर देते थे । उम्र का फासला एक ओर मानव मन को कुंठित करता है, दूसरी ओर अनेक शंकाओं और उपद्रवों को जन्म देता है । प्रेमचन्द ने 'निर्मला' उपन्यास में इसी अनमेल विवाह की समस्या को उठाया है । सह समस्या तात्कालिक ही नहीं थी, अपितु आज भी उतनी ही प्रासंगिक एवं तर्कपूर्ण है । आज भी दहेज समस्या अनेक रूपों में स्त्री की बलि ले रही है । धनलोलुपों की दहेज की चाह तथा पति-पत्नी के बीच उम्र का फासला अनेक परिवारों को बरबाद कर रहा है । प्रेमचन्द ने एक बेहद संवेदनशील समस्या को मनोवैज्ञानिक ढंग से उठाया है और उसकी दुःखद परिणति को दिखकर समाज की संवेदनशीलता को जगाने का प्रयास किया है । 1923 ई. में लिखा गया यह उपन्यास समाज सुधार के उद्देश्य से प्रेरित है । यह दुःखान्त उपन्यास है जो पाठक

को झकझोरता है और समझाने की चेष्टा करता है कि न तो दहेज के अभाव में अपनी बेटी को बड़ी उम्र के पुरुष से ब्याहना चाहिए और न ही बड़ी उम्र के पति को, अपनी पत्नी पर अनावश्यक संदेह करना चाहिए । परस्पर विश्वास के अभाव में सीधे सच्चे रिश्ते भी बिगड़ जाते हैं और इस विश्वास के चलते परिवार तो बरबाद होते ही हैं, निर्मला जैसी स्त्रियों को असमय ही अपने प्रमाण त्यागने पड़ते हैं ।

प्रेमचन्द ने मध्यवर्गीय समाज की नब्ज पर हाथ रखकर यह उपन्यास लिखा था और इसमें समाज में नारी की दुर्दशा को उन्होंने बहुत ही यथार्थपरक ढंग से अभिव्यक्ति दी । प्रेमचन्द ने बहुत ही निर्मम्तापूर्वक समाज की शल्य परीक्षा की है क्योंकि वे भारत में रूढ़िग्रस्त और शोषित समाज को एक नया बल तथा दिशा देना चाहते थे । प्रेमचन्द ने सर्वप्रथम भारतीय समाज की इसी शोषित नारी की अनेक समस्याओं को ही समाज के माध्यम से उठाया ।

इस इकाई को पढ़कर विद्यार्थी-

1. उपन्यास की कथावस्तु को समझ सकेंगे ।
2. महत्वपूर्ण गद्यांशों की व्याख्या तथा कठिन शब्दों के अर्थ की जानकारी ले सकेंगे ।
3. उपन्यास तत्वों के आधार पर विवेचन व विश्लेषण कर सकेंगे ।

16.1 प्रस्तावना

प्रेमचन्द ने अपने लेखन के लिए गरीब, शोषित, दलित, पीड़ित आम आदमी को चुना । वे मध्य वर्ग वे सम्बन्धित थे किन्तु जन की पीडा के भागीदार थे और सबसे बड़ी बात यह थी कि उन्होंने अपने साहित्य के उद्देश्य को पहचाना लिया था । समाज सुधार आन्दोलन, गाँधीवादी चेतना, समाजवादी विचारधारा और साहित्यिक क्षेत्र में रवीन्द्रनाथ ठाकुर और शरतचन्द्र ने उनके मानस पर भरपूर प्रभाव डाला था-इन सब प्रभावों के बीच उन्होंने अपनी जो राह बनाई थी, वह मनोरंजन, स्वच्छन्दतावाद और रोमानियत से परे पाठकों में स्वस्थ मूल्यों के विकास की गुरुतर चेष्टा थी । वे कोई उपदेशक या नेता नहीं थे किन्तु वे मनुष्य जाति के विकास के इतिहास की कल्पना को एक अटूट सिलसिले से बंधे हुए थे और मानव प्रकृति तथा परिस्थिति के द्वन्द्व में उनकी सीधी रूचि थी । प्रेमचन्द ने मानवीय जिजीविषा की इस शक्ति को पहचान लिया था, जो परिस्थितियों पर चोट करके प्रतिक्रियात्मक होती है ।

प्रेमचन्द मानते हैं कि समाज के विकास में स्त्री का बहुत बड़ा योगदान है क्योंकि प्रेम, त्याग और अहिंसा स्त्रीत्व के ही गुण हैं । प्रेमचन्द के लिए स्त्री-पुरुष की मान्यता का मन्तव्य स्पष्ट है । स्त्री-पुरूष में न तो समान शक्तियाँ हैं, न समान प्रवृत्तियाँ है और उनमें स्पष्ट रूप से भिन्नता भी है । क्षमा, दया, करूणा आदि उच्चतम आदर्शों को स्त्री सहज ही आत्मसात् किये हैं, इसीलिए मानवीय गुणों का विकास वह अधिक सहजता से कर सकती है । प्रेमचन्द नारी को अधिक शक्तिसम्पन्न और सुविधा सम्पन्न देखने के पक्ष में थे ।

प्रेमचन्द स्त्री को वस्तु या सम्पत्ति नहीं मानते । उनके लिए स्त्री भी अस्तित्वमान चेतन प्राणी है किन्तु वे नारी के लिए पाश्चात्य संस्कृति सभ्यता की अपेक्षा भारतीय सांस्कृतिक आदर्शों को ही महत्व देते हैं ।

अनमेल विवाह के प्रति प्रेमचन्द बेहद चिन्तित रहे हैं । संभवत: वे ऐसे विवाह की व्यावहारिक कठिनाई को भलीभाँति जानते थे । सामाजिक कारणों से भी अधिक यह मनोवैज्ञानिक समस्या है जो जीवन को दुःखमय और बोझिल बना देती है । 'अनमेल विवाह' में अधिकांश रूप से पीड़ित स्त्री ही होती है । अधिकांश माता-पिता या आत्मीय जन आर्थिक अभाव के कारण, अथवा धन लोलुपता के कारण अथवा ईर्ष्या या प्रतिशोधात्मक भावना के कारण अथवा घर की बेटियों के प्रति उपेक्षा भाव के कारण अयोग्य एवं अधिक उम्र के व्यक्तियों से कर देते हैं । प्रेमचन्द ने ऐसे पात्रों से कहलाता है - "मेरे अधःपतन का अपराध मेरे सिर नहीं, मेरे माता-पिता और उस बूढ़े पर है जो मेरा स्वामी बनना चाहता है ।" "फिर कहती हूँ आप भी अपनी बालिकाओं के लिए मत देखो धन, मत देखो कुलीनता, केवल वर देखो । अगर उसके लिए जोड़े का वर नहीं पा सकते, गला घोंट डालो, पर किसी बुड्ढे-खूसट से मत ब्याहो ।" प्रेमचन्द ने सामाजिक विसंगतियों को निर्भीक रूप से प्रस्तुत किया है । अनमेल विवाह की व्यथा के प्रति उनकी पूर्ण सहानुभूति है किन्तु उन्होंने पारिवारिक जीवन, घटनाक्रमों और व्यावहारिक उलझनों को बहुत बारीकी से और स्वाभाविक रूप से चित्रित किया है । प्रेमचन्द का सामाजिक सर्वेक्षण व्यावहारिक मनोविज्ञान पर टिका है । न केवल सामाजिक मर्यादा, रिश्तों को सहजता और कृत्रिमता, स्वाभाविक प्रतिक्रिया तथा परिवार और समाज में चली आई मान्यताओं और इच्छाओं का चित्रण भी स्त्री-पुरूष मनोविज्ञान के अलग- अलग रूपों के आधार पर किया है । परिवार में होने वाले छल-छंद, लोभ-कपट, आरोप-प्रत्यारोप और इनके बीच बहती हुई मन की बात अपनी स्वाभाविक संगतियों के साथ निर्मला में दिखाई देती है ।

16.2 कहानी का वाचन

विवाह का पक्का होना

इधर महीनों से बाबू उदयभानु लाल निर्मला के विवाह की बातचीत कर रहे थे । आज उनकी मेहनत ठिकाने लगी है । बाबू भालचन्द्र सिन्हा के ज्येष्ठपुत्र भुवनमोहन से बात पक्की की गई है । वर के पिता ने कह दिया है कि आपकी खुशी हो, दहेज दें या न दें, मुझे इसकी परवाह नहीं । हाँ, बारात में जो लोग जाएँ, उनका आदर-सत्कार अच्छी तरह होना चाहिए, जिसमें मेरी और आपकी जग- हँसाई न हो । बाबू उदयभानु लाल थे तो वकील, पर संचय करना न जानते थे । दहेज उनके सामने कठिन समस्या थी ।

***

बारातियों की अपेक्षाएं

जब से ब्रह्मा ने सृष्टि रची, तब से आज तक कभी बारातियों को कोई प्रसन्न रख सका । उन्हें दोष निकालने और निन्दा करने का कोई न कोई अवसर मिल ही जाता है । जिसे अपने घर सूखी रोटियाँ भी मयस्सर नहीं, वह भी बारात में जाकर तानाशाह बन बैठता है, तेल

खुशबूदार नहीं, साबुन टके सेर का जाने कहाँ से बटोर लाये, कहार बात नहीं सुनते, लालटेन धुआँ देती है । कुर्सियों में खटमल हैं, चारपाइयाँ ढीली है । जनवासे की जगह हवादार नहीं । ऐसी-ऐसी हजारों शिकायतें होती है ।

***

भावी का संकेत

पर यह कौन जानता था कि यह सारी लीला विधि के हाथों रची जा रही है । जीवन रंगशाला का वह निर्दय सूत्रधार, किसी अगम्य गुप्त स्थान पर बैठा हुआ अपनी जटिल क्रूर क्रीड़ा दिखा रहा है । यह कौन जानता था कि नकल असल होने जा रही है, अभिनय सत्य का रूप ग्रहण करने वाला है ।

***

व्यक्तित्व चरित्र

संख्या का समय था । बाबू भालचन्द्र दीवान खाने के सामने आराम कुर्सी पर नंगधडंग लेटे हुए हुक्का पी रहे थे । बहुत ही स्थूल ऊँचे कद के आदमी थे । ऐसा मालूम होता था कि काला देव है । सिर से पैर तक एक ही रंग था-काला चेहरा इतना स्याह था कि मालूम न होता था कि माथे का अंत कहाँ है और सिर का आरम्भ कहाँ । बस, कोयले की एक सजीव मूर्ति थी । आपको गर्मी बहुत सताती थी । दो आदमी खड़े पंखा झल रहे थे, उस पर भी पसीने का तार बंधा हुआ था । आप आबकारी में एक ऊँचे ओहदे पर थे । 600 रुपये वेतन मिलता था । ठेकेदारों से खूब रिश्वत लेते । ठेकेदार शराब के नाम पानी बेचे, चौबीसों घंटे दुकान खुली रखें, आपको खुश रखना काफी था । सारा कानून आपकी खुशी थी ।

***

लड़की : एक बोझ

लेकिन विवाह तो करना ही था और हो सके तो इसी साल, नहीं तो दूसरे साल फिर नए सिरे से तैयारियाँ करनी पड़ेगी । अब अच्छे घर की जरूरत नहीं थी । अच्छे वर की जरूरत न थी । अभागिन को अच्छा घर-वर कहीं मिलता? अब किसी भाँति सिर का बोझा उतारना था, किसी भाँति लड़की को पार लगाना था -उसे कुएँ में झोंकना था । वह रूपवती है, गुणशील है, चतुर है, कुलीन है, तो हुआ करे, दहेज हो तो सारे दोष गुण है । प्राणों का कोई मूल्य नहीं, केवल दहेज का मूल्य है । कितनी विषम भाग्य लीला है ।

***

पति-पत्नी में आयु भेद और मनोविज्ञान

वकील साहब को उनके दम्पत्ति विज्ञान ने सिखाया था कि युवती के सामने खूब प्रेम की बातें करनी चाहिए- दिल निकाल कर रख देना चाहिए, यही वशीकरण का मुख्य मन्त्र है । इसलिए वकील साहब अपने प्रेम-प्रदर्शन में कोई कसर न रखते थे, लेकिन निर्मलाको इन बातों से घृणा होती थी । वही बात, जिन्हें किसी युवक के मुख से सुनकर उसका हृदय प्रेम से उन्मत्त हो जाता, वकील साहब के मुँह से निकलकर उसके हृदय पर शार-समान आघात करती थी । उनमें रस न था, उल्लास न था, उन्माद न था, केवल बनावट थी, धोखा था और था शुष्क एवं नीरस शब्दाडम्बर ।

***

युवा दिखने के लिए कृत्रिम व्यवहार

उस दिन से वह रोज अपनी जवांमर्दी का कोई न कोई प्रसंग अवश्य छेड़ देते । निर्मला को सन्देह होने लगा कि कहीं इन्हें उन्माद का रोग तो नहीं हो रहा है । जो आदमी मूंग की दाल और मोटे मोटे के दो फुलके खाकर भी नमक सुलेमानी का मोहताज हो, उसके छैलपन पर उन्माद का संदेह हो, तो आश्चर्य ही क्या? निर्मला पर इस पागलपन का और तो क्या रंग जमता, हाँ, उसे सन पर दया आने लगी । क्रोध और घृणा का भाव जाता रहा । क्रोध और घृणा उस पर होती है जो अपने होश में हो । पागल आदमी तो दया ही का पात्र है ।

***

निर्मला की स्थिति

निर्मला ने यह बात प्रशंसा पाने के लोभ से कही थी । वह यह दिखाना चाहती थी कि मैं तुम्हारे लड़की को कितना चाहती हूँ । यह कोई बनावटी प्रेम न था । उसे लड़कों से सचमुच स्नेह था । उसके चरित्र में अभी तब बाल- भाव ही प्रधान था । उसमें वही उत्सुकता, वही चंचलता, वही विनोद प्रियता विद्यमान थी और बालकों के साथ उसकी ये बालवृत्तियाँ प्रस्फुटित होती थीं । पत्नी सुलभ ईर्ष्या अभी तब उसके मन में उदय नहीं हुई थी, लेकिन पति के प्रसन्न होने के बदले नाक भौं सिकोड़ने का आशय न समझ कर बोली-मैं क्या जानूँ उनसे क्यों नहीं माँगते, मेरे पास आते हैं तो दुत्कार नहीं देती । अगर ऐसा करूँ, तो यही होगा कि यह तो लड़कों को देखकर जलती है ।

***

पुत्र को घर से बाहर रखने का प्रयत्न

वकील किसी को ऐसी क्या गरज पड़ी है कि तुम्हारे मुँह पर तुम्हारी शिकायत करें और तुमसे बैर मोल ले? तुम अपने दो-चार साथियों को लेकर उसके घर बी खपरैल फोड़ते फिरो । मुझसे इस किस्म की शिकायत एक आदमी ने नहीं, कई आदमियों ने की है और कोई वजह नहीं है कि मैं अपने दोस्तों की बात पर विश्वास न करूँ । 'मैं चाहता हूँ कि तुम स्कूल ही में रहा करो ।

***

मंसाराम के स्वास्थ्य पर प्रभाव

एक दिन मुंशीजी बैठे भोजन कर रहे थे कि मंसाराम भी नहाकर खाने आया । मुंशी जी ने इधर उसे महीनें से नंगे बदन न देखा था । आज उस पर निगाह पड़ी तो होश उड़ गए । हड्डियों का ढाँचा सामने खड़ा था । मुख पर अब भी ब्रह्मचर्य का तेज था, पर देह घुलकर काँटा हो गई थी । पूछा- आजकल तुम्हारी तबीयत अच्छी नहीं है क्या? इतने दुबले क्यों हो?

***

मंसाराम की मातृ-वेदना

ईश्वर ऐसे बालकों को जन्म ही क्यों देते हो, जिनके भाग्य में मातृ-वियोग का दुःख भोगनाबदा हो? आज मुझसा अभागसंसार में और कौन है? किसे मेरे खाने-पीने की, मरने जीने की सुध है । अगर मैं आज मर भी जाऊँ, तो किसके दिल को चोट लगेगी । पिता को अब मुझे रूलाने

में मजा आता है, वह मेरी सूरत भी नहीं देखना चाहते, मुझे घर से निकाल देने की तैयारियाँ हो रही है । आह माता ! तुम्हारा लाडला बेटा आज आवारा कहा जा रहा है । वही पिताजी, जिनके हाथ में तुमने इन तीनों भाइयों के हाथ पकड़ाये थे, आज मुझे आवारा और बदमाश कह रहे हैं । मैं इस योग्य भी नहीं कि इस घर में रह सकूँ । यह सोचते-सोचते मंसाराम अपार वेदना से फूट-फूट कर रोने लगा ।

***

निर्मला का अन्तर्द्वन्द्व

निर्मला कुछ न बोली । वह चिन्ता के अपार सागर में डुबकियाँ खा रही थी । मंसाराम ने मेरे भाव परिवर्तन को देखकर दिल में क्या समझा होगा? क्या उसके मन में यह प्रश्न उठा होगा कि पिताजी को देखते ही उसकी तैयारियां क्यों बदल गई? इसका कारण भी क्या उसकी समझ में आया होगा? बेचारा खाने आ रहा था, तब तक वह महाशय न जाने कहां से फटक पड़े।

मुंशी जी के मन की गति

मन! तेरी गति कितनी विचित्र है, कितनी रहस्य से भरी हुई, कितनी दुर्भेध । तू कितनी जल्द रंग बदलता है । इस कला में तू निपुण है । आतिशबाज की चर्खी को भी रंग बदलते कुछ देर लगती है, पर तुझे रंग बदलने में उसका लक्षांश समय भी नहीं लगता । जहाँ अभी वात्सल्य था, वहाँ फिर संदेह ने आसन जमा लिया ।

***

मंसाराम को संदेह का आभास

क्या जीवन में इससे बड़ी विपत्ति की कल्पना की जा सकती है? क्या संसार में इससे बेहतर नीचता की कल्पना की जा सकती है? आज तक किसी पिता ने अपने पुत्र पर इतना निर्दय कलंक न लगाया होगा । जिसके चरित्र की सभी प्रशंसा करते थे, जो अन्य युवकों के लिए आदर्श समझा जाता थ, जितने कभी अपवित्र विचारों को अपने पास नहीं फटकने दिया, उसी पर वह घोर कलंक । मंसाराम को ऐसा मालूम हुआ, मानो उसका दिल फटा जा रहा है ।

***

मंसाराम को निर्मला के सम्मान की चिन्ता

उनका कैसे उद्धार होगा? उस निरपराधी का मुख कैसे उज्जवल होगा? उन्हें केवल मेरे साथ स्नेह का व्यवहार करने के लिए यह दंड दिया जा रहा है । उनकी सज्जनता का यह उपहार मिल रहा है । मैं उन्हें इस प्रकार निर्दय आघात सहते देखकर बैठा रहूँगा । अपनी मान, सम्मान, रक्षा न सही, उनकी आत्म रक्षा के लिए इन प्राणों का बलिदान करना पड़ेगा ।

***

मंशीजी के मन कइ ईर्ष्या का विकराल रूप

लेकिन आज उसे इसदारूण दशा में देखकर भी वह सोच रहा है कि इसे घर ले चलूँ या नहीं? क्या यहाँ दवा नहीं हो सकती? मैं यहाँ चौबीसों घंटे बैठा रहूँगा । डॉक्टर साहब यहाँ हैं ही । कोई दिक्कत न होगी । घर ले चलने में उन्हें बाधाएं ही बाधाएं दिखाई देती थी, सबसे बड़ा भय था कि वहाँ निर्मला इसके पास हरदम बैठी रहेगी और मना न कर सखा-यह उनके इस असहय था ।

***

मुंशी का पश्चाताप

कोई उपाय ऐसा नहीं है, जिससे मैं इसे इतना समझा सकूँ कि मेरा दिल साफ है? आप ही कह दीजिए, डॉक्टर साहब कह दीजिए, तुम्हारा अभागा पिता बैठा रो रहा है । उसका दिल तुम्हारी तरफ से बिल्कुल साफ
है । उसे कुछ भ्रम हुआ था । वह अब दूर हो गया ।

***

मन के भावों का स्वरूप रूप

पहली पत्नी मंसाराम के सामने कह रही है-स्वामी, यह तुमने क्या किया? जिस बालक को मैंने अपना रक्त पिला-पिलाकर पाला, उसको तुमने इतनी निर्दयता से मार डाला । ऐसे आदर्श चरित्र बालक पर तुमने इतना घोर कलंक लगा दिया?

***

मंसाराम के द्वारा चरित्र का स्पष्टीकरण

'अम्माजी, इस अभागे के लिए आपको व्यर्थ इतना कष्ट हुआ । मैं आपका स्नेह कभी न भूलूँगा । ईश्वर से मेरी यही प्रार्थना है कि मेरा पुनर्जन्म आपके गर्भ से हो, जिससे माँ आपके ऋण से उऋण हो सकूँ । ईश्वर जानता है, मैंने आपको विमाता नहीं समझा । मैं आपको अपनी माता समझता रहा'

***

दहेज के प्रति विरोध

यह वर का धर्म है कि यदि वह स्वार्थ के हाथों बिल्कुल बिक नहीं गया है तो अपने आत्मबल का परिचय दे । अगर वह ऐसा नहीं करता तो कहूँगी कि वह लोभी है और कायर भी । दुर्भाग्यवश ऐसा ही एक प्राणी मेरा पति भी है और मेरी समझ में नहीं आता, किन शब्दों में उनका तिरस्कार करूँ ।

***

निर्मला का मातृत्व

माता का हृदय प्रेम में इतना अनुरक्त रहता है कि भविष्य की चिन्ता और बाधाएं उसे जरा भी भयभीत नहीं करती । उसे अपने अंतःकरण में एक अलौकिक शक्ति का अनुभव होता है, तो बाधाओं को उसके सामने परास्त कर देती है।

***

नियति का खेल या अंधविश्वासों का प्रहार

किन्तु बुद्धि तो ईश्वर का यह रूप स्वीकार नहीं करती । अनन्त सृष्टि का कर्ता उदण्ड बालक नहीं हो सकता । हम उसे उन सारे गुणों से विभूषित करते हैं, जो हमारी बुद्धि की पहुँच से बाहर है । खिलाड़ीपन तो उन महान् गुणों में नहीं? क्या हँसते-खेलते बालकों का प्राण हर लेना कोई खेल नहीं है? क्या ईश्वर ऐसा पैशाचिक खेल खेलता है?

***

निर्मला का स्त्रीधन गहने

गहने ही स्त्री की सम्पत्ति होते है । पति की और किसी सम्पत्ति पर उसका अधिकार नहीं होता है । इन्हीं का उसे बल और गौरव होता है । निर्मला के पास पाँच-छ: हजार के गहने थे । जब उन्हें पहनकर निकलती थी तो उतनी देर के लिए उल्लाए में उसका हृदय खिला रहता था । एक-एक गहना मानों विपत्ति और बाधा से बचाने के लिए एक-एक रक्षास्त्र था ।

***

भविष्य की चिन्ता

मुंशी जी ने अपने को सम्पूर्णत: निर्मला के हाथों में सौंप दिया है । उसके किसी का में दखल नहीं देते । काम करने को जी चाहे या न चाहे, तबीयत अच्छी ही हो या न हो, काम करना ही पड़ता है । निर्मला को उन पर जरा भी दया नहीं आती । यही भविष्य की भीषण चिन्ता उसके आन्तरिक सद्भावों का सर्वनाश कर रही है ।

***

मुंशी जी की असहाय स्थिति

मुंशीजी आहिस्ता- आहिस्ता आकर अपने कमरे में बैठ गए । आज पहली बार उन्हें निर्मला पर क्रोध आया, लेकिन एक क्षण में क्रोध का आघात अपने ऊपर होने लगा । उस अंधेरे कमरे में फर्श पर लेटे हुए वह अपने को पुत्र की ओर से इतना उदासीन हो जाने पर धिक्कारने लगे।

***

निर्मला का स्वभाव-परिवर्तन

जब हृदय जलता है तो वाणी भी अग्निमय हो जाती है । निर्मला बड़ी मधुरभाषिणी स्त्री थी, पर अब उसकी गणना कर्कशाओं में की जा सकती थी । दिन भर उसके मुख से जल कटी बातें ही निकला करती थीं । उसके शब्दों की कोमलता न जाने क्या हो गई?

***

निर्मला का अंतिम समय

'बच्ची को आपकी गोद में छोड़ जाती हूँ । अगर जीती जागती रहे तो किसी अच्दे कुल में विवाह कर दीजिएगा । चाहे क्वाँरी रखिएगा, चाहे विष देकर मार डालिएगा, पर कुपात्र के गले में मढ़िएगा, इतनी ही आपसे विनय है ।'

16.3 कठिन शब्दों के अर्थ

उपन्यास सरल भाषा में लिख गया है, अत: कठिन शब्दों के अर्थ देने की जरूरत नहीं है ।

16.4 संदर्भ सहित व्याख्या

1. मातृ प्रेम में कठोरता होती थी, लेकिन मृदुलता से मिली हुई । इस प्रेम में करूणा थी, पर वह कठोरता न थी, जो आत्मीयता का गुप्त संदेह है । स्वस्थ अंग की परवाह कौन कर दें हैं? लेकिन वह अंग जब किसी वेदना से टपकने लगता है तो उसे ठेस और धक्के से बचाने का यत्न किया जाता है । बालक का करूण रोदन निर्मला को उसके अनाथ देने की सूचना दे रहा था ।

संदर्भ :

उपरोक्त पंक्तियाँ प्रेमचन्द रचित उपन्यास 'निर्मला' से उद्धृत की गई हैं । इनमें मुंशीराम तोताराम के दूसरा विवाह कर लेने के पश्चात् वे अपनी पूर्व पत्नी के छोटे बेटे को पीटते हैं तो निर्मला बच्चे को अपनी गोद में उठाकर प्यार करती है । बच्चे की वेदना का और अनुभूति का मार्मिक चित्रण करते हुए लेखक कहे हैं ।

व्याख्या :

बच्चे को यद्यपि विमाता निर्मला ने अपनी गोद में लेकर पुचकारा था, किन्तु बच्चे के मन में वह आश्वस्त न थी, जो सगी माँ की गोद में होती है । माता यदि डाँटती-डपटती भी है तो भी बच्चे को कोमलता का स्पर्श मिलता है । बच्चा माँ की कठोरता से अपनी शरारत का दण्ड पा जाता है किन्तु सब कुछ भूलकर फिर माता की गोद में आश्रय खोज लेता है । निर्मला के प्रेम में, आत्मीयता से भरी हुई कठोरता न थी, बल्कि यहां दयाभाव था । छोटा सा बच्चा भी इस अन्तर को भलीभाँति समझता है । जिस प्रकार स्वस्थ अंग से हम कठोर से कठोर कार्य कर डालते हैं किन्तु पीड़ित अंग की पीड़ा जब बढ़ जाती है तो उसे छोटे से झटके से भी बचाया जाता है । मुंशी जी का वह छोटा बालक जिस प्रकार रो रहा था, वह लाड़ प्यार वाला रुदन न था-बल्कि करुणा जगाने वाला था । निर्मला को अहसास हो रहा था- जैसे बच्चा अपने अनाथ होने की घोषणा कर रहा था । उस असहाय अवस्था में उसे मानो एक क्षणिक आश्रय मिल गया था ।

विशेष :

प्रेमचन्द ने बड़े मनोवैज्ञानिक ढंग से छोटे से बच्चे के मन की अवस्था को पाठकों के समक्ष रखा है । प्रेमचन्द कई बार सूक्त परक भाषा के प्रयोग से गहरी बात कह जाते हैं जैसे 'मातृ प्रेम में कठोरता होती है लेकिन मृदुलता से मिली हुई ।'

2. गहने ही स्त्री की सम्पत्ति होते हैं । पति की और किसी सम्पत्ति पर उसका अधिकार नहीं होता है । इन्हीं का उसे बल और गौरव होता है । निर्मला के पास पाँच-छः हजार के गहने थे । जब उन्हें पहन कर निकलती थी तो उतनी देर के लिए उल्लास में उसका हृद्य खिला रहता था । एक-एक गहना मानो विपत्ति और बाधा से बचाने के लिए एक-एक रक्षास्त्र । अभी रात ही उसने सोचा था, जियाराम की लौंडी बनकर वह न रहेगी । ईश्वर न करे, वह किसी के सामने हाथ फैलाए । इसी खेवे से अपनी नाव को भी पार लगा देगी और अपनी बच्ची को भी किसी न किसी घाट पहुँचा देगी । उसे किस बात की चिन्ता है । इन्हें तो कोई उससे छीन न लेगा । आज ये मेरे सिगार है, कल को मेरे आधार हो जाएंगे । इस विचार से उसके हृदय को कितनी सान्त्वना मिली थी । वही सम्पत्ति आज उसके हाथ से निकल गई ।

संदर्भ :

उपर्युक्त अवतरण प्रेमचन्द रचित 'निर्मला' उपन्यास से उद्धृत किया गया है । इन पंक्तियों में निर्मला की व्यथा और भारतीय स्त्री की स्थिति को बताया गया है । निर्मला के सारे गहनों की चोरी के बाद उसकी सुरक्षा के सारे आधार ढह जाते हैं और वह गहरे अवसाद में डूब जाती है । उसी स्थिति का विवेचन करते हुए लेखक कहता है ।

व्याख्या :

गहनों का स्त्रीधन कहा गया है । कानून के अनुसार स्त्री को पति की सम्पत्ति में किसी प्रकार का अधिकार नहीं होता । अत: गहनों पर उसका आकर्षण बहुत गहरा होता है । निर्मला को भी अपने गहनों से बेहद प्रेम था । निर्मला के पास गहनों का भरपूर खजाना था । वह उन्हें पहन कर अत्यन्त प्रसन्न होती थी और अधेड़ पति का दुख भी भूल जाती थी । उसके आभूषण उसकी सुरक्षा के आधार थे । वह अपनी पारिवारिक स्थिति से परिचित थी । पति की आयु एवं आर्थिक स्थिति के कारण, वह अपने सौतेले पुत्र जियाराम के भरोसे नहीं रह सकती थी । उसे मालूम था, उसके गहने जियाराम ने चुराये हैं और वह धन के बल पर निर्मला के सारे संकटों को पार करना चाहती थी । अपनी बच्ची का भविष्य भी इन्हीं गहनों से सुरक्षित समझती थी । वह जानती थी कि आज यदि गहनों से उसका श्रृंगार होता है तो विपत्ति के समय ये गहने संकट मोचक बन सकते हैं । किन्तु आज तक उसकी सारी सुरक्षा के आधार इन गहनों की चोरी हो गई और वह स्वयं को बेहद निराश्रित अनुभव कर रही है ।

विशेष :

प्रेमचन्द ने इस अवतरण में भारतीय स्त्री की वास्तविक स्थिति को बतलाया है । स्त्री धन की महत्ता को नायिका की मनःस्थिति से स्पष्ट किया गया है । भविष्य की सुरक्षा की चिन्ता स्पष्ट है । लेखक ने इन पंक्तियों में व्यक्ति, समाज और कानून की स्थितियों के संकेत दे दिये हैं ।

16.5 कथा वस्तु :

'निर्मला' सामाजिक समस्या को उठाने वाला उपन्यास है । बेटियों के विवाह की चिन्ता से उपन्यास आरम्भ होता है । अचानक पिता की मृत्यु के कारण पक्का किया गया रिश्ता टूट जाता है और निर्मला का विवाह एक अधेड़ आयु के, तीन लड़कों के पिता, दुहाजू वर के साथ हो जाता है । समवयस्क सौतेले पुत्र के प्रति निर्मला का स्नेह, पति के मन की शंका और इसके दुष्परिणामों से उपन्यास का ताना बाना बुना गया है । आदर्श की रक्षा के लिए बड़ा लड़का अपने प्राण त्याग देता है, दूसरा बेटा विद्रोही होकर चोरी करता है और पकड़े जाने पर खुदकुशी कर लेता है । घर की आर्थिक स्थिति बिगड़ जाती है और तीसरा बेटा सियाराम घर से तंग आकर एक साधु के साथ चला जाता है । मुंशीजी बेटे की खोज में दर-दर भटकते हैं और निर्मला अपनी नन्ही बिटिया रुक्मिणी देवी को सौंप कर मौत को गले लगा लेती है ।

संयोगों, भावी संकेतों, अच्छाइयों-बुराइयों और आदर्शों के तानो-बानों से गूँथा गया यह उपन्यास मध्यवर्गीय समाज की एक बड़ी समस्या दहेज की समस्या को उठाता है लेकिन मुख्य रूप से यह अनमेल विवाह के परिणामों को दर्शाता है

16.6 चरित्र चित्रण

निर्मला और मुंशी तोताराम के मुख्य चरित्रों से पहले निर्मला के माता-पिता के अंहग्रस्त चरित्रों से परिचय होता है, जिनके टकराव से त्रासदी का आरम्भ होता है । दहेज का लालच उसे बेमेल विवाह की तरफ धकेल देता है ।

निर्मला के भविष्य का निर्णय उसकी माता लेती है । निर्मला को अपने प्रौढ़ पति की प्रेम भरी बातों और जवा दिखने के तौर तरीकों से वितृष्णा होती है, जबकि अपने समवयस्क सौतेले बेटे मंसाराम से बातें करके, उसका ख्याल करके, उससे अंग्रेजी पढ़ कर प्रसन्नता का अनुभव होता है । इस स्नेहिल रिश्ते को पति द्वारा शक की नजर से देखे जाने पर वह मंशाराम से बात करना बंद कर देती है किन्तु पति को खुश करने के लिए भरपूर कार करती है । निर्मला का पूरा जीवन कर्त्तव्यपालन, घुटन और अन्तर्द्वन्द्व में बीतता है । वह अपनी आयु के मनोविज्ञान से भी परिचित है किन्तु दायित्व, मर्यादा, कर्त्तव्य, संस्कार उसकी इच्छाओं को दबा देते हैं । धन वैभव पाकर भी वह मन की खुशी नहीं ढूँढ पाती और अंत में घुट-घुट कर प्राण त्याग देती है । उसके अंतिम शब्द बहुत मार्मिक है । बेटी को चाहे कुंवारी रखो या जहर देकर मार दो, पर कुपात्र को नहीं ब्याहना चाहिए । भारतीय समाज की इस विडम्बना, त्रासदी और विवशता के माध्यम से प्रेमचन्द ने विवाह पद्धति पर प्रश्नचिन्ह लगा दिया है । भारतीय समाज में बेटी के विवाह की चिंता उसके जन्म से ही आरम्भ हो जाती है । घर सम्भालना, बच्चे सम्भालना और गहने-कपड़ों से सज्जित रहना ही उसके जीवन का अन्तिम ध्येय होता है । उसके स्वतंत्र निर्णय या अस्तित्व की कल्पना भी उस युग में कठिन थी ।

मुंशी तोताराम निर्मला से विवाह कर अपनी गृहस्थी नये सिरे से शुरू करते है ताकि उनके तीनों बेटों का जीवन भी सम्भल जाये, किन्तु पैसा कमाने की धुन और निर्मला पर अपनी जवांमर्दी दिखाने का जोश उन्हें न केवल बच्चों के प्रति उसादीन और कठोर बना देता है, बल्कि अपने युवा बेटे पर शक करके उसे मौत के मुँह में भी धकेल देते हैं । दोनों छोटे बेटों को भी खो देते हैं और उनकी आय का स्रोत समाप्त हो जाता है, घर नीलाम हो जाता है और अंत में निर्मला की भी मृत्यु हो जाती है । एक सफल वकील का अंत बेहद भयावह हो जाता है।

मुंशी जी की शक की स्थिति को लेखक ने अपने बहानों, प्रतिक्रियाओं द्वारा व्यक्त किया है कि वे मरणासन्न बेटे को भी घर लाने को तैयार नहीं । बाद में वस्तुस्थिति का ज्ञान होने पर उनकी हताशा और निराशा उन्हें एकदम शिथिल बना देती है ।

प्रेमचन्द ने संयोग से उस व्यक्ति से मुंशी जी और निर्मला की मित्रता करा दी है, जिससे निर्मला का विवाह पक्का होकर टूट चुका था और वह अब डॉक्टर बन चुका है । वह एक बेहद सुदर्शन, युवा, संवेदनशील व्यक्ति है । निर्मला के विषय में जानकर उससे एकान्त में प्रणय निवेदन कर बैठता है और पत्नी के उलाहनों से और ग्लानि से दुखी होकर आत्महत्या कर लेता है । उसकी पत्नी सुधा सहृदय और उदार स्त्री है जो निर्मला की छोटी बहिन का विवाह अपने देवर से बिना दहेज के करवा देती है । अंधविश्वासों के कारण अपने पुत्र को खो देने पर भी वह निर्मला को दोष नहीं देती ।

मुंशी तोताराम की विधवा बहिन रुक्मिणी का चरित्र सजीव बन पड़ा है । वह अपने भतीजों की परवरिश के लिए चिन्तित है किन्तु नई बहुत निर्मला को स्वीकार करने में उसे बहुत वक्त लगता है ।

मुंशी जी के तीनों बेटे अपना स्वतंत्र व्यक्तित्व लिए है । बड़ा बेटा मंसाराम जहीन, सुन्दर और स्वाभिमानी आदर्श लाडला है । पिता के शक को भाँप कर वह जान दे देता है । सियाराम विद्रोही होकर चोरी करता है और आत्महत्या कर लेता है । सियाराम अबोध है, निर्मला की कठोरता और अभाव के कारण किसी सन्यासी के साथ भाग जाता है ।

अन्य पात्र उदयभानु, कल्याणी, भालचन्द्र सिन्हा, उनकी पत्नी रंगीली बाई, पुत्र भुवनचन्द्र पुरोहित मोटेराम, निर्मला के भाई बहिन आदि अपनी छोटी-छोटी भूमिकाओं में यथार्थ एवं सजीव बन पड़े हैं । इन पात्रों के चरित्रांकन में कहीं क्रोध, कहीं ईर्ष्या, कहीं विनोद और कहीं गम्भीरता भारतीय मध्यमवर्गीय समाज के परिवेश को जीवंत बना देते हैं ।

प्रेमचन्द ने चरित्रों को तत्कालीन परिवेश के अनुसार रूप और स्वभाव प्रदान किया है । किसी पात्र के व्यक्तित्व का खाका खींचते वक्त लेखक अपनी टिप्पणी देते चलते हैं । पात्रों के कार्य व्यापार द्वारा चरित्र चित्रण में अन्त: और बाह्य प्रवृत्तियों का खुलासा भी हो जाता है । लेखक ने संवादों के अतिरिक्त भाव भंगिमाओं से भी चरित्र को उजागर किया है । मंसाराम के चरित्र के अनेक रंग उसे सजीव बना देते हैं । यही भाव भंगिमाएं निर्मला के व्यक्तित्व के अनेक अन्तर्विरोधों को स्पष्ट करने में सहायक हुई है ।

16.7 वातावरण

प्रेमचन्द का साहित्य अपने समय, समाज और युग बोध को बखूबी चित्रित करता है । देशकाल में दहेज के आंकडे तत्कालीन युग के अनुकूल है । घर में नौकर-कहारों का होना आम बात थी । परिवार में विवाह सम्बन्ध तय करने पुरोहित-ब्राह्मण हुआ करते थे जिनकी समुचित आवभगत की जाती थी । रीति रिवाजों का चित्रण और विवाह की तैयारियों का यह वर्णन उस समय को साकार करता है ।

बाबू उदयभानु लाल का मकान बाजार में बना हुआ है । बरामदे में सुनार के हथौड़े और कमरे में दरजी की सुइयाँ चल रही है । सामने नीम के नीचे बढ़ई चारपाई बना रहा है । खपरैल में हलवाई के लिए भट्टी खोदी गई है । मेहमानों के लिए अलग- अलग मकान ठीक किया गया है । यह प्रबन्ध किया जा रहा है कि हर मेहमान के लिए एक-एक कहार रखने की तजवीज हो रही है । अभी बारात आने में एक महीने की देर है, लेकिन तैयारियाँ अभी से हो रही है। मुंशी जी के घर का वर्णन, अलग- अलग कमरा, चिराग, ताक पर रखा पीतल का सन्दूक, छत पर सोना, टिक टिक घड़ी का होना, थियेटर जाना आदि चित्रण तत्कालीन परिवेश को स्पष्ट करते हैं ।

प्रेमचन्द पात्रों के बोलचाल, भाव, चाल- चलन, घर की स्थिति, किया व्यापार-सभी के माध्यम से देशकाल को साकार कर देते हैं ।

16.8संरचना शिल्प : भाषा शैली

'निर्मला' की भाषा हिन्दुस्तानी है । हिन्दी, उर्दू शब्दों का जमकर प्रयोग किया है । मुहावरों-लोकोक्तियों द्वारा भी भाषा को रोचक और चुटीला बनाया गया है । भाषा का पात्रानुकूल प्रयोग घटनाक्रम को नाटकीय बनाता है । संवादों और घटनाओं के चित्रण में लेखकीय टिप्पणी अपना निर्णय देती हुई प्रतीत होता है । उर्दू के अतिरिक्त पूर्वी हिन्दी का प्रयोग भी मिलता है ।

प्रेमचन्द ने समयानुकूल अंग्रेजी शब्दों का भी प्रयोग किया है । बीचेज, टाई, बूट, हैट स्टिक, हॉकी आदि शब्दों का प्रयोग अपेक्षाकृत कम है ।

प्रेमचन्द के साहित्य में हिन्दु-मुस्लिम पात्र सभी है । निर्मला 1923 ई. में लिखा गया था, उस समय उर्दू का पठन-पाठन खूब होता था, प्रेमचन्द उर्दू से हिन्दी में आये थे, अत: उनकी भाषा में उर्दू केवल मुसलमानों की भाषा नहीं थी, आम जन भी उसका खूब प्रयोग करते थे।

निर्मला की भाषा सीधी-सादी प्रवाहपूर्ण है । दैनिक जीवन में प्रयुक्त भाषा का बहाव स्पष्ट झलकता है । प्रेमचन्द के पात्र अपनी रुचि, संस्कार और योग्यता के अनुसार स्वच्छन्द भाषा का प्रयोग करते हैं । पात्रों के मनोभावों को अभिव्यक्त करने में भाषा का प्रबल हाथ है । वातावरण की भिन्नता के कारण, निर्मला, पंडित मोटेराम, मंसाराम, भूंगी, दारोगा आदि की भाषा बदल जाती है

जब प्रेमचन्द किसी उद्देश्य या मूल्य के सुधार की वकालत करते हैं तब उनकी भाषा में आवेग बढ़ जाता है-निर्मला के ये शब्द उपन्यास के उद्देश्य और निर्मला की मनोव्यथा को तीव्र रूप से प्रकट करते हैं- " बच्ची को आपकी गोद में छोड़ जाती हूँ । चाहे कुँवारी रखिएगा, चाहे विष देकर मार डालिएगा, पर कुपात्र के गले न मढ़िएगा । " भाषा में उर्दू संस्कृति की नफासत के संकेत स्पष्ट हैं ।

प्रेमचन्द ने 'निर्मला' में शैली के स्तर पर अनेक प्रयोग किये हैं । कहीं वर्णनात्मक, कहीं संवादात्मक और कहीं स्वप्नशैली का प्रयोग दिखाई देता है । निर्मला अपने विवाह से पहले स्वप्न देखती है और उसके भविष्य का संकेत पाठकों को मिल जाता है । 'मंसाराम' की असाध्य बीमारी के दौरान मुंशी जी की पहली पत्नी उन्हें स्वप्न में फटकार लगाती है-'स्वामी, यह तुमने क्या किया? जिस बालक को मैंने अपना रक्त पिला-पिला कर पाला, उसको तुमने इतनी निर्दयता से मार डाला। '

यह स्वप्न मुंशी जी के प्रायश्चित के लिए तो स्वाभाविक है, मगर निर्मला का स्वप्न आगत को बहुत पहले संकेतित कर देने से कौतूहल में बाधा पड़ती है । प्रेमचन्द की प्राय: रचनाओं में अनेक पात्रों की मृत्यु हो जाती है । घटनाक्रम को प्रभावी दिखाने के लिए 'निर्मला' में सबसे पहले निर्मला के पिता की हत्या हो जाती है, जिसका आभास भी पहले दे दिया गया है, उसके बाद सुधा के नन्हे बेटे की, फिर डॉक्टर साहब की और अन्त में निर्मला की । ये सारी मौतें यद्यपि कथा में नाटकीयता लाने के लिए अथवा किसी सामाजिक विकृति का परिणाम दिखाने के लिए अथवा उद्देश्य की चरम सीमा दिखाने के लिए वर्णित की गई है -इनका प्रभाव भी पाठक पर पड़ता है परन्तु कई बार ये जबरदस्ती आरोपित और अस्वाभाविक प्रतीत होने लगती है । कथानक का यह ट्रीटमेन्ट नाटकीय होकर भी प्रभावी नहीं प्रतीत होता । निर्मला की मृत्यु के लिए अधिक अन्तर्मथन की आवश्यकता थी ।

फिर भी प्रेमचन्द ने शनै: - शनै: अपना शिल्प स्वयं गढ़ा था । कल्पना, फैंटेसी और बायवीयता से उतर कर उनका साहित्य समाज के यथार्थ पर आघात करता है । प्रेमचन्द की दृष्टि उदार है, उन्होंने अपनी भाषा को सहयोगी भाषाओं के शब्द देकर जनभाषा बना दिया है । कहा जा सकता है, हिन्दी, उर्दू और अंग्रेजी शब्दों के प्रयोग से जहाँ कथानक को सजीव बनाया है, वहीं कोमलता, उग्रता, मार्मिकता द्वारा पात्रों के मनोभावों को सार्थक अभिव्यंजना मिली है । हाँ, संयोगतत्व कथानक को कमजोर बनाते है ।

16.9 सारांश

'निर्मला' अनमेल विवाह से उत्पन्न समस्याओं का परिणाम है । मुंशी तोताराम आत्ममंथन करते हुए इसकी ओर संकेत करते हैं 'मुझ में यह दुर्भावना उत्पन्न-ही क्यों हुई? मैंने क्यों बिना किसी प्रत्यक्ष प्रमाण के ऐसी भीषण कल्पना कर डाली? ' आगे वे सोचते हैं-साधारणत: स्त्री पुरूष से कहीं ज्यादा संयमशील होती है । जोड़ का पति पाकर वह परपुरुष से हँसी-दिल्लगी कर ले, उसका मन शुद्ध रहता है । बेजोड़ विवाह हो जाने से वह चाहे किसी की ओर आँखे उठा कर न देखे, पर उसका चित्त दुःखी रहता है ।

प्रेमचन्द विवाह संस्था में तथा पातिव्रत्य में अगाध विश्वास रखते हैं । स्त्रियों से तो इस मर्यादा पालन की अपेक्षा अधिक ही होती है किन्तु समाज में होने वाले अनमेल विवाह और स्त्री के मन की व्यथा ने उन्हें बहुत आंदोलित किया । संभवत: यदि निर्मला की मृत्यु न होती तो उस समस्या का मार्मिक प्रभाव भी न पड़ता । प्रेमचन्द ऐसे सामाजिक उपन्यासकार है जिन्होंने पहले से चली आई सुखान्त की परम्परा को तोड़ा और यथार्थ के कठोर धरातल पर त्रासदी एवं दुखान्त को अपनाया ।

16.10 संदर्भ ग्रन्थ

1. प्रेमचन्द, सम्पादक : डॉ. सत्येन्द्र
2. प्रेमचन्द का पुर्नमूल्यांकन : डॉ. शम्भुनाथ

3. हिन्दी उपन्यासों में नारी : शैल रस्तोगी
4. हिन्दी उपन्यास और यथार्थवाद : डॉ. त्रिभुवन सिंह

16.11 बोध प्रश्न

1. निर्मला के माता-पिता में झगड़ा किस बात पर हुआ?
   (क) काम के बंटवारे को लेकर
   (ख) विवाह की तैयारियों के कारण
   (ग) विवाह के खर्चे के कारण
   (घ) आदत के अनुसार
2. 'निर्मला' का उद्देश्य क्या है?
   (क) युवा वर्ग को प्रेरणा देना
   (ख) सामाजिक समस्याओं की प्रासंगिकता बताना
   (ग) मध्यवर्ग का चित्रण करना
   (घ) अनमेल विवाह की त्रासदी बताना (घ)
3. दहेज समस्या के मुख्य कारण क्या है?
   (क) समाज में लड़के का महत्व अधिक होना
   (ख) लड़कियों का सम्पत्ति में अधिकार न होना
   (ग) सामाजिक स्तर को ऊँचा दिखाने का प्रदर्शन
   (घ) वर पक्ष का लोभी होना (घ)
4. निर्मला का अपने पति से व्यवहार सहज न था, क्योंकि-
   (क) पति से लज्जा आती थी
   (ख) मुंशी जी बहुत क्रोधी थे
   (ग) रुक्मिणी देवी से डरती थी
   (घ) आयु का अंतर अधिक होने से वह सम्बन्ध को स्वीकार न पाती थी (घ)
5. रुक्मिणी देवी निर्मला से नाराज क्यों रहती थी? (उत्तर दो पंक्तियों में दें)
   .....
   .....
6. मुंशी जी द्वारा सियाराम के कान खींचने पर निर्मला ने क्या किया?
   (क) निर्मला ने उसे गोद में लेकर प्यार किया
   (ख) मुंशी जी को प्रसन्न रखने का प्रयत्न शुरू किया
   (ग) निर्मला में रुक्मिणी देवी बोलना बंद कर दिया
   (घ) निर्मला घर के प्रति उदासीन हो गई (घ)
7. मुंशी जी निर्मला को प्रसन्न करनें के लिए क्या करते थे?
   (क) रोज मिठाई लेकर आते थे
   (ख) निर्मला को खूब पैसे देते थे
   (ग) अपनी जवांमर्दी के किस्से सुनाते थे
   (घ) अपनी बहिन के प्रति क्रोध करना (ग)

8. मुंशी जी के मन में मंसाराम के प्रति शंकाभाव क्यों पनपा?
(क) निर्मला मंसाराम को रिझाती थी
(ख) मंसाराम निर्मला को अंग्रेजी पढ़ाता था
(ग) निर्मला मंसाराम से हँस-हँस कर बात करती थी
(घ) मंसाराम की पढ़ाई में बाधा पड़ रही थी (ख)

9. मंसाराम को निर्मला से बहुत शिकायत थी,क्योंकि-
(क) निर्मला उसे खर्चने के लिए पैसे नहीं देती थी
(ख) निर्मला का दोहरा व्यवहार उसे बुरा लगता था
(ग) निर्मला ने मुंशीजी से उसकी शिकायत की थी
(घ) निर्मला उसके भाइयों का ख्याल नहीं रखती थी (ख)

10. निर्मला के चरित्र से सुधा का चरित्र अधिक सशक्त है-
(क) सुधा ने निर्मला की बहिन का रिश्ता अपने देवर से करवाया
(ख) सुधा उसे रोज अपने घर बुलाती थी
(ग) सुधा निर्मला की बहुत तारीफ करती थी
(घ) सुधा ने निर्मला की माता को खर्च के लिए चुपचाप रुपये भेजे (क)

11. डॉ. भुवन सिन्हा ने आत्महत्या क्यों की?
(क) क्योंकि वे निर्मला को नहीं पा सके थे
(ख) क्योंकि उन्होंने चोरी की थी
(ग) क्योंकि उन्होंने निर्मला से अपने मन के आकर्षण की बात की थी
(घ) क्योंकि सुधा ने उन्हें प्रताड़ित किया था (घ)

12. निर्मला उपन्यास सामाजिक कम मनोवैज्ञानिक अधिक है-
(क) निर्मला अपने विवाह से खुश नहीं थी
(ख) उसे ससुराल में सुविधाएं प्राप्त नहीं थी
(ग) वह डॉ. सिन्हा से प्रेम करती थी
(घ) उसका पति अधेड़ आयु का था (घ)

13. प्रेमचन्द का उद्देश्य दहेज समस्या पर प्रहार करना है?
(क) सभी वरपक्ष वाले दहेज चाहते थे ।
(ख) दहेज की मांग के कारण निर्मला के पिता की मृत्यु हुई
(ग) मुंशी जी निर्मला को दहेज के लिए ताने देते थे
(घ) दहेज की चाह के कारण निर्मला का विवाह मुंशी जी से हुआ (घ)

14. प्रेमचन्द की भाषा प्रयोगात्मक है, क्योंकि-
(क) अलग- अलग वर्गों के लोग अलग- अलग भाषा बोलते हैं
(ख) प्रेमचन्द उर्दू शब्दों का अधिक प्रयोग करते हैं
(ग) प्रेमचन्द लोकोक्तियों द्वारा अपने उद्देश्य सिद्ध करना चाहते हैं
(घ) प्रेमचन्द की भाषा में विभिन्न भाषाओं के शब्द मिलते हैं । (घ)

15. कृष्णा के विवाह में प्रेमचन्द ने गाँधीवादी विचारधारा को अपनाया है, कैसे? दो पंक्तियों में उत्तर दीजिए ।

.....

.....

16. 'निर्मला' की मृत्यु ही औपन्यासिक समस्या का हल थी-

(क) परिवार की बर्बादी के लिए निर्मला जिम्मेदार थी

(ख) वह मुंशी जी के बेटों की मृत्यु और गुमनामी के लिए उत्तरदायी थी

(ग) डॉक्टर सिन्हा की मृत्यु से वह टूट गई थी

(घ) अनमेल विवाह की भयावह परिणति इसी रूप में हो सकती थी (घ)

निष्कर्ष रूप में 'निर्मला' उपन्यास का रचनाकाल भारतीय समाज का नवजागरण काल था । समाज सुधार, राष्ट्रीय आन्दोलन और शिक्षा के प्रचार के कारण, सदियों से चली आती कुरीतियों में परिवर्तन लाना आसान न था, न ही स्त्री शिक्षा, उसका आत्मनिर्णय और आत्मनिर्भरता का कोई स्वतंत्र साधन ही था, लेकिन उसकी मनोव्यथा की अभिव्यक्ति, सामाजिक स्तर पर उसकी उपेक्षा और पराधीनता की भावना ने करवट बदली थी । प्रेमचन्द ने मनोवैज्ञानिक स्तर पर इस सामाजिक समस्या को उठाया और नारी के प्रेम और श्रृंगारिक वस्तु बनने की धारणा के विपरीत, परिवार की चारदिवारी में उसकी घुटन और वेदना को अभिव्यक्ति दी । अत: यह उपन्यास एक सामाजिक परिवर्तन का सूचक है ।

इकाई- 17

'निर्मला' : (प्रेमचन्द) संरचना व शिल्प (भाग - 2)

इकाई की रूपरेखा

17.0 उद्देश्य

17.1 प्रस्तावना

17.2 उपन्यास का ढाँचा सामाजिक समस्याएँ

दहेज प्रथा, अनमेल विवाह, संयुका परिवार, विधवा की स्थिति, नारी स्वतंत्रता और समानाधिकार, स्त्री-पुरूष सम्बन्ध, बच्चों के संरक्षण कथानक और उपन्यास की संरचना

17.3 'निर्मला' का कथानक: चरित्र प्रधान, मनोवैज्ञानिक और नाटकीय

17.3.1 'निर्मला की अन्तर्वस्तु में कथाकार की रचना दृष्टि

17.3.2 अन्तर्वस्तु में संग्रथित पारिवारिक-की समस्या

17.3.3 औपन्यासिक संवेदना के आलोक में सामाजिक चेतना का विश्लेषण

17.4 उपन्यास की = और शिल्प का अन्त: सम्बन्ध

17.4.1 'निर्मला' का शिल्प

17.4.2 चरित्रांकन शैली

17.4.3 विश्लेषणात्मक शैली

17.4.4 वर्णन शैली

17.4.5 कथाकथन शैली

17.4.6 विगताभास (फ्लैश बैक) शैली

17.4.7 भावात्मक शैली

17.4.8 नाटकीय शैली

17.4.9 निर्मला उपन्यास की भाषा

17.5 सारांश

17.6 संदर्भ ग्रन्थ

17.7 अभ्यास प्रश्न

17.0 उद्देश्य

यह इकाई 'निर्मला उपन्यास की संरचना और शिल्प पर आधारित है । इस ' इकाई को पढ़ने के बाद आप :-

- प्रेमचन्द के वृहदाकार उपन्यासों और निर्मला जैसी संक्षिप्त कलेवर वाली कृति का संरचनात्मक अंतर समझ सकेंगे ।
- निर्मला की अन्तर्वस्तु में संग्रथित पारिवारिक - सामाजिक समस्याओं का आकलन कर सकेंगे ।
- निर्मला की संरचना में लेखक की मनोवैज्ञानिक दृष्टि से परिचित हो सकेंगे ।

- निर्मला के शिल्प के सन्दर्भ में प्रेमचन्द द्वारा प्रयुक्त विविध शैलियों का परिचय प्राप्त कर सकेंगे ।
- निर्मला की भाषा के विविध पहलुओं से अवगत होंगे ।

17.1 प्रस्तावना:

निर्मला उपन्यास एक संक्षिप्त कलेवर वाली कृति है । प्रेमचन्द के वृद्धाकार उपन्यासों की तुलना में यह एक संक्षिप्त रचना कही जा सकती है । सेवासदन, कायाकल्प, गबन, रंगभूमि, कर्मभूमि और गोदान जैसे विशाल आकार प्रकार वाले उपन्यास युग जीवन के अनेक संदर्भों जिनमें आर्थिक, राजनीतिक और सामाजिक पहलू हैं, प्रेमचन्द ने एक विशाल परिदृश्य की रचना की है । कहने की आवश्यकता नहीं कि निर्मला में विस्तार की अपेक्षा गहराई का आयाम उभरता है, यही कारण है कि निर्मला में प्रेमचन्द के आलोचकों ने गहरी मनोवैज्ञानिक दृष्टि का संकेत दिया है ।

यह सच है कि प्रेमचन्द व्यक्तिवादी मनोविज्ञान के कायल न थे, इसीलिए अन्तर्मन की कुण्ठाओं का चित्रण निर्मला में नहीं है, लेकिन पात्रों के भीतर के परिस्थितिजन्य संघर्ष का चित्रण निर्मला में देखने को मिलता है । उपन्यास की नायिका निर्मला अपनी अधेड़ आयु के पति के प्रति एक तटस्थ भाव रखती थी, जबकि अपनी सौत के बेटे मन्साराम के लिए उसके मन में आत्मीयतापूर्ण सखा भाव था । इस प्रकार निर्मला, तोताराम और मंसाराम के मध्य एक त्रिकोण की रचना होती है ।

प्रेमचन्द ने अपनी इस कथाकृति में अनमेल विवाह और दहेज प्रथा जैसी समस्याओं को भी उभारा है । ध्यान देने योग्य बात यह है कि निर्मला की संरचना और शिल्प का एक अन्तर्ग्रथित सम्बन्ध है । रचनाकार ने सूक्ष्म और पैनी दृष्टि से कथानक को संक्षिप्त कलेवर में समेटा है और निर्मला की शिल्पगत सूक्ष्मताओं को उभारा है । वर्णनात्मकता से बचते हुए भाषा में अपनाई गई स्फूर्ति और चुस्ती भी दर्शनीय है । इस प्रकार इस इकाई के अन्तर्गत आप निर्मला उपन्यास की संरचना और उसके शिल्प का परिचय प्राप्त कर सकेंगे । आगामी पृष्ठों में इन दोनों पहलुओं पर विस्तृत चर्चा की जायेगी ।

17.2 उपन्यास का ढांचा: कथानक और उपन्यास की संरचना

निर्मला उपन्यास सही अर्थों में उपन्यास न होकर एक उपन्यासिका है । अंग्रेजी में उपन्यासिका को नॉवलेट कहते हैं । उपन्यास यदि आकार प्रकार में एक बड़ी और विस्तृत रचना है, तो उपन्यासिका एक संक्षिप्त कलेवर की कृति कही जा सकती है । उपन्यास के कथासूत्र विभिन्न दिशाओं में अग्रसर होते हैं और उनके माध्यम से विविध प्रकार के चरित्र सामने आते हैं । कभी-कभी तो एक उपन्यास में कई घटना प्रसंग और चरित्रों की भीड़ होती है जो एक बिखराव भी उत्पन्न करती है । प्रेमचन्द के आलोचकों ने वृद्धाकार उपन्यास रंगभूमि, कर्मभूमि का उदाहरण देकर यह सिद्ध करने का प्रयास किया है कि इन कथाकृतियों में घटना बहुलता और चारित्रिक बहुलता के कारण कसावट की कमी है और बिखराव उभरकर सामने आता है । इसके

विपरीत निर्मला जैसी उपन्यासिका में रचनाकार की पकड़ मजबूत है । प्रेमचन्द उपन्यास के मर्म को संक्षिप्त घटना प्रसंग और चरित्र योजना के माध्यम से उपन्यास की अन्तर्वस्तु को रचनात्मक कसावट के साथ व्यक्त करने में सफल रहे हैं । इस तथ्य को समझने के लिए निर्मला से एक प्रसंग सामने रखकर समझा जा सकता है ।

निर्मला निम्न मध्य परिवार की लड़की है । पिता की आकस्मिक मृत्यु के पश्चात् उसके विवाह का प्रश्न एक समस्या का रूप धारण कर लेता है । दहेज मिलने की आशा न रहने पर डॉ0 भुवन के पिता भालचन्द्र सिन्हा, किए हुए रिश्ते को ठुकरा देते हैं । दहेज न दे सकने के कारण उसका विवाह वृद्ध से होता है । ये वृद्ध मुंशी तोताराम हैं । निर्मला की नियति परिस्थितिवश उसके लिए दुःख और यातना का द्वार खोल देती है ।

ध्यान रखने की बात यह है कि प्रेमचन्द इस उपन्यास में व्यक्तिगत सुख-दुःख से ऊपर उठकर सामाजिक धरातल पर दहेज प्रथा और अनमेल विवाह की समस्या का विवेचन और विश्लेषण करते हैं । इस उपन्यास में अनमेल विवाह और दहेज प्रथा जैसी सामाजिक विकृतियों निर्मला के जीवन को जटिलताओं की ओर धकेलती है ।लेखक ने पारिवारिक और सामाजिक समस्याओं को निर्मला के चरित्र से जोड़कर इस उपन्यास को मनोवैज्ञानिक आधार प्रदान किया है ।

17.3 निर्मला का कथानक: चरित्र प्रधान. मनोवैज्ञानिक -और नाटकीय-

वस्तुत: निर्मला उपन्यास में घटना का वर्णन नहीं मिलता अपितु लेखक उपन्यास की नायिका निर्मला की नियति से पाठकों का साक्षात्कार कराता है । निर्मला के पिता उदयभानुसिंह की आकस्मिक मृत्यु से निर्मला के जीवन की दिशा बदल जाती है । उपन्यास का विस्तार घटनाओं की श्रृंखला में न होकर चरित्रों के द्वन्द्व में दिखाई पड़ता है । उपन्यास की नायिका निर्मला सहसा मुंशी तोताराम की पत्नी बनकर उसके घर चली जाती है जो सोलह, बारह और सात वर्ष के तीन पुत्रों का पिता है । प्रेमचन्द इस अनमेल विवाह पर व्यंग्य करते हैं- "अब तक ऐसा ही एक आदमी उसका पिता था, जिसके सामने वह सिर झुकाकर देह चुरा कर निकलती थी । अब उनकी अवस्था का एक आदमी उसका पति था, वह उसे प्रेम की वस्तु नहीं सम्मान की वस्तु समझती थी, उनसे भागती फिरती थी, उनको देखते ही उसकी प्रफुल्लता पलायन कर जाती थी । '

इस प्रकार निर्मला का कथानक एक मनोवैज्ञानिक समस्या के रूप में विकास पाता है क्योंकि वकील तोताराम का पुत्र मन्साराम निर्मला का समवयस्क है । मुंशी तोताराम को उन दोनों के चरित्र पर संदेह होने लगता है । वस्तुत: इस संदेह का कोई कारण नहीं है, वह तो तोताराम में प्रौढ़त्व से उत्पन्न हीन भावना का प्रतिबिम्ब मात्र है । ऐसे विवाह में हीन भावना अवश्य रहती है और पुरुष शंकालु प्रवृत्ति का हो जाता है । यहीं से इस उपन्यास को एक चरित्र प्रधान उपन्यास के रूप में विकसित होने का आधार प्राप्त होता है । क्रमश: निर्मला, तोताराम और

मन्साराम अपनी अपनी मनोवैज्ञानिक गहराई के साथ इसे एक चरित्र प्रधान उपन्यास के रूप में सामने लाते हैं ।

लेखक ने निर्मला उपन्यास को आकस्मिकता का पुट देकर नाटकीय स्वरूप भी प्रदान किया है । उदाहरण के लिये उदयभानुसिह की आकस्मिक मृत्यु, निर्मला के पिता के द्वारा निर्धारित सगाई का टूट जाना, उपन्यास के पटल पर मुंशी तोताराम का आगमन और पूर्व पत्नी से उसके सोलह, बारह और सात वर्ष के बेटों के मध्य निर्मला का विमाता के रूप में तोताराम की गृहस्थी में प्रवेश करना ये सभी नाटकीय आकस्मिकता लिये हुए प्रसंग हैं । इसीलिये निर्मला को मनोवैज्ञानिक चरित्र प्रधान और नाटकीय घटना से पूर्ण कृति कहा जाता है ।

17.3.1 निर्मला की अंतर्वस्तु में कथाकार की रचना दृष्टि

प्रत्येक रचनाकार अपनी रचना के भीतर अपनी कथादृष्टि को उभारता है । घटना, परिस्थिति, वस्तु वर्णन और चरित्र योजना में कथाकार की यह अंतर्दृष्टि व्याप्त रहती है । प्रेमचन्द जैसे रचनाकार, जो साहित्य के उद्देश्य को लेकर, उसके सामाजिक सरोकारों को लेकर बहुत सावधान थे, निर्मला में भी उनकी कथादृष्टि उभर कर सामने आती है । एक चरित्र प्रधान, मनोवैज्ञानिक और नाटकीयता से परिपूर्ण रचना होते हुए भी वह अपने समय की सामाजिक विकृतियों पर तीव्र प्रहार करते हैं । उपन्यास की नायिका निर्मला इन्हीं विकृतियों की शिकार होती है । लेखक ने मृत्युशय्या पर निर्मला के मुँह से जो कथन प्रकट किया है वह इसका प्रमाण है- ' 'बच्ची को आपकी गोद में छोड़े जाती हूं । अगर जीती जागती रहे तो किसी अच्छे कुल में विवाह कर दीजियेगा- चाहे कुँवारी रखियेगा, चाहे विष देकर मार डालियेगा पर कुपात्र के गले न डालियेगा इतनी ही आपसे विनय है । '' यह केवल निर्मला का ही कथन नहीं है अपितु सामाजिक विकृतियों पर लेखक प्रेमचन्द की प्रतिक्रिया भी है ।

प्रेमचन्द की प्रतिबद्धता समाज के शोषित व पीड़ित वर्ग के प्रति है । 'निर्मला' उपन्यास में नायिका 'निर्मला' को केन्द्र में रखकर उन्होंने तत्कालीन भारतीय समाज में निम्न मध्यवर्गीय स्त्री की दयनीय दशा को उभारा है । आज भी भारत का स्त्री-समाज उन परिस्थितियों का दबाव झेल रहा है, जिनमें कभी निर्मला जैसी स्त्री ने अपने जीवन की त्रासदी को सहा था । यह त्रासद स्थिति समाज की सड़ी-गली मान्यताओं, कुप्रथाओं और रूढ़ियों की देन कही जा सकती है । निर्मला के कथानक की अन्तर्वस्तु इन्हीं से रची गई है । संक्षेप में 'निर्मला' उपन्यास की अन्तर्वस्तु में संग्रथित इन्हीं सामाजिक-पारिवारिक समस्याओं पर दृष्टिपात करना उचित रहेगा ।

17.3.2 अन्तर्वस्तु में संग्रथित पारिवारिक-सामाजिक समस्याएं

महान् कथाशिल्पी प्रेमचन्द मानवीय जीवन के केन्द्रीय पक्षों को अपनी कृतियों में स्थान देते हैं । उनकी कथाकृतियाँ व्यापक पृष्ठभूमि पर जीवन के विविध प्रश्नों को उभारती है । 'निर्मला' उनकी अपेक्षाकृत आकार में एक छोटी रचना है-किन्तु अपनी व्यंजना, विश्लेषण तथा कथा-प्रधान दर्शन में वह अत्यन्त प्रखर, सांकेतिक तथा अपनी अन्तिम परिणति में बहुत पैनी

हो उठी है । लेखक ने व्यापक सामाजिक परिदृश्य को पारिवारिक पृष्ठभूमि में उभारकर इस रचना को अत्यन्त मर्मस्पर्शी बना दिया है । निर्मलाकार ने अपने समय की प्रमुख पारिवारिक एवं सामाजिक समस्याओं को केन्द्र में रखकर अपनी इस उपन्यासिका का ताना बाना बुना है ।

दहेज प्रथा-

समाज में जब से नारी की कल्पना सम्पत्ति के रूप में की गई और उसका विवाह एक आवश्यक धार्मिक कृत्य माना गया तभी से दहेज प्रथा आरम्भ हुई । पिता को धन एवं सम्पत्ति पर पुत्री का कोई अधिकार न होने के कारण धन का कुछ भाग उसे दहेज के रूप में दिया जाने लगा । धीरे-धीरे इस प्रथा ने इतना विकट रूप धारण कर लिया कि कन्या से भी अधिक महत्व दहेज को दिया जाने लगा ।

प्रेमचन्द ने निर्मला में बताया कि दहेज और अनमेल विवाह की समस्यायें परस्पर सम्बद्ध हैं । निर्मला के पिता उदयभानुलाल की आकस्मिक मृत्यु से दहेज मिलने की आशा न रहने पर डॉ0 भुवन के पिता भालचन्द सिन्हा किए हुए रिश्ते को भी ठुकरा देते हैं । प्रेमचन्द समस्या की गहराई तक पहुँचते हैं और स्पष्ट करते हैं कि अगर पिता पच्चीसतीस हजार रूपयों का लोभ रखता है तो शिक्षित पुत्र लाख-डेढ़ लाख का दहेज चाहता है । भुवन अपनी माँ को उत्तर देता है कि- " किसी धनी लड़की से शादी हो जाती तो चैन से कटती । मैं ज्यादा नहीं चाहता बस एक लाख नगद हो फिर कोई ऐसी जायदाद वाली बेवा मिले, एक लड़की हो । "

रंगीलीबाई जब उससे कहती है कि, "चाहे और कैसी मिले? वह सहज होकर बोलता है- ' 'धन सारे ऐबों को छिपा देगा । मुझे वह गालियाँ भी सुनाये तो भी चूँ न करूँ । दुधारू गाय की लात किसे बुरी मालूम होती हैं?

इस सामाजिक परवशता का दण्ड 'निर्मला' को भोगना पड़ता है । दहेज न दे सकने के कारण उसका विवाह वृद्ध से होता है । उसे अनेक मानसिक यातनाओं का सामना 'करना पड़ता है । उसकी एक पुत्री होती है, हालाँकि वह अभी बहुत छोटी है, फिर भी उसके विवाह के लिए उसको रूपयों की चिन्ता हो जाती है । घर बिक जाने, वकील साहब के चले जाने और गहने चोरी हो जाने के बाद भी वह किसी प्रकार से दहेज के लिए रूपये एकत्रित करना चाहती है । उसके हृदय के किसी कोने में -यह भय समाया हुआ है कि कहीं धनाभाव में उसकी पुत्री की भी वही दुर्गति न हो, जो उसे सहनी पड़ी है । तभी तो वह कह उठती है, "जवानों की जिन्दगी का तो भरोसा ही नहीं, बूढ़ों को जिन्दगी का क्या ठिकाना" ?

अनमेल विवाह -

भारतीय समाज में बाल विवाह और दहेज प्रथा का प्रतिफल है अनमेल विवाह । भारत में यह भयंकर सामाजिक दोष है । नारी परतंत्र है, अतः बहुधा उसी का शोषण होता है । यही कारण है कि भारतीय समाज में अधिकतर अनमेल विवाह का रूप वृद्ध विवाह होता है । किशोर उम्र की लड़कियों का विवाह वृद्ध व्यक्तियों से होता है, यह कुप्रथा नारी-दासता का सरूप प्रकट करती है ।

"निर्मला" उपन्यास में प्रेमचन्द ने अनमेल विवाह से उत्पन्न कटु परिस्थितियों, संदेहात्मक वातावरण, दुःखी दाम्पत्य जीवन तथा जर्जर कौटुम्बिक विश्रृंखलता का विशद चित्रण किया है । बाबू भालचन्द और उनका पुत्र भुवन मोहन (डॉ0 सिन्हा) की उचित अनुचित माँगों को दूर न कर पाने के कारण ही कल्याणी को अपनी पन्द्रह वर्ष की कन्या के लिए मुँशी तोताराम जैसे वर का चुनाव करना पड़ता है । प्रेमचन्द तीव्र व्यंग्य से इस मजबूरी को व्यक्त करते हुए कहते हैं, "अब अच्छे घर की जरूरत न थी । अभागिनी को अच्छा घर वर कहीं मिलता? अब तो किसी भाँति सिर का बोझ उतारना था । किसी भांति लड़की को पार लगाना था- उसे कुएं में झोंकना था । "

संयुक्त परिवार-

प्रेमचन्द से पहले के उपन्यासों में सम्मिलित परिवार के प्रति जो मोह की भावना थी, वह उनके समय तक आते-आते टूटने लगी थी । उपन्यासकारों ने बताया कि पारिवारिक सम्बन्धों में तेजी से विघटन हो रहे हैं । "निर्मला" में संयुक्त परिवार को एक समस्या के रूप में तो चित्रित नहीं किया गया है, लेकिन प्रसंगवश लेखक ने इसके खोखलेपन को स्पष्ट कर दिया है । "निर्मलाकार ने इस तथ्य पर प्रकाश डाला है कि इस प्रथा के कारण कई निठल्ले व्यक्ति मौज मारते हैं । उदयभानुलाल के यहाँ -उनके भाई-भतीजे सभी पड़े रहते हैं, लेकिन उनकी मृत्यु के बाद सभी खिसक जाते हैं । प्रेमचन्द लिखते हैं- ' 'जब खिलाने वाला ही न रहा, तो खाने वाले कैसे पड़े रहते? जिनका दावा था कि हम पानी की जगह खून बहाने वालों में से हैं, वह ऐसा सरपट भागे कि पीछे मुड़कर भी न देखा । '

विधवा की स्थिति -

उपन्यास में विधवा रुक्मिणी की दशा का चित्रण करके यह कटु यथार्थ उभारा गया है कि विधवा की दशा आश्रयदाता परिवार में दासी से भी हीन है । तोताराम अपनी बहिन को आश्रय देते हैं पर आर्थिक लाभ की दृष्टि से । निर्मला से रूक्मिणी के कठोर व्यवहार को सुनकर वे कहते हैं कि "मैंने सोचा था कि विधवा हैं अनाथ हैं, पाव भर आटा खायेंगी पड़ी रहेंगी । जब और नौकर चाकर खा रहे हैं तो यह अपनी बहिन ही है । लड़कों की देखभाल के लिए एक औरत की जरूरत भी थी, रख लिया लेकिन इसके यह माने नहीं कि वह तुम पर शासन करें । "

नारी स्वतन्त्रता व समानाधिकार-

भारतीय जनजीवन पर पुनर्जागरण का प्रभाव पड़ा जिसके परिणामस्वरूप नारी वर्ग में भी चेतना का संचार हुआ । समाज सुधारकों ने नारी स्वतंत्रता व समानाधिकार की बात कही । अत प्रेमचन्द के उपन्यासों में दो प्रकार के नारी पात्र आये हैं । एक तो पुरूष समाज व पति के अत्याचार व दमन से पीड़ित नारी, जो कि रूढ़िवादी व्यक्ति हीन एवं अबला के रूप में हमारे सामने आती है । दूसरी ओर पुरूष प्रधान समाज के अत्याचारों का विरोध करने वाली नारी, जो कि आधुनिक चेतना से सम्बद्ध हैं तथा पारिवारिक, राजनीतिक एवं सामाजिक धरातल पर अपने अधिकारों के लिए संघर्ष करती है । रंगभूमि की सुभागी, गोदान की गोविन्दी निर्मला उपन्यास की नायिका निर्मला' पति के अत्याचार से पीड़ित होने पर भी चुपचाप रहती हैं, लेकिन

उसके ठीक विपरीत रंगभूमि की इन्दु निर्मला' को सुधा पति से तिरस्कृत एवं अपमानित होने पर भी परम्परागत हिन्दू नारी की भांति रोती व गिड़गिडाती नहीं हैं और न ही अपनी भावनाओं एवं विचारों का दमन करती हैं बल्कि वे पति के विशेषाधिकारों को चुनौती देती हैं तथा विद्रोह करती है ।

सुधा को जब यह पता चलता है कि उसके पति डॉ. सिन्हा ने दहेज के लोभ के कारण निर्मला से सगाई सम्बन्ध तोड़ दिया था तो वह उसके प्रति आक्रोश व्यक्त करती है- ' 'ऐसा ही एक प्राणी मेरा पति है और मेरी समझ में नहीं आता कि किन शब्दों में उसका तिरस्कृत करूँ, वह आगे चलकर पति द्वारा आत्महत्या करने पर पारिवारिक दृढ़ता का परिचय देती है, पति की मृत्यु पर उसे कोई ग्लानि नहीं होती' "ऐसे सौभाग्य से मैं वैधव्य को बुरा नहीं समझती । दरिद्र प्राणी उस धनी से कहीं अधिक सुखी है, जिसे उसका धन साँप बनकर काटने दौड़े । उपवास कर लेना आसान है विषैला भोजन करना उससे कहीं अधिक मुश्किल" । सुधा का यह कथन यद्यपि मानवीय भूमि की उपेक्षा तो करता है लेकिन इससे उसकी चारित्रिक दृढ़ता का परिचय तो मिलता ही है ।

स्त्री-पुरूष सम्बन्ध-

उपन्यास में प्रेमचन्द ने अनमेल विवाह के दुष्परिणाम को अधिक यथार्थ, मार्मिक और मनोवैज्ञानिक ढंग से चित्रित किया है । निर्मलाकार ने यह नहीं किया कि विवाह के छह सात महिने बाद ही निर्मला को विधवा बना दिया हो, जैसाकि -दास समय के अन्य उपन्यासकारों ने किया है । इसके विपरीत उन्होंने उस यथार्थ समस्या को उठाया है, जिसका सामना नारी को सधवा रहते हुए करना पड़ता है । निर्मला युवती थी । अत: यौवनोचित सभी उपकरणों को वह स्वीकार कर सकती थी । उसे बनाव श्रृंगार भी बुरा नहीं लगता था, किन्तु उसका मन तोताराम जैसे पति को उसका भोक्ता न मानता था । तोताराम को यह भय हमेशा लगा रहता था कि निर्मला जैसी सुन्दर युवती मुँह पर झुर्रियाँ पड़े बुढ्ढे -को प्रेम नहीं कर सकती । इसलिए वह प्रेम-प्रदर्शन में थोड़ा अतिवाद से काम लेता है लेकिन " निर्मला को इन बातों से घृणा होती थी । वही बातें जिन्हें किन्हीं युवक के मुँह से सुनकर उसका हृदय प्रेम से उन्मत्त हो जाता, वकील साहब के मुँह से निकलकर उसके हृदय पर षर के समान आघात करती थीं' ' । निर्मला को महसूस होता था कि, ' 'यूँ उनमे (बातों) में रस न था, हृदय न था, केवल बनावट थी, धोखा था और था शुक-नीरस शब्दाडम्बर" ।

उम्र की असमानता पति-पत्नी सम्बन्धों में कितना मानसिक वैषम्य उत्पन्न कर देती है, यह उपर्युक्त उद्धरण से जाना जा सकता है । अवस्था का भेद मिटाना उसके वश की बात नहीं थी । "निर्मला जब पति को प्रसन्न रखने के लिए सजती थी तो वह खण्डहर पति के सामने रत्न-जटित चित्रशाला जैसी लगती थी । और यदि वह ऐसा न करती थी, तो पति समझते थे कि उसने उनके बुढ़ापे से दुःखी होकर वैराग्य ले लिया है । " दोनों ही परिस्थितियों में अपने को बेमेल पाकर निर्मला असहनीय मानसिक कष्ट सहती हैं । जीवन के इस कठोर सत्य को

वह इन शब्दों में प्रकट करती है- " न वह जवान हो सकते हैं, न मैं बुढ़िया हो सकती हूँ । जवान होने के लिए वे न जाने कितने रस व भस्म खाते हैं, मैं बुढ़िया बनने के लिए दूध, घी, सभी छोड़ बैठी हूँ । लेकिन न उन्हें पौष्टिक पदार्थो से ही कुछ लाभ होता है, न मुझे उपवासों से।"

बच्चों के संरक्षण की समस्या -

परिवार में बच्चों का विशेष महत्व होता है । बच्चे का लालन-पालन जब माँ-बाप मिलकर करते हैं तब कोई समस्या उत्पन्न

नहीं होती । ' 'परिवार नामक संस्था के जन्म और विकास के पीछे एक महान् उद्देश्य यह था कि बच्चों को उचित संरक्षण एवं शिक्षा मिल सके, जिससे मानव सभ्यता का विकास हो सके व प्राचीन सांस्कृतिक मूल्यों की भी सुरक्षा हो सके ।" लेकिन वास्तविकता तो यह है कि भारतीय समाज हो, चाहे पाश्चात्य समाज हो, दोनों में ही बच्चों को समुचित संरक्षण नहीं मिल पाता । हिन्दी के उपन्यासकारों ने इस तथ्य को अनुभव किया और इसका समाधान पाने में भले ही सफल न रहे हों, लेकिन इस पर प्रकाश डालकर ' चिंतन का विषय तो बनाया ही है ।

"निर्मला" में तोताराम के तीनों पुत्र उचित संरक्षण के अभाव में पीड़ित अनुभव करते हैं । दो उनमें से आत्महत्या करते हैं तथा तीसरा साधु के चंगुल में फंस जाता है- " दाने पर मण्डराता हुआ पक्षी अन्त में दाने पर गिर पड़ा । उसके जीवन का अन्त पिंजरे में होगा या व्याध की छुरी के तले-यह कौन जानता है ? " निर्मला सौतेली माँ है, पर उसे इसका दोषी नहीं माना जा सकता । तोताराम के परिवार में जो परिस्थितियाँ उत्पन्न होती हैं, उनके मूल में अनमेल विवाह है । जियाराम की तो माता-पिता पर से आस्था उठ जाती है और वह स्पष्ट कहता है- "इन्हीं ने भइया की हत्या की है और एक दिन मौका पाकर हम दोनों भाइयों की भी हत्या करेंगे । " बचपन में आस्थाओं का छना व्यक्ति को विध्वंसक बना देता है । यहीं से अपराध प्रवृत्ति का अंकुर बच्चे के हृदय में फूटता है- ' 'यारों (जियाराम के दोस्तों) ने उसे (संदूक को) सराफे में पहुंचा दिया था और औनेपौने में बेच भी डाला था । "

इस प्रकार प्रेमचन्द पारिवारिक व सामाजिक समस्याओं के एक अप्रतिम व्याख्याता विवेचक और विश्लेषक के रूप में सामने आते हैं । हिन्दी भाषा-भाषी समाज का सामाजिक जीवन प्रेमचन्द के समय में जिन समस्याओं से आक्रांत था, उसका प्रामाणिक लेखा-जोखा ही नहीं अपितु समस्याओं से ऊपर उठने का दिशा संकेत भी उनकी रचना "निर्मला" देती है । सामाजिक जीवन की एक स्पष्ट छवि पारिवारिक पृष्ठभूमि पर उभारकर प्रेमचन्द ने अपनी सामाजिक प्रतिबद्धता को उजागर किया है ।

17.3.3 औपन्यासिक संवेदना के आलोक में सामाजिक चेतना का विश्लेषण

सर्वप्रथम, हम निर्मला में उपन्यासकार की संवेदना के आलोक में उनकी सामाजिक चेतना को समझने का प्रयास करेंगे । निर्मला उपन्यास के अन्य चरित्र जिन दुःखों व पीड़ाओं से ग्रस्त हैं, किसी व्यक्तिवादी उपन्यासकार की दृष्टि से, मानवीय नियति से आसानी से जुड़ सकते थे । सामाजिक संदर्भों और कारणों को अलग-अलग करके उसके महत्व की उपेक्षा की जा सकती थी । किन्तु प्रेमचन्द जैसे समाजिक चेतना से सम्पन्न कथाकार अपनी सम्पूर्ण रचना को व्यक्तिवाद के धुंधलके से निकालकर समाज की विषम परिस्थितियों- आर्थिक सामाजिक विचार-धाराओं से जोड़कर उपन्यास को ठोस आधार प्रदान करते हैं । निर्मलाकार की संवेदना को उनकी सामाजिक चेतना के आलोक में समझने का हम प्रयास करेंगे । निर्मला को सजना संवरना बुरा नहीं लगता था पर उसका मन तोताराम जैसे पति को उसका भोक्ता नहीं मानता था । उसके मन में शोषण के विरूद्ध संघर्ष करने की भावना थी- ' 'मन में आता कि इस घर में आग लगा दूँ । अपनी माता पर क्रोध आता पर सबसे अधिक क्रोध उस निरपराध तोताराम पर आता, वह सदैव इस ताप से जला करती । '' नायिका का विद्रोह ऊपर से देखने पर उसका व्यक्तिवादी अतिरेक कहा जा सकता है, किन्तु गहराई से देखने. पर यह साफ हो जाता है कि यह क्रोध मूल रूप से उस सामाजिक बन्धनों के विरूद्ध था, जिसने उसे ऐसा जीवन जीने के लिए बाध्य किया था । उसकी व्यक्तिगत स्वतंत्रता की भावना का हनन किया था । इस उपन्यास की दूसरी नारी पात्र सुधा उस पुरुष प्रधान समाज के अत्याचारों का विरोध करने तथा सामाजिक धरातल पर अपने अधिकारों के लिए जूझने वाली नारी है । उसे जब पता चलता है कि भुवन निर्मला के प्रति आकर्षित है, वह कहती है कि, ' 'मैं, ऐसे सौभाग्य से वैधव्य को बुरा नहीं समझती । ''

''निर्मला'' की संवेदना का विश्लेषण करते हुए कह सकते हैं कि लेखक ने अपनी इस औपन्यासिक कृति में जिन संवेदनाओं को उजागर किया है वे सीधे-सीधे उनकी सामाजिक चेतना का व्यक्त रूप कही जा सकती है । ऊपर की पंक्तियों में हमने इन दोनों के पारस्परिक सम्बन्धों को समझाने व विश्लेषित करने का प्रयास किया है । निर्मला में प्रेमचन्द अपनी सामाजिक चेतना को औपन्यासिक संवेदना के माध्यम से कलात्मक रूप देने में बहुत दूर तक सफल हुए हैं ।

17.4 उपन्यास की अन्तर्वस्तु और शिल्प का अन्त: सम्बन्ध -

शिल्प अंग्रेजी के प्रसिद्ध शब्द टेक्नीक (ज्मबीदपुनम) का हिन्दी अनुवाद है । इसकी परिभाषा अंग्रेजी शब्दकोष में इन शब्दों में दी गई है- ' 'कलात्मक कार्यवाही की वह रीति, जो संगीत अथवा चित्रकला में प्राप्य है तथा कलात्मक कारीगरी । '' इसी से मिलती जुलती परिभाषा वृहद हिन्दी कोश में दी गई है- '' शिल्प से अभिप्राय हाथ से कोई वस्तु तैयार करने अथवा दस्तकारी और कारीगरी से है । ''

साहित्य अथवा कला के सन्दर्भ में प्रयुक्त होने से शिल्प विधि का अर्थ हो जाता है साहित्यिक कृति अथवा कलात्मक वस्तु को रचने का तरीका या ढंग । साहित्य की रचना में जिन तरीकों, रीतियों और विधियों का उपयोग किया जाता है, वे ही उसकी शिल्प विधि के नाम से पुकारी जाती है ।

वस्तुत: रूपाकार या शिल्प विधि की आवश्यकता किसी भी रचना में भीतरी व बाहरी संतुलन की स्थापना के लिए होती है । कतिपय भारतीय व पश्चिमी उपन्यासकार उपन्यास में शिल्प को वस्तु तत्व की अपेक्षा कम महत्वपूर्ण मानते हैं जैसा कि स्कॉट जेम्स ने इस विषय में कहा है- ' 'यह (रूपाकार) तो कलाकार के मन द्वारा विषय वस्तु पर आरोपित बाह्याकार है।'' इनकी विरोधी धारणा के उन्नायक है श्री मेडिलोव । ये मानते हैं कि शिल्प ही सर्वस्व है, बिना इसके विषयवस्तु व चरित्र चित्रण में रंगत ही नहीं आ सकती । इस सम्बन्ध में पश्चिम के सशक्त उपन्यासकार हेनरी जेम्स का कहना है कि - ' वह समय बीत गया जब शिल्प को मात्र साधन माना जाता था, जिसके द्वारा अनुभूत सत्य को गठित कर अपने हित में ढाल दिया जाता था । '' शिल्प की अतिरिक्त महत्ता के विषय में वह कह सकते हैं- ' 'रूप उस दर्जे तक विषय वस्तु है उसके बिना विषय वस्तु सर्वथा नहीं है ।

शिल्प विधि का यह विवेचन स्पष्ट करता है कि शिल्प का महत्व मनोवेगों व भावों को स्पष्ट आकार देने में सहायक सिद्ध होता है । अच्छी शिल्प विधा वही है जो सही वस्तु को, सही समय, सही परिप्रेक्ष्य में उचित ढंग से प्रस्तुत कर दे । ' 'पद-पद पर प्रसन्नता प्रदान करना और उत्सुकता कायम रखना कथावस्तु आवश्यकता बहुत कुछ पर निर्भर रहता है । कथावस्तु के और भी गुण जैसे संगठन, क्रम, संगति आदि शैली के आंतरिक पक्ष से सम्बन्ध रखते हैं ।''

17.4.1 निर्मला का शिल्प

निर्मला के शिल्प का मूल्यांकन हम निम्न बिन्दुओं के आधार पर करेगें -

17.4.2 चरित्रांकन शैली-

प्रेमचन्द ने स्पष्ट किया है कि- ''मैं उपन्यास को मानव का चरित्र का चित्र समझता हूँ । मानव चरित्र पर प्रकाश डालना और उसके रहस्यों को खोलना ही उपन्यास का मूल तत्व है, मानव चरित्र का यह चित्र वर्णनात्मक शिल्प-विधि तथा विश्लेषणात्मक शिल्पविधि के द्वारा प्रकाश में आता है ।

वर्णनात्मक शिल्प विधि के चरित्रांकन में पात्रों की बाह्यात्कता, रूप रंग, वेश-भूषा, रूचि-अरूचि विचार सिद्धान्त आदि का सविस्तार संयोजन होता है । इस चरित्रांकन शैली में व्यक्ति बाहर से संचालित होता है । प्रेमचन्द ने निर्मला उपन्यास के पात्रों के बाह्य जीवन का खुलकर चित्रण किया है । वे भालचन्द के सम्बन्ध में लिखते हैं- ' 'बहुत ही स्थूल, ऊँचे कद के आदमी थे

। ऐसा मालूम होता था कि काला देव या कोई हब्शी अफ्रीका से पकड़कर आया है । सिर से पैर तक एक ही रंग था-काला । चेहरा इतना स्याह था कि मालूम न होता था कि माथे का अन्त कहीं है और सिर का आरम्भ कहीं? बस कोयले की एक सजीव मूर्ति थे । आगे उनके शराब पीने की आदत के विषय में लिखते हैं- ' 'केवल आँखों का रंग लाल था । जैसे पक्का मुसलमान पाँच बार नमाज पढ़ता है वैसे ही आप भी पाँच बार षराब पीते थे, मुफ्त की शराब तो काजी को हलाल है, फिर आप तो षराब के अफसर ही थे, जितनी चाहे पिये, कोई हाथ पकड़ने वाला न था । जब प्यास लगती शराब पी लेते । "

17.4.3 विश्लेषणात्मक शैली-

विश्लेषणात्मक शिल्प विधि को हिन्दी उपन्यास की यात्रा का एक बड़ा मौड़ कहा जा सकता है । इसमें उपन्यासकार मानव के अन्तर्मन के परस्पर विरोधी विचारों, संघर्ष, तनाव, चिन्ता, तथा आशंका को अभिव्यक्त करता है । प्रेमचन्द ने "निर्मला" उपन्यास में इस शैली का उपयोग भी किया गया है । मंसाराम को निर्मला से इस बात की आशा नहीं थी कि वे उसकी शिकायत करेगी । इसीलिए उसे घोर वेदना हो रही थी । वह अपने अन्तर्मन में विचार करता है- ' 'चिड़िया को जाल में फांसने से पहले शिकारी दाने बिखेरता है । आह् । मैं नहीं जानता था कि दाने के नीचे जाल है, यह मातृ-स्नेह मेरे निर्वासन की भूमिका है । "

इस विधि के अन्तर्गत मनोविज्ञान प्रधान विधि की ही प्रधानता होती है । अब मन की स्वतन्त्र सत्ता स्वीकार करके उसके तीन रूप (चेतन, अचेतन, अर्द्धचेतन) माने किये गये हैं । मन की स्वतन्त्र सत्ता के पक्ष में निर्मलाकार द्वारा दिया गया यह वक्तव्य पर्याप्त होगा- ' 'मन । तेरी गति कितनी विचित्र है कितनी रहस्य से भरी हुई, कितनी दुर्भेद्य । तू कितनी जल्दी रंग बदलता है । इस कला में तू निपुण है । आतिशबाज की चर्खी को भी रंग बदलते कुछ देर लगती है, पर तुझे रंग बदलने में उसका लाभांश समय भी नहीं लगता । "

17.4.4 वर्णनात्मक शैली-

वर्णनात्मक शैली वह है जिसके द्वारा उपन्यास में जीवन के विस्तृत क्षेत्र का चित्रण विवरणपूर्ण का से व्याख्या सहित प्रस्तुत किया जाता है । वह जीवन के किसी भी क्षेत्र को अपने वर्णन का माध्यम बना सकता है । ' 'घटना बाहुल्य, लम्बे संवाद तथा भाषण योजना जैसी अनेक समस्यायें इस विधि द्वारा सरलतापूर्वक चित्रित हो सकती है । वातावरण के प्रसार और दार्शनिक विवेचन की पूर्ण सुविधा उपन्यासकार को मिल जाती है । निर्मला के विवाह से पूर्व का वर्णन करते हुए लिखते हैं- ' 'एक पूरा मकान बर्तन से भरा हुआ है । चाय के सैट हैं, नाश्ते की तश्तरियाँ, थाल, लौटे, गिलास । जो लोग नित्य खाट पर पड़े, हुक्का पीते रहते थे, बड़ी तत्परता से काम में लगे हुए हैं । जहाँ एक आदमी को जाना होता है, पाँच दौड़ते हैं । काम कम होता है, हुल्लड़ अधिक । जरा-जरा सी बात पर घंटों तक तर्क-विर्तक होता है ।"

प्रकृति का चित्रण करते हुए भी प्रेमचन्द ने वर्णन शैली का प्रयोग किया है । रात के समय का वर्णन करते हुए वे लिखते हैं ' 'निशा ने इन्दु को परास्त करके अपना साम्राज्य स्थापित कर लिया था । उसकी पैशाचिक सेना ने प्रकृति पर आतंक जमा रखा था । सद्वृतियाँ मुँह छिपाये खड़ी थी और कुप्रवृत्तियाँ विजयगर्व से इठलाती फिरती थी । "

17.4.5 कथाकथन शैली-

उपन्यास शिल्प कौशल का आदिम प्रकार कथा-कथन है । ' 'लेखक पात्रों के भीतर-बाहर का आवश्यकतानुसार उल्लेख करता हुआ कथा के प्रवाह को कभी ढुराता और कभी प्रकट करता हुआ पाठक के कुतूहल में वृद्धि करता है उसका मनोरंजन करता है और आवश्यकता या इच्छा होने पर जीवन सम्बन्धी शिक्षा का लाभ भी देता है । " शिल्प-कौशल का यह प्रकार जितना पुराना है, उतना लोकप्रिय भी । प्रेमचन्द ने अभिव्यक्ति की इस शैली का प्रयोग भी निर्मला में किया है । उपन्यास की कथा किस्सागोई की शैली में आगे बढ़ती है- "ईश्वर भी बड़ा अन्यायी है जो मरे उन्हीं को मारता है । मालूम होता है, बुरे दिन आ गये हैं । मगर चोर आया तो किधर से ? कहीं सेंध नहीं पड़ी और किसी तरफ से आने का रास्ता नहीं । मैंने तो कोई पाप नहीं किया जिसकी मुझे सजा मिल रही हो, बार-बार कहता रहा, गहने का संदूक वहाँ पर मत रखो, मगर कौन सुनता है "' अपने पिता के मुँह से इन ठण्डे शब्दों को सुनने के बाद भी जियाराम जैसा आदमी अपने अपराध के सम्बन्ध में कुछ नहीं कहता । सियाराम साधु के साथ चला जाता है, घर के सभी लोग उसकी प्रतीक्षा करते हैं ' 'धीरे-धीरे सड़को पर सन्नाटा छा गया, घरों के द्वार बन्द होने लगे । सड़क की पटरियों पर और गलियों में बंसखटे या बोरे-बिछा-बिछाकर भारत की प्रजा सुख निद्रा में मग्न होने लगी लेकिन सियाराम घर न लौटा । " प्रेमचन्द ने सियाराम के घर न लौटने का वर्णन इस प्रकार किया है- ' 'जैसे कि वो कोई कहानी सुना रहे हों । " कथा-कथन शैली का एक अन्य उदाहरण द्रष्टव्य है- ' 'जैसे शराबी शराब के नशे में सारी चितायें भूल जाता है, उसी तरह निर्मला सुधा के घर में जाकर सारी चिन्तायें भूल जाती है । "

कथाकथन शैली की सफलता के लिए बोल-चाल की भाषा का होना, अत्यावश्यक है । इसलिए प्रेमचन्द ने अपने उपन्यास में भाषा का अत्यन्त चलता हुआ रूप प्रयुक्त किया । उन्होंने इस उपन्यास की भाषा को पूर्ववर्ती लेखकों की भांति दुरूह तथा क्लिष्ट भाषा की दलदल से निकालकर इसका परिष्कार करके इसे सरल बना दिया- ' 'जब कोई बात हमारी आशा के विरूद्ध होती है तभी दुःख होता है । मंसाराम को निर्मला से कभी इस बात की आशा न थी कि वे उसकी शिकायत करेंगी । " इस तरह भाषा में सरसता, सरलता, सादगी भी देखने को मिलती है ।

17.4.6 विगताभास (फ्लैश बैक) शैली

पूर्व-दीप्ति शैली विश्लेषणात्मक शैली का ही एक नया रूप है । इसमें उपन्यासकार कथा को पात्रों के मस्तिष्क में उठी हुई स्मृति लहरों के रूप में प्रस्तुत करता है । इसमें उपन्यासकार वर्तमान से सम्बद्ध या उसे सार्थकता प्रदान करने वाली जीवन स्थिति को पात्रों के स्मृति खण्डों के रूप में बिखेरता चलता है । पात्र कथा कहते-कहते अकस्मात् प्रसंग के सूत्र को किसी विगत घटना के सूत्र से जोड़ देते हैं, जिससे कथा की गति बनी रहती है । प्रेमचन्द ने विगताभास शैली का बड़ा ही मनोहारी वर्णन ' 'निर्मला' ' में किया है । तोताराम सियाराम को, निर्मला द्वारा शिकायत करने पर कान पकड़कर उठाते हैं । वह चीखें मारकर रोने लगता है । निर्मला बच्चे को देखकर विह्वल हो उठती है उसे छाती से लगाती है, लेकिन बच्चा सिसक-सिसक कर रोने लगता है- ' 'उसके अबोध हृदय में इस प्यार में वह मातृ स्नेह न था । यह वात्सल्य न था, केवल दया थी । यह वह वस्तु थी, जिस पर उसका कोई अधिकार न था, जो केवल भिक्षा के रूप में उसे दी जा रही थी । पिता ने पहले भी दो एक बार उसे मारा था, जब उसकी माँ जीवित थी, लेकिन तब उसकी माँ उसे छाती से लगाकर रोती न थी । मातृ-प्रेम में कठोरता होती थी लेकिन मृदुलता से मिली हुई । इस प्रेम में करूणा थी, पर वह कठोरता न थी, जो आत्मीयता का गुप्त सन्देश है । "

इसी प्रकार मंसाराम जब भिखारिन के बच्चे को माँ की गोद में बैठे हुए देखता है, तो वह सोचता है, जैसे वह बच्चा किसी राजसिंहासन पर बैठा हुआ है । उस बालक को देखकर वह रो पड़ता है । उसे अपनी माँ की याद आती है, वह सोचता है- ' 'यह बालक क्या मुझसे अधिक सुखी नहीं है ' इस अनन्त विश्व में ऐसी कौनसी वस्तु है, जिसे वे इस गोद के बदले पाकर प्रसन्न हो ? ईश्वर भी ऐसी वस्तु की सृष्टि नहीं कर सकते । ईश्वर ऐसे बालकों को जन्म ही क्यों देते हो, जिनके भाग्य में मातृ-वियोग का दुःख भोगना बदा हो ? आज मुझ सा अभागा संसार में कौन है ? आह ! माता तुम्हारा लाडला बेटा आज आवारा कहा जा रहा है । वही पिताजी आज मुझे आवारा और बदमाश कह रहे हैं ।"

इन स्मृति परक विश्लेषणात्मक प्रसंगों को पढ़ते ही पाठक की उत्सुकता जाग उठती है । प्रेमचन्द ने इस विधि द्वारा कथा-सूत्र को पात्र के हाथ में सौंपकर उसी के द्वारा उसके विगत जीवन का विश्लेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया है।

17.4.7 भावात्मक शैली-

लेखक अपनी अभिव्यक्ति में भावावेगों का सहारा लेकर एक विशेष प्रकार की भाषा शैली का निर्माण करता है जिसे हम भावात्मक शैली के रूप में पुकार सकते हैं । निर्मला में अनेक स्थल ऐसे हैं जौ उपन्यास के भावात्मक स्थल कहे जा सकते हैं । लेखक ने मानव मन के द्रवीभूत और आवेगों से भरे प्रसंग इसी शैली में उभारे हैं । मंसाराम यह सोचता है कि निर्मला द्वारा शिकायत किये जाने के कारण ही उसे हॉस्टल भेजा जा रहा है । प्रेमचन्द ने इसका वर्णन

भावात्मक शैली में इस प्रकार किया है- "मेरा यही रहना क्यों बुरा लगता है? जो उनका पति है, क्या वह मेरा पिता नहीं है? अगर मुझे उनके संपूर्ण आधिपत्य से ईर्ष्या नहीं होती है, वह चाहे जो करें, मैं मुँह नहीं खोल सकता, तो वह मुझे पितृ-प्रेम से क्यों वंचित करना चाहती है? वह अपने साम्राज्य में क्यों मुझे एक अंगुल भर भूमि भी देना नहीं चाहती । मंसाराम को इस बात से आघात लगता है कि उसे आवारा कहा गया- "पहली ही बार इन्होंने मुझ पर अग्नि बाण चला दिया । इसलिए न कि वह पिता की नजरों में गिर जाये । उद्देश्य यह था कि इसे दूध की मक्खी की तरह निकाल दिया जाए ।"

पुत्र शोक के कारण तोताराम जी का जीवन भार स्वरूप हो गया था । मंसाराम की मृत्यु के पश्चात् उनके होठों पर हंसी न आई । मंसाराम के कमरे की ओर जाते ही उनका हृदय टूक-टूक हो जाता था- " उनके दो पुत्र अब भी थे, लेकिन जब दूध देती गाय मर गई तो बछिया का क्या भरोसा? जब फलने-फूलने वाला वृक्ष गिर गया, नन्हे-नन्हें पौधों से क्या आशा?

17.4.8 नाटकीय शैली -

परिस्थिति, घटना और चरित्र का एक दूसरे के संघात से उद्घाटन करने वाली विधि नाटकीय शैली के अन्तर्गत आती है । इस शैली में उपन्यास को पढते समय पाठक का ध्यान प्रत्येक परिस्थिति और पात्र की ओर समाहित रहता है । वह क्षण भर के लिए भी किसी पात्र या घटना को विस्मृत नहीं कर सकता क्योंकि इस विधि के अनुसार कथावस्तु और कार्यव्यापार में अद्भूत समन्वय हुआ करता है । निर्मला उपन्यास में नाटकीय शैली का एक उदाहरण इस प्रकार है-

निर्मला- "चन्दर मुझे चिढाओगे तो जाकर अम्मा से कह दूंगी ।"

चन्दर- "तुम चिढ़ती क्यों हो, तुम भी बाजे सुनना । ओ हो हो! अब आप दुल्हन बनेंगी । क्यों किशनी तू बाजे सुनेगी न? वैसे बाजे तूने कभी न सुने होंगे ।"

17.4.9 निर्मला उपन्यास की भाषा -

अनुभूति की अभिव्यक्ति का एक अत्यन्त सशक्त साधन भाषा होती है अर्थात अपने हृदयस्थ भाव-विचारों को दूसरे तक पहुँचाने के जो बहुविध साधन उपलब्ध रहते है, उनमें भाषा का महत्व बहुत अधिक है । काव्य और भाषा का वही सम्बन्ध होता है जो कि मस्तिष्क और शरीर का होता है । अंग्रेजी की एक कहावत है कि "स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मस्तिष्क का वास होता है । " अत: अपने भावों को अभिव्यक्त करने के लिए लेखक ऐसे शब्दों का चयन करता है, जिससे समूची अभिव्यक्ति में ही चमत्कार की सृष्टि हो जाती है ।

निर्मला की भाषा-शैली लेखक के पूर्व उपन्यासों की भाषा-शैली से भिन्न नहीं है । उपन्यास की भाषा उर्दू एवं संस्कृत की थिरकती शब्दावली से युक्त है । यह सौन्दर्य शब्दों तथा सम्पूर्ण वाक्य की शब्द योजना में विद्यमान है- "किन्तु बुद्धि तो ईश्वर का यह रूप स्वीकार नहीं करती । अनन्त सृष्टि का कर्ता उद्दण्ड बालक नहीं हो सकता है । हम उसे उन सारे गुणों से विभूषित करते हैं, जो हमारी बुद्धि की पहुँच से बाहर है । खिलाड़ीपन तो उन महान गुणों में नहीं । क्या हंसते-खेलते बालकों का प्राण हर लेना कोई खेल है । " उपन्यास की भाषा में उपमा उत्प्रेक्षा

रूपक आदि अलंकारों का भी प्रयोग हुआ है । यहाँ उपमा अलंकार का एक उदाहरण प्रस्तुत है - "उसने कितनी लड़कियों को दूज के चन्द्रमा की भाँति ससुराल आते और पूर्ण चन्द्र बनकर जाते देखा । निर्मला की भाषा में सूक्तियों की अपेक्षा मुहावरों को अधिक स्थान दिया है।

प्रेमचन्द ने 'निर्मला' में भाषा का जो चमत्कार उत्पन्न किया है उसका श्रेय उनके विपुल शब्द भण्डार को ही है । ऐसा प्रतीत होता है मानो उनके पास शब्दों की कोई कमी नहीं है । विभिन्न भाषाओं पर उनका पूर्ण अधिकार था इसलिए उन्होंने शब्दों का सही प्रयोग कर अभिव्यक्ति को प्रभावशाली बनाया है । इस उपन्यास में उन्होंने अरबी, फारसी, संस्कृत के तत्सम एवं तद्भव तथा अंग्रेजी शब्दों का उपयोग किया है । उपन्यास में आए शब्द संयोजन का एक उदाहरण इस प्रकार है- "उसी क्षण मुंशीजी ने फिर से अभिलाषाओं का भवन बनाना शुरू कर दिया । मोह ने उन्हें फिर संसार की ओर खींचा । मानव मन । तू इतना क्षण-भंगुर है, पर तेरी कल्पनाएं कितनी दीर्घायु । वही तोताराम जो संसार से विरक्त हो रहे थे, जो रात-दिन मृत्यु का आह्वान किया करते थे, तिनके का सहारा पाकर तट पर पहुंचने के लिए पूरी शक्ति से हाथ पाँव मार रहे हैं । "

उपर्युक्त उद्धरण में प्रेमचन्द ने शब्दों को जिस क्रमबद्धता से गूँथा, वह दर्शनीय है । उन्होंने जिन शब्दों का प्रयोग किया है यदि उनमें से किसी एक के क्रम में भी परिवर्तन कर दें, तो सम्पूर्ण गद्यांश का स्वरूप ही परिवर्तित हो जाएगा । वह एक अपूर्ण अवस्था में पहुंच जाएगा।

17.5 साराश -

यह एक सामाजिक उपन्यास है । उस युग की पीड़ित नारी को कथा का विषय बनाकर लेखक ने तत्कालीन समाज की अवस्थाओं का चित्रण किया है । नारी जीवन के साथ विवाह की अनिवार्यता का जो सामाजिक कथन लगा हुआ है और विवाह के लिए दहेज देने की जो विवशता है, उसके ही दुष्परिणामों की कथा इसके माध्यम से कही गई है । यह उपन्यास वास्तव में नारी की परतंत्रता एवं त्रासद जीवन की कथा है । प्रेमचन्द ने स्पष्ट किया है कि नारी अपने युग की स्थितियों से उतनी पीड़ित नहीं है, जितनी की हिन्दू समाज के परम्परागत जीवन से पीड़ित है । निर्मलाकार ने स्वयं लिखा है कि, ' 'निर्मला और प्रतिज्ञा में कमोबेश समाज की बुराइयों का पर्दाफाश किया गया है । " उनके इस वक्तव्य से पता चलता है कि 'निर्मला' में समाज की समस्याओं का चित्रण है ।

दहेज के परिणामस्वरूप अनमेल विवाह के कारण समाज की इस भंयकर समस्या का यथार्थ अंकन करके मानव को इसकी भयंकरता से परिचित करवाया है ।

'निर्मला' में लेखक ने पात्रों के चरित्र को जो मनोवैज्ञानिक आधार प्रदान किया है, उसने इसे महत्वपूर्ण कृति बनाने में बड़ा योगदान दिया है । मनोविज्ञान की अहं, काम, भय, अपराध, आत्महीनता आदि ग्रन्थियाँ उपन्यास के पात्रों के व्यक्तित्व के निर्माण का प्रमुख आधार रही

हैं । तोताराम, मंसाराम, निर्मला आदि के व्यक्तित्व के विश्लेषण से यह बात स्पष्ट हो जाती है ।

शिल्प की दृष्टि से यह उनका सर्वश्रेष्ठ उपन्यास कहा जा सकता है । उपन्यास में विभिन्न कथा शैलियां अपनाई गई हैं, जिनमें कथा-कथन शैली, चरित्रांकन शैली, वर्णनात्मक शैली, विश्लेषणात्मक शैली, शैली, पूर्वदीप्ति शैली आदि प्रमुख हैं । इनके कुशल प्रयोग से प्रेमचन्द के शिल्प सामर्थ्य का परिचय मिलता है ।

17.6 संदर्भ ग्रन्थ

1. आधुनिक हिन्दी उपन्यासों में नारी चित्रण (1870-1950) - बिंदु अग्रवाल
2. हिन्दी उपन्यास समाजशास्त्रीय विवेचन - डॉ0 चण्डीप्रसाद जोशी
3. प्रेमचन्द (सम्पादित) - विश्वनाथप्रसाद तिवाड़ी
4. प्रेमचन्द और उनका युग - डॉ0 रामविलास शर्मा
5. समस्यामूलक उपन्यासकार प्रेमचन्द - डॉ0 महेन्द्र कुमार भटनागर
6. हिन्दी उपन्यास - डॉ0 सुरेश सिन्हा
7. हिन्दी उपन्यासों में स्वप्न मनोविज्ञान - डॉ0 कैलाश जोशी
8. हिन्दी उपन्यास शिल्प बदलते परिप्रेक्ष्य - प्रेम भटनागर

17.7 अभ्यास प्रश्न

1. उपन्यास के रूप मे 'निर्मला' का आलोचनात्मक विश्लेषण कीजिए ।
2. 'निर्मला' में प्रेमचंद ने जिन प्रविधियों का प्रयोग किया है उसका विस्तार से वर्णन कीजिए।
3. 'निर्मला' की कथानक की संरचना कैसी है ? यह घटना प्रधान उपन्यास है चरित्र या नाटकीय ? चर्चा कीजिए ?
4. 'निर्मला' एक चरित्र प्रधान उपन्यास है" क्या आप इससे सहमत है? युक्त उत्तर दीजिए।
5. 'निर्मला' की भाषा प्रेमचन्द ने किस तरह प्रयोग किया है ? उदाहरण के साथ लिखिए।
6. निर्मला उपन्यास प्रेमचन्द ने किन पारिवारिक-सामाजिक समस्याओं का चित्रण किया है।

इकाई- 18

'महाभोज' (मन्नू भण्डारी) प्रतिपाद्य (भाग-1)

इकाई की रूपरेखा

18.0 उद्देश्य
18.1 प्रस्तावना
18.2 'महाभोज' पृष्ठभूमि
18.3 'महाभोज' का कथासार
18.4 'महाभोज' की कथा का वैशिष्ट्य
18.5 'महाभोज' की कथा-संरचना
18.6 'महाभोज' के निहितार्थ
18.7 सारांश
18.8 संदर्भ ग्रन्थ
18.9 अभ्यास प्रश्न

18.0 उद्देश्य

इस इकाई में आप सुपरिचित कथाकार मन्नू भण्डारी के बहु-प्रशंसित उपन्यास के प्रतिपाद्य का अध्ययन करेंगे ।

उपन्यास साहित्य की सर्वाधिक लोकप्रिय विधाओं में से एक है । जब भी हम किसी उपन्यास को पढ़ते हैं सबसे पहले हमारा ध्यान इस बात पर जाता है कि उसकी कथा क्या है! कथा जान लेने के बाद हम यह समझने का प्रयास करते हैं कि रचनाकार ने उस कथा के माध्यम से क्या कहना चाहा है । इसी के साथ हमारा ध्यान रचनाकार के उस कौशल पर भी जाता है जिसका प्रयोग उसने उक्त कथा को प्रस्तुत करने में किया है ।

इस इकाई में हम 'महाभोज' पर इन्ही दृष्टियों से बात करेंगे ।

18.1 प्रस्तावना

हिंदी उपन्यास ने अपने अब तक के इतिहास में लंबी यात्रा तय की है । तिलस्मी-ऐयारी की अतिशय कल्पनापूर्ण दुनिया से प्रारंभ हुई यह यात्रा अनेक मोड़ों-मुकामों को पार करती हुई आज जहां पहुंची है वहां किसी एकरंग, किसी प्रकार को ढूंढ पान संभव नहीं । फिर भी, प्रेमचंद से हिंदी कथा जगत को जो यथार्थवादी रूझान प्राप्त हुआ वह आज भी कायम है । आज का कथाकार अपने चारों-तरफ की दुनिया को न केवल बारीकी से देखता-परखता है उसकी तह में जाकर यह भी पड़ताल करता है कि दुनिया वैसी क्यों है ।

हिंदी के समकालीन कथाकारों में मनू भण्डारी का नाम बहुत आदर से लिया जाता है । हिंदी नई कहानी की सशक्त हस्ताक्षर मन्नू भण्डारी के अनेक कहानी संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं

। आपकी पहली औपन्यासिक रचना एक इंच मुस्कान' है जो 'ज्ञानोदय' मासिक पत्रिका में 1961 में धारावाहिक प्रकाशित हुई थी । यह एक प्रयोगशील उपन्यास था जिसे मन्नु भण्डारी और उनके पति सुपरिचित कथाकार राजेंद्र यादव ने संयुक्ता रूप से लिखा । 1971 में प्रकाशित 'आपका बण्टी' मनू भण्डारी का स्वतंत्र रूप से रचित प्रथम उपन्यास है । आलोचक डॉ. गोपाल राय के शब्दों में, "हिंदी में यह पहला उपन्यास है जिसमें एक विशेष परिस्थिति में पड़े हुए बच्चे की मन: स्थिति का इतने विस्तृत फलक पर चित्रांकन किया गया है ।..... उपन्यास को प्रभावशाली बनाने में उनके शिल्प और भाषा दोनों की विशिष्ट भूमिका है । "

'आपका बण्टी' के प्रकाशन के आठ वर्ष बाद 1979 में 'महाभोज' प्रकाशित हुआ । इस उपन्यास ने मनू भण्डारी की रचनाशीलता का एक नया आयाम प्रस्तुत किया ।

18.2 पृष्ठभूमि

'महाभोज' के प्रकाशन से पहले मन्नू भण्डारी की छवि एक ऐसी लेखिका की थी जो घर- परिवार को अपनी रचनाओं का विषय बनाना पसंद करती हैं । उस युग की अधिकांश महिला कथाकारों के लिए भी यही बात कही जा सकती है । ऐसा नहीं है कि घर-परिवार का चित्रण कोई छोटी या गैर-महत्वपूर्ण बात है । लेकिन 'महाभोज' के प्रकाशन ने मन्नू भण्डारी की इस स्थापित छवि को एकदम बदल डाला । पूरा साहित्य जगत् भी जैसे चमत्कृत हो उठा । मन्नू भण्डारी ने 'महाभोज' उपन्यास में घर परिवार के सीमित दायरे से बाहर निकल कर राजनीति के बड़े फैले और मैले इलाके पर नजर डाली थी।

मन्नू भण्डारी ने अपने उपन्यास के लिए इस विषय वस्तु का चयन क्यों किया'? उत्तर स्वयं उन्हीं के शब्दों में :

अपने व्यक्तिगत दुख-दर्द, अन्तर्द्वन्द्व या आंतरिक नाटक को देखना बहुत महत्वपूर्ण, सुखद और आश्वस्तिदायक तो मुझे भी लगता है, मगर जब घर में आग लगी हो तो सिर्फ अपने अंतर्जगत में बने रहना या उसी का प्रकाशन करना क्या खुद ही अप्रासंगिक, हास्यास्पद और किसी हद तक अश्लील नहीं लगने लगता? संभवत: इस उपन्यास की रचना की पीछे

यही प्रश्न रहा हो । इसे मैं अपने व्यक्तित्व और नियति को निर्धारित करने वाले परिवेश के प्रति ऋण-शोध के रूप में ही देखती हूं ।

18.3 'महाभोज' का कथासार

लगभग 170 पृष्ठों का 'महाभोज' राजनीतिक पृष्ठभूमि पर आधारित है । कथा कुल नौ परिच्छेदों में विभक्त है ।

उपन्यास का प्रारंभ उस सरोहा गांव में, जो शहर से बमुश्किल बीस मील दूर है, एक लाश मिलने की सनसनीखेज घटना से होता है । लाश एक दलित बिसेसर (बिसू) की है । इसी गांव में महीना भर पहले गांव की सरहद के पास वाले हरिजन टोला की कुछ झोंपड़ियों में आग लगा दी गई थी और झोंपड़ियों के साथ-साथ उनमें रहने वाले भी जलकर खाक हो गए थे । लोग दौड़कर थाने पहुंचे लेकिन थानेदार साहब ने उस दिन छुट्टी ली थी. । यह समाचार जब शहर पहुंचा तो वहां से मंत्रियों, नेताओं और अखबार नवीसों की गाड़ियों का तांता सरोहा में लग गया । नेताओं ने आश्वासन दिये, पत्रकारों ने समाचार । विरोधी दल के नेताओं ने विधान सभा में इस घटना पर हंगामा किया, मुख्यमंत्री से त्याग पत्र की मांग
की गई । मुख्यमंत्री ने सारा मामला गहरी जांच पड़ताल के लिए अफसरों को सौंप दिया और सरोहा गांव के थाने के दोनों कांस्टेबलों को सस्पेण्ड कर दिया ।

शायद इसी बात का असर था कि बिसू की लाश मिलते ही थानेदार तुरंत हरकत में आया मौके पर पहुंच कर कई लोगों के बयान लिये और लाश को चीस्फाड़ के लिए शहर भिजवाया । सरोहा गांव की यह साधारण लगने वाली घटना इसलिए और अधिक महत्वपूर्ण हो गई थी कि डेढ़ महीने बाद ही वहां विधान सभा की एक सीट के लिए उपचुनाव होने वाला था और उसमें एक उम्मीदवार थे भूतपूर्व मुख्यमंत्री सुकुल बाबू जिनका चुनाव लड़ना पूरी सत्तारूढ़ पार्टी के लिए चुनौती था ।

दूसरे परिच्छेद का प्रारंभ मुख्यमंत्री दा साहब के व्यक्तित्व के परिचय से होता है । "दा साहब का पूरा व्यक्तित्व ही जैसे भव्यता के फ्रेम में मढ़ा हुआ है ।" दसवीं पास लखन सिंह दा साहब का खास आदमी है । स्वभाव में उनके एकदम विपरीत । जल्दी तैश में आ जाने वाला । इसी लखन को दा साहब ने सरोहा चुनाव क्षेत्र से खड़ा किया है । दल के लोग लखन सिंह को सुकुल बाबू की टक्कर का नहीं मान कर उसका विरोध करते ही रह गए । लखन सिंह बहुत गुस्से में दा साहब के पास आया है । वह इस बात पर गुस्सा है कि बसेसर को मरवा दिया गया है और इसका परिणाम यह होगा कि हरिजनों के सारे वोट सुकुल बाबू के नाम पड़ जाएंगे । लखन का ख्याल है कि बसेसर को जोरावर ने मरवाया है । लखन की नाराजगी 'मशाल' अखबार से भी है जो उल्टा-सीधा छापता रहता है । दा साहब लखन के गुस्से से तनिक भी विचलित नहीं होते । धीरे-धीरे यह बात खुलती है कि वे न केवल सारे घटनाक्रम से सुपरिचित हैं, उससे निबटने की योजनाएं भी उनके मन में हैं । सुकुल बाबू की मीटिंग के चार-पांच दिन बाद गांव में अपनी मीटिंग रखना, 'मशाल' के संपादक दत्ता बाबू को इण्टरव्यू देने के बहाने बुलाना और डी.आई.जी. की आकांक्षाओं की चर्चा करना - इनमें उनके मन की तैयारी के संकेत हैं ।

तीसरा परिच्छेद सुकुल बाबू पर केंद्रित है । व्यक्तित्व दा साहब के एकदम विपरीत । 'अभी तक हरिजनों के बूते पर ही चुनाव जीतते आए थे । पिछली बार इन लोगों ने आंख फेरी तो

मुंह की खानी पड़ी । ' बिसेसर की हत्या सुकुल बाबू में नई आशा का संचार कर देती है । वे हरिजनों के सबसे बड़े हिमायती बनकर गांव में जाते हैं और एक सुविचारित, भीड़ को बहलाने वाला भाषण देकर माहौल को अपने पक्ष में करने की कोशिश करते हैं । वे बिसू की हत्या और उससे पहले हरिजनों की बस्ती जलाने की घटना के लिए यह तर्क भी रच लेते हैं कि यह सब इसलिए हुआ कि ये लोग सरकारी रेट पर मजदूरी मांग रहे थे । भीड़ के थोड़े-बहुत विरोध-प्रतिरोध के बावजूद वे प्रभावशाली तरीके से अपनी बात कह कर लौटते हैं लेकिन रास्ते में हो यह ध्यान आता है कि बिसू के घर तो वे गए ही नहीं । लौटकर वे बिसू के घर भी जाते हैं लेकिन बिसू के मां-बाप से उनकी भेंट नहीं हो पाती क्योंकि वे लोग बिसू के खास दोस्त बिंदेसरी के साथ शहर गए हुए हैं । उन्हें आशंका होती है कि इसमें जरूर दा साहब की कोई चाल है ।

चौथा परिच्छेद केंद्रित है 'मशाल' के संपादक दत्ता बाबू की कारगुजारी पर । दा साहब ने उन्हें अपने घर बुलाया है और बहुत कुशलता से, थोड़ा सहला कर, थोड़ा धमका कर और थोड़ा ललचा कर दत्ता को अपने पक्ष में कर लिया है । दा साहब के घर से दत्ता सीधे अपने अखबार के दफ्तर जाता है, अब तक छपी रिपोर्ट को बदल कर यह रिपोर्ट छापता है कि बिसू की मौत हत्या नहीं आत्महत्या है । वह दा साहब द्वारा डी.आई.जी. को दी गई सख्त हिदायत का जिक्र करना भी नहीं भूलता । इतना ही नहीं, वह सुकुल बाबू के भाषण को गैर जिम्मेदाराना हरकत बताते हुए यह भी आरोप लगा देता है कि उन्होंने एक छोटी-सी घटना को अपने राजनीतिक स्वार्थ के कारण मनमाने ढंग से विकृत कर बेवजह तनाव बढ़ाने का निंदनीय काम किया है।

'महाभोज' का पांचवां परिच्छेद केन्द्रित है शिक्षा मंत्री त्रिलोचन सिंह रावत उर्फ लोचन भैया पर । लोचन भैया बिसू की मौत से व्यथित हैं और इसलिए अनेक असंतुष्ट विधायकों के निकट संपर्क में हैं । परिच्छेद का बड़ा भाग लोचन भैया और पार्टी अध्यक्ष सदाशिव अत्रे उर्फ अप्पा साहब के संवादों से निर्मित है । इन संवादों में उत्कृष्ट राजनीतिक पैंतरेबाजी से हमारा सामना होता है । लोचन भैया असंतुष्टों का नेतृत्व कर रहे हैं, अप्पा साहब उनकी हर गतिविधि से वाकिफ है और साम-दण्ड-भेद का प्रयोग कर उन्हें अपने इरादे से विचलित करना चाहते हैं । परिच्छेद के लगभग अंत में स्वास्थ्य मंत्री राव और विकास मंत्री चौधरी त्रिलोचन सिंह से मिलते हैं और उन्हें दिये जाने वाले अपने समर्थन का मूल्य मांगते हैं । त्रिलोचन व्यथित होते हैं कि क्या इसी टुच्चेपन की सौदेबाजी के लिए वे सरकार गिराने की बात सोच रहे हैं !

छठे परिच्छेद का प्रारंभ पाण्डेजी द्वारा दा साहब को लोचन भैया के घर हुई बैठक का समाचार देने और यह संभावना व्यक्त करने से होता है कि लोचन भैया को पिचासी लोगों का समर्थन मिल सकता है । इन सूचनाओं से अविचलित दा साहब सरोहा गांव में पन्द्रह तारीख को होने वाली सभा की तैयारियों पर ही ध्यान केंद्रित रखते हैं । यह सभा घरेलू उद्योग योजना के नाम पर की गई है । सभा वाले दिन पूरा गाव योजना के पोस्टरों से पाट दिया जाता है । दा साहब सभा से पहले अचानक बिसू के घर जाते हैं, उसके पिता हीरा से अपनी संवेदन व्यक्त

करते हैं, हीरा को अपनी गाड़ी में ही सभा स्थल पर लेकर आते हैं और उसी से योजना का उद्घाटन भी करवाते हैं ।

दा साहब स्वयं एक मार्मिक भाषण देते हैं । उसी के बीच विदा अपना आक्रोश व्यक्त करता है : "अरे दा साहब, काहे यह नौटंकी कर रहे हो यहां? हरिजनों को जिंदा जला दिया गया और आपकी सरकार और आपकी पुलिस तमाशा देखती रही और महीने भर से खुद तमाशा कर रही है । हुआ आज तक कुछ? " दा साहब बहुत चतुराई से उसके आक्रोश से उत्पन्न जन-भावनाओं को शांत कर अपना कार्यक्रम सफलता पूर्वक संपन्न कर लेते हैं । तीसरे दिन 'मशाल' का अंक प्रकाशित होता है जिसे दा साहब के सहयोगी पाण्डे जी पूरे गांव में मुफ्त बंटवा देते हैं । मशाल में दा साहब के भाषण की विस्तृत रिपोर्ट और घरेलू उद्योग योजना की भूरी-भूरी प्रशंसा है । अखबार में हीरा की एक बड़ी-सी तस्वीर भी छपी है ।

इस सब से सुकुल बाबू बहुत दुखी होते हैं । उन्हें तो आशा थी कि यह सभा कतई सफल नहीं होगी । सभा के असल समाचार जानने के लिए उन्हें बिहारी भाई की प्रतीक्षा है । बिहारी सभा की सफलता स्वीकार करते हुए इसके लिए काशी को दोषी ठहराता है । तभी काशी भी वहां आ जाता है । काशी और बिहारी में बहस होती है । सुकुल बाबू उन्हें शांत कर आगामी रैली की तैयारियों पर चर्चा करते हैं । काशी सूचना देता है कि उसने जोरावर को चुनाव लड़ने को तैयार कर लिया है और वह अपना नामांकन पत्र आखिरी दिन भरने वाला है । काशी यह भी कहता है कि ' 'बिंदा को फोड़ सको तो काम और आसान हो जाए । सुना है, बिसू ने जो प्रमाण जुटाए थे आगजनी की घटना के, वे अब बिंदा के पास हैं । पर हाथ नहीं रखने देता ससुरा किसी को । " सुकुल बाबू को इस योजना की सफलता में थोड़ा संदेह है ।

सातवां परिच्छेद सरोहा गांव के थाने की साफ-सफाई के वर्णन से प्रारंभ होता है । मुख्यमंत्री दा साहब के खास आदेश पर एस.पी. सक्सेना बिसू की मौत की असलियत का पता लगाने आने वाले हैं । जोगेसर साहू महेश बाबू हीरा और बिंदा के बयान होने वाले हैं । थानेदार अपने अमानवीय तरीके से व्यवस्था बनाने में जुटा हुआ है । एसपी. के आने तक विदा को छोड़ शेष सभी पहुंच चुके हैं । एस.पी. सक्सेना दा साहब के निर्देश का अक्षरश: पालन करता हुआ सबसे नरमी से पेश आने और उनका विश्वास जीत कर सच्चाई जानने को कटिबद्ध है । पहला बयान जोगेसर साहू देता है । वह बिसू को सिरफिरा और पागल बताता है और यह भी कहता है कि वह आवारों की तरह हरिजन टोला में घूमा करता था । कहना तो वह यह भी चाहता है कि बिसेसर ने आधे गांव को दुश्मन बना रखा था, वह मजदूरों को भड़काता था, पर कहता नहीं । वह जोरावर का नाम लेते-लेते इसलिए रूक जाता है कि उसकी अदृश्य लाठियों का भय उसे डरा देता है ।
जोगेसर साहू के बाद बयान देता है महेश जो एक रिसर्च प्रोजेक्ट के सिलसिले में दिल्ली से आया है और दो महीने से सरोहा गांव में है । महेश ए.सपी. को बिसू के -बारे में अपनी धारणा से परिचित कराता है, इस बात से इन्कार करता है कि बिसू नक्सली था, और यह भी बताता

है कि मृत्यु से एक दिन पहले बिसू उससे मिला था और उसे बताया था कि उसने आगजनी की घटना के बारे में बहुत सारे प्रमाण जुटा लिए हैं लेकिन वह उन्हें यहां की पुलिस को न सौंपकर दिल्ली जाकर इस मामले को फिर खुलवाएगा । महेश ने यह भी बताया कि बिसू ने इस मामले में उसकी मदद चाही थी ।

महेश के बाद बयान देने आता है बिसेसर का पिता हीरा । बिसू का छोटा भाई गनेसी उसे हाथ थाम कर लाता है । हीरा बताता है कि बिसेसर चौदह क्लास पढ़ा था, अट्ठाइस साल का था और कोई नौकरी न कर गांव में ही एक स्कूल खोल लड़कों के साथ- साथ बड़ों को भी पढ़ाता था । एक दिन पुलिस उसे पकड़ कर ले गई और चार साल जेल में रखा । हीरा दा साहब और उनकी सरकार की तारीफ भी करता है । हीरा यह भी बताता है कि यों तो गांव में सब से ही बिसू का मेल जो था परंतु बिंदा से उसकी निकटता ज्यादा थी । बिंदा और उसकी पत्नी रुक्मा प्राय: रोज ही बिसू से मिलते थे । क्या बिसू की किसी से दुश्मनी भी थी, इस सवाल के जवाब में कुछ हिचकिचाते हुए हीरा बताता है कि जोरावर सिंह, खेतों के मालिक और सरपंच बगरैह बिसू से नाराज रहते थे क्योंकि वह मजदूरों के लिए नियमानुसार मजदूरी मांगता था । जोरावर सिंह ने तो बिसू को कई बार धमकाया भी था । अन्त में हीरा यह भी कहता है कि सारा गांव बिसू की हत्या के लिए जोरावर सिंह का नाम ले रहा है, परंतु वह खुद कैसे किसी पर शक कर सकता है? उसने खुद तो कुछ -देखा नहीं ।

पहले दिन इतना ही कर एस.पी. सक्सेना शहर लौट जाता है । वहां वह डी.आई.जी को अपने किये की रिपोर्ट देता है । डी.आई.जी. कहते हैं कि यह साधारण आत्महत्या का मामला है, रिपोर्ट भी लगभग तैयार है । गांववालों के बयान तो उनको तसल्ली देने के लिए लिये जा रहे हैं । इस बात पर सक्सेना के चेहरे को बुझता देख डी.आई.जी. यह और जोड़ देते हैं कि अगर कोई नई बात पता चली तो रिपोर्ट में संशोधन भी हो सकता है । इस बात से सक्सेना में फिर उत्साह का संचार होता है ।

सक्सेना अगले दिन फिर सरोहा जाकर बिंदा का बयान लेता है । बिंदा की पत्नी रुक्मा भी उस वक्त उपस्थित रहती है । बिंदा थानेदार को जोरावर की रखैल बताता है और यह मानने से इन्कार करता है कि बिसू ने आत्म हत्या की होगी । वह जोरावर और सरपंच के आतंक का भी जिक्र करता है । बिंदा से हुई बात के आधार पर सक्सेना बयान देने वालों की सूची में चाय की दुकान वाले पुतन का भी नाम जोड़ता है ।

इन बयानों से सक्सेना के सामने यह साफ हो जाता है कि मामला हत्या का है, न कि आत्महत्या का । शाम को वह डी.आई.जी. को फोन कर यह कहता है कि रिपोर्ट को पूरी तरह बदलना पड़ेगा । इस पर डी.आई.जी. की प्रतिक्रिया बेहद ठण्डी है ।

'महाभोज' का आठवां परिच्छेद दा साहब और पाण्डे जी की बातचीत से शुरू होता है । पाण्डे जी दा साहब को बताते हैं कि सुकुल जी की रैली में एक लाख आदमी हो सकते हैं और रैली का असर चुनाव पर भी पड़ सकता है । वे दा साहब को यह भी बताते हैं कि राव और चौधरी अपने लिए महत्वपूर्ण मंत्रालय मांग रहे हैं । यह मांग पूरी हो तो वे साथ आ सकते हैं । इसके बाद पाण्डे जी एक गंभीर मसला पेश करते हैं । वे दा साहब से कहते हैं कि सक्सेना रोज-रोज गांव जाकर माहौल खराब कर रहा है । वह बिसू के सीधे-सपाट केस में भी जाने क्या-क्या तिकड़में निकाल रहा है । उसी की दिखाई राह पर चलकर बिंदा कुछ प्रमाण वगैरह लेकर दिल्ली जा रहा है । सुकुल बाबू के लोग इस सबका जोर-शोर से प्रचार कर रहे हैं । पाण्डे के अनुसार सक्सेना को भेजने का निर्णय ही गलत रहा । जवाब में दा साहब केवल इतना ही कहते हैं कि उन्होंने खुद सक्सेना की फाइल मंगवा ली हैं और डी.आई.जी. को कह दिया है कि वे मामला अपने हाथों में ले लें ।

इसके बाद पाण्डे सबसे महत्वपूर्ण बात कहता है: जोरावर खुद चुनाव में खड़ा हो रहा है । इस सूचना से दा साहब भी विचलित हो जाते हैं ।

इस परिच्छेद में दा साहब और राव व चौधरी की भेंट भी होती है । राजनीतिक सौदेबाजी की लंबी चर्चा बे-नतीजा रहती है । राव और चौधरी दा साहब से कुछ भी ले पाने में असफल रहे हैं । उनके जाते ही दा साहब पार्टी अध्यक्ष अम्मा साहब को फोन करके बताते हैं कि वे लोचन की बर्खास्तगी के लिए राज्यपाल को पत्र भेज रहे हैं ।

इसके बाद, इसी परिच्छेद में, दा साहब से जोरावर की भेंट का वर्णन है । दा साहब अपने सारे कौशल का प्रयोग कर जोरावर को इशारों-इशारों में बिसू के मरने में उसकी भूमिका याद दिलाते हैं, भावी दुष्परिणामों की आशंका व्यक्त करते हैं और इसी के साथ जोरावर के चुनाव लड़ने की चर्चा भी कर लेते हैं । जाहिर है उनका मंतव्य जोरावर को चुनाव लड़ने से रोकना हैं ।

अगले दिन दा साहब डी.आई.जी. से मिलते हैं । चर्चा में वे सक्सेना की भूमिका पर अपना असंतोष व्यक्त करते हैं और बहुत आहिस्तेसे यह संकेत कर देते हैं कि बिसू की हत्या में बिंदा की भूमिका संदिग्ध है । समझदार डी.आई.जी. के लिए मानो इतना इशारा काफी है ।

अंतिम परिच्छेद के प्रारंभ में दा साहब अपनी कोठी में 'मशाल' का ताजा अंक देख रहे हैं । सबसे बड़ी खबर है: दोस्ती की आड़ में बिसू की हत्या करने वाला विदा गिरफ्तार! साथ ही यह खबर भी है कि आई.जी. के रिक्त पद को डी.आई.जी ने संभाल लिया है ।

दा साहब प्रसन्न हैं, जोरावर प्रसन्न है, दत्ता बाबू प्रसन्न हैं, सिन्हा साहब प्रसन्न हैं । इस प्रसन्न बिरादरी से कटे हुए तीन लोग हैं सक्सेना, लोचन और बिंदा - पूरी तरह उपेक्षित,

परित्यक्त और एक तरफ फेंके हुए । सक्सेना सस्पेण्ड हो चुके हैं, लोचन भैया पार्टी से निकाले जा चुके हैं और बिंदा बिसू की हत्या का झूठा इलजाम झेल रहा है ।

बिसू के जिस नाम को लेकर एक महीने पहले यहां से वहां तक तूफान मच गया था, अब वही नाम सिमटकर या तो हीरा की आंखों से बहते हुए आँसुओं में रह गया है या बिंदा की आंखों से बरसते हुए अंगारों में ।

18.4 महाभोज की कथा का वैशिष्ट्य

'महाभोज' की कथा के इस सारांश से आपको महसूस हो गया होगा कि लेखिका ने हमारे समय की राजनीति को बेनकाब करने का सफल और सार्थक प्रयास किया है । राजनीति से लगता हैं 'नीति' को एकदम अलग कर दिया गया है । जो लोग राजनीति के क्षेत्र में हैं उनके सामने केवल एक लक्ष्य रह गया है - सत्ता प्राप्ति । इसके लिए जो कुछ भी करना पड़े, वे निसंकोच करने को तत्पर रहते हैं ।

सत्ता के इन गिद्धों के लिए किसी गरीब का मर जाना भी 'महाभोज' ही है. । उपन्यास बहुत मार्मिक तरह से बिसू की मौत के बहाने हमारे राजनीति कर्मियों की सत्ता लोलुपता उजागर करता है । मरने वाले से किसी को सहानुभूति नहीं
है । चाहे दा साहब हों या सुकुल बाबू या इनके पक्ष के अन्य लोग, हरेक की तमन्ना मात्र इतनी है कि कैसे बिसू की मौत से अधिक से अधिक फायदा उठाया जाए । दा साहब का काम करने का तरीका अलग है, सुकुल बाबू का अलग । लेकिन मंजिल दोनों की एक है ।

लेखिका इस कथा में बहुत कम हस्तक्षेप करती हैं । कथा चलती रहती है । लेकिन पूरी कथा बिना कुछ अतिरिक्त कहे हमें एक ऐसा दर्पण दिखा जाती है कि हम व्यथित भी होते हैं और लज्जित भी । वैसे, सत्ता का यह नंगा-नाच दिन-रात हमारे चारों तरफ होता रहता. है । हमारे चारों तरफ नहीं, हमारी छाती और सर पर होता रहता है और हम इसके इतने आदी हो चले हैं कि हमें कुछ खास महसूस नहीं होता । लेकिन जब हम 'महाभोज' पढ़ते हुए सत्ता के इस क्रूर खेल को, इसके एक-एक दृश्य को घटित होता देखते हैं तो जैसे सिहर उठते हैं ।

इस कथा की एक और विशेषता पर ध्यान जाए बगैर नहीं रहता । हिंदी साहित्य में गांव की मनोमुग्धकारी छवि अंकित करने की एक लंबी परंपरा रही है । बहुत कम लेखक, जैसे श्रीलाल शुक्ल ('राग दरबारी') इस परंपरा से हट पाए हैं । मन्नू भण्डारी अपने उपन्यास में सरोहा की कोई मनोमुग्धकारी छवि नहीं देतीं । बल्कि, जैसे वे सायास ही कोई भी छवि देने से बचती हैं । इस तरह वे पाठक का ध्यान केवल और केवल अमानवीय राजनीति पर केंद्रित कर पाती है ।

इस उपन्यास में मन्नू भण्डारी ने चरित्रों-पात्रों को भी बड़ी भीड़ एकत्रित नहीं की है । एक भी पात्र गैर-जरूरी नहीं है ।

ये ही कुछ बातें हैं जिनके कारण 'महाभोज' उपन्यास अपने मन्तव्य में पूरी तरह सफल हो पाया है ।

18.5 महाभोज की कथा-संरचना

'महाभोज' की कथा-संरचना पर आप विस्तार से इकाई - 19 में पढ़ चुके हैं । मन्नू भण्डारी का रचना-विधान सदा ही 'बात बोलेगी हम नहीं' का अनुसरण करता रहा है । वे पाठक को शिल्प की भूल-भुलैया में भटकाने की बजाय सीधे अपने कथ्य से रू-ब-रू करवाने में विश्वास करती है । जो थोड़ा-बहुत शिल्पकौशल उनके यहां मिलता है वह भी इसी निमित्त प्रयुक्त माना जाना चाहिए ।

लेकिन, रचना है तो शिल्प तो होगा ही । इस उपन्यास में कुल पांच कथाओं को एक दूसरे में गूंथा गया है । ये हैं - बिसू की कथा, दा साहब की कथा, सुकुल बाबू की कथा, लोचन बाबू की कथा और बिंदा की कथा । ये पांचों कथाएं एक दूसरे से बे - जोड़ तरीके से जुड़ी है । दिलचस्प बात यह है कि जिस बिसू की मौत की घटना को उपन्यास का आधार बनाया गया है, कलेवर की दृष्टि से वह बहुत छोटी है । एक तरह से वह घटना उपन्यास का प्रस्थान बिंदु है, और है धुरी । शेष सभी घटनाएं इसी धुरी के चारों तरफ घूमती हैं ।

उपन्यास का प्रारंभ 'लावारिस लाश को गिद्ध नोच-नोच कर खा जाते हैं' इस पंक्ति से होता है । अंतिम परिच्छेद में दा साहब तृप्त भाव से 'बड़ी सफाई और सलीके से कटा हुआ लंगड़ा आम, तले हुए मखाने, केसरिया संदेश और शहद-पानी' का नाश्ता कर रहे हैं; जोरावर-लखन और दस बारह लोगों की चौपाल में स्पेशल सींक कबाब और पनीर के पकौड़े चल रहे हैं स्कॉच के साथ; सिन्हा साहब की लॉन में शानदार पार्टी चल रही है जिसमें बड़े-बड़े सरकारी अफसर, व्यापारी, वकील, डॉक्टर सब शरीक हैं; दत्ता बाबू अपने अखबार के दफ्तर में लड्डूबांट रहे -हे । यानी सब लोग अलग-अलग तरह से जश्न मना रहे हैं । महाभोज कर रहे हैं । और यह पूरा उत्सवी परिदृश्य जुड़ता है 'लावारिस लाश को गिद्ध नोच-नोचकर खा जाते हैं वाक्य से । एक गहरी विडम्बना का बोध उभरता है । यही है 'महाभोज' की संरचना की सबसे बड़ी विशेषता ।

एक और बात । पूरे उपन्यास में नारी पात्र मात्र दो हैं । दा साहब की पत्नी जमना बहन और बिंदा की पत्नी रुक्मा । अनेक अविस्मरणीय स्त्री चरित्रों की सर्जक मन्नू भण्डारी महाभोज' में स्त्री चरित्र सृष्टि में कृपणता बरत कर भी एक बड़ा संदेश दे गई हैं । दरअसल हमारे देश की राजनीति अभी भी पुरुष-प्रधान ही है । स्त्रियों की भागीदारी उसमें बहुत कम है । इस तथ्य

को इस तरह भी पढ़ा जाना चाहिए कि अगर हमारी राजनीति में महिलाएं अधिक होती तो शायद ऐसा 'महाभोज' नहीं होता ।

18.6 महाभोज के निहितार्थ

प्रख्यात कथा आलोचक मधुरेश ने लिखा है कि ' महाभोज राजनीति की क्रूरता और समूचे तन्त्र की संवेदन हीनता की कहानी है । जनता के तंत्र के नाम पर जो व्यवस्था हमने देश की स्वाधीनता के बाद विकसित की है अपने मूल चरित्र में वह कितनी जन विरोधी और अमानवीय है, 'महाभोज' इसे बहुत गहराई और बारीकी के साथ अंकित करता है ।"

'महाभोज' बहुत हद तक राजनीतिक उपन्यास है । परंतु लेखिका ने दा साहब और सुकुल बाबू की राजनीतिक पार्टियों का नाम नहीं लिया है । इस तरह उन्होंने यह संदेश दे दिया है कि सारे राजनीतिक दल समान रूप से अमानवीय और अवसर-लोलुप हैं ।

इसी तरह, यद्यपि उपन्यास के मूल में हरिजन बिसेसर की मृत्यु की घटना है, लेखिका ने अपनी कथा को दलित-विमर्श से दूर ही रखा है । ऐसा करके उन्होंने दलित बिसेसर के उत्पीड़न को अधिक व्यापक सामाजिक-राजनीतिक संदर्भों से जोड़ दिया है ।

कथा में स्त्री पात्रों की कमी वाली हमारी टिप्पणी (देखें 205) को निहितार्थ के संदर्भ में भी याद किया जाना चाहिए ।

पूरे उपन्यास पर आलोचक अजय तिवारी की टिप्पणी महत्वपूर्ण और स्मरणीय है: "महाभोज सामाजिक उत्पीड़न और उस पर टिकी हुई व्यवस्थापोशक राजनीति के विरूद्ध एक संवेदनशील रचनाकार की विनम्र किंतु साहसपूर्ण प्रतिक्रिया है"

18.7 सारांश

इस इकाई में आपने हिंदी की प्रतिष्ठित कथाकार मन्नू भण्डारी के बहु-प्रशंसित उपन्यास 'महाभोज' के प्रतिपाद्य का अध्ययन किया है । उपन्यास की कथा बहुत छोटी है । सरोहा गांव में एक दलित युवक बिसेसर की लाश मिलती है । डेढ़ महीने बाद ही गांव में चुनाव होने वाला है । मुख्यमंत्री दा साहब और पूर्व मुख्यमंत्री सुकुल बाबू की इस चुनाव में विशेष दिलचस्पी है और इसलिए दोनों ही अपने-अपने सहायकों-समर्थकों के साथ बिसेसर की मृत्यु का अधिकाधिक राजनीतिक लाभ लेने की कोशिशों में जुट जाते हैं । उपन्यास का बड़ा भाग इन्हीं कोशिशों से दांव-पेचों को प्रस्तुत करता है । कथा के अंत में एक बेगुनाह, बिसेसर के साथी बिंदा पर बिसेसर की हत्या का इलजाम मढ़ दिया जाता है, और सारे लोग - दा साहब, सिन्हा साहब, दत्ता बाबू वगैरह अपनी-अपनी सफलता का जश्न मनाते हैं ।

यह कथा हमारी आज की राजनीति को अपने वीभत्सतम रूप में प्रस्तुत करती है । इस बदसूरत राजनीति की तस्वीर लेखिका ने सीधे-सरल शिल्प में प्रस्तुत की है । उन्होंने खास यह किया है कि इस कथा को न तो केवल गांव की कथा बनने दिया है, न केवल दलित की । बहुत व्यापक मार है कथा की ।

निश्चय ही पूरा उपन्यास हमें अपने चारों तरफ फैली राजनीति पर विचार करने को विवश करता है ।

18.8 संदर्भ ग्रन्थ

1. अधूरे साक्षात्कार - नेमिचन्द्र जैन
2. हिंदी उपन्यास का विकास - मधुरेश
3. हिंदी उपन्यासस्वार्थक की पहचान : - मधुरेश
4. कथअकथ- - गिरिराज किशोर
5. हिंदी उपन्यास: एक अन्तर्यात्रा - रामदरश मिश्र
6. महाभोज का महत्व - डॉ(.सं) सूरज पालीवाल .

8.9 अभ्यास प्रश्न

1. महाभोज का कथा-सार लिखिए ।
2. मन्नू भण्डारी ने 'महाभोज' की रचना क्यों की - कथा से उदाहरण देते हुए उत्तर दीजिए।
3. आप इस कथन से कहां तक सहमत हैं कि दा साहब और सुकुल बाबू की राजनीति एक ही सिक्के के दो पहलू हैं?
4. पठित उपन्यास की कथा के आधार पर 'महाभोज' शीर्षक की सार्थकता पर विचार कीजिए।
5. 'महाभोज' उपन्यास के माध्यम से लेखिका ने समाज की किन-किन विद्रूपताओं को उजागर किया है?
6. दा साहब और सुकुल बाबू की राजनीतिक शैलियों का अंतर स्पष्ट कीजिए ।

इकाई-19

'महाभोज' (मन्नू भण्डारी) संरचना व शिल्प (भाग-2)

इकाई की रूपरेखा

19.0 उद्देश्य

19.1 प्रस्तावना

19.2 उपन्यास का स्वरूप कथानक

19.3 'महाभोज' का कथानक घटना प्रधान या चरित्र प्रधान

19.3.1 'महाभोज' में समसामयिक व्यवस्था का विवेचन

19.4. 'महाभोज' में शिल्प की प्रविधियाँ

19.4.1 वर्णनात्मक शैली

19.4.2 चरित्रांकन शैली

19.4.3 नाट्य शैली

19.4.4 संवादों में नाटकीयता

19.4.5 यथार्थ का सजीव अंकन

19.4.6 शैली में व्यंग्य एवं प्रतीकात्मकता

19.4.7 'महाभोज' की भाषा

19.5 सारांश

19.6 संदर्भ ग्रन्थ

19.7 अभ्यास प्रश्न

19.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई 'महाभोज' की संरचना व शिल्प के तत्वों पर आधारित है । इसके अध्ययन के बाद आप-

- 'महाभोज' के कथानक का परिचय प्राप्त करेंगे तथा कथानक की रचनात्मकता के विषय मे जानकारी प्राप्त करेंगे।
- कथानक संरचना में आये हुए विविध आयामों का परिचय प्राप्त कर सकेंगे ।
- इस कृति में निहित रचनाकार की दृष्टि से अवगत हो सकेंगे ।
- वर्तमान समय की राजनीतिक परिस्थितियों में छिपे हुए स्वार्थ और राजनेताओं की संकीर्णता को समझ सकेंगे।
- वर्तमान राजनीति की कथनी और करनी के अंतर को समझ सकेंगे ।
- राजनीतिज्ञों और सरकारी तन्त्र के बीच जुड़े हुए स्वार्थों को जान सकेंगे ।

19.1 प्रस्तावना

मन्नू भण्डारी का उपन्यास 'महाभोज' अपने प्रकाशन काल से ही साहित्यिक चर्चा के केन्द्र में रहा है । लेखिका ने स्वयं स्वीकार किया है कि अपने व्यक्तिगत दुःख दर्द, अन्तर्द्वन्द्व से ऊपर उठकर उन्होंने बाह्य यथार्थ को समझने और प्रस्तुत उपन्यास के माध्यम से इसकी एक दूसरे से जुड़ी हुई कड़ियों को जोड़ने का प्रयास इस रचना में किया है । खासतौर से इस उपन्यास की व्यंजना संक्षिप्त और सांकेतिक रूप में आज की व्यवस्था को समझाने में सफल रही है । यही कारण है कि 'महाभोज' एक विचारोत्तेजक और लोकप्रिय उपन्यास के रूप में आलोचकों और साहित्य प्रेमियों में चर्चित रहा है । यही तक कि इस उपन्यास का नाट्य रूपान्तर भी हुआ है और अनेक नाट्य मंडलियों ने अलग-अलग स्थानों पर उसका सफल मंचन भी किया है । कुल मिला कर ' 'महाभोज' 'एक लोकप्रिय और वर्तमान समाज की विकृतियों पर तीव्र प्रहार करने वाली रचना कही जा सकती हैं यह रोचक और पठनीय होने के साथ साथ पाठक को भीतर से प्रभावित करती हैं साथ ही वर्तमान समाज को संचालित करने वाली स्वार्थी शक्तियों को बेनकाब करती है । निचले तबके में जो आक्रोश और गुस्सा है उसको भी प्रस्तुत उपन्यास उभारता है । इस दृष्टि से इस उपन्यास का अध्ययन अत्यंत रोचक और भीतर तक झकझोरने वाला कहा जा सकता है ।

'महाभोज' में उपन्यास के स्वरूप की दृष्टि से इसकी संक्षिप्तता प्रतीकात्मकता और विश्लेषण की गहराई का विशेष महत्व है । एक छोटी और संक्षिप्त घटना के पीछे जो तत्व छिपे रहते हैं, लेखिका ने अपनी बेबाक भाषा में उसका चित्रण किया है । लेखिका ने अपनी विषय वस्तु पर अद्भुत पकड़ और प्रस्तुतीकरण में रोचकता का पुट देकर इसे वर्तमान व्यवस्था का एक जीवन्त दस्तावेज बना दिया है ।

19.2 उपन्यास का स्वरूप : कथानक

इस उपन्यास की रचना का केन्द्र राज्य की राजधानी से मुश्किल से बीस मील की दूरी पर अवस्थित सरोहा गाँव है । कुछ सालों पहले तक यह दूरी बहुत ज्यादा थी । इतनी कि गाँव में जो कुछ भी घटता, गाँव का ही होकर रह जाता । शहर उससे एक दम बेअसर और अछूता रहा जाता पर अब यह दूरी एक दम सीमट गई है । यही कारण है कि आज गाँव मे जो कुछ भी घटता है उसको लेकर बड़े पैमाने पर अच्छी खासी हलचल शहर में मच जाती है । इस उपन्यास के कथानक में कुल मिलाकर दो घटनाएं उभारी गयी है । पहली घटना गाँव से अलग-थलग हरिजन टोले में हुयी, आगजनी की घटना है, जिसमें दलितों के घर द्वार तो जले ही हैं बल्कि वहाँ के कुछ निवासी भी आग की लपटों में समा गये । यह आगजनी कैसे हुयी? षड्यन्त्रकारी कौन थे? और उनका निहित स्वार्थ क्या था? इन सब पर शासन की खोजबीन तो चल रही थी, स्थानीय अखबार भी अपने ढंग से आगजनी के कारणों का समझाने का प्रयास कर रहे थे । शासन की चतुराई, राजनीतिज्ञों का खेल, पुलिस महकमे की खोजबीन का नाटक, सब अपने ढंग से चल रहा था दूसरी और विधान सभा में विरोधी दल के नेताओं की चीख पुकार भी घटना को अपने स्वार्थ के चश्मे से चर्चा में ला रही थी ।

प्रभावित हरिजन टोले का एक ग्रेजुएट युवक बिसेसर अपने ढंग से इस दारूण घटना की छानबीन कर रहा था । उसने कुछ सूत्र जोड़ लिये थे, कुछ प्रमाण एकत्र कर लिये थे और कुछ तथ्य समेट लिये थे । बिसेसर की इस कारगुजारी का समाज के असरदार तबके को भान हो गया था । उनके भीतर एक खलबली मच गयी थी । बिसेसर का दृढ़ संकल्प था कि वह आगजनी की इस घटना का षड़यन्त्र केन्द्र सरकार के सम्मुख रखेगा । परिणाम स्वरूप पहली घटना का बवण्डर थमा भी न था कि इस उपन्यास की दूसरी घटना घट गयी । एक दिन सवेरे-सवेरे लोगों ने देखा कि गाँव के बाहर पुलिया पर बिबेसर मरा पड़ा है । बिबेसर की मौत और हरिजन टोले में आगजनी की घटना एक दूसरे से जुड़ी हुयी है । इसी को केन्द्र में रखकर लेखिका ने महोभोज उपन्यास के कथानक का ताना-बाना बुना है ।

19.3. 'महाभोज का कथानक घटना प्रधान या चरित्र प्रधान

हम पहले कह चुके हैं कि उपन्यास का कथानक बहुत संक्षिप्त है किन्तु उससे जुड़े चरित्रों की अच्छी खासी भीड़ है । लेखिका के शब्दों में - ' सच पूछा जाए तो बड़ा न आदमी होता है, न घटना । यह तो बस मौके-मौके की बात होती है । मौका ही ऐसा आ पड़ा है । इस समय तो सरोहा में पत्ते का हिलना भी एक घटना की अहमियत रखता है । डेढ़ महीने के बाद ही तो चुनाव है । यों उप-चुनाव विधानसभा की एक सीट-भर का, फिर भी है तो बहुत महत्वपूर्ण । इस सीट के लिए भूतपूर्व मुख्यमंत्री सुकुल बाबू खुद खड़े हो रहे थे । सुकुल बाबू क्या खड़े हो रहे हैं, समझ लीजिए पिछले चुनाव में हारी हुई पूरी-की-पूरी पार्टी खड़ी हो रही है, स्वयं ठोंक कर..... ललकारती हुई सत्तारूढ़ पार्टी के पूरे अस्तित्व को चुनौती देती हुई ' ।

लेखिका की यह टिप्पणी उपन्यास में वर्णित घटनाओं को असाधारण महत्व प्रदान करने का कारण स्पष्ट करती है और यहीं से उपन्यास के चरित्रों की क्रमिक पहचान पाठकों के समक्ष उभरने लगती है । फिलहाल विपक्ष में बैठे हुए सुकुल बाबू हैं जो पहले दस साल तक मुख्यमंत्री की गद्दी सम्भाल चुके हैं । यह विधानसभा का उप-चुनाव उनके लिए जीवन-मरण का प्रश्न बना हुआ है । अपनी राजनीतिक चातुरी, सूझ-बूझ, दाँव-पेंच, प्रदर्शन और रैली का सहारा लेकर वे मत-दाताओं को अपनी और मोड़ने का भरसक प्रयास कर रहे हैं । दूसरी ओर उनके प्रतिद्वन्दी दा साहब हैं जो कि मुख्यमंत्री पद पर आसीन हैं । दा साहब का राजनीतिक कौशल, सार्वजनिक जीवन का लम्बा अनुभव, राजनीति के छोटे-छोटे गुर्गों पर उनकी पकड़, प्रचार तंत्र को अपने वश में करने का कूट कौशल और खास तौर से सरकारी तंत्र और पुलिस बल की सहायता से इस मध्यावधि चुनाव को जीतना उनके समक्ष एक बड़ी भारी चुनौती है । दा साहब की ओर से लखन चुनाव लड़ रहा है । जो कि कल तक उनका झण्डा उठा कर चलने वाला एक साधारण कारिन्दा भर था, कहना चाहिए कि लखन तो निमित्त मात्र है असली दंगल तो दा साहब और सुकुल बाबू के खेमे के बीच है ।

लेखिका ने दा साहब के चरित्र को बड़े करीने से उभारा है । वे ऊपर से गांधीवादी की साकार प्रतिमा नजर आते हैं । रोज गीता पढने वाले, सत्य और अहिंसा का पालन करने वाले, देश

सेवा का व्रत धारण करने वाले, सादगी, विनम्रता सद्भाव और प्रेम का सार्वजनिक प्रदर्शन करने वाले शालीन व्यक्ति हैं । दा साहब का यह ऊपरी आडम्बर मात्र है । भीतर से वे अपने स्वार्थ साधने में चतुर, पर्दे के पीछे कार्यरत शक्तियों को समझने मे घाघ, व्यावहारिक सूझ-बूझ वाले हवा देखकर पैंतरा बदलने में निपुण और अपने राजनीतिक कौशल से विरोधियों को पस्त परास्त करने में दक्ष । दा साहब का आन्तरिक और बाह्य व्यक्तित्व दोनों को मिलाकर एक ऐसे प्रतीक चरित्र की रचना की गयी है जो कि इस देश के विशाल जनतन्त्र को अपनी मुट्ठी में दबोचे हुए हैं ।

इस उपन्यास में लेखिका ने पुलिस तन्त्र से जुड़े हुए दो चरित्र उभारे हैं । दा साहब के कृपापात्र डी.आई.जी. जिनकी नजर आई.जी. की कुर्सी पर है । वे बड़ी मुस्तेदी से सरोहा की आगजनी की घटना और बिसेसर की मौत को अपने ढंग से अपने आका दा साहब के इशारों पर हल करना चाहते हैं । इसके लिए अपने मातहत एस.पी. सक्सेना को मै सरोहा भेजते हैं और बिसेसर की मौत को हत्या न मान कर आत्महत्या का रूप देने का इशारा कर देते हैं । डी.आई.जी यदि पुलिस महकमे का एक चलता फिरता पुरजा अफसर है जो नये नये हथकण्डे अपना कर अफसरी की सीढ़ियों पर चढ़ना चाहता है और दूसरी और पिछले कई वर्षा से पदोन्नति से वंचित होने वाला सक्सेना है जो कि अब भी कहीं न कहीं सन बयालीस के आन्दोलन की स्मृतियों को अपनी चेतना में दबाये बैठा है । अपने विद्यार्थी जीवन में तिरंगा झण्डा उठाये अपने साथी दिनेश के साथ वह बढ़ रहा था कि सहसा गोली चलने की आवाज सुनाई पड़ी । सक्सेना ने अपने कदम पीछे की ओर मोड़ लिए और झण्डा उठाये दिनेश को गोलियों में जाने दिया । आज भी सक्सेना के भीतर तह स्मृति अपराध-बोध के रूप में जब-तब उभर जाती है । शायद इसीलिए एस.पी., सक्सेना आज के पुलिस तन्त्र में मिसफिट है ।

यों तो 'महाभोज' में चरित्रों की खासी भीड़ है और लेखिका ने अपनी सूक्ष्म चित्रण शैली का सहारा लेकर केवल दो-चार वाक्यों में ही 'महाभोज' के चरित्रों को सजीव बना दिया है । चरित्रों की इस भीड़ में से केवल कतिपय प्रमुख चरित्रों की ही चर्चा वांछनीय है, यह उपन्यास क्योंकि देश की राजनीति पर केन्द्रित है, इसलिए राजनीति के हल्के से जुड़े हुए विविध भंगिमाओं वाले चरित्र ही पाठक का ध्यान आकर्षित करते हैं । इनमें से शिक्षा मंत्री त्रिलोक सिंह रावत है जो कि अपने प्रशंसकों में लोचन भैया के नाम से जाने जाते हैं । जनता के मध्य लोकप्रिय लोचन भैया ने शुक्ल बाबू के विरोध में खम ठोककर राजनीति में प्रवेश किया था । जनता ने उन्हें विधानसभा में भेजा और वे शिक्षामंत्री भी बने । सरोहा के उपचुनाव को लेकर वे भीतर ही भीतर बड़े आक्रोश से भरे हुए हैं । इस चुनाव के लिए शुक्ल बाबू के वजन के जितने भी नाम प्रस्तावित हुए, उन सबको धराशयी करके जिस बेशर्मी और ढिठाई के साथ दो कौड़ी की औकात वाले लखन को खड़ा किया गया, उसने लोचन भैया की भीतर की आग को और भड़का दिया । दा साहब के साथ जुड़े हुए पार्टी के अध्यक्ष अम्मा साहब पर यह दायित्व है कि लोचन बाबू के गुस्से को शांत करें और दा साहब के विरूद्ध जो विद्रोही तत्व संगठित हो रहे हैं, उन्हें अनुशासन की छड़ी दिखाकर अनुशासन में रखा जाए अप्पा साहब इस फन में माहिर है । अपनी

सूझ-बूझ और दक्षता का परिचय देते हुए अप्पा साहब, लोचन बाबू के घुमड़ते हुए आक्रोश पर न केवल पानी के छींटे मारते हैं, बल्कि विरोधियों के षडयन्त्र की हवा भी निकाल देते हैं । लोचन भैया के गुट में स्वास्थ्य मन्त्री भैया राव और विकास मंत्री चौधरी भी हैं । मंत्रिमंडल गिराओ अभियान में दोनों लोचन भैया के दांये बांये हाथ बने हुए हैं । राजनीति की इस गहमागहमी को दिशा देने में दत्ता बाबू के मशाल की भी बड़ी भूमिका है । मशाल को दा साहब की कृपा से न केवल कागज का दुगना कोटा मिला है, बल्कि ढेर सारे विज्ञापन भी । बदले में मशाल के सम्पादक दत्ता बाबू को दा साहब की और उनकी सरकार की छवि को जनता के मध्य चमकाना । 'महाभोज' की लेखिका ने मशाल के माध्यम से जनतन्त्र के प्रहरी ही भूमिका से वंचित पत्रकारिता को कटघरे में खड़ा किया है । प्रजातन्त्र के नाम पर फलने फूलने वाली पत्रकारिता का असली चेहरा क्या है, मन्नू जी की कलम ने महाभोज के पृष्ठों में इसे उभारा है ।

'महाभोज' के भीतर आये हुए प्रमुख चरित्रों की चर्चा तक अपूर्ण कही जायेगी, जब तक उसमें हरिजन टोली के दो युवाओं की चर्चा न की जाये । इनमें पहला है बिसेसर और दूसरा उसका अभिन्न साथी बिंदा । बिसेसर हरिजन टोले का वह युवा स्नातक है जिसके भीतर शोषण के विरुद्ध, तथा सामाजिक और आर्थिक उत्पीड़न के विरूद्ध एक तीखा आक्रोश है । उसके भीतर मानों एक पिघलता हुआ लावा बहता रहता है । बिसेसर हरिजन टोले के खेतीहर मजदूरों को संगठित करता है, अपने भविष्य के लिए एक छोटी मोटी नौकरी पकड़कर शहर में बसने की बजाए हरिजन टोली में स्कूल चलाना, नए लड़के लड़कियों को दमन और शोषण के प्रति जागरूक करना, अपने अधिकारों की लड़ाई के लिए संगठित करना और अपनी पूरी ताकत के साथ इसी काम में समर्पित भाव से लगे रहना बिसेसर की पहचान है ।सुकुल बाबू के राज में उसको नक्सली करार दिया गया जिसके लिए उसे जेल में चार साल के लिए बन्द रखा गया । सरोहा में आगजनी की घटना का विवरण एकत्र करने के कारण ही उसे मौत के घाट उतारा गया । बिसेसर का साथी विदा उसके सपने को अपने भीतर संजोये हुए है । वह एस.पी. सक्सेना के सामने अपने बयान कलमबंद कराते समय अपनी निडरता, उद्दण्डता, गुस्सैल मिजाज और अपने भीतर घुमड़ते हुए दुःख और क्रोध की आग को प्रकट कर ही देता है । हरिजन टोले के इन दो युवकों के माध्यम से लेखिका, दलितों के मध्य जगी हुई प्रतिरोध की चेतना का उभारती हैं साथ ही मानव अधिकारों के लिए शोषण और दमन के विरूद्ध तनकर खड़ा होने की कूवत की ओर भी संकेत करती है । प्रतिरोध की यही चेतना जनतन्त्र की शक्ति है । कुल मिलाकर इन प्रमुख चरित्रों के माध्यम से लेखिका ने कथासंसार रचा है और उसमें अंकित मूरतों को जीवन्तता प्रदान की है । इसी आधार पर इस कृति को घटना प्रधान होने की बजाय चरित्र प्रधान रचना मानना तर्क संगत है । चरित्रों की इस संक्षिप्त चर्चा के बीच 'महाभोज' का जोरावर सिंह अपने किया कलापों से पाठकों का ध्यान आकर्षित किये बिना नहीं रहता । वह सरोहा गांव का एक दबंग चालीस वर्षीय प्रौढ़ है जो कि हरिजन टोले का दमन करने, बेगार वसूलने, अपने पाशविक बल से निरीह लोगों को प्रताड़ित करने, षड़यन्त्र रचने

तथा हत्या और आगजनी करने में आगे रहता है । महाभोज' के कथानक में जोरावर सिंह इन्हीं क्रूरताओं का एक प्रतीक चरित्र है । सरोहा में हरिजन टोले में लगायी गयी आग और दलित चेतना के प्रतिनिधि बिसेसर की हत्या के पीछे इसी की क्रूरता का परिचय मिलता है । राजनीति में पैसे की ताकत के साथ साथ मसल्स पावर एक आम बात हो चली है । गरीब और निहत्थे मतदाताओं को मतदान केन्द्र से दूर रखना जोरावर जैसे तत्वों की बढ़ती हुई पाशविक शक्ति को दर्शाता है ।

19.3.1 'महाभोज' में समसामयिक व्यवस्था का विवेचन

इस उपन्यास को अपने प्रकाशन के समय से ही इतनी अधिक लोकप्रियता इसीलिये प्राप्त हुई है क्योंकि लेखिका ने वर्तमान राजनीति, सरकारी तन्त्र तथा भुजबल और धनबल के द्वारा सत्ता हथियाने के षड़यन्त्रों पर इसमें प्रकाश डाला है । प्रजातन्त्र का ऊपरी स्वरूप केवल एक दिखावा मात्र है उसकी ओट में राजनीतिक हथकण्डे चलते रहते हैं । एक ओर दा साहब जैसे गांधीवादी का लबादा ओढ़ने वाले चतुर खिलाड़ी हैं तो दूसरी ओर सुकूल बाबू जैसे खुर्राट और जनता की नब्ज पकड़ने वाले राजनीतिज्ञ हैं । साथ ही पुलिस के पाशविक बल का इस्तेमाल करने वाला सरकारी तंत्र है और दत्ता बाबू जैसे 'मशाल' के सम्पादक जो जन भावनाओं को भड़काने में माहिर हैं । कुल मिलाकर एक दुष्चक्र की रचना होती है, जिसमें देश का साधारण नागरिक फंसा हुआ है । सत्ता का खेल खेलने वाले चतुर लोग उसे हरबार ठगते रहते हैं । सरोहा के आमचुनाव को केन्द्र में रखकर मन्नू भण्डारी ने एक प्रतीक की रचना की है ओर इसी के माध्यम से अपनी समकालीन व्यवस्था का विवेचन किया है ।

मन्नू भण्डारी का अधिकांश लेखन व्यक्तिगत दुःख दर्द, अंतर्द्वन्द्व और मन की घुटन को कहानी उपन्यासों में ढालने वाला लेखन कहा जा सकता है । **'आपका बंटी,' स्वामी'** और **'एक इंच मुस्कान,'** इसी कोटि की रचनाएं है । 'महाभोज' की रचना तक आते हुए किन्तु लेखिका को यह तीव्र अहसास हुआ कि मन की उधेड़ बुन से ऊपर उठकर जीवन के वृहत्तर संदर्भ को उभारना एक रचनाकार का प्राथमिक दायित्व है । यही कारण है कि 'महाभोज' के ताने-बाने में रचनाकार का यही अहसास दिखायी पड़ता है । इस प्रसंग में 'महाभोज' के आमुख में की गयी यह टिप्पणी इस तथ्य को रेखांकित करती है- " अपने व्यक्तिगत दुःख-दर्द, अंतर्द्वन्द्व या आंतरिक 'नाटक' को देखना बहुत महत्वपूर्ण सुखद और आश्वस्तिदायक तो मुझे भी लगता है, मगर जब घर में आग लगी हो तो सिर्फ अपने अंतर्जगत मे बने रहना या उसी का प्रकाशन करना क्या खुद ही अप्रासंगिक, हस्यास्पद और किसी हद तक अश्लील नहीं लगने लगता ?' 'सम्भवत: इस उपन्यास की रचना के पीछे यही प्रश्न रहा हो ।

अपने समग्र रूप में 'महाभोज' समाज में व्याप्त मूल्यहीनता को उभारने वाली रचना है । चारों ओर कथनी और करनी के बीच फासला बढ़ता जाता है । प्रत्येक आम चुनाव के पहले सत्ता का खेल खेलने वाले चतुर खिलाड़ी अपने भाषणों में लुभावने वायदे करते हैं । रंगीन ख्वाबों

में उलझा कर उसका वोट झटक लेते हैं और सत्ता पर काबिज होने के बाद बहुत सहज रूप से इन सबको भुला देते हैं । उनका एक ही लक्ष्य बचा रहता है- अपने लिए अकूत सम्पत्ति का संचय करना । 'महाभोज' की विषय वस्तु इसी के इर्द गिर्द बुनी गयी है ।

यह गौर करने योग्य बात है कि लेखिका ने अपने इस संक्षिप्त उपन्यास में चारों ओर की परिस्थिति का विस्तार से चित्रण नहीं किया है । यही कारण है कि 'महाभोज' में वर्णन विस्तार के स्थान पर गहराई और तीक्ष्णता का बोध होता है, केवल सरोहा जैसे साधारण गाँव को केन्द्र में रखकर राज्य की राजनीतिक गतिविधियों का जाल फैलाया गया है, जो यह संकेत करने के लिए पर्याप्त है कि इस विशाल देश की जनता के साथ ऐसा ही खेल खेला जा रहा है । यह उपन्यास अपनी संक्षिप्तता के साथ गहरी सांकेतिकता और तीखे व्यंग्य को समेटे हुए है इसलिए हम देश की समकालीन परिस्थितियों पर तीखा व्यंग्य करने वाली कृति के रूप में इसको समझ सकते है ।

19.4 'महाभोज' में शिल्प की प्रविधियाँ

पिछले पृष्ठों में इस ओर संकेत किया जा चुका है कि 'महाभोज'एक संक्षिप्त कलेवर की रचना है । वर्णन विस्तार से बचते हुए लेखिका ने इसमें सांकेतिकता और गहराई को स्थान दिया है । यही कारण है कि 'महाभोज का शिल्प विधान एक अद्भुत कसावट लिए हुए है । इसमें बहुत कम शब्दों में बहुत बड़ी व्यंजना उभारी गयी है । ध्यान देने योग्य बात यह है कि'महाभोज' में एक सहजता, एक प्रवाह और एक स्वाभावित गति दृष्टिगोचर होती है । मन्नू भण्डारी के कथा संसार को इतना बड़ा पाठक वर्ग मिला है, उनकी रचनाओं को आलोचकों की प्रशंसा मिली है, उसके पीछे यही सहजता और प्रवहमयता कारण रूप में विद्यमान है ।

'महाभोज' की लेखिका ने अपने पाठकों को विश्वास में लेकर एक राजनीतिक दुष्चक्र का ताना-बाना बुना है । देश की साधारण जनता के साथ जो छल किया जा रहा है, उसको उन्होंने विषयवस्तु के रूप में तो स्थान दिया ही है साथ ही अपने शिल्प विधान को बोझिल होने से बचाया भी है ।

यहाँ हम 'महाभोज' के शिल्प विधान की चर्चा निम्नलिखित बिन्दुओं में समझने का प्रयास करेंगे-

19.4.1 वर्णनात्मक शैली

'महाभोज' में लेखिका सहज वर्णन के द्वारा कथानक और चरित्रों को रूपाकार प्रदान करती है साथ ही उपन्यास की पृष्ठभूमि को भी उभारती चलती है । उपन्यास के केन्द्र में सरोहा गाँव को इसी सहजता से वर्णनात्मक शैली के रूप में उभारा गया है - ' 'गाँव सरोहा शहर से ज्यादा दूर नहीं है । मुश्किल से बीस मील । लेकिन कुछ सालों पहले तक यह दूरी बहुत ज्यादा थी । इतनी कि गाँव में जो कुछ भी घटता, गाँव का ही होकर रह जाता । शहर उससे एक दम बेअसर रहता-बेअसर और अछूता । पर अब यह दूरी एकदम सिमट गई और यही

कारण है कि आज गाँव में जो कुछ भी घटता है, उसको लेकर अच्छे-खासे पैमाने पर खलबली शहर में ही मचती है । महीने-भर पहले की ही तो बात है -गाँव की सरहद से जरा परे हटकर जो हरिजन टोला है, वहाँ कुछ झोंपड़ियों में आग लगा दी गई थी, आदमियों सहित । दूसरे दिन लोगों ने देखा तो झोंपड़ियाँ राख में बदल चुकी थी और आदमी कवाब में । '

लेखिका ने हरिजन टोले की, सरोहा गाँव की ओर आगजनी की हृदय विदारक घटना को अपनी वर्णनात्मक शैली में सहजता के साथ उभारा है । मनू जी की शैली में यह वर्णनात्मकता मानो पाठकों को विश्वास में लेकर चलती है और उपन्यास का कथा संसार पाठकों के हृदय में उतरता चलता है ।

19.4.2 चरित्रांकन शैली

लेखिका ने उपन्यास के पात्रों को उभारने में भी इसी सहजता और वर्णनात्मकता का सहारा लिया है । 'महाभोज' के प्रमुख चरित्र दा साहब के व्यक्तित्व को इसी सहजता में बाँधा गया है और वही लेखिका का चरित्रांकन कौशल है - ' 'शहर के सबसे महत्त्वपूर्ण व्यक्ति दा साहब अपने निजी कमरे के एक कोने में अकेले बैठे हैं - मौन, गंभीर । कुछ-कुछ चिंतित और परेशान भी । पर चिंता है कि उसके कोई आसार बाहर नहीं है । चेहरे की सौम्यता ने उसे भीतर ही तेल रखा है । फिर भी इतना जरूर लग रहा है कि गहरे में डूबे हुए हैं । ही बीचबीच में फोन की घंटी बजती है तो कुछ क्षणों को उबर आते हैं । "

मन्नू भण्डारी अपने चरित्रों का रेखांकन करते हुए एक चित्रात्मकता को साथ लेकर चलती हैं । 'महाभोज' के दूसरे राजनीतिक चरित्र सुकुल बाबू का चित्र वे इस रूप में चित्रित करती हैं- 'साँवला रंग, नाटा कूद । थोड़ा धुल-धुल शरीर । दा साहब की तरह सौम्य-संयत भी नहीं । सुरासुन्दरी से किसी तरह का कोई परहेज नहीं, बल्कि कहना चाहिए अनुरागी हैं दोनों के । जग के 'सकल पदारथ' न पाने वाले करम-हीनो में अपने को वे शुमार नहीं करवाना चाहते । मस्त फक्कड़ हैं एकदम । निजी दोस्तों के बीच फूहड़ भाषा का प्रयोग करते हैं- धड़ल्ले से । गाली-गलौज से भी कोई परहेज नहीं । उनका ख्याल है कि वाक्य में गाली का बन्द लगा कि बात में धार आई । पर बाहर के लोगों के बीच अपने को काफी साध कर चलते हैं । ' सुकुल वाबू के बाह्य और आंतरिक व्यक्तित्व का यह सटीक रेखांकन मन्नू जी की चरित्रांकन शैली का उदाहरण है ।

19.4.3 'महाभोज' की शैली में नाट्य शैली-

यों तो 'महाभोज' एक उपन्यास है किन्तु इसकी शैली में पर्याप्त मात्रा में नाट्य तत्व विद्यमान है । यही कारण है कि लेखिका ने इस उपन्यास की पाण्डुलिपि का नाट्य रूपान्तरण भी किया है । अनके नाट्य मंडलियों ने देश के कोने कोने में 'महाभोज' के नाट्य रूपान्तरण की सफल प्रस्तुति की है ।

प्रस्तुत उपन्यास में सहज रूप से चलती हुई कहानीआकस्मिक रूप से नयी दिशा पकड़ लेती है । चरित्रों में नवीन भंगिमा जन्म लेती है, कथा प्रवाह नयी दिशा की ओर मुड़ जाता है और समग्र रूप में उपन्यास की व्यंजना और तीक्ष्ण हो जाती है । चरित्रों के रेखांकन में लेखिका ने अनेक भंगिमाएँ उभारी हैं । उदाहरण के लिए ये पंक्तियाँ-

'गाड़ी चली गई और निष्प्रभ से लोचन बाबू जहाँ-के-तहाँ खड़े रह गए । अप्पा साहब के अनेक तेवर उन्होंने देखे हैं - आक्रोश के, आरोप के, व्यंग्य के, कॉइयाँपन के यह तेवर । एकाएक इसे नाम नहीं देते बना कुछ ।

पर इतना जरूर महसूस किया कि किसी गहरी असहायता में भीगा अप्पा साहब का यह स्वर उनकी अपनी ही किसी दुखती रग को छू गया । पिछले तीन महीनों से क्या वे खुद अपने को किसी ऐसी ही मजबूरी में घिरा हुआ नहीं पा रहे? चाहते कुछ हैं, करते कुछ । एक दोहरी जिंदगी जीने की लाचारी, कहने की आवश्यकता नहीं कि लेखिका ने उपन्यास के चरित्रों पर, भावों के उतार-चढ़ाव, मुख-मुद्रा, भीतरी मनोवेगों के बाह्य प्रकाशन के साथ उपन्यास की प्रवाहमयी शैली में नाटकीयता अंकित की है ।

19.4.4 संवादों में नाटकीयता

इस उपन्यास के चरित्र आपस में वार्तालाप करते हुए नाट्य भंगिमाओं के साथ उभरते है । संवादों में उतार-चढ़ाव और अधूरे वाक्य में सांकेतिकता भरकर मन्नूजी ने शैली को नाटकीय निखार प्रदान किया है । संवादों की बानगी इस तथ्य को उभारती है- ' तो आपका इरादा कुछ डगमगाता तो नहीं रहा, लोचन भैया? 'नहीं नहीं!'

“हाँ sss!..... ।‘

“हूँ sss!..... ।‘

“क्यों,! दा साहब की नीतियों से असहमति के कारण"

उपन्यास में आये हुए ये कथनोपकथन शैली में अनर्निहित नाट्यतत्व का ही लक्षण है । इस प्रकार 'महाभोज' की शैली में सर्वत्र नाट्य तत्व की ही भरमार है जो उसे रोचक तो बनाती है साथ ही शैली मे नवीनता का पुट भी भर देती है ।

19.4.5 यथार्थ का सजीव अंकन

'महाभोज' राजनीति पर केन्द्रित उपन्यास है । हमारे समकालीन जीवन में राजनीति सर्वत्र हावी है । यही तक कि गाँव की गलियों से लेकर विधानसभा और संसद तक राजनीति छायी हुई है । 'महाभोज' की लेखिका ने देश की समकालीन राजनीति को ध्यान में रखकर उसमें व्याप्त स्वार्थपरता, षडयन्त्र एक दूसरे को परास्त करने की घिनौनी चालें तथा उठा-पटक का खेल विस्तृत ब्योरे के साथ साथ महाभोज' में प्रस्तुत किया है यह सच है कि इस खेल के

भागीदार कुछ गिने चुने और मुट्ठी भर लोग ही होते हैं परन्तु उनके संकेतों पर देश की दशा और दिशा निर्धारित होती है । एक प्रकार से देखा जाय तो राजनीति में कुछ स्वार्थी तत्व छाये हुए हैं और देश का विशाल जनसमूह इस स्वार्थी तत्वों के हाथे प्रताड़ित होता रहता है । राजनीति का यह खेल हमारे समकालीन जवीन का यथार्थ है । मन्नूजी ने 'महाभोज' की रचना में विषय वस्तु की कल्पना और उसकी प्रस्तुति के माध्यम से उपन्यास को सजीवता प्रदान की है । देखने की बात यह है कि सरोहा का मध्यावधि चुनाव और उससे जुड़ा हुआ घटनाचक्र तथा उससे सम्बन्धित प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप से जुड़े हुए चरित्र अपनी जीवन्तता के साथ इस उपन्यास में उभारे गये हैं । महत्वपूर्ण बात, सरोहा का उपचुनाव नहीं है, महत्वपूर्ण है उसकी सांकेतिकता और व्यंजना जो देश की राजनीति की ओर इशारा करती है । लेखिका द्वारा घटनाचक्र को बाँधने, चरित्रों को रूपाकार प्रदान करने तथा राजनीति कर्मियों की चालबाजी चित्रित करने से इस उपन्यास का राजनीतिक यथार्थ उभरा है यथार्थ का यही सजीव अंकन इस उपन्यास की शैलीगत विशेषता है ।

19.4.6 शैली में व्यंग्य और प्रतीकात्मकता

प्रस्तुत उपन्यास अपनी समगग्रता में एक प्रतीकात्मकता लिये हुए है। लेखिका ने इस कृति को 'महाभोज' शीर्षक देकर यह स्पष्ट कर दिया है कि इस विशाल देश की व्यवस्था पर नजरें गड़ाये राजनीतिज्ञ और सरकारी तन्त्र से जुड़े हुए लोग अपनी स्वार्थ सिद्धि को साधने मे लगे हुए हैं । इस देश मे जनतन्त्र की व्यवस्था से जो विभिन्न पदों का सृजन हुआ है और सरकारी सुविधाओं में विस्तार आया है, वह एक 'महाभोज' के रूप में है । सत्ता की भूख मिटाने और अपने अहंकार की तुष्टि के लिए ऊँचे पदों पर बैठे हुए लोग मानों 'महाभोज' में शामिल होने वाले लोग हैं । यह संख्या इस विशाल देश में लाखों में हो सकती है । ऊपर से देश सेवा का पाखण्ड रचने वाले ये पदलोलुप और सत्ता के भूखे लोग अपनी स्वार्थपूर्ति में लीन हैं । लेखिका ने सरोहा में आयोजित होने वाले मध्यावधि चुनाव को आधार बनाकर 'महाभोज' के रूप में एक बड़े प्रतीक की रचना की है । सरोहा का मध्यावधि चुनाव तो महज एक बानगी है । इसके माध्यम से वे, समग्र देश में जो मूल्यहीन राजनीति चल रही है, उसकी और संकेत कर रही हैं । राजनीति का खेल ऐसा विकृत हो चला है कि हत्या और आगजनी का सहारा लेकर चाहे कितने ही निरीह लोगों की जान क्यों न चली जाय, लक्ष्य केवल यही है कि जनता का वोट अपनी झोली में आना चाहिए । 'महाभोज' की यह प्रतीकात्मकता अपने में बहुत बड़ी व्यंजना लिये हुए है जो पाठकों को बहुत दूर तक प्रभावित करती है । यह कहना अधिक उपयुका होगा कि इस उपन्यास के माध्यम से लेखिका अपने पाठकों की चेतना को झकझोरना चाहती हैं ताकि सत्ता का भोग करने वाले राजनीतिज्ञों के प्रति सामान्य मतदाता सावधान रहे । सरोहा के उपचुनाव को भाँति देश में प्रत्येक पांच वर्ष के पश्चात मतदान का अवसर आता है, इसलिये जनसाधारण को विचार पूर्वक और विवेक संगत ढंग से अपनी मतदान की शक्ति का प्रयोग करना चाहिए । इस उपन्यास की यही प्रतीकात्मक व्यंजना है ।

19.4.7 महाभोज की भाषा

इस उपन्यास की भाषा पर एक संक्षिप्त टिप्पणी आवश्यक है, उसके बिना 'महाभोज' की शैली के मर्म को समझना कठिन है । मन्नू जी ने चुस्त और कसी हुई मुहावरे दार भाषा का प्रयोग इस उपन्यास में किया है । आम बोलचाल के लहजे में आये हुए मुहावरों का प्रयोग इसमें खुल कर हुआ है । उदाहरण के लिए-सत्ता की रस्साकशी, चौकस रहना, कागजी योजनाएँ, किनारे लगा कर छोड़ना, टुच्चेपन की सौदेबाजी, उतार-चढ़ाव, कॉइयाँपन, लार टपकाना, आँखे गड़ाना आदि । इन मुहावरों में सत्ता और सरकारी तंत्र के सूत्रधारों को लेखिका ने उभारा है । राजनीति और सरकारी तन्त्र के मिले जुले समीकरण इस प्रकार खोटे सिक्के को चलाते हैं, और खरे सिक्के को चलन से बाहर कर देते हैं, और यह सब कुछ लेखिका की सहज, सशक्त और दमदार भाषा से ही सम्भव हो सका है । कुल मिलाकर 'महाभोज' एक विचारोत्तेजक और सशक्त रचना है ।

19.5 सारांश

'महाभोज' सरोहा गाँव में निकट भविष्य में होने वाले मध्यावधि चुनाव को केन्द्र में रखकर रचा गया एक राजनीतिक उपन्यास है । सरोहा के हरिजन टोले में आगजनी की घटना और युवा हरिजन नेता बिसेसर की हत्या की कड़ियाँ भी इसी मध्यावधि चुनाव से जुड़ी हुई है । लेखिका ने राजनेताओं की बयानबाजी और सहानुभूति के झूठे दिखावे को भी इसी से जोड़कर दिखाया है । यहाँ तक कि एस.पी. सक्सेना की बिसेसर से सम्बन्धित जाँच रपट भी इसी प्रसंग से जुड़ जाती है । पत्रकारिता के नाम पर अपने स्वार्थसिद्धि करने वाले दत्ता बाबू भी इसी मध्यावधि चुनाव के वृत्तांत पर 'मशाल' के प्रकाशन को भड़कीला रंग प्रदान करते हैं । उपन्यास के प्रमुख चरित्र दा साहब, सुकुल बाबू अप्पा साहब, लोचन बाबू जोरावर सिंह और लखन सभी एक ही थैली के चट्टे-बट्टे हैं । उन सब का एक ही लक्ष्य है-सत्ता को हाथ से न जाने देना और सत्ता के माध्यम से अपने हितों की स्वार्थसिद्धि करते रहना ।

इस प्रकार लेखिका ने सरोहा के माध्यम से, इस विशाल देश की राजनीति में जो आग लगी हुई है, उसी को केन्द्र में रखकर महाभोज' की रचना की है । महाभोज' एक प्रतीक रचना है जिसमें देश के राजनीतिक वायुमण्डल को प्रतिबिम्बित किया गया है । राजनीति मानो एक महाभोज है जिसके द्वारा सभी अपनी-अपनी भूख मिटाने में जुटे हुए हैं ।

19.6 संदर्भ ग्रन्थ

1. मन्नू भण्डारी का कथा साहित्य - डॉगुलाबराव हाड़े .
2. कथाकार मन्नू भण्डारी - अनीता राजूरकर
3. औरों के बहाने (संश्लेषण) - राजेन्द्र यादव
4. मन्नू भण्डारी का कथा साहित्य - डॉकिशोर गिरडकर .
5. हिन्दी उपन्यास - डॉसुरेश सिन्हा .
6. हिन्दी उपन्यासों में मध्यमवर्ग - मन्जुलता सिंह

19.7 अभ्यास प्रश्न

1. 'महाभोज' उपन्यास का कथानक घटना प्रधान है या चरित्र प्रधान? उदाहरण सहित स्पष्ट कीजिए ।
2. "महाभोज उपन्यास में मनू भण्डारी ने राजनीति और सरकारी तन्त्र के मेल से उत्पन्न मूल्यहीनता पर प्रकाश डाला है ।" इस कथन की विवेचना कीजिए ।
3. महाभोज' उपन्यास में प्रयुक्त शिल्प की प्रविधियों पर प्रकाश डालिए ।
4. 'महाभोज' उपन्यास का उद्देश्य स्पष्ट कीजिए ।

ISBN-13/978-81-8496-085-3